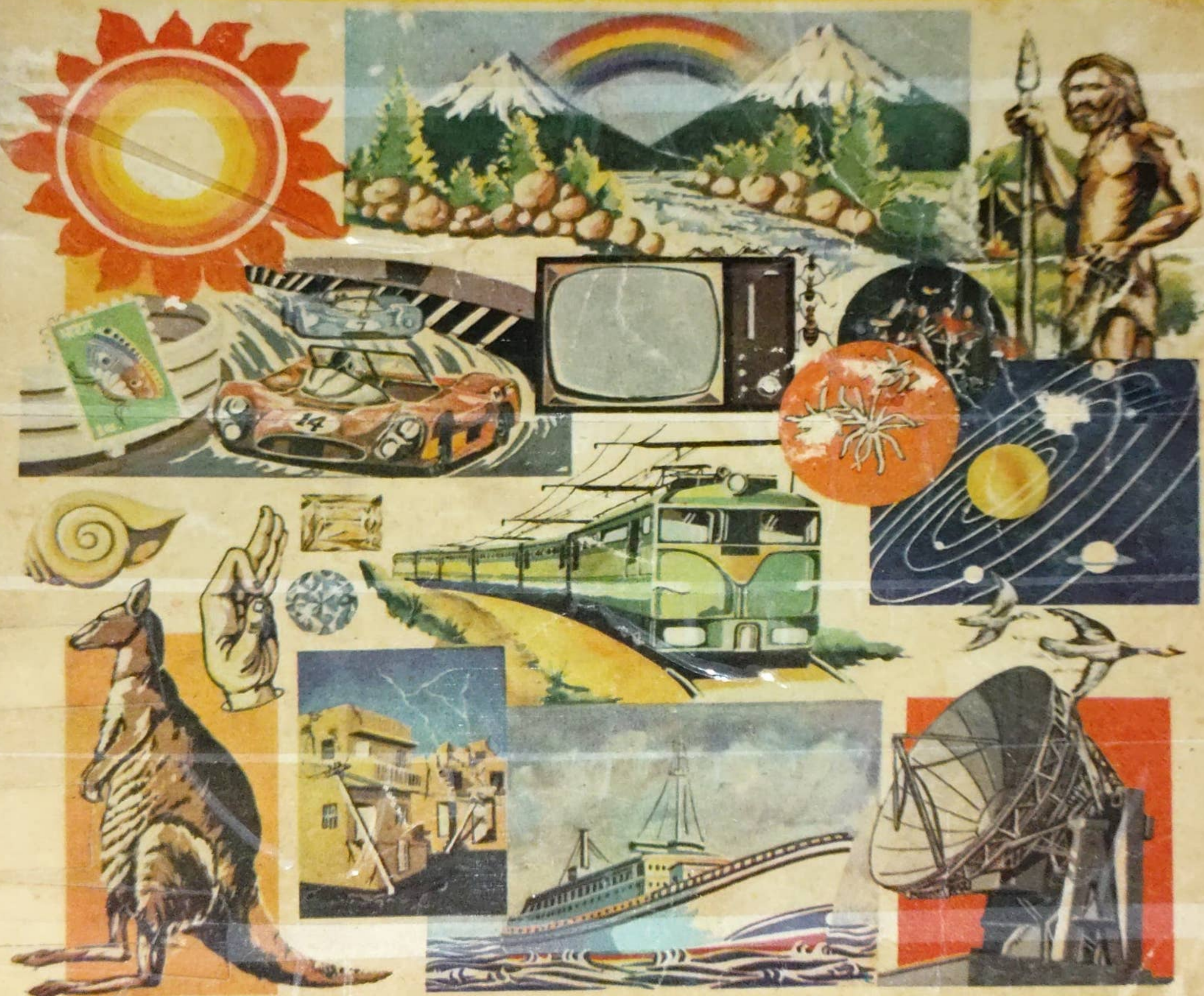
चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक 1

CHILDREN'S KNOWLEDGE BANK



पुस्तक महल, दिल्ली

चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक

(Volume I)

लेखक

डा. सुनीता गुप्ता Ph. D. (Phy. Chemistry)

डा. नीना अग्रवाल M.B.B.S.

परामर्शदाता मंडल

डा. सी. एल. गर्ग M. Sc., Ph. D.

वैज्ञानिक, डिफेन्स साइंस सेंटर,
रक्षा मंत्रालय, भारत सरकार
(मुख्य परामर्शदाता)

डा. पदम गुप्त M.B.B.S.

आर. के. गुप्त M. Sc., (Mathematics)

एम. एल. अग्रवाल M. Tech.

पुस्तक महल®

खारी बावली, दिल्ली-110006

नया शो रूम : 10-B, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-110002

प्रकाशक

पुस्तक महल, दिल्ली-110006

सहयोगी संस्थान

हिन्द पुस्तक भण्डार, दिल्ली-110006

बिक्री केन्द्र

1. 6686, खारी बावली, दिल्ली-110006-------------------------------फोन: 239314, 2911979
2. 10-B, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002-----फोन: 3268292-93, 3279900

प्रशासनिक कार्यालय

F-2/16, अन्सारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

फोन: 3276539, 3272783—84

शाखा कार्यालय

22/2, मिशन रोड (शामा राव कम्पाउंड), बंगलौर-560027

फोन: 234025

मूल्य

चिल्ड्रन्स पेपरबैक संस्करण

बाउंड लाइब्रेरी संस्करण:

प्रथम संस्करण: दिसंबर, 1980

आठवां संशोधित एवं परिवर्धित संस्करण: मई, 1983

16वां पुनः मुद्रित संस्करण : अप्रैल 1990

फोटो कम्पोज़िंग: क्विक फोटो कम्पोज़िंग सर्विसेस, F-2/16, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002.

मुद्रक: के.के. प्रिंटर्स, 150-D, कमला नगर, दिल्ली-110007.

प्रकाशकीय

छः भागों में विभाजित ''चिल्ड्रन्स नॉलेज बैंक' एक विश्वकोशीय महत्त्व (Encyclopaedic Importance) की बालोपयोगी पुस्तकमाला है। इसकी शुरूआत 1980 में की गई थी और उस समय इसे चार भार भागों में निकालने का निश्चय किया गया था। पाठकों द्वारा निरन्तर मांग बनाए रखने के कारण हमें इसके दो भाग और बढ़ाने पड़े। सन् 1986 में इसके छहों भागों का प्रकाशन पूर्ण हो पाया। अब स्थिति यह है कि पाठक इसके सातवें भाग को भी प्रकाशित करने की मांग कर रहे हैं।

अपने आप में पूर्ण इसके प्रत्येक भाग में सामान्य-ज्ञान, आधुनिक विज्ञान, पेड़-पौधे और जीव-जंतु, मानव-शरीर, आविष्कार और आविष्कारक, खेल-खिलाड़ी आदि विषयों से संबंधित सैकड़ों प्रश्नों के उत्तर सरल तथा रोचक भाषा-शैली में प्रस्तुत किए गए हैं। प्रश्नों का चयन करते समय इस बात का ध्यान रखा गया है कि प्रश्न ऐसे हों जो बच्चों की लगभग हर ''क्यों'' और ''कैसे'' किस्म की जिज्ञासामूलक समस्या का समाधान कर सकें।

हमारा संपादन तथा कला विभाग इस बात के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहा है कि विषय की प्रामाणिकता तथ्यों की विश्वसनीयता, भाषा-शैली की रोचकता, चित्रों के समुचित चयन तथा साज-सज्जा में किसी प्रकार की कोई भी कमी न रह जाए। इस बात को ध्यान में रखते हुए पाठ्य-सामग्री के लेखन में विश्व के सभी उच्चस्तरीय मानक संदर्भ-गन्थों की सहायता ली गई है। इसके अतिरिक्त जब भी इस पुस्तकमाला के किसी भी भाग का नया संस्करण प्रकाशित होता है तो उसमें नवीनतम जानकारियों को समाहित कर दिया जाता है। इससे इस पुस्तकमाला की सामयिकता तो बनी ही रहती है, साथ ही प्रत्येक नए संस्करण के साथ इसकी गुणवत्ता में भी उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाती है।

हमें प्रसन्नता है कि हमारे इस विनम्र एवं प्रामाणिक प्रयास का सर्वत्र स्वागत हुआ। पत्र-पत्रिकाओं के समीक्षात्मक कॉलमों में इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा हुई, विभिन्न क्षेत्रों के विद्वानों तथा वैज्ञानिकों ने हमें सराहनाभरे पत्र लिखे तथा शिक्षण संस्थानों ने बच्चों का बौद्धिक स्तर बढ़ाने के लिए इस पुस्तकमाला को पढ़ने की पुरजोर सिफारिश की।

आज स्थिति यह है कि यह पुस्तकमाला मानो बच्चे के प्रति माता-पिता का स्नेह एवं दुलार का प्रतीक बन गई है। हर पढ़े-लिखे मां-बाप की यह चेष्टा रहती है कि वे अपने बच्चे को ''चिल्ड्रन्स नॉलेज बैंक'' का सेट भेंट में दें। इस बात को दृष्टिगत रखते हुए अब यह सम्पूर्ण सेट एक आकर्षक ''गिफ्ट पेक'' में भी उपलब्ध कराया गया है। पूरा सेट लेने पर ''गिफ्ट बॉक्स'' मुफ्त दिया जाता है। पहले इस पुस्तकमाला के छः भागों के कवर अलग-अलग डिजाइन के थे। अब इन्हें एक कर दिया गया है, जिससे पुस्तकमाला की साज-सज्जा एकदम विश्वकोशीय हो उठी है।

चिल्ड्रन्स नॉलेज बैंक की कुछ विशेषताएं:

- कुल 1050 से भी अधिक ''**क्यों**'' और ''**कैसे**'' किस्म के प्रश्नों के उत्तर
- 5,00,000 शब्दों की प्रामाणिक पाठ्य-सामग्री
- 1100 से अधिक मनोहारी चित्र
- बड़े आकार के 1300 से भी अधिक पृष्ठ
- 50 लाख से भी अधिक पाठकों की पसंद
- अंग्रेजी के अतिरिक्त 8 भारतीय भाषाओं में भी प्रकाशित

(Published volumes are ✓ marked)

Vol.	English	Hindi	Bangla	Telugu	Kannad	Tamil	Malayal	Marathi	Gujarati
First	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓
Second	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	in press	in press
Third	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	in press	in press
Fourth	✓	✓	✓	✓	✓	in press	in press	in press	in press
Fifth	✓	✓	✓	✓	✓	in press	in press	in press	in press

द्वितीय भाग के प्रश्नों की झलक

चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक

मानव शरीर, सामान्य ज्ञान, पेड़-पौधे और जीव-जन्तु जगत, ब्रह्मांड व अंतरिक्ष तथा खेल एवं खिलाड़ी नामक पांच प्रखण्डों में विभाजित

- ☐ क्या कोई पदार्थ ऐसा भी है जो आग में नहीं जलता ?
- ☐ डबलरोटी में छेद क्यों होते हैं ?
- ☐ दूध का रंग सफेद क्यों दिखता है ?
- ☐ आकाश नीला क्यों दिखाई देता है ?
- ☐ काली बिल्ली को अशुभ क्यों माना जाता है ?
- ☐ क्या संसार में नरभक्षी लोग भी रहते हैं ?
- ☐ पीसा की मीनार झुकी हुई क्यों है ?
- ☐ धुआं क्या है ?
- ☐ आग क्या है ?
- ☐ आवाज एक स्थान से दूसरे स्थान तक कैसे पहुंचती है ?
- ☐ पान खाने से मुंह लाल क्यों हो जाता है ?
- ☐ क्या कोई धातु तरल भी होती है ?
- ☐ जमीन से लोहा कैसे प्राप्त होता है ?
- ☐ एल्यूमिनियम धरती से कैसे प्राप्त होता है ?
- ☐ मरीचिका या मृग तृष्णा क्या है ?
- ☐ सूक्ष्मदर्शी से छोटी वस्तुयें बड़ी कैसे दिखती हैं ?
- ☐ कांच कैसे बनाया जाता है ?
- ☐ हीरा क्या है ?
- ☐ सुकरात कौन थे ?
- ☐ कुछ ही तत्वों से लाखों पदार्थ कैसे बन जाते हैं ?
- ☐ विज्ञापन पट्ट कैसे चमकते हैं ?
- ☐ बिजली के बल्ब से प्रकाश कैसे पैदा होता है ?
- ☐ बिजली कैसे पैदा की जाती है ?
- ☐ महिलाओं की आवाज सुरीली क्यों होती है ?
- ☐ हमें भूख क्यों लगती है ?
- ☐ रोने में आंसू क्यों निकलते हैं ?
- ☐ हम पक्षियों की तरह क्यों नहीं उड़ पाते ?
- ☐ हमारा शरीर गर्म क्यों रहता है ?
- ☐ हमें छींक क्यों आती है ?
- ☐ बच्चों को पोलियो कैसे हो जाता है ?
- ☐ पेट में कीड़े क्यों हो जाते हैं ?
- ☐ डायलेसिस क्या है ?
- ☐ हमारे शरीर में भोजन कैसे पचता है ?
- ☐ मनुष्य की त्वचा का रंग अलग-अलग क्यों होता है ?
- ☐ स्तनधारी मादा के शरीर में दूध कैसे बनता है ?
- ☐ हम सांस क्यों लेते हैं ?
- ☐ आंखें कैसे देखती हैं ?
- ☐ आदमी बहरा क्यों हो जाता है ?
- ☐ आदमी अंधा क्यों हो जाता है ?
- ☐ हम नमक क्यों खाते हैं ?
- ☐ कुछ लोग खब्बू क्यों होते हैं ?
- ☐ मूत्र हमारे शरीर में कैसे बनता है ?
- ☐ सिर में दर्द क्यों होता है ?
- ☐ हम थक क्यों जाते हैं ?
- ☐ धरती पर जीवन कैसे प्रारम्भ हुआ ?
- ☐ क्या कोई पक्षी पत्थर भी खाता है ?
- ☐ छिपकली अपनी पूंछ कैसे छोड़कर भाग जाती है ?
- ☐ लोग बिल्ली को शेर की मौसी क्यों कहते हैं ?
- ☐ जानवरों से हमें कौन-कौन सी दवायें प्राप्त होती हैं ?
- ☐ कोयल वसन्त ऋतु में ही क्यों गाती है ?
- ☐ ठंडे और गर्म रक्त वाले प्राणी कौन-कौन से हैं ?
- ☐ जानवर कितनी तेज दौड़ सकते हैं ?
- ☐ जानवर कितने दिन जिन्दा रह सकते हैं ?
- ☐ क्या सभी सांप जहरीले होते हैं ?
- ☐ सांप के काटने पर शरीर में जहर कैसे फैलता है ?
- ☐ स्तनधारी जानवर कौन से हैं ?
- ☐ चमगादड़ पक्षियों से किस प्रकार विचित्र है ?
- ☐ शेर को जंगल का राजा क्यों कहते हैं ?
- ☐ क्या जानवर भी रंग पहचान सकते हैं ?
- ☐ मछलियां पानी में सांस कैसे लेती हैं ?
- ☐ क्या बिजली पैदा करने वाली मछलियां भी होती हैं ?
- ☐ छुई-मुई का पौधा छूने से क्यों मुरझा जाता है ?
- ☐ हाथी के सूंड क्यों होती है ?
- ☐ ऊंट की पीठ पर कूबड़ क्यों होता है ?
- ☐ काटने वाले कीड़े शरीर में कीटाणु कैसे भेजते हैं ?
- ☐ समुद्र की गहराई कैसे मापते हैं ?
- ☐ समुद्र में ज्वार क्यों आते हैं ?
- ☐ क्या समुद्रों में भी नदियां बहती हैं ?
- ☐ समुद्र में दिशाओं का पता कैसे लगाया जाता है ?
- ☐ समुद्र की गहराइयों में आदमी कैसे उतरता है ?
- ☐ हवा में नमी कहां से आती है ?
- ☐ आने वाले मौसम का पता कैसे लगाते हैं ?
- ☐ नौ ग्रहों के अतिरिक्त अन्य छोटे ग्रह क्या हैं ?
- ☐ क्या सभी ग्रहों के उपग्रह हैं ?
- ☐ तारापुंज क्या है ?
- ☐ नीहारिकाएं क्या हैं ?
- ☐ ब्रह्माण्ड के सभी पिण्ड गोल क्यों हैं ?
- ☐ तारे क्यों टिमटिमाते हैं ?
- ☐ प्रकाश वर्ष क्या है ?
- ☐ गैलिलियो को महान वैज्ञानिक क्यों कहा जाता है ?
- ☐ न्यूटन को भौतकी का जन्मदाता क्यों कहते हैं ?
- ☐ ताश खेलना कब शुरू हुआ ?
- ☐ टेनिस का प्रारम्भ कैसे हुआ ?
- ☐ कुश्ती के खेल की शुरुआत कब हुई ?
- ☐ क्या शतरंज का खेल भारत में आरम्भ हुआ था ?
- ☐ क्या ब्रेडमेन रन बनाने की मशीन था ?
- ☐ पेले को फुटबाल का काला हीरा क्यों कहते हैं ?
- ☐ क्या ऐतिहासिक दौड़क नूरमी कभी ठेला चलाता था ?

बड़े आकार के 240 पृष्ठ **पूर्णतया सचित्र**

तृतीय भाग के प्रश्नों की झलक

चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक

पेड़-पौधे और जीव-जन्तु, आविष्कार तथा विकास, सामान्य ज्ञान, आधुनिक विज्ञान, मानव शरीर तथा खेल-खिलाड़ी नामक छः प्रखण्डों में विभाजित

- ☐ पिकासो कौन थे?
- ☐ जिप्सी कहां से आए?
- ☐ डायनोसोर (Dinosaurs) क्या थे?
- ☐ अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय कहां है?
- ☐ कैलोरी (Calorie) क्या है और इसे कैसे मापते हैं?
- ☐ संसार की किस भाषा में सबसे अधिक शब्द हैं?
- ☐ संसार का कौन सा हवाई अड्डा अधिक व्यस्त रहता है?
- ☐ बरमूडा ट्राइऐंगल को रहस्यमय क्यों माना जाता है?
- ☐ एफिल मीनार (Eiffel Tower) क्यों बनाई गई?
- ☐ हालैण्ड में अधिक पवन-चक्कियां क्यों हैं?
- ☐ मोना लिसा (Mona Lisa) आज कहां है?
- ☐ फासिल क्या हैं?
- ☐ एक्यूपंक्चर चिकित्सा प्रणाली क्या है?
- ☐ गंगा नदी को पवित्र क्यों माना जाता है?
- ☐ घर्षण बल (Force of Friction) क्या है?
- ☐ विश्व का सबसे बड़ा मंदिर एंगकोर वाट कहां है?
- ☐ भारत की प्रमुख नृत्य शैलियां कौन सी हैं?
- ☐ विश्व बैंक कहां है?
- ☐ सुपर सोनिक उड़ान क्या है?
- ☐ अक्षांश और देशांतर रेखाएं क्या हैं?
- ☐ डेथ वैली क्या है?
- ☐ प्रदूषण क्या है?
- ☐ मुर्दा पानी पर क्यों तैरता है?
- ☐ सभी की उंगलियों के निशान एक से क्यों नहीं होते?
- ☐ सभी देशों में एक से सिक्के क्यों नहीं हैं?
- ☐ रोम का पतन कैसे हुआ?
- ☐ पहली अप्रैल को 'फूल्स डे' (Fools Day) क्यों कहते हैं?
- ☐ समुद्रों का पानी सूखता क्यों नहीं?
- ☐ धरती पर महाद्वीपों का जन्म कैसे हुआ?
- ☐ वायु का दबाव कैसे मापते हैं?
- ☐ कस्तूरी मृग (Musk Deer) कहां पाया जाता है?
- ☐ किस प्राणी के तीन हृदय होते हैं?
- ☐ डोडो पक्षी कहां गायब हो गए?
- ☐ सांप अपनी केंचुली (Skin) क्यों बदलते हैं?
- ☐ उड़ने वाली लोमड़ी क्या है?
- ☐ उड़ने वाली गिलहरी क्या है?
- ☐ पहाड़ों की चोटियों पर पेड़-पौधे क्यों नहीं उगते?
- ☐ लेमिंग हज़ारों की संख्या में आत्महत्या क्यों करते हैं?
- ☐ क्या कोई चमगादड़ आदमी का खून भी पी सकता है?
- ☐ कुत्तों की सूंघने की क्षमता मनुष्य से अधिक क्यों होती है?
- ☐ खरगोश के कान बड़े क्यों होते हैं?
- ☐ मूंगा क्या है?
- ☐ ऐसा कौन सा सांप है जो सुअर, हिरण तक को खा जाता है?
- ☐ कौन सा जीव जीवन भर बिना पानी के रह सकता है?
- ☐ शादियों की शुरुआत कैसे हुई?
- ☐ आस्ट्रेलिया (Australia) की खोज किसने की?
- ☐ सर्कस की शुरुआत कब हुई?
- ☐ स्टेथेस्कोप का आविष्कार कब हुआ?
- ☐ शार्टहैण्ड का आविष्कार किसने किया?
- ☐ ज्यामिती या रेखागणित का आविष्कार कैसे हुआ?
- ☐ अस्त्र-शस्त्रों का विकास कैसे हुआ?
- ☐ विस्फोटकों का विकास कैसे हुआ?
- ☐ प्रजातंत्र की शुरुआत कहां हुई?
- ☐ किंडर गार्टन शिक्षा प्रणाली का आरम्भ किसने किया?
- ☐ संग्रहालयों की शुरुआत कब हुई?
- ☐ सल्फा औषधियां क्या हैं?
- ☐ आइसोटोप क्या हैं?
- ☐ चंद्रमा पर उतरने वाला पहला व्यक्ति कौन था?
- ☐ सीमेंट कैसे बनाया जाता है?
- ☐ संचार उपग्रह कैसे काम करते हैं?
- ☐ टेस्ट ट्यूब बेबी क्या है?
- ☐ कागज़ कैसे बनाया जाता है?
- ☐ लेसर किरणें क्या हैं?
- ☐ शुद्ध घी की पहचान कैसे की जाती है?
- ☐ क्या हवा को तरल अवस्था में बदला जा सकता है?
- ☐ साबुन से कपड़े साफ कैसे हो जाते हैं?
- ☐ लीवर कैसे काम करते हैं?
- ☐ क्या एक तत्त्व को दूसरे तत्त्व में बदला जा सकता है?
- ☐ फोटोस्टेट मशीन कैसे काम करती है?
- ☐ सूर्य के प्रकाश से बिजली कैसे बनाई जाती है?
- ☐ हमारा शरीर किससे बना है?
- ☐ आंखें अलग-अलग रंगों की पहचान कैसे करती हैं?
- ☐ हमें जुकाम (Common Cold) क्यों हो जाता है?
- ☐ कट जाने पर थोड़ी देर में खून बहना बंद क्यों हो जाता है?
- ☐ गले के टांसिल (Tonsils) क्या काम करते हैं?
- ☐ सभी की आंखों का रंग एक जैसा क्यों नहीं होता?
- ☐ हार्मोन क्या हैं?
- ☐ कुछ लोग विशेष स्थितियों से डरते क्यों हैं?
- ☐ हमारे दांत क्या हैं?
- ☐ दिल का दौरा क्यों पड़ जाता है?
- ☐ हमारे शरीर में कौन-कौन से तत्त्व हैं?
- ☐ त्वचा हमारे शरीर के लिए क्यों जरूरी है?
- ☐ विश्व का सबसे पुराना खेल कौन सा है?
- ☐ बास्केटबाल (Basketball) का खेल कहां जन्मा?
- ☐ मैराथन दौड़ क्या है?
- ☐ नौका दौड़ की शुरुआत कैसे हुई?
- ☐ भारत में कौन-कौन से प्रमुख खिलाड़ी हुए?
- ☐ भारत के प्रमुख खेल कौन-कौन से हैं?

बड़े आकार के 204 पृष्ठ **पूर्णतया सचित्र**

चतुर्थ भाग के प्रश्नों की झलक

चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक

सामान्य ज्ञान, भूगोल, ब्रह्मांड तथा आविष्कार नामक चार प्रखण्डों में विभाजित

- ☐ समुद्री गोताखोर कैसे काम करते हैं?
- ☐ पहाड़ों पर चढ़ना उतरने से कठिन क्यों होता है?
- ☐ कन्फ्यूसियस कौन थे?
- ☐ लिटमस पेपर क्या होता है?
- ☐ सांची के स्तूप कब बनाए गए?
- ☐ विभिन्न देशों के नाम कैसे पड़े?
- ☐ बहुमूल्य पत्थर कौन-कौन से हैं?
- ☐ क्या जमीन के नीचे नदियां बहती हैं?
- ☐ कालिदास कौन थे?
- ☐ सूरज की गर्मी से पेड़ों की पत्तियां गर्म क्यों नहीं होतीं?
- ☐ मीट्रिक प्रणाली क्या है?
- ☐ अरस्तू (Aristotle) कौन थे?
- ☐ ए. एम. और पी. एम. (A. M. & P. M.) क्या हैं?
- ☐ इलैक्ट्रिक फ्यूज़ क्यों लगाया जाता है?
- ☐ मिस्र के लोग ममी कैसे सुरक्षित रखते हैं?
- ☐ उड़ते हुए वायुयान की ऊंचाई कैसे ज्ञात करते हैं?
- ☐ जलयान का वेग किस इकाई में मापते हैं?
- ☐ स्फिंक्स का रहस्य क्या है?
- ☐ क्या सांड केवल लाल कपड़े से ही भड़कता है?
- ☐ संसार का सबसे बड़ा स्वर्णभंडार कहां है?
- ☐ बहुरूपदर्शी (Kaleidoscope) क्या है?
- ☐ पराबैंगनी किरणें (Ultraviolet Rays) क्या हैं?
- ☐ कार या बस का वेग कैसे मापा जाता है?
- ☐ पेरिस्कोप (Periscope) क्या है?
- ☐ नाटो (N.A.T.O.) क्या है?
- ☐ हालीवुड (Holywood) क्यों प्रसिद्ध है?
- ☐ सिक्ख धर्म के जन्मदाता कौन थे?
- ☐ औद्योगिक क्रांति कब शुरू हुई?
- ☐ नेपोलियन बोनापार्ट कौन था?
- ☐ विभिन्न धातुएं कैसे वैल्ड की जाती हैं?
- ☐ 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की शुरुआत कैसे हुई?
- ☐ पनामा नहर क्यों प्रसिद्ध है?
- ☐ भारत में राष्ट्रपति को कैसे चुना जाता है?
- ☐ संयुक्त राष्ट्र संघ क्या है?
- ☐ क्वार्क क्या हैं?
- ☐ ब्लैक होल क्या हैं?
- ☐ रेल का इंजन कैसे काम करता है?
- ☐ क्वासर (Quasars) क्या हैं?
- ☐ परमाणु घड़ी क्या है?
- ☐ भारी पानी (Heavy Water) क्या है?
- ☐ भारहीनता (Weightlessness) क्या है?
- ☐ विभिन्न प्रकार के वाद्य-यंत्र क्या हैं?
- ☐ विभिन्न चिपकाने वाले पदार्थ क्या हैं?
- ☐ टेलीप्रिंटर कैसे काम करता है?
- ☐ ड्राइक्लीनिंग क्या है?
- ☐ शराब कैसे बनाई जाती है?
- ☐ विभिन्न रंग कैसे बनाए जाते हैं?
- ☐ क्रेन कैसे काम करती है?
- ☐ बाइनाकुलर्स से दूर की वस्तुएं साफ कैसे दिखाई देती हैं?
- ☐ पल्सर (Pulsars) क्या हैं?
- ☐ स्टीरिओफोनिक ध्वनि क्या है?
- ☐ टैलकम पाउडर (Talcum Powder) कैसे बनाते हैं?
- ☐ मास स्पेक्ट्रोग्राफ (Mass Spectrograph) क्या है?
- ☐ बीजों से कौन से विभिन्न तेल निकाले जाते हैं?
- ☐ हम कौन-से कंद-मूल खाते हैं?
- ☐ चिड़ियां कैसे सुनती हैं?
- ☐ किन कीड़ों की उम्र सबसे लम्बी होती है?
- ☐ पेंगुइन पक्षी कहां मिलते हैं?
- ☐ गैंडे की विभिन्न किस्में कौन-सी हैं?
- ☐ मक्खियां अपनी टांगें आपस में क्यों रगड़ती हैं?
- ☐ क्या कीड़ों में भी खून होता है?
- ☐ मोर क्यों नाचता है?
- ☐ पौधे सूर्य के प्रकाश की ओर क्यों झुकते हैं?
- ☐ कीड़ों में प्रजनन और विकास कैसे होता है?
- ☐ संसार की सबसे खतरनाक चिड़िया कौन-सी है?
- ☐ हमारे शरीर में संधियां कितने प्रकार की होती हैं?
- ☐ कुछ आदमियों की आंखों में भेंगापन क्यों होता है?
- ☐ बच्चों को दूध पर क्यों पाला जाता है?
- ☐ सिर की चोट घातक क्यों होती है?
- ☐ शरीर में धमनियों और शिराओं का क्या काम है?
- ☐ रोधक्षमता क्या है?
- ☐ ई. सी. जी. क्या है?
- ☐ रंजकहीनता क्या है?
- ☐ वाम-दृष्टि और दक्षिण-दृष्टि का क्या अर्थ है?
- ☐ हमारे शरीर में जिगर या यकृत का क्या कार्य है?
- ☐ एलर्जी क्या है?
- ☐ आयरन-लंग मशीन क्या है?
- ☐ ब्लड-कैंसर या ल्यूकेमिया क्या है?
- ☐ लिफ्ट का आविष्कार कब हुआ?
- ☐ जीरो या शून्य का आविष्कार किसने किया?
- ☐ कपड़े धोने की मशीन का आविष्कार कब हुआ?
- ☐ हरगोबिंद खुराना ने अंतर्राष्ट्रीय ख्याति कैसे प्राप्त की?
- ☐ केपलर के ग्रह-गति के नियम क्या हैं?
- ☐ वॉलीबाल कैसे खेली जाती है?
- ☐ आइस-स्केटिंग कब आरम्भ हुआ?
- ☐ सर्फिंग क्या है?
- ☐ हैंडबॉल कैसे खेला जाता है?
- ☐ कैरम बिलियर्ड्स का खेल कितना पुराना है?

बड़े आकार के 232 पृष्ठ **पूर्णतया सचित्र**

पांचवें भाग के प्रश्नों की झलक

चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक

खेल-खिलाड़ी, आधुनिक विज्ञान, पेड़-पौधे और जीव-जन्तु, मानव शरीर, आविष्कार और आविष्कारक तथा सामान्य ज्ञान नामक छः प्रखण्डों में विभाजित

- ☐ प्रज्ञा परीक्षण क्या है?
- ☐ सौर हवा क्या है?
- ☐ ब्रिटेन का संघटन कब हुआ?
- ☐ साइफन कैसे काम करता है?
- ☐ ट्रोजन घोड़ा क्या था?
- ☐ ओपरा क्या है?
- ☐ ब्रिटेन के किस राजा ने सबसे लम्बी अवधि तक राज्य किया?
- ☐ विश्व की सबसे बड़ी नदी कौन-सी है?
- ☐ हिमधाव किसे कहते हैं?
- ☐ रूसी क्रांति के मूल कारण क्या थे?
- ☐ धातुओं को एनोडाइज कैसे किया जाता है?
- ☐ पाषाण युग किसे कहते हैं?
- ☐ बैटरी टार्च कैसे काम करती है?
- ☐ वियतनाम युद्ध के क्या कारण थे?
- ☐ दुनिया का सबसे ऊंचा रेलवे स्टेशन कौन-सा है?
- ☐ जहाजी सिगनल उपकरण क्या है?
- ☐ बूमरैंग किसे कहते हैं?
- ☐ अभाज्य संख्याएं क्या होती हैं?
- ☐ विभिन्न प्रकार के विष क्या हैं?
- ☐ हमारे वायुमंडल का कितना भार है?
- ☐ कन्टैक्ट लेंस क्या होते हैं?
- ☐ बालचर आंदोलन कब आरंभ हुआ?
- ☐ वर्षा-प्रचुर वन किसे कहते हैं?
- ☐ विभिन्न पेंट्स कैसे बनाए जाते हैं?
- ☐ आगे चलती गाड़ी का पहिया पीछे घूमता क्यों दिखाई देता है?
- ☐ कॉस्मिक वर्ष किसे कहते हैं
- ☐ पायरोमीटर क्या है?
- ☐ एमीटर क्या है?
- ☐ प्रक्षेपास्त्र विज्ञान क्या है?
- ☐ आइडेन्टिकिट पद्धति क्या है?
- ☐ प्रकाश का अपवर्तन क्या है?
- ☐ थियोडोलाइट किस काम आता है?
- ☐ अपराधियों की पहचान के लिए क्या तरीके प्रयोग में लाये जाते हैं?
- ☐ क्लिनोमीटर क्या है?
- ☐ जल-विलेय कांच क्या है?
- ☐ इलेक्ट्रोप्लेटिंग किसे कहते हैं?
- ☐ वेल्डिंग अथवा कटिंग टार्च क्या है?
- ☐ सल्फ्यूरिक अम्ल का निर्माण कैसे किया जाता है?
- ☐ वर्णलेखन क्या है?
- ☐ नोवा और सुपरनोवा क्या होते हैं?
- ☐ रसायन-युद्ध किसे कहते हैं?
- ☐ सिनेमा-स्कोप चलचित्र किसे कहते हैं?
- ☐ पनीर कैसे बनाया जाता है?
- ☐ विभिन्न प्रकार के कैलकुलेटर क्या होते हैं?
- ☐ कौन-कौन से जीव-जन्तु तथा पेड़-पौधे संरक्षणीय हैं?
- ☐ पेड़-पौधों के बीजों का प्रकीर्णन कैसे होता है?
- ☐ कौन से पक्षी उड़ने में असमर्थ हैं?
- ☐ क्या कुछ पौधे भी गति करते हैं?
- ☐ पेड़-पौधे और जीव-जंतु अपनी रक्षा कैसे करते हैं?
- ☐ मछलियां चीजों को कैसे सूंघती हैं?
- ☐ क्या बिच्छू के काटने से मनुष्य मर सकता है?
- ☐ ब्रेडफ्रूट का वृक्ष कहां पैदा होता है?
- ☐ जेब्रा के शरीर पर धारियां क्यों होती हैं?
- ☐ क्या कोई छिपकली अपनी आंखों से खून की पिचकारी छोड़ती है?
- ☐ कौन से कीड़े उल्टे होकर तैरते हैं?
- ☐ कौन सा जानवर उल्टा लटककर अपना जीवन बिताता है?
- ☐ क्या मछलियां सुन सकती हैं?
- ☐ विश्व का सबसे पहला पक्षी कौन-सा था?
- ☐ वनस्पतियों की आंतरिक संरचना का अध्ययन हम कैसे करते हैं?
- ☐ प्रथम (मानव) हृदय प्रतिरोपण कब किया गया?
- ☐ आंखों के सामान्य रोग कौन से हैं?
- ☐ हमारे शरीर में नाभि क्यों होती है?
- ☐ पीलिया का रोग क्या है?
- ☐ शरीर का कोई भी अंग सुन्न क्यों हो जाता है?
- ☐ आर एच तत्त्व क्या है?
- ☐ हमारा स्नायु तंत्र कैसे काम करता है?
- ☐ एक संसेचित अंड कोशिका कैसे सम्पूर्ण शिशु बनती है?
- ☐ यकृत का सिरोसिस क्या है?
- ☐ खून की कमी क्या है?
- ☐ विभिन्न मानसिक रोग क्या हैं?
- ☐ जनन नियंत्रण क्या है?
- ☐ ई.एस.पी. क्या है?
- ☐ मानसिक रोगियों को बिजली का झटका क्यों दिया जाता है?
- ☐ स्पर्शबोध क्या है?
- ☐ भारत के सर जे.सी. बोस के विज्ञान में क्या योगदान थे?
- ☐ एनरिको फर्मी ने क्या खोज की थी?
- ☐ सत्येन्द्रनाथ बोस का नाम आइंस्टीन के साथ कैसे जुड़ा?
- ☐ भारत के परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम की शुरुआत किसने की?
- ☐ आधुनिक रसायनशास्त्र का जन्मदाता कौन है?
- ☐ घूर्णदर्शी क्या है और उसका आविष्कार कब हुआ था?
- ☐ शांतिस्वरूप भटनागर पुरस्कार क्या है?
- ☐ डा. विक्रम साराभाई का भारतीय विज्ञान में क्या योगदान है?
- ☐ मोर्स कोड का पहली बार कब प्रयोग किया गया?
- ☐ तीरंदाजी की शुरुआत कब हुई?
- ☐ टेबिल टेनिस का जन्म कहां हुआ?
- ☐ वेट लिफ्टिंग का खेल कब शुरू हुआ?
- ☐ आइस बोटिंग का खेल क्या है?
- ☐ हैंग ग्लाइडिंग का खेल क्या है?

बड़े आकार के 232 पृष्ठ

पूर्णतया सचित्र

छठे भाग के प्रश्नों की झलक

चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक

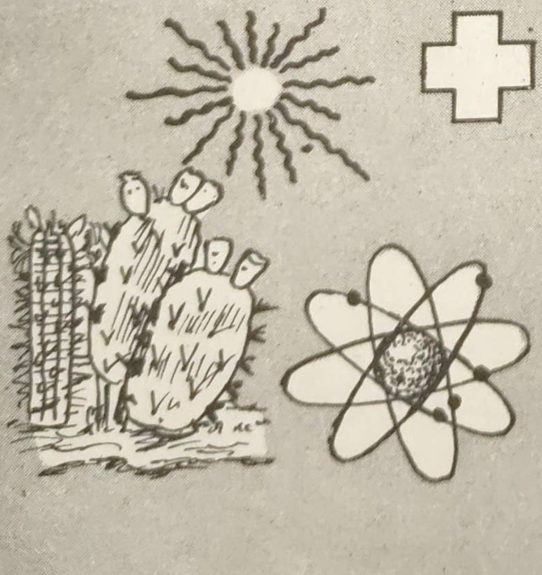
सामान्य ज्ञान, आधुनिक विज्ञान, पेड़-पौधे और जीव-जन्तु, मानव शरीर, आविष्कार और आविष्कारक तथा खेल-खिलाड़ी नामक छः प्रखण्डों में विभाजित

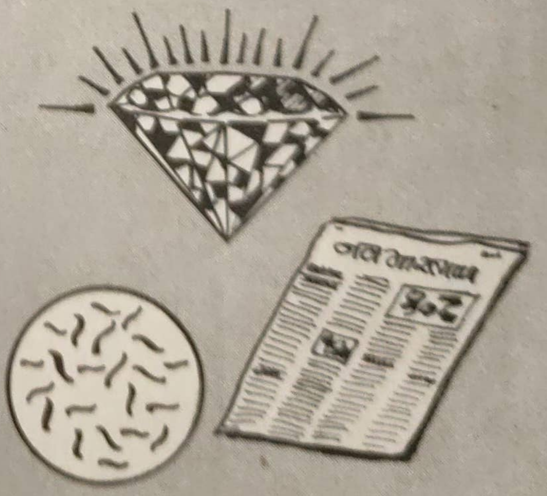
- ☐ आधुनिक नर्सिंग की शुरुआत किसने की ?
- ☐ प्रथम विश्व-युद्ध के क्या कारण थे ?
- ☐ बल, कार्य, ऊर्जा और शक्ति क्या हैं ?
- ☐ तारों की मदद से तुम तारीख कैसे ज्ञात कर सकते हो ?
- ☐ कार्बन चक्र क्या है ?
- ☐ बरनौली प्रभाव क्या है ?
- ☐ मंगल ग्रह लाल रंग का क्यों दीखता है ?
- ☐ स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी क्यों बनाई गई ?
- ☐ स्पार्क प्लग कैसे काम करता है ?
- ☐ स्टेलेक्टाइट और स्टेलेग्माइट क्या होते हैं ?
- ☐ उभारदार छपाई कैसे की जाती है ?
- ☐ कपास के पौधे को 'सूर्य की पुत्री' क्यों कहते हैं ?
- ☐ हमारे देश का राष्ट्रीय चिह्न क्या है ?
- ☐ प्रकाश का परावर्तन क्या है ?
- ☐ गुड फ्राइडे और ईस्टर क्यों मनाए जाते हैं ?
- ☐ संगीत के सात स्वर क्या होते हैं ?
- ☐ हमारे देश में जाति-प्रथा कैसे शुरू हुई ?
- ☐ चन्द्रमा के सागर क्या हैं ?
- ☐ चन्द्रमा की किरणें क्या हैं ?
- ☐ विभिन्न राष्ट्रीय पुरस्कार क्या हैं ?
- ☐ कार्ल मार्क्स कौन थे ?
- ☐ ऑर्निथोप्टर क्या है ?
- ☐ सिरेमिक क्या होते हैं ?
- ☐ अमोनिया गैस क्या है ?
- ☐ उदय और अस्त होता सूर्य अण्डाकार क्यों प्रतीत होता है ?
- ☐ लेथ मशीन (Lathe machine) कैसे काम करती है ?
- ☐ मौसम संबंधी उपग्रह (Weather satellite) क्या हैं ?
- ☐ प्रकाश का ध्रुवण (Polarization) क्या है ?
- ☐ उत्तम ध्वनि-प्रणाली से युक्त भवन कैसे बनाए जाते हैं ?
- ☐ क्वाण्टम सिद्धान्त (Quantum theory) क्या है ?
- ☐ प्रतिहिम (Antifreeze) पदार्थ क्या हैं ?
- ☐ एण्टीना (Antenna) कैसे काम करता है ?
- ☐ प्रघाती तरंगें (Shock waves) क्या हैं ?
- ☐ अन्तरिक्ष (Space) क्या है ?
- ☐ रंगीन टेलीविजन कैसे काम करता है ?
- ☐ वीडियो टेलीफोन कैसे काम करता है ?
- ☐ ब्लैक बॉक्स (Black Box) क्या है ?
- ☐ संपीडित्र (Compressor) कैसे काम करता है ?
- ☐ हाइड्रोफोइल (Hydrofoil) यान क्या होता है ?
- ☐ स्टार वार (Star War) योजना क्या है ?
- ☐ कैथोड किरणें (Cathode rays) क्या हैं ?
- ☐ स्पेस शटल (Space shuttle) क्या है ?
- ☐ बोलोमीटर (Bolometer) क्या होता है ?
- ☐ कैमरे की फ्लैश लाइट कैसे काम करती है ?
- ☐ सबसे बड़ी उड़ने वाली समुद्री चिड़िया कौन-सी है ?
- ☐ समुद्री गाय (Sea-cow) क्या है ?
- ☐ कोको (Cocoa) कहां पैदा होता है ?
- ☐ स्कंक (Skunk) के शरीर से दुर्गन्ध क्यों आती है ?
- ☐ क्या सांप (Snakes) संगीत-प्रेमी होते हैं ?
- ☐ क्या कोई मकड़ी चिड़िया भी खा सकती है ?
- ☐ मनुष्य ने जानवर पालना कब शुरू किया ?
- ☐ जीव-जन्तु अपने को वातावरण के अनुकूल कैसे ढालते हैं ?
- ☐ जानवरों के पूंछ क्यों होती है ?
- ☐ सबसे सुन्दर रेंगने वाला जन्तु कौन-सा है ?
- ☐ विभिन्न जानवर किस प्रकार गति करते हैं ?
- ☐ क्या पक्षी मरने के लिए अपने आपको समर्पित करते हैं ?
- ☐ सन्धिवात (Arthritis) रोग क्या है ?
- ☐ क्या मनुष्य के शरीर में बिजली पैदा होती है ?
- ☐ अधिक कोलेस्ट्रॉल (Cholesterol) क्यों हानिकारक है ?
- ☐ फ्ल्यूराइड से हमारे दांत कैसे मजबूत हो जाते हैं ?
- ☐ पेंक्रिआस (Pancreas) शरीर में क्या काम करते हैं ?
- ☐ इलेक्ट्रोरेटिनोग्राम (Electroretinogram) क्या है ?
- ☐ इलेक्ट्रोमायोग्राम (Electromyogram) क्या होता है ?
- ☐ हमारे शरीर के लिए कौन-से पदार्थ ईंधन का काम करते हैं?
- ☐ एपेनडिसाइटिस (Appendicitis) क्या है ?
- ☐ हमारे शरीर में खुजली क्यों होती है ?
- ☐ इन्फ्लुएंजा (Influenza) कैसे हो जाता है ?
- ☐ कृत्रिम गर्भाधान क्या है ?
- ☐ दर्द का पता कैसे चलता है ?
- ☐ क्या हर व्यक्ति के शरीर से एक विशेष गन्ध आती है ?
- ☐ चेतना क्या है ?
- ☐ कैट स्कैनर (Cat Scanner) क्या है ?
- ☐ हमें डकार क्यों आती है ?
- ☐ पेसमेकर हृदय की धड़कन कैसे नियंत्रित करता है ?
- ☐ मेनिंजाइटिस का रोग क्या है ?
- ☐ क्या हमारे शरीर में भी कोई घड़ी है ?
- ☐ श्रीनिवास रामानुजन का गणित में क्या योगदान था ?
- ☐ मारकोनी का विज्ञान में क्या योगदान था ?
- ☐ वैमानिकी (Aeronautics) का जन्मदाता कौन था ?
- ☐ आर्यभट्ट कौन थे ?
- ☐ द्रव मणिभ (Liquid crystal) अंकों को कैसे दर्शाते हैं ?
- ☐ विज्ञान में ऐडिसन के क्या योगदान थे ?
- ☐ न्यूट्रॉन (Neutron) की खोज किसने की थी ?
- ☐ विभिन्न ओलिम्पिक खेल क्या हैं ?
- ☐ कराटे (Karate) का खेल क्या है ?
- ☐ खो-खो कैसे खेला जाता है ?
- ☐ गोल्फ (Golf) का खेल क्या है ?
- ☐ जूडो (Judo) क्या है ?

बड़े आकार के 216 पृष्ठ **पूर्णतया सचित्र**

अनुक्रम

1. सामान्य ज्ञान





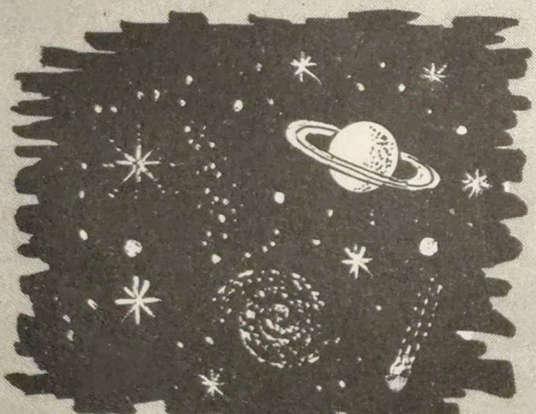


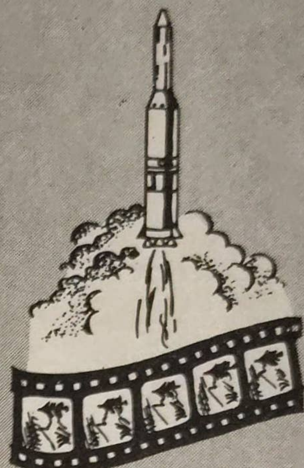
2. भूगोल

3. ब्रह्मांड

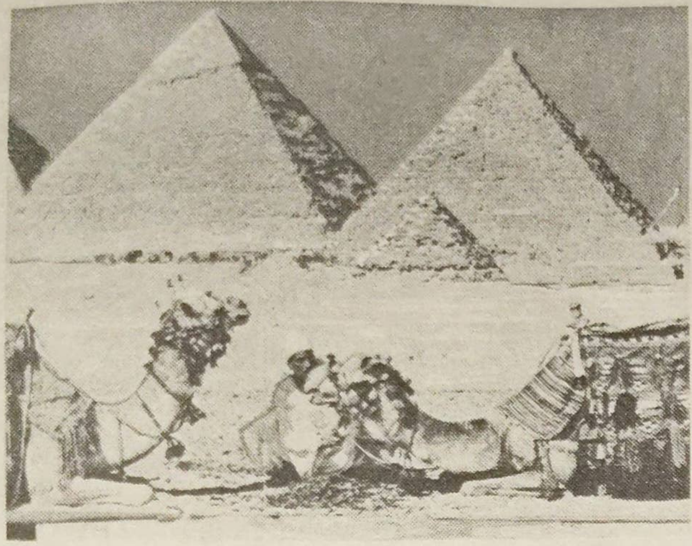


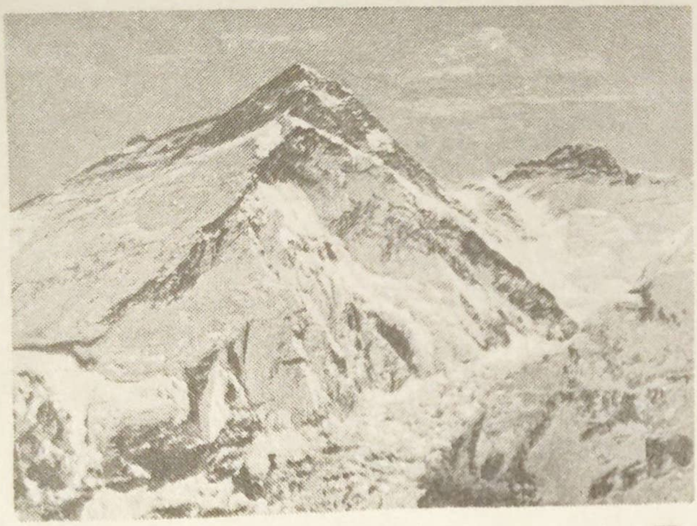
4. आविष्कार





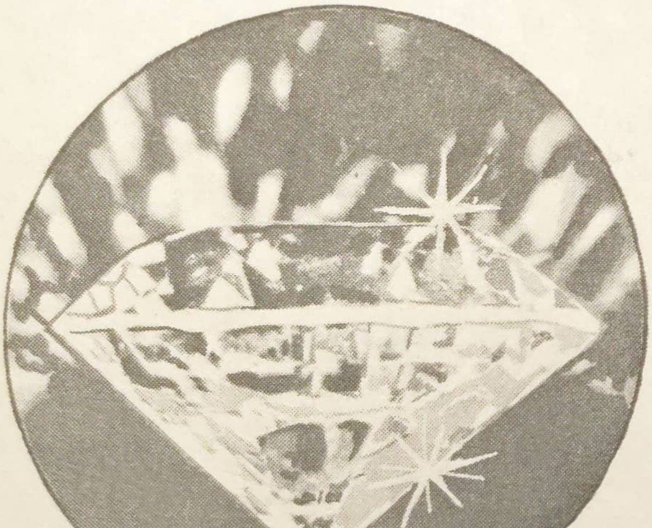


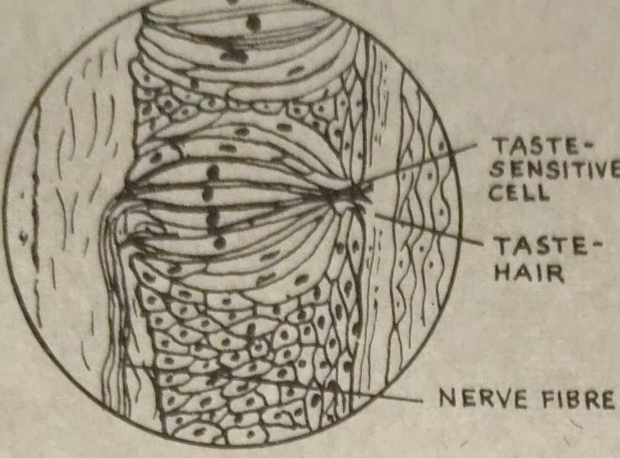


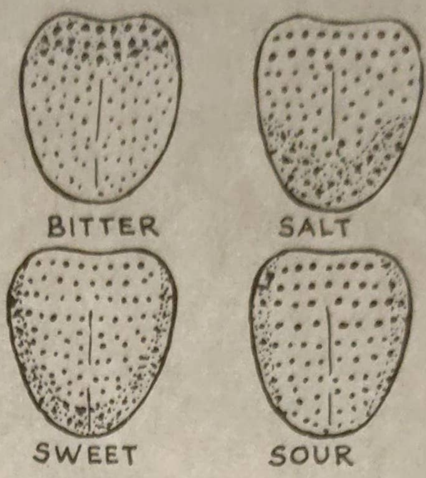


1

सामान्य ज्ञान







जीभ स्वाद कैसे बताती है?

मनुष्य के पास ज्ञान प्राप्त करने के लिए पांच ज्ञानेंद्रियां हैं: आंख, नाक, कान, त्वचा और जीभ. इनमें से जीभ स्वाद का ज्ञान कराती है.

जीभ मुंह के भीतर स्थित है. यह पीछे की ओर चौड़ी और आगे की ओर पतली होती है. यह मांसपेशियों की बनी होती है. इसका रंग लाल होता है. इसकी ऊपरी सतह को देखने पर हमें कुछ दानेदार उभार दिखाई देते हैं, जिन्हें स्वाद कलिकाएं कहते हैं. ये स्वाद कलिकाएं कोशिकाओं से बनी हैं. इनके ऊपरी सिरे से बाल के समान तन्तु निकले होते हैं.

ये स्वाद कलिकाएं चार प्रकार की होती हैं, जिनके द्वारा हमें चार प्रकार के मुख्य स्वादों का पता चलता है. मीठा, कड़ुवा, खट्टा और नमकीन. जीभ का आगे का भाग मीठे और नमकीन स्वाद का अनुभव कराता है. पीछे का भाग कड़ुवे स्वाद का और किनारे का भाग खट्टे स्वाद का अनुभव कराता है. जीभ का मध्य भाग किसी भी प्रकार के स्वाद का अनुभव नहीं कराता, क्योंकि इस स्थान पर स्वाद कलिकाओं का अभाव रहता है.

स्वाद का पता भोजन की तरल अवस्था में ही चलता है. भोजन का कुछ अंश लार में घुल जाता है. लार में घुला हुआ यह भोजन स्वाद-कलिकाओं को क्रियाशील कर देता है. खाद्य पदार्थों द्वारा एक रासायनिक क्रिया होती है, जिसके फलस्वरूप तन्त्रिका आवेग (Nerve Impulses) पैदा हो जाते हैं. ये आवेग मस्तिष्क के स्वाद केन्द्र तक पहुंचते हैं और स्वाद का अनुभव देने लगते हैं.

किसी खाद्य-पदार्थ के पूरे स्वाद के लिए जीभ के अलावा अन्य ज्ञानेंद्रियां भी सहयोग देती हैं. गंध भी स्वाद का एक अंग है, जिसका अनुभव नाक से होता है. यही कारण है कि जुकाम हो जाने से भोजन का पूरा-पूरा स्वाद नहीं मिल पाता और वह फीका-फीका लगता है.

एक बालक की अपेक्षा एक प्रौढ़ (Adult) की जीभ पर स्वाद कलिकाओं की संख्या अधिक होती है. प्रौढ़ व्यक्ति की जीभ पर लगभग 3000 स्वाद कलिकाएं होती हैं. आयु के बढ़ने के साथ स्वाद कलिकाएं शिथिल होने लगती हैं और फिर निष्क्रिय होने लगती हैं. एक 70 साल की आयु के आदमी की जीभ पर कुल 800 स्वाद कलिकाएं शेष रह जाती हैं.

पेट की खराबी या कब्ज से जीभ पर मैल जम जाता है. जिससे हमें वस्तुओं का स्वाद बदला-बदला लगता है. वास्तव में जीभ पर मैल जम जाने के कारण खाद्य पदार्थों के अणु स्वाद कलिकाओं तक आसानी से पहुंच नहीं पाते, इसलिए हमें खाद्य पदार्थों का स्वाद बदला-बदला लगता है. बुखार आने पर या गर्म वस्तु खाने-पीने से भी ये स्वाद कलिकाएं कुछ शिथिल या निष्क्रिय हो जाती हैं और फलस्वरूप भोजन का पूरा-पूरा स्वाद हमें नहीं मिल पाता.

शराब, कोको और फलों के रस का पता उनकी गंध से ही चलता है. जब ये रस मुंह में जाते हैं, तो उनके स्वाद का पता जीभ को लग जाता है और गन्ध नाक के पिछले भाग में चली जाती है. वहां से इसकी सूचना गन्ध तन्त्रिकाओं द्वारा मस्तिष्क को मिल जाती है. इस प्रकार स्वाद का पूरा आनन्द मिल जाता है.



उल्लू को अंधेरे में कैसे दिखाई देता है?

प्रकृति में अनेकों प्रकार के पक्षी देखने को मिलते हैं, उल्लू भी उनमें से एक है. यह एक ऐसा विचित्र पक्षी है, जिसे दिन की अपेक्षा रात में अधिक स्पष्ट दिखाई देता है. उल्लू को दिखाई तो दिन में भी देता है, लेकिन उतना स्पष्ट दिखाई नहीं देता, जितना कि रात में. इसके कान बेहद संवेदनशील होते हैं और रात में जब इसका कोई शिकार (जन्तु) थोड़ी सी भी हरकत करता है, तो इसे पता चल जाता है और यह उसे पकड़ लेता है. इसके पैरों में टेढ़े नाखूनों वाले चार पंजे होते हैं, जिससे इसे शिकार दबोचने में विशेष सुविधा रहती है. चूहे इसका विशेष भोजन हैं.

उल्लू लगभग संसार के सभी भागों में पाया ज़ाता है. कुछ देशों में इसे अशुभ पक्षी मानते हैं, तो कुछ देशों में इसे बुद्धिमान और शुभ पक्षी मानते हैं. उल्लू को अंधेरे का पक्षी कहते हैं. जिन पक्षियों को रात में अधिक दिखाई देता है, उन्हें रात का पक्षी (Nocturnal birds) कहते हैं. क्या तुम जानते हो कि रात के अंधेरे में उल्लू को किस प्रकार दिखाई देता है?

इस बात को समझने के लिए यह जानना जरूरी है कि हमें वस्तुएं कैसे दिखाई देती हैं. वस्तु से आने वाला प्रकाश हमारी आंख के अन्दर उपस्थित लेन्स द्वारा आंख के पर्दे पर केन्द्रित हो जाता है. आंख के इस पर्दे को रेटिना (Retina) कहते हैं. इस पर वस्तु का उल्टा प्रतिबिम्ब बनता है, जो मस्तिष्क द्वारा सीधा कर दिया जाता है और वस्तु हमें दिखाई देने लगती है. उल्लू की आंखों में चार विशेषताएं होती हैं, जिनके कारण इसे रात में अधिक दिखाई देता है. पहली विशेषता तो यह है कि इसकी आंख के लेन्स और रेटिना के बीच की दूरी हमारी आंख के लेन्स और रेटिना के बीच की दूरी की अपेक्षा अधिक होती है, जिससे वस्तु का रेटिना के ऊपर बड़ा प्रतिबिम्ब बनता है. इसकी आंख में पेक्टन (Pecten) नामक एक विशेष अंग होता है, जो अलग-अलग दूरियों के लिए लेन्स को फोकस (Focus) कर देता है. दूसरी विशेषता यह है कि इसकी आंख में संवेदन कोशिकाओं (Rods and Cones) की संख्या बहुत अधिक होती है. इनकी संख्या प्रति वर्ग मिलीमीटर में लगभग 10,000 होती है, जबकि हमारी आंख में इनकी संख्या 2000 प्रति वर्ग मिलीमीटर होती है. इस प्रकार उल्लू हमारी अपेक्षा पांच गुना अधिक देख सकता है. तीसरी विशेषता यह है कि इसकी आंख में एक लाल रंग का पदार्थ होता है, जो वास्तव में एक प्रोटीन है. इस कारण रात के प्रकाश के लिए इसकी आंखें अधिक संवेदनशील हो जाती हैं. चौथी विशेषता यह है कि इसकी आंख की पुतलियां अधिक फैल सकती हैं, जिससे कम से कम रोशनी भी इसकी आंख में जा सकती है. इन चारों विशेषताओं के कारण उल्लू को रात में अधिक दिखाई देता है.



क्या चींटियों के भी साम्राज्य होते हैं?

क्या चींटियों की भी कोई दुनिया होती है? हां, क्यों नहीं! चींटियों के भी अपने शहर होते हैं और वे भी हमारी ही तरह छोटी-छोटी बस्तियां बनाकर समूहों में रहती हैं. चींटियों में भी राजा और रानी होते हैं. इतना ही नहीं अलग-अलग काम करने के लिए इनमें सेवक चींटियां भी होती हैं. एक बात बहुत ही आश्चर्यजनक है कि इनकी सेनाएं भी होती हैं, जो बड़े से बड़े जानवरों का मुकाबला कर सकती हैं. आकार की दृष्टि से यह जितनी छोटी होती है, बुद्धि की दृष्टि से यह उतनी ही प्रखर होती है. अथक परिश्रम का और सामूहिक स्तर पर कार्य करने का, इससे बड़ा उदाहरण अन्यत्र कहीं भी ढूंढ़ने को नहीं मिलेगा. चींटियों में एक विशेषता और भी होती है—वह यह कि ये हार तो कभी मानती ही नहीं हैं. बार-बार गिरकर भी ऊंचाई पर चढ़ना इनकी प्रवृत्ति होती है. अनुशासित रहना इनका प्रकृति प्रदत्त गुण है. एक नन्हीं सी चींटी यदि कहीं हाथी की सूंड में घुस जाए, तो उसे बेदम करके ही मानती है. इसे पिपीलिका भी कहते हैं.

दुनिया में अब तक लगभग चींटियों की 2000 से अधिक जातियों का अध्ययन किया जा चुका है. इन जातियों में छोटी-बड़ी चींटियां सभी आती हैं. सबसे बड़ी चींटी अफ्रीका में पायी जाती है, जिसकी लम्बाई तीन सेंटीमीटर तक होती है. चींटियां संगठित रूप में रहती हैं. इनके समूह बड़े भी होते हैं और छोटे भी. ये समूह जमीन के अन्दर, बाहर, ऊंची-ऊंची चट्टानों और टीलों आदि सभी जगहों पर मिलते हैं.

हर जाति की चींटियों की अपनी सेनाएं होती हैं, जो एक दूसरे पर हमला करती रहती हैं. मजबूत चींटियां कमजोर चींटियों को उनके बिल से खदेड़कर अपना कब्जा जमा लेती हैं. इतना ही नहीं, बल्कि उनके अण्डों पर भी कब्जा कर लेती हैं और जब उन अण्डों से बच्चे निकलते हैं, तो उनसे गुलामों का काम लिया जाता है. एक जाति की हजारों लाखों चींटियां एक देश के रूप में रहती हैं. उनमें भी राजा-रानी व विभिन्न अधिकारी होते हैं. राजा राज्य कार्य चलाता है और रानी गुलाम चींटियों से तरह-तरह के काम लेती है. नौकर चींटियां जीवन भर सेवा कार्य करती रहती हैं. नर और मादा चींटियों का आपस में विवाह भी होता है. किसान चींटी दूसरी चींटियों के लिए भोजन का प्रबन्ध करती है. चींटियों के अपने महल होते हैं, जो तीन फुट तक ऊंचे होते हैं.

चींटियों की कुछ जातियां बड़ी खूंखार होती हैं. मध्य अफ्रीका, दक्षिणी अमेरिका व दक्षिण एशिया में चींटियों की एक ऐसी जाति भी पाई जाती है, जो मांसाहारी होती है. ये चींटियां लाखों की संख्या में अपने शिकार की तलाश में निकलती हैं और जब कोई जानवर उनके पंजे में फंस जाता है, तो वे उसका सारा मांस खा जाती हैं.





क्या भूत-प्रेत वास्तव में होते हैं?

भूत-प्रेत के विषय में प्रत्येक जाति या धर्म में कुछ न कुछ विश्वास अवश्य प्रचलित है. आये दिन समाचार-पत्रों में छपी घटनाएं उनके होने या न होने की बाते प्रस्तुत करती रहती हैं. कुछ लोग तो उन्हें देखने तक का दावा करते हैं, तो कुछ लोग उनसे डरने या भयभीत हो जाने की बात करते हैं.

हिन्दू मतानुसार इनकी एक अलग ही योनि मानी जाती है. मनुष्य को अपने कर्मों के अनुसार भूत-प्रेत योनि में रहना पड़ता है. इनका कोई स्वरूप नहीं होता. वे कोई भी स्वरूप धारण कर सकते हैं. ये आंखों से दिखाई नहीं देते. कहीं भी प्रकट या अदृश्य हो सकते हैं. खण्डहर, श्मशान, तालाब, अंधा-कुआं, निर्जन स्थान, पीपल, बरगद, इमली और गूलर आदि पेड़ों पर इनका निवास स्थान माना जाता है.

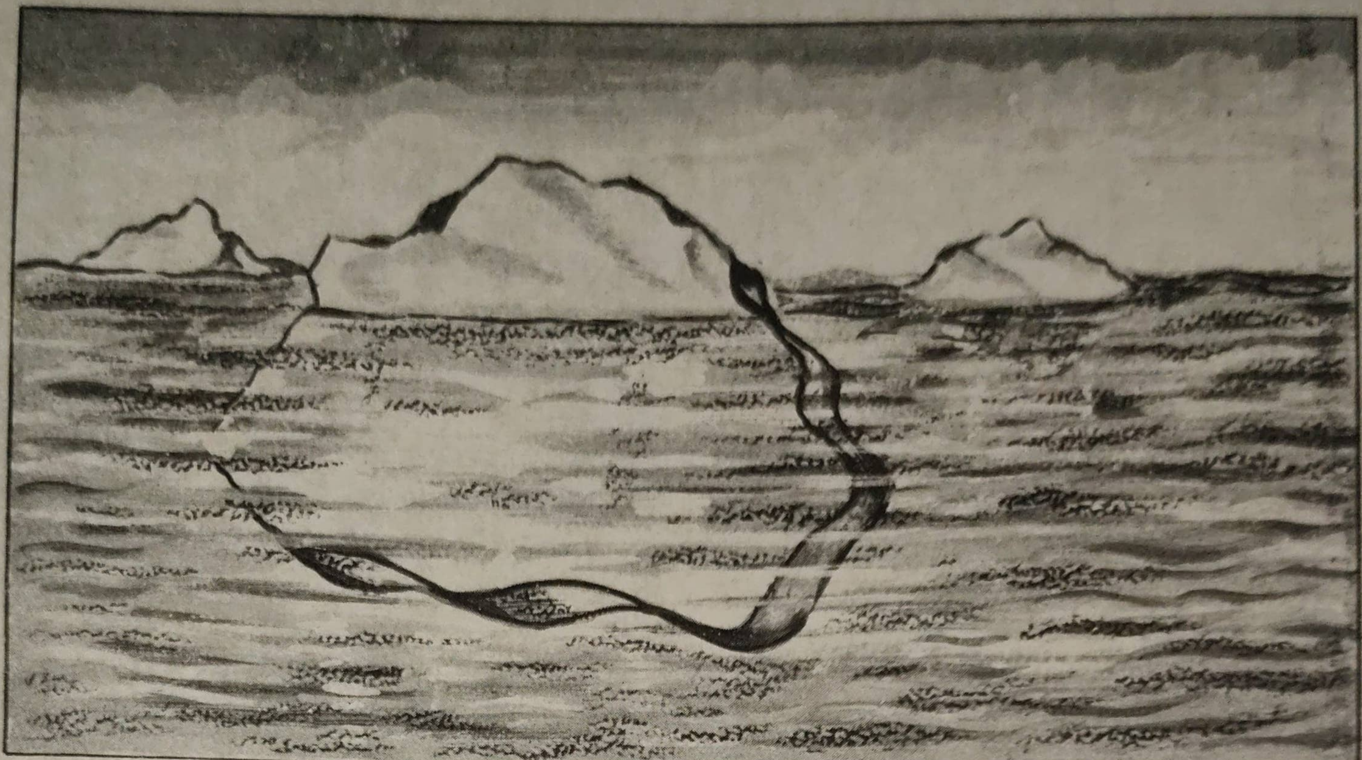
कई जातियों में मनुष्य की मृत्यु के पश्चात् कुछ ऐसे कर्मकाण्ड किए जाते हैं, जिनका उद्देश्य होता है कि मरे हुए मनुष्य का भूत, जीवित लोगों को तंग न करे.

किन्तु वैज्ञानिकों का इनके विषय में अलग ही मत है. वे इनके अस्तित्व को कपोल-कल्पना ही मानते हैं. वैज्ञानिक तथ्यों के अनुसार यह हमारी आंखों या दिमाग का भ्रम या धोखा है. यह भ्रम या धोखा दो प्रकार का होता है. पहला मिथ्या विश्वास (Illusion) और दूसरा निर्मूल भ्रम (Hallucination).

इस भ्रम में कोई न कोई वस्तु होती अवश्य है, किन्तु हमारी आंखें और दिमाग उस वस्तु को कुछ और ही समझ बैठता है. रेगिस्तान में मृगतृष्णा (Mirage) एक ऐसी ही घटना है. मृग को आगे पानी भरा दिखाई देता है. वह अपनी प्यास बुझाने वहां पहुंचता है, किन्तु उसे फिर दूर आगे पानी दिखाई देता है. जब वह वहां जाता है, तो पानी नहीं होता. इस प्रकार मृग भटक कर मर जाता है. पानी का यह भ्रम रेगिस्तान में प्रकाश के पूर्ण आन्तरिक परावर्तन के कारण होता है. वास्तव में पानी वहां होता ही नहीं है, लेकिन प्रकाश के पूर्ण परावर्तन के कारण पेड़ पौधों की परछाइयां उल्टी दिखाई देती हैं, जो पानी होने का भ्रम पैदा करती हैं.

निर्मूल भ्रम में वास्तव में कोई वस्तु होती ही नहीं. इसका कारण मस्तिष्क में तनाव या परेशानी होती है. कुछ नशीली दवाओं का सेवन भी इस तरह का भ्रम पैदा कर सकता है. इस भ्रम में मनुष्य को तरह-तरह की आवाजें सुनाई देती हैं, विचित्र जीव दिखाई देते हैं और कभी-कभी बड़ी-बड़ी डरावनी दैत्याकार शक्लें दिखाई देती हैं, जिन्हें वह भूत समझ बैठता है. कोकीन के प्रयोग से मनुष्य को ऐसा लगता है, जैसे उसके शरीर पर कीड़े रेंग रहे हों.

अतः वैज्ञानिकों के मत से भूत-प्रेत केवल एक मानसिक भ्रम है. इसका स्वयं का कोई अस्तित्व नहीं होता.



बर्फ पानी में क्यों तैरती है?

यह एक साधारण अनुभव की बात है कि जब एक बर्फ का टुकड़ा पानी में डाला जाता है, तो वह डूबता नहीं है, बल्कि तैरता रहता है. बर्फ का बड़े से बड़ा टुकड़ा भी पानी में डूबेगा नहीं, बल्कि तैरता ही रहेगा. यहां तक कि बर्फ का पहाड़ भी समुद्र में तैरता ही रहता है. क्या तुम जानते हो कि बर्फ पानी में क्यों तैरती है?

वस्तुओं का पानी में तैरने का सिद्धांत सबसे पहले ग्रीस के वैज्ञानिक आर्कीमिडीज़ ने दिया था. इसके अनुसार जब किसी वस्तु को पानी में डाला जाता है, तो वह वस्तु पानी को हटाती है. इस वस्तु पर दो बल कार्य करते हैं. वस्तु का भार नीचे की ओर दबाव डालता है और पानी द्वारा लगाया गया उत्प्लावन बल (Up thrust or Buoyant Force) उसे ऊपर की ओर उछालता है. जब वस्तु का भार उत्प्लावन बल के बराबर या कम होता है, तो वस्तु पानी में तैरती है, अर्थात् जब उस वस्तु का भार उसके द्वारा हटाए गए पानी के भार के बराबर या कम होता है, तो वस्तु पानी में तैरती है और यदि वस्तु का भार उसके द्वारा हटाए गए पानी के भार से अधिक होता है, तो वह पानी में डूब जाती है. अतः कोई भी वस्तु पानी में तभी तैरेगी जब उसका भार उसके आयतन के बराबर पानी के भार के बराबर होगा. लकड़ी का टुकड़ा पानी में इसलिए तैरता है, क्योंकि उसका भार उसके समान आयतन पानी के भार से आधा होता है. अतः लकड़ी का आधा भाग पानी में डूब जाता है और आधा पानी के ऊपर रहता है. इसी प्रकार कार्क का भार उसके द्वारा हटाए गए पानी के भार का पांचवां हिस्सा होता है, इसलिए कार्क का पांचवां भाग पानी में डूब जाता है और शेष भाग पानी के ऊपर रहता है. इसी सिद्धांत के आधार पर बर्फ का तैरना भी समझा जा सकता है.

आमतौर पर पदार्थ जब द्रव अवस्था से ठोस अवस्था में बदलते हैं, अर्थात ठोस अवस्था में आने पर उनके अणु आस-पास आ जाते हैं, जिसके फलस्वरूप उनका आयतन कम हो जाता है. आयतन कम हो जाने का मतलब है कि उनका घनत्व बढ़ जाता है और वे ठोस अवस्था में द्रव अवस्था की अपेक्षा भारी हो जाते हैं, लेकिन पानी एक

ऐसा विचित्र द्रव है कि जब वह बर्फ में बदलता है, तो सिकुड़ने की बजाय फैलता है. बर्फ का आयतन पानी के आयतन से लगभग नौंवा हिस्सा अधिक हो जाता है. यदि नौ लिटर पानी की बर्फ जमाई जाए तो बर्फ का आयतन लगभग दस लिटर हो जायेगा. यहां यह जान लेना भी बहुत जरूरी है कि लिटर पानी का भार नहीं बताता, बल्कि आयतन बताता है. इस प्रकार बर्फ का आयतन बढ़ने से इसका घनत्व पानी के घनत्व का 9/10वां भाग रह जाता है, अर्थात बर्फ पानी से 1/10 भाग हल्की हो जाती है. इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि यदि बर्फ का टुकड़ा पानी में डाला जाय तो इसका 9/10 भाग पानी में डूब जायेगा और 1/10 भाग पानी के ऊपर रहेगा, क्योंकि बर्फ का भार उसके द्वारा हटाये गए पानी के भार का 9/10वां भाग है. यही कारण है कि बड़े-बड़े हिमखण्डों का बहुत बड़ा भाग पानी में डूबा रहता है और दसवां हिस्सा पानी के ऊपर रहता है. यह स्थिति ऊपर के चित्र में स्पष्ट रूप से दिखाई गई है।

बर्फ का आयतन पानी से अधिक होने के कारण ही ठंडे स्थानों में पानी के पाइप फट जाते हैं, क्योंकि जैसे ही पानी जमता है, वैसे ही उसका आयतन बढ़ जाता है और आयतन बढ़ने से इतना बल पैदा हो जाता है कि पाइप फट जाती है. फिनलैंड में तो इस गुण को चट्टानों को तोड़ने में भी प्रयोग में लाते हैं, वहां पर जब चट्टानें तोड़नी होती हैं, तो उनके बीच की खाली जगह में पानी भर दिया जाता है. जब वह पानी बर्फ बनता है, तो फैलता है और उसके दबाव से चट्टानों में दरार पड़ जाती है.



प्लास्टिक सर्जरी क्या है ?

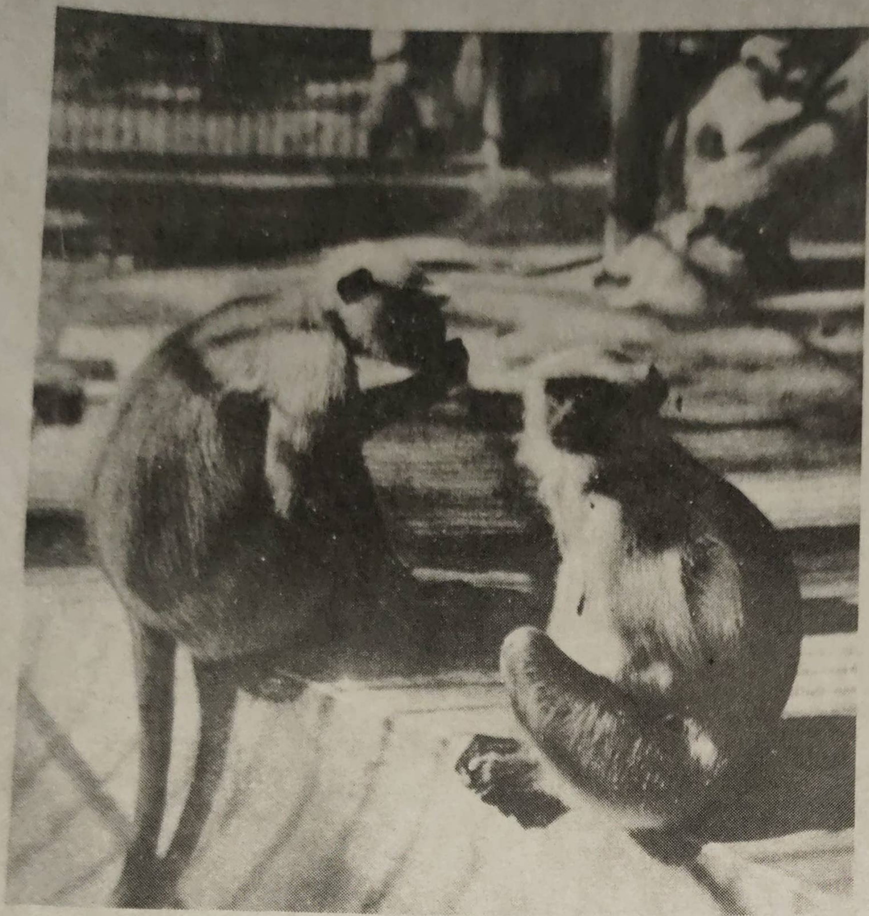
प्लास्टिक सर्जरी त्वचा से सम्बन्धित एक ऐसी शल्य-क्रिया है, जिसके द्वारा पैदायशी अंग-दोष या दुर्घटना में विकृत हुए अंगों को ठीक किया जा सकता है। इसके द्वारा चेहरे के बदसूरत दाग दूर किए जा सकते हैं। जल जाने, कट जाने या चेचक निकलने से पैदा हुई त्वचा की बदसूरती को दूर किया जा सकता है। कभी-कभी ऐसा होता है कि जन्म के समय किसी बच्चे का ऊपर का होंठ कटा हुआ होता है। प्लास्टिक सर्जरी से होंठ की त्वचा को इस प्रकार जोड़ा जा सकता है, जैसे उसमें कोई दोष ही न था। ऊपर के चित्र में एक ऐसे ही बच्चे को दिखाया गया है, जिसका होंठ जन्म के समय कटा हुआ था, लेकिन प्लास्टिक सर्जरी द्वारा बिल्कुल ठीक हो गया है।

केवल सौंदर्य के लिए की जाने वाली प्लास्टिक सर्जरी को कास्मैटिक सर्जरी या ब्यूटी सर्जरी कहते हैं। इसके द्वारा चेचक के दाग ठीक किए जा सकते हैं। चेहरे की झुर्रियां दूर की जा सकती हैं। स्तनों का आकार ठीक किया जा सकता है। इसके साथ ही इसका उपयोग पलकों की मोटाई को कम करने, मोटे होठों को पतला करने, ठोड़ी और नाक का आकार सुधारने में क्रिया जाता है।

भारत में हज़ारों वर्ष पहले भी प्लास्टिक सर्जरी प्रचलित थी। प्राचीन काल में जब कोई व्यक्ति अपराध करता था, तो उसकी नाक काट ली जाती थी। उस समय भी ऐसे प्लास्टिक सर्जन थे, जो गालों पर से त्वचा लेकर नयी नाक का निर्माण कर देते थे। आधुनिक प्लास्टिक सर्जरी की शुरुआत अमरीका में 19 वीं शताब्दी में हुई।

क्या तुम जानते हो कि प्लास्टिक सर्जरी कैसे की जाती है? प्लास्टिक सर्जरी में शरीर की त्वचा की आवश्यकता होती है। त्वचा के एक निश्चित माप के आकार को शरीर के स्वस्थ स्थान से काट लिया जाता है और उसे प्रभावित स्थान पर आरोपित कर दिया जाता है। प्लास्टिक सर्जरी में त्वचा की केवल दो परतें ही ली जाती हैं, क्योंकि नये स्थान पर इन परतों में जीवित रहने की अधिक क्षमता होती है।

आजकल लगभग हर बड़े शहर में सरकारी हस्पताालों और प्राइवेट क्लीनिकों में प्लास्टिक सर्जरी की सुविधाएं उपलब्ध हैं। केवल सौन्दर्य बढ़ाने के लिए ही इन क्लीनिकों में सैकड़ों आपरेशन रोज किए जाते हैं।



जानवर हमारी तरह बात क्यों नहीं कर सकते ?

अक्सर बच्चों की कहानियों में जानवरों को मनुष्यों की तरह बोलते हुए दिखाया जाता है, लेकिन सच यह है कि जानवर हमारी तरह बोलते नहीं हैं। समस्त जीवित प्राणियों में मानव वर्ग ही ऐसा है, जो शब्दों की सहायता से अपने विचारों को एक दूसरे तक पहुंचाता है। यह तो सत्य है कि जानवर हमारी तरह एक दूसरे से बातें नहीं करते, लेकिन वे कुछ इशारों और आवाज़ों के द्वारा अपने सुख-दुख, भय आदि को व्यक्त करते हैं। तुमने देखा होगा कि चिड़ियों के समूह के पास से जब कोई बिल्ली गुजरती है, तो सभी चिड़ियां जोर-जोर से चूं-चूं करने लगती हैं और बिल्ली द्वारा पकड़े जाने के खतरे को चीं-चींकी आवाज से प्रदर्शित करती हैं। इसी प्रकार कुत्ता भौंककर अपना क्रोध प्रकट करता है और पूंछ हिलाकर खुशामद ज़ाहिर करता है। बन्दर भी अपना गुस्सा बड़ी विचित्र आवाज़ द्वारा प्रदर्शित करता है।

क्या तुम जानते हो कि जानवर हमारी तरह बात क्यों नहीं कर पाते हैं? इसका कारण यह है कि जानवरों का मस्तिष्क मनुष्य की अपेक्षा बहुत कम विकसित होता है। जानवरों के मन में भाव तो आते हैं, लेकिन उन्हें स्पष्ट करने के लिए उनके पास शब्द नहीं होते, इसीलिए वे उन विचारों को भाषा के रूप में प्रकट नहीं कर पाते। वे केवल इन विचारों को इशारों और आवाज़ों द्वारा ही प्रकट करते हैं। लेकिन यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि उनके पास भावनाएं होती हैं। ये भावनाएं प्रेम, क्रोध, वात्सल्य, शत्रुता, हिंसा आदि को स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करती हैं। भूख, प्यास या रक्षात्मक आवश्यकताओं को भी व्यक्त करने की उनकी अपनी भाषा होती है। यह भाषा मूक होती है, लेकिन उनके बीच संदेशों का आदान-प्रदान बिना रोक-टोक के होता रहता है। यों तो हम आज भी अपनी सारी बातें भाषा से प्रकट नहीं करते, कुछ बातें इशारों से भी प्रकट करते हैं। हम बहुत सी बातों का उत्तर 'हा' या 'ना' में न देकर केवल सिर हिलाकर या हाथ के इशारे से देते हैं। अत: जानवरों के विषय में कहा जा सकता है कि उनका मस्तिष्क कम विकसित है, जिसके कारण वे बात करने के लिए किसी भाषा या शब्दों का विकास नहीं कर पाये हैं, तभी तो वे हमारी तरह बात नहीं कर पाते हैं।



व्यक्ति की याददाश्त क्यों चली जाती है?

कई बार ऐसा देखा गया है कि किसी बड़ी दुर्घटना या शोक समाचार के बाद कुछ व्यक्तियों की याददाश्त खो जाती है। वह व्यक्ति अपने अतीत को भूल जाता है, अपने सगे सम्बन्धियों और मित्रों को भूल जाता है। यहां तक कि वह अपना नाम तक भूल जाता है। मनोविज्ञान में इस रोग को स्मृति-लोप (Amnesia) कहते हैं।

स्मृति-लोप या याददाश्त का चला जाना कई कारणों से हो जाता है। मस्तिष्क में चोट लगना, मानसिक आघात या सदमा, बहुत अधिक थकान, दवाओं का प्रभाव, मस्तिष्क की शल्य चिकित्सा, मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाएं, वृद्धावस्था, शराब के प्रभाव आदि कुछ ऐसे कारण हैं, जिनसे याददाश्त कम हो सकती है या खो सकती है। याददाश्त खोने का कारण चाहे कुछ भी हो, लेकिन मस्तिष्क में होने वाला प्रभाव लगभग एक सा ही होता है। याददाश्त मस्तिष्क में उपस्थित न्यूरोन्स के द्वारा कायम रहती है, जब ये न्यूरोन्स किसी कारणवश प्रभावित हो जाते हैं, तो स्मृति-लोप हो जाता है। न्यूरोन्स मस्तिष्क के सभी हिस्सों में होते हैं, अलग-अलग समय की बातों का रिकार्ड (Record) रखते हैं। जिस हिस्से के न्यूरोन्स प्रभावित होते हैं, उसी हिस्से की याददाश्त समाप्त हो जाती है।

स्मृति-लोप में या तो याददाश्त खोने से पहले की बातें याद नहीं रहतीं या याददाश्त खोने के बाद की घटनाए याद नहीं रहतीं। स्मृति-लोप कुछ हफ़्ते तक, महीनों और वर्षों तक भी रह सकता है। कुछ ऐसे भी व्यक्ति देखे गए हैं, जिनकी जीवन भर के लिए याददाश्त चली जाती है। जब आदमी की याददाश्त वापस आती है, तो भूली हुई सभी बातें याद आ जाती हैं। वास्तव में याददाश्त वापस आने का मतलब है कि प्रभावित न्यूरोन्स ठीक हो गए हैं। लेकिन एक बात निश्चित है कि याददाश्त वापस आ जाने पर भी कुछ न कुछ प्रभाव मस्तिष्क पर अवश्य रह जाता है, जिससे याददाश्त क्षीण हो जाती है। याददाश्त खो जाने पर मनोचिकित्सकों की सहायता तुरंत लिया जाना अति आवश्यक है। याददाश्त का कम होना आमतौर पर वृद्धावस्था के कारण होता है। कभी-कभी पेप्टिक अलसर (Peptic Ulcer), हाई ब्लड प्रेशर या दमे की बीमारी के कारण भी याददाश्त कमजोर हो जाती है।

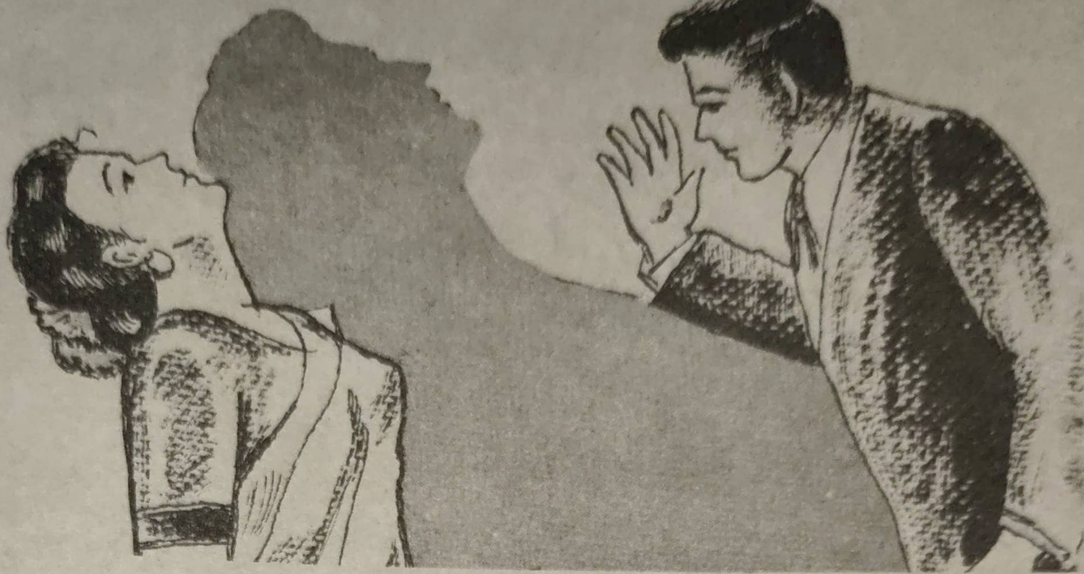


महिलाओं के दाढ़ी क्यों नहीं होती ?

प्रकृति की लीला ही कुछ निराली है। कुछ जीवधारियों के शरीर पर बाल होते हैं, तो कुछ के शरीर पर पंख। मोटे तौर पर स्तनधारी(Mammals)प्राणियों के शरीर पर बाल होते हैं और पक्षियों के शरीर पर पंख। बाल हमारे शरीर की गर्मी को सुरक्षित रखते हैं और तेज धूप से त्वचा को झुलसने से बचाते हैं। ये हमारे शरीर को छूने के अनुभवों को प्राप्त करने में भी मदद करते हैं।

अब प्रश्न उठता है कि पुरुषों के तो दाढ़ी होती है, लेकिन महिलाओं के नहीं। ऐसा क्यों होता है? जब बच्चा पैदा होता है, तो उसके शरीर पर कोमल रोएं होते हैं। जब वह थोड़ा बड़ा होता है, तो उन रोयों के स्थान पर थोड़े सख्त बाल आ जाते हैं। लड़के लड़कियों में ग्यारह से लेकर तेरह साल की उम्र में वयस्क अवस्था आती है। इस उम्र में यौन-ग्रन्थियों (Sex Glands) का विशेष विकास होता है। इसी उम्र में पुरुषों की यौन-ग्रन्थियां एन्ड्रोजन नाम के हार्मोन पैदा करती हैं। लड़कियों की यौन-ग्रन्थियां एस्ट्रोजन नाम के हार्मोन पैदा करती हैं। पुरुषों में पैदा होने वाले एन्ड्रोजन हार्मोन दाढ़ी और छाती के बालों की वृद्धि के लिए जिम्मेदार होते हैं। इन्हीं हार्मोनों के कारण आवाज़ में भी भारीपन आ जाता है। लड़कियों में पैदा होने वाले एस्ट्रोजन हार्मोनों के कारण उनके वक्षों का विकास होता है। इन्हीं के द्वारा लड़कियों में मासिक धर्म शुरू होता है। ये हार्मोन बगल और स्त्रियों के गुप्तांगों पर बाल उगाने का कार्य करते हैं। इन्हीं दोनो हार्मोनों के कारण मनुष्य और स्त्री में अंतर स्थापित होता है। स्त्रियों का शरीर मुलायम और चिकना हो जाता है, जबकि मनुष्यों का शरीर सख्त और मजबूत हो जाता है। स्त्रियों में प्रोजेस्ट्रोजन नाम के हार्मोन और भी पैदा होते हैं, जो गर्भाधान क्रिया को नियंत्रित करते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि एन्ड्रोजन हार्मोनों के कारण मनुष्य के तो दाढ़ी उग आती है, लेकिन एस्ट्रोजन हार्मोन महिलाओं के दाढ़ी नहीं उगने देते।

प्रकृति ने संभवतः यह अंतर इसलिए रखा है ताकि पुरुषों और महिलाओं के बीच में पहचान आसानी से हो सके।



सम्मोहन क्या है ?

सम्मोहन एक ऐसा विज्ञान है, जिसके द्वारा किसी भी व्यक्ति की मानसिक स्थिति को इस प्रकार परिवर्तित कर दिया जाता है कि वह सम्मोहन कर्ता के सुझावों के अनुसार काम करने लगता है। सम्मोहन शक्ति का प्रयोग लोग प्राचीन काल से ही करते आये हैं। पहले लोग इसे रहस्य, जादू या चमत्कार दिखाने के लिए प्रयोग में लाते थे, लेकिन आज इसका अध्ययन वैज्ञानिक ढंग से किया जाने लगा है। इसकी शुरुआत वियना के एक डाक्टर फ्रैंज ए० मेस्मर (Franz A. Mesmer) ने की थी। उन दिनों डाक्टर मेस्मर के नाम पर सम्मोहन को मेस्मेरिज्म (Mesmerism) कहा जाता था। सम्मोहन (Hypnotism) शब्द का प्रयोग सबसे पहले सन् 1840 में स्काटलैंड के एक सर्जन जेम्स ब्रेड (James Braid) ने किया था। इस शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के 'हिपनोस' शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है सुप्तावस्था या मोह-निद्रा।

वास्तव में सम्मोहित व्यक्ति बहुत हद तक ऐसा ही दिखता है जैसा नींद में ऊंघने वाला व्यक्ति। उसका मस्तिष्क इस प्रकार से बदल जाता है कि वह किसी भी काम को कहने के अनुसार करने लगता है। सम्मोहन शक्ति का प्रयोग उसी व्यक्ति पर किया जाता है, जो इसे पूर्ण सहमति और सहयोग से करना चाहता है। किसी भी व्यक्ति को उसकी इच्छाओं के विरुद्ध सम्मोहित नहीं किया जा सकता। जिस व्यक्ति को सम्मोहित करना होता है, उसे सम्मोहक एक अंधेरे कमरे में बिठाता है। सम्मोहक अपने रोगी से बड़े शांत स्वर में बार-बार ढील देने और आराम से बैठने के लिए कहता है, फिर उससे किसी वस्तु पर ध्यानमग्न होकर दृष्टि केन्द्रित करने के लिए कहा जाता है। जब वह वस्तु को काफी देर तक देखता रहता है, तो उसकी आंखें थकने लगती हैं। ऐसी स्थिति आने पर उससे आंखें बंद करने को कहा जाता है। इस समय वह व्यक्ति सोने जैसी अवस्था में आ जाता है। अब सम्मोहक उस व्यक्ति को अपने सुझाव और आदेश देना शुरू करता है। इस अवस्था में वह व्यक्ति सम्मोहित हो जाता है और वे सभी काम करने लगता है, जो सम्मोहक उससे करने के लिए कहता है।

सम्मोहन क्रिया के द्वारा आदमी को ऐसा महसूस कराया जा सकता है, जैसे वह अंधा, बहरा व गूंगा है। इसके द्वारा व्यक्ति को कंपकंपाहट महसूस कराई जा सकती है। सम्मोहन द्वारा आदमी को डराया जा सकता है। यहां तक कि सम्मोहित व्यक्ति से ऐसे कार्य कराए जा सकते हैं, जिन्हें वह सामान्य स्थिति में कभी नहीं करेगा। जब व्यक्ति सम्मोहन के प्रभाव से सामान्य अवस्था में आता है, तो वह अपनी कही हुई बातें और किए हुए कामों को बिल्कुल भूल जाता है।



रेगिस्तान में जानवर और पौधे कैसे जीवित रहते हैं ?

रेगिस्तान का अर्थ उस स्थान से होता है, जहां पानी बहुत ही कम हो, अधिकतर रेत ही रेत हो और पेड़-पौधे बहुत ही कम हों। रेगिस्तान में पानी की कमी के कारण पेड़-पौधों और जानवरों का जीवित रहना बहुत ही कठिन होता है। वहां पर केवल वे ही पेड़-पौधे और जानवर जीवित रह सकते हैं, जिन्हें जीने के लिए पानी की बहुत ही कम आवश्यकता होती है।

दिन और रात में रेगिस्तान के मौसम में काफी अंतर रहता है। दिन में बहुत गर्मी पड़ती है, लेकिन रातें ठंडी हो जाती हैं। गर्मी से बचने के लिए दिन के समय जानवर झाड़ियों में छिप जाते हैं। जब कभी थोड़ी वर्षा होती है, तभी पौधे व जानवर अपने अंदर पानी जंमा कर लेते हैं।

रेगिस्तान में कई प्रकार के जानवर मिलते हैं। घोंघे काफी मात्रा में पाये जाते हैं। अमरीका के रेगिस्तानों में एक प्रकार का चूहा भी मिलता है, जिसे पैक रैट (Pack Rat) कहते हैं। उत्तरी अफ्रीका और एशिया के रेगिस्तानों में जरबोआ (Jerboa) नाम का जानवर मिलता है। इसकी पिछली टांगें लम्बी होती हैं. यह कंगारू जैसा लगता है। अरब और अफ्रीका के रेगिस्तानों में एक प्रकार का भेड़िया भी मिलता है। अनेकों प्रकार की छिपकली, उल्लू, कुछ कीड़े-मकोड़े और चींटियां भी रेगिस्तानों में मिलती हैं। ये सभी जानवर ऐसे हैं, जिन्हें जीवित रहने के लिए पानी की कम आवश्यकता होती है।

रेगिस्तान में पाये जाने वाले जानवरों में ऊंट का एक प्रमुख स्थान है। इसे रेगिस्तान का जहाज़ भी कहते हैं। यह सूखी घास और कांटेदार पौधों को खाकर जीवित रह सकता है इसके कूबड़ में चर्बी इकट्ठी रहती है, जिसे यह कठिन परिस्थितियों में काम में ला सकता है। यह कई दिन तक बिना पानी पिये रह सकता है। इसके शरीर से पानी का वाष्पीकरण धीरे-धीरे होता है। खर्च हो चुके पानी की पूर्ति यह दस मिनट में कर सकता है। एक बार में यह 25 गैलन पानी पी सकता है। इसके नाक, कान और आंख की बनावट ऐसी होती है, जो रेत का प्रभाव नहीं होने देती।

रेगिस्तान में मुख्य रूप से दो प्रकार के पौधे मिलते हैं : एक को झाड़ी (Shrubs) और दूसरे को केक्टस (Cactus) कहते हैं। झाड़ियों में कांटे अधिक और पत्तियां कम होती हैं। पत्तियां कम होने से झाड़ी में मौजूद पानी का वाष्पीकरण बहुत कम होता है। केक्टस का तना मोटा और गूदेदार होता है, इसमें पत्ते नहीं होते, बल्कि कांटे होते हैं। तने की ऊपरी पर्त बहुत सख्त होती है, इसलिए तने में काफी पानी जमा रह सकता है। कुछ केक्टस में कांटों की नोकें जमीन की तरफ होती हैं। इन नोकों पर जमी ओस की बूंदें जमीन पर गिर जाती हैं और पौधे के नीचे नमी बनी रहती है। इनकी जड़ें भी दूर-दूर तक इधर-उधर फैली रहती हैं। लम्बे सूखे मौसम के बाद भी यदि थोड़ी सी वर्षा हो जाती है, तो उनकी जड़ें शीघ्र ही पानी शोख लेती हैं। कुछ केक्टस की जड़ें अन्य पेड़-पौधों को अपने पास नहीं उगने देतीं और इस प्रकार उन्हें अधिक पानी और भोजन मिलने की सम्भावना हो जाती है।



कुत्ता पागल क्यों हो जाता है ?

कुत्ता मनुष्य का एक वफादार दोस्त माना जाता है, लेकिन जब यह पागल हो जाता है, तो इतना खतरनाक हो जाता है कि बिना उचित इलाज के इसके काटने से मृत्यु हो जाती है। क्या तुम जानते हो कि कुत्ता पागल क्यों हो जाता है?

कुत्ता जब रैबीज़ नामक बीमारी का शिकार हो जाता है, तो पागल हो जाता है। यह बीमारी एक प्रकार के विषाणु (Virus) द्वारा होती है। वायु से या किसी दूसरे जंगली जानवर से ये विषाणु कुत्ते की त्वचा के जख्म द्वारा शरीर में प्रवेश कर जाते हैं। ये विषाणु चार से छः सप्ताह के अंदर अपना असर दिखाना शुरू करते हैं। इस दौरान कुत्ता सुस्त रहता है, फिर उसे बुखार आता है और खाने-पीने में उसकी रुचि नहीं रहती। जब ये विषाणु सारे शरीर में फैलकर मस्तिष्क पर हमला करते हैं, तो कुत्ता उत्तेजित होने लगता है। उसके मुंह में लार आने लगती है। लार के साथ ये विषाणु भी होते हैं। कुत्ता गुर्राना और भौंकना शरू कर देता है। इस बीच कुत्ता किसी भी व्यक्ति को काट सकता है। ऐसी स्थिति में कुत्ते को पागल कहा जाता है। कुत्ते में जब बीमारी के लक्षण दिखने लगते हैं, तो वह तीन से पांच दिन में मर जाता है।

जब कोई पागल कुत्ता मनुष्य को काटता है, तो कुत्ते की लार में मौजूद विषाणु काटे हुए स्थान से मनुष्य के शरीर में प्रवेश कर जाते हैं। शुरू में मनुष्य को मानसिक कमजोरी और बेचैनी महसूस होती है। उसे बुखार आता है। वह चिन्तित रहने लगता है। उसे नींद नहीं आती और डर महसूस होने लगता है। गले की मांस-पेशियां शिथिल हो जाती हैं और निगलने या पीने की क्रिया में उसे कष्ट होने लगता है। वह पानी से भयभीत होने लगता है। इसीलिए इस बीमारी को हाइड्रोफ़ोबिया (Hydrophobia) भी कहते हैं।

मनुष्य में बीमारी के लक्षण एक माह से लेकर तीन माह में प्रकट होने लगते हैं। यदि कुत्ते ने गर्दन, मुंह या सिर में काटा है, तो कम समय लग सकता है। काटे हुए स्थान को तुरंत धोकर, तीन दिन के भीतर ऐन्टीरैबीज़ के इन्जेक्शन लगाने की व्यवस्था करनी चाहिए। कुत्ते पर भी निगाह रखनी चाहिए। यदि कुत्ता पांच दिन में न मरे, तो उसे पागल नहीं मानना चाहिए और इलाज रोक देना चाहिए, क्योंकि पागल कुत्ता पांच दिन में अवश्य ही मर जाता है।

रैबीज़ के विषाणु लोमड़ी, भेड़िया, गीदड़, बिल्ली, और चमगादड़ आदि पर भी आक्रमण करते हैं। लेकिन इन जानवरों से रैबीज़ के विषाणु मनुष्य के शरीर में बहुत कम प्रवेश कर पाते हैं, क्योंकि मनुष्य इनके अधिक सम्पर्क में नहीं आता।



इंद्रधनुष कैसे बनता है ?

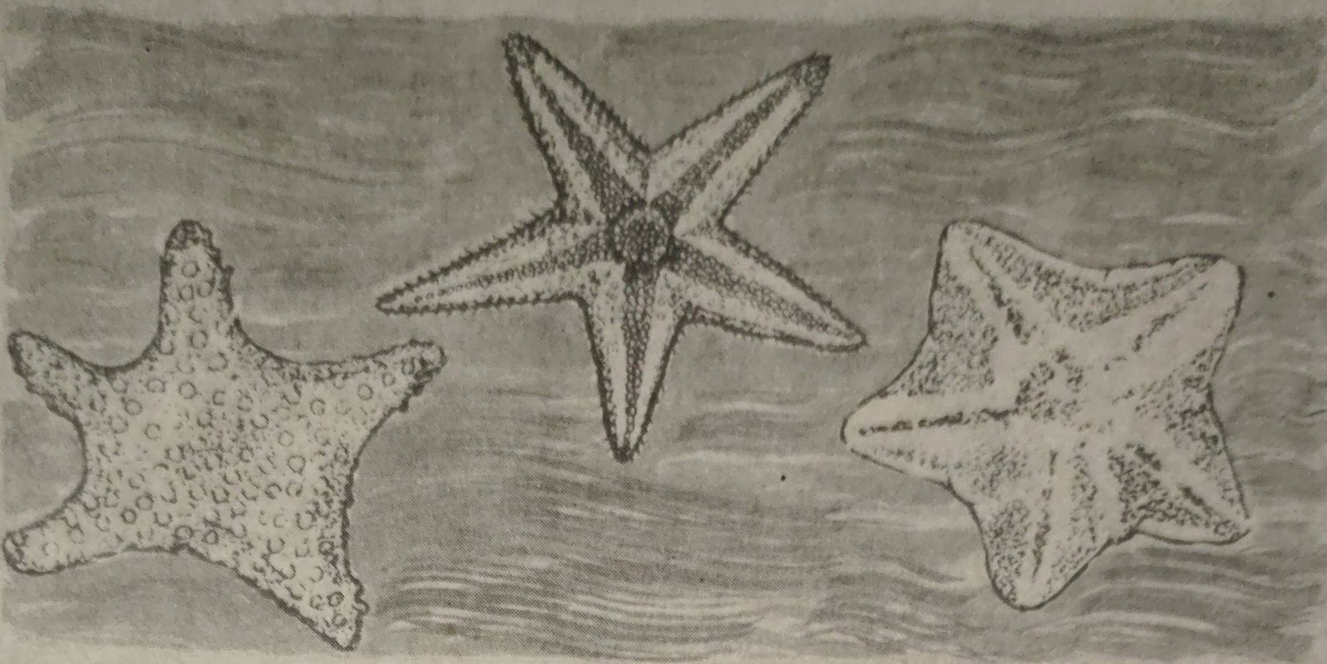
बरसात के दिनों में धनुष के आकार की एक रंग बिरंगी पट्टी आकाश में प्रायः दिखाई देती है। यही इंद्रधनुष है। यह पट्टी सात रंगों की होती है। जिसमें लाल रंग सबसे ऊपर होता है और बैंगनी रंग सबसे नीचे, बीच में अन्य रंग होते हैं। इंद्रधनुष प्रकृति का एक बड़ा ही सुंदर दृश्य है।

इंद्रधनुष कैसे बनता है? इस बात को जानने की उत्सुकता आदि काल से मनुष्य के मन में रही है। सूर्य का प्रकाश जो हमें देखने में सफेद लगता है, वास्तव में वह सात रंगों का मिश्रण है। ये सात रंग हैं, बैंगनी (Violet), जामुनी (Indigo), नीला (Blue), हरा (Green), पीला (Yellow), नारंगी (Orange) और लाल (Red)। यही सात रंग मिलकर सफेद रंग का प्रकाश बनाते हैं। सात रंगों के इस समूह को वर्णपट या स्पैक्ट्रम (Spectrum) कहते हैं। वर्षा के बाद वायुमण्डल जल की छोटी-छोटी बूंदों से भरा होता है। सूर्य से आने वाली सफेद प्रकाश की किरणें जब इन जल की बूंदों में प्रवेश करती हैं, तो वे सात रंगों में विभक्त हो जाती हैं। वर्षा की बूंदें प्रिज्म (Prism) का काम करती हैं,जैसे प्रिज्म सफेद प्रकाश के सात रंगों को अलग-अलग कर देता है, वैसे ही ये बूंदें भी सात रंगों को अलग-अलग कर देती हैं। सूर्य की किरणों के इस प्रकार सात रंगों में अलग-अलग होने को वर्ण-विक्षेपण (Dispersion) कहते हैं। ये रंग वर्षा की बूंदों के पिछले भाग से पूर्ण परावर्तित होकर सात रंगों की किरणों के रूप में निकलते हैं। इन सात रंगों की किरणें जब हमारी आंखों तक पहुंचती हैं, तो हमें इंद्रधनुष के रूप में दिखती हैं। इंद्रधनुष गोल इसलिए दिखाई देता है, क्योंकि सूर्य का आकार भी गोल है। कभी-कभी दूसरा इंद्रधनुष भी देखा जा सकता है। यह पहले इंद्रधनुष से रंगों में फीका होता है और इसमें रंगों का क्रम विपरीत होता है, अर्थात इसमें बैंगनी रंग ऊपर और लाल रंग नीचे होता है।

यह इंद्रधनुष उस प्रकाश से बनता है, जिसका परावर्तन (Reflection) पानी की बूंदों के भीतर दो बार होता है।

इंद्रधनुष आमतौर पर तभी दिखाई देता है, जब सूर्य हमारी पीठ के पीछे हो और वर्षा की बूंदों का समूह हमारी आंखों के सामने हो, अर्थात हम सूर्य और बूंदों के बीच में हों। इंद्रधनुष बनने के लिए यह भी जरूरी है कि बरसात के समय सूर्य निकल रहा हो। यह भी जरूरी है कि सूर्य, हमारी आंखों और इंद्रधनुष का केन्द्र-बिंदु एक ही सरल रेखा में हो।

सात रंगों का क्रम याद रखने के लिए विबग्योर (Vibgyor) शब्द को याद रखना चाहिए। इसमें प्रत्येक अक्षर एक रंग का संक्षिप्त रूप प्रदर्शित करता है, जैसे V से Violet, I से Indigo आदि-आदि।

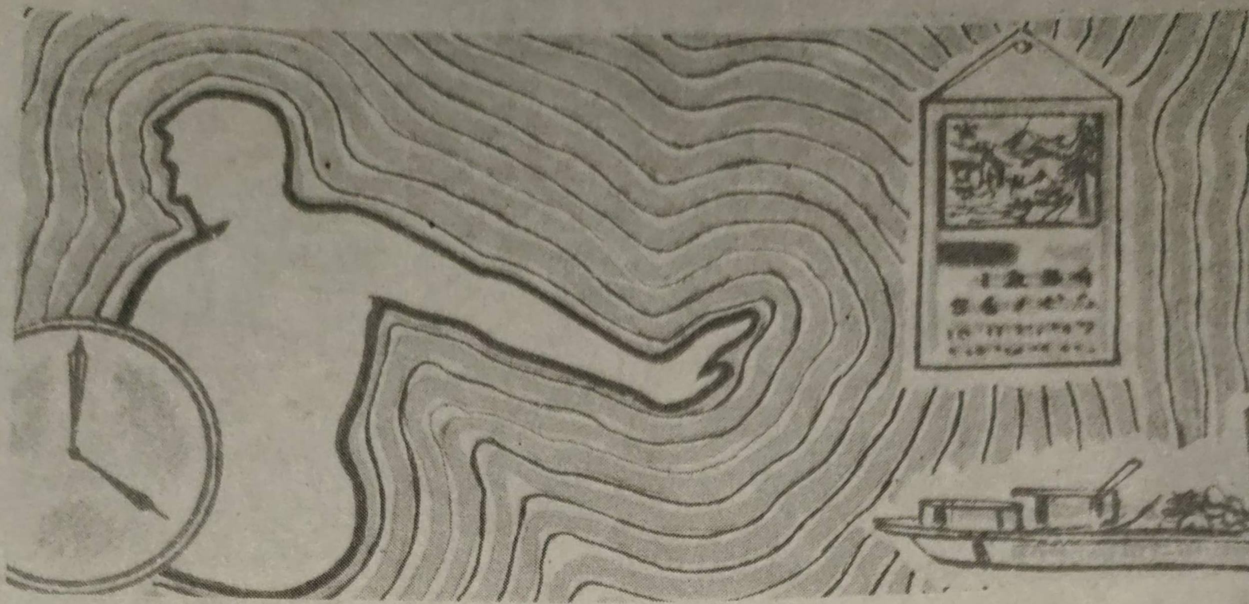


हमारे कटे हाथ पैर दोबारा क्यों नहीं उग पाते ?

यदि किसी मनुष्य का हाथ या पैर या उंगली किसी दुर्घटना में कट जाए और कुछ दिन बाद उसकी जगह दूसरा हाथ, पैर या उंगली उग आये, तो कितना अच्छा है ! लेकिन वास्तव में ऐसा होता नहीं है। तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि कुछ ऐसे प्राणी भी हैं, जिनके एक कटे हुए अंग के स्थान पर दूसरा अंग विकसित हो जाता है। किसी कटे हुए अंग के विकसित होने को पुनरुद्भवन (Regeneration) कहते हैं। कुछ जन्तुओं में पुनरुद्भवन की विलक्षण क्षमता पाई जाती है। सितारा मछली (Star fish) का यदि छोटा सा भी अंग नष्ट हो जाये, तो वह पुनरुद्भवित हो जाता है। हाइड्रा (Hydra) जन्तु में भी पुनरुद्भवन की अद्भुत क्षमता होती है।

पुनरुद्भवन की क्षमता अलग-अलग प्राणियों में अलग-अलग होती है। जटिल संरचनाओं वाले प्राणियों में पुनरुद्भवन का गुण कम होता है। मनुष्य और दूसरे स्तनधारी प्राणी जटिल संरचनाओं वाले प्राणी हैं, इसलिए इनमें पुनरुद्भवन की क्षमता कम होती है। पुनरुद्भवन की क्षमता कम होने के कारण ही हमारे कटे हाथ पैर दोबारा नहीं उग पाते। हमारे शरीर में भी कई प्रकार का पुनरुद्भवन होता है। जैसे हमारे शरीर की त्वचा यदि कहीं जल जाये या कट जाये तो उस स्थान पर नई त्वचा आ जाती है। हमारे बाल और नाखून कटने पर दोबारा उग आते हैं, लेकिन हाथ पैर या दूसरे अंगों का निर्माण एक ही बार होता है। ये पुनरुद्भवित नहीं हो सकते। पक्षियों के पंख, शल्क (Scabs) और रोमों का गिर कर दोबारा उगना भी पुनरुद्भवन क्रिया के उदाहरण हैं।

पुनरुद्भवन दो प्रकार का होता है। पहले प्रकार के पुनरुद्भवन में नष्ट हुए अंग का विकास हो जाता है। दूसरे प्रकार के पुनरुद्भवन में नया अंग पैदा नहीं होता, बल्कि शरीर का शेष भाग ही नष्ट हुए स्थान की पूर्ति कर देता है।



बिना खाये कितने दिन रहा जा सकता है ?

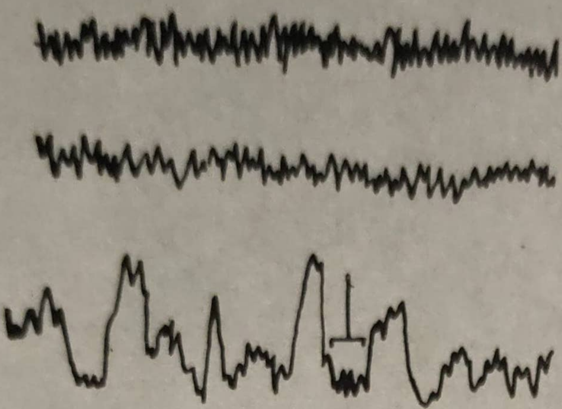
जिस प्रकार जीवित प्राणियों के लिए हवा और पानी आवश्यक है, उसी प्रकार जीने के लिए भोजन भी जरूरी है। छोटे से छोटे कीड़ों से लेकर बड़े से बड़े जानवरों को जीवित रहने के लिए भोजन की आवश्यकता होती है। यहां तक कि पेड़-पौधे भी बिना भोजन के अधिक दिन जीवित नहीं रह पाते। यदि एक दिन भी हमें भोजन न मिले तो हालत खराब हो जाती है। भोजन के द्वारा शरीर में तन्तुओं (Tissues) का निर्माण होता है। यह तो ठीक है कि भोजन हमारे लिए अत्यन्त आवश्यक है, लेकिन प्रश्न यह उठता है कि हम बिना भोजन के कितने दिन जीवित रह सकते हैं?

कुछ जानवर तथा जीव ऐसे भी हैं, जो अपने शरीर में भोजन जमा कर लेते हैं और उसी के सहारे काफी दिनों तक गुजारा कर सकते हैं। यह देखा गया है कि जानवर जितना छोटा और फुर्तीला होता है, उतनी ही जल्दी वह अपने जमा किए भोजन के भण्डार को समाप्त कर देता है। कुत्ता अधिक से अधिक बीस दिन तक भोजन बिना जिन्दा रह सकता है। हां,खटमल एक ऐसा विचित्र जीव अवश्य है, जो बिना कुछ खाये पूरे एक साल जीवित रह सकता है।

जहां तक मनुष्य का प्रश्न है, वह अपने शरीर में अधिक समय के लिए भोजन जमा नहीं कर सकता। मनुष्य को यदि एक समय खाना न मिले, तो उसकी हालत खराब हो जाती है। खून के बहाव को कायम रखने के लिए खाद्य-पदार्थों की आवश्यकता होती है। खून के सभी अवयवों का निर्माण भोजन से ही होता है। खून में जब इन तत्त्वों की कमी हो जाती है, तभी हमें भोजन की आवश्यकता होती हैं।

हमारे पास कुछ ऐसे भी उदाहरण हैं, जिनके अनुसार लोग बहुत दिनों तक बिना भोजन के जीवित रहे हैं। स्कॉटलैंड के आन्गुस वैरविएरी जून 1965 से जुलाई 1966 तक यानी 382 दिनों तक बिना खाना खाये रहे। इस दरम्यान उन्होंने केवल काफी, चाय, पानी और सोडावाटर ही पिया। इसी प्रकार दक्षिण अफ्रीका की एक महिला पानी व सोडावाटर के सहारे 102 दिन तक जीवित रहीं। न्यूज़ीलैंड की स्टीफ़न टेलर सन् 1970 में प्रतिदिन एक गिलास पानी पीकर 40 दिन तक जीवित रहे। ये कुछ असामान्य उदाहरण हैं। ऐसे लोग कुछ विलक्षण शक्ति वाले होते हैं। सामान्य व्यक्ति बिना भोजन के अधिक से अधिक एक सप्ताह तक जीवित रह सकता है।

लगातार काम करते रहने के लिए ऊर्जा भी भोजन से ही प्राप्त होती है। काम करने से जो शरीर की कोशिकाएं नष्ट होती रहती हैं, उनका निर्माण भी भोजन द्वारा ही होता है। शारीरिक वृद्धि और विकास की क्रिया भी भोजन द्वारा ही सम्भव हो पाती है। अतः शरीर को सुचारु रूप से चलाने के लिए भोजन अत्यन्त आवश्यक है।



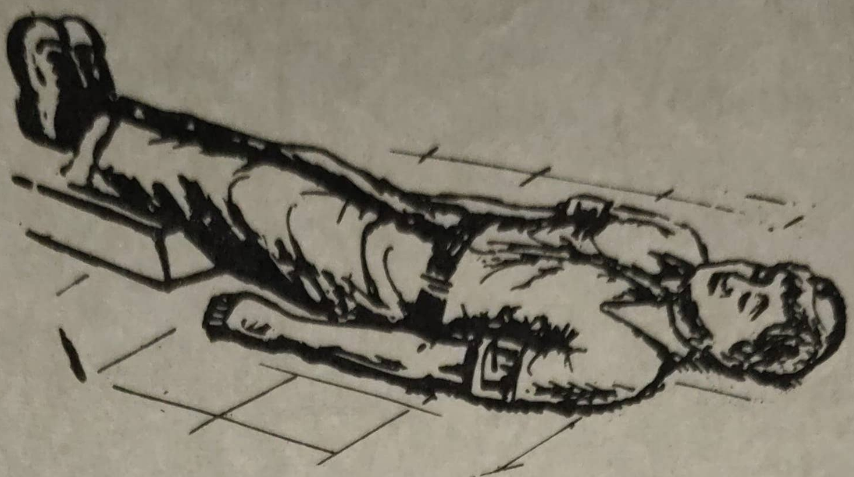


नींद में हमारे शरीर में क्या होता है ?

जिस प्रकार जीवित रहने के लिए हवा, पानी और भोजन जरूरी है, उसी प्रकार नींद भी बहुत जरूरी है। सारे दिन काम करने से हमारा मन और शरीर थक जाता है। थके हुए अंगों को ताज़गी और शक्ति प्रदान करने के लिए हमें नींद की जरूरत होती है। सोते समय हमारी मांस-पेशियां विश्राम अवस्था में आ जाती हैं, जिससे उनका तनाव कम हो जाता है और वे पुनः काम करने योग्य हो जाती हैं।

क्या तुम जानते हो कि हमें नींद कैसे आती है और नींद के दौरान हमारे शरीर में क्या होता है? वैज्ञानिक तथ्यों के अनुसार हमारे मस्तिष्क में एक बहुत ही जटिल क्षेत्र है, जिसे हम 'निद्रा-केन्द्र' कहते हैं। खून में मिला हुआ कैल्शियम इस निद्रा-केन्द्र को नियंत्रित करता है। जब कैल्शियम की एक निश्चित मात्रा रक्त द्वारा निद्रा-केन्द्र तक पहुंचा दी जाती है, तो हमें नींद आ जाती है। कुछ जानवरों पर प्रयोग करके देखा गया है कि यदि इन्जेक्शन द्वारा निद्रा-केन्द्र तक कैल्शियम भेज दिया जाए तो वह जानवर निद्रा अवस्था को प्राप्त कर लेता है। नींद की स्थिति में निद्रा-केन्द्र मस्तिष्क से आने वाली नसों का संबंध शरीर के शेष अंगों से खत्म कर देता है, जिससे हमारी इच्छा-शक्ति और चेतना अस्थाई तौर पर समाप्त हो जाती है।

सोते समय हमारा शरीर अनेक हरकतें करता है। हम नींद में कई बार करवट बदलते हैं। एक आदमी औसतन एक रात में 20 से 40 बार हरकत करता है। हमारा रक्त-संचार जारी रहता है। हृदय की धड़कन-गति कुछ धीमी पड़ जाती है। किन्तु पाचन-संस्थान अपनी सामान्य स्थिति में होता है। यकृत और गुर्दे अपना काम करते रहते हैं। नींद की अवस्था में आवाज़, प्रकाश, गर्मी और गंध आदि की प्रतिक्रिया हर सोने वाले आदमी पर एक सी होती है। नींद की अवस्था में हमारे शरीर का तापमान भी लगभग एक डिग्री कम हो जाता है।



लोंग बेहोश क्यों होते हैं ?

कई बार हम अपने जीवन में देखते हैं कि कुछ लोग कोई दुःखद समाचार सुनकर या किसी चीज़ से अचानक डरकर बेहोश हो जाते हैं। उनका शरीर पसीने से लथपथ हो जाता है और ठण्डा पड़ जाता है। चेहरे पर पीलापन आ जाता है। शरीर की चेतनता कम हो जाती है। बेहोशी केवल दुःखद समाचार या भय से ही पैदा नहीं होती, बल्कि और भी कई कारणों से पैदा हो सकती है। बंद कमरों में रहने वाले लोग, जहां शुद्ध वायु बहुत कम मात्रा में मिलती है, भी बेहोश हो जाते हैं। तेज भूख और अधिक थकान भी कभी-कभी बेहोशी का कारण बन जाती है। किसी प्रकार का तेज दर्द और भावनात्मक धक्का लगने पर भी बेहोशी आ जाती है। सर पर चोट लगने से भी अचेतनता पैदा हो जाती है। अब प्रश्न उठता है कि लोग बेहोश क्यों हो जाते हैं?

बेहोशी का कारण जानने के लिए सबसे पहले यह जान लेना जरूरी है कि चेतनता क्या है? सामान्य रूप से कार्य करने के लिए यह आवश्यक है कि मस्तिष्क में रक्त का संचार उचित प्रकार से होता रहे। जब तक हमारे मस्तिष्क में खून की उचित मात्रा पहुंचती रहती है, तब तक हमारी सभी क्रियाएं सामान्य होती रहती हैं। मस्तिष्क के सामान्य रूप से कार्य करने को ही चेतनता कहते हैं। यदि मस्तिष्क में रक्त पहुंचने में कोई बाधा आ जाए तो सामान्य क्रियाओं में अन्तर आ जाता है। बेहोशी का कारण चाहे कोई भी हो, लेकिन जब मस्तिष्क में खून उचित मात्रा में नहीं पहुंचेगा तो मनुष्य बेहोशी की अवस्था में आ जायेगा। अतः मस्तिष्क के अंदर रक्त का अभाव होना ही बेहोशी का कारण है।

बेहोशी की अवस्था को कुछ तरीकों द्वारा आने से रोका जा सकता है। यदि कोई व्यक्ति यह महसूस करे कि वह बेहोश होने जा रहा है, तो उसे तुरन्त ही नीचे लेट जाना चाहिए। इन दोनों ही तरीकों में रक्त का प्रवाह मस्तिष्क की ओर बढ़ जाता है और जैसे ही मस्तिष्क में रक्त की उचित मात्रा पहुंच जाती है, बेहोशी आने से रुक जाती है।

यदि कोई मनुष्य बेहोश हो गया हो, तो उसे तुरंत ही लिटा देना चाहिए और उसके कपड़े ढीले कर देने चाहिए। सिर को नीचे कर देना चाहिए और टांगों को थोड़ा ऊपर उठा देना चाहिए। ऐसा करने से मस्तिष्क की ओर रक्त का प्रवाह बढ़ जाएगा और मनुष्य चेतन अवस्था में आ जाएगा। जब आदमी चेतन अवस्था में आ जाए तो उसे चाय या काफी पिलानी चाहिए। सिर पर चोट लगने या लू लगने से पैदा हुई बेहोशी की स्थितियों में तुरंत ही डाक्टर की सहायता लेनी चाहिए।



कुछ जानवरों की आंखें रात में क्यों चमकती हैं?

क्या तुमने रात के अंधेरे में बैठी हुई किसी बिल्ली को देखा है? अंधेरे में इसका शरीर तो दिखाई नहीं देता, लेकिन इसकी पीली-पीली आंखें चमकती हुई दिखाई देती हैं। बिल्ली की ही तरह शेर और चीते की आंखें भी रात के अंधेरे में चमकती हैं। इनके अलावा और भी बहुत से जानवर ऐसे हैं, जिनकी आंखें रात में चमकती हैं। हमारी आंखें रात के अंधेरे में नहीं चमकतीं। हमारी तरह और भी बहुत से प्राणी ऐसे हैं, जिनकी आंखें रात में नहीं चमकतीं।

क्या तुम जानते हो कि कुछ जानवरों की आंखें रात में क्यों चमकती हैं?—जिन जानवरों की आंखें रात में चमकती हैं, उनकी आंखों में एक विशेष प्रकार के मणिभीय पदार्थ (Crystalline substance) की पतली सी परत होती है, जो आंख पर पड़ने वाले प्रकाश को परावर्तित कर देती है। यह परावर्तित प्रकाश ही चमक का कारण होता है। रात्रि में कम से कम प्रकाश भी जब इस मणिभीय परत पर पड़ता है, तो वह परावर्तित हो जाता है और हमें आंखें चमकती हुई नज़र आने लगती हैं। यह ठीक उसी प्रकार होता है, जिस प्रकार कोई दर्पण सूर्य की किरणें पड़ने पर चमकने लगता है। जिन जानवरों की आंखें रात को नहीं चमकती हैं, उनकी आंखों में इस तरह के पदार्थ की परत नहीं होती। वे जानवर जिनकी आंखें रात को चमकती हैं, अंधेरे में भली प्रकार देख सकते हैं। ऐसा भी देखा गया है कि जिन जानवरों की आंखें रात में चमकती हैं, उन सबकी चमक का रंग एक जैसा नहीं होता। इसका कारण यह है कि जिन जानवरों की आंखों में खून की नसें अधिक होती हैं, उनकी आंखों की चमक लाल रंग की होती है और जिन जानवरों की आंखों में खून की नसें कम होती हैं, उनकी आंखों की चमक सफेद या हल्का पीलापन लिए हुए होती है।



लोग बौने क्यों होते हैं ?

हम अपने जीवन में तरह तरह के लोग देखते हैं। कुछ लोग बहुत लम्बे होते हैं, तो कुछ बहुत ही छोटे। आमतौर पर मध्यम कद के लोग अधिक देखने को मिलते हैं। कभी-कभी तो ऐसे लोग भी दिखाई देते हैं, जिनका कद इतना छोटा होता है कि उन्हें देखकर हमें हंसी आ जाती है। सर्कस में हंसाने वाले जोकर बौने ही होते हैं। इंगलैंड में टॉम थम्ब (Tom Thumb) नाम का एक ऐसा बौना था, जिसकी लम्बाई केवल तीन फुट चार इंच थी। उसका वज़न 25 वर्ष की आयु में लगभग साढ़े ग्यारह किग्रा. था।

क्या तुम जानते हो कि लोगों की लम्बाई कम क्यों रह जाती है? मनुष्य की लम्बाई में वृद्धि कई बातों पर निर्भर करती है। सामान्य रूप से मनुष्य की लम्बाई वंशानुगत गुणों के कारण होती है। जिस व्यक्ति के मां-बाप लम्बे होंगे, वह व्यक्ति भी लम्बा ही होगा। छोटे कद के मां-बाप के बच्चे भी छोटे ही कद के होते हैं। बौनेपन का दूसरा कारण बीमारी भी हो सकती है। कुछ बीमारियां ऐसी होती हैं, जो लम्बाई में वृद्धि को रोक देती हैं। बौनापन पिट्यूटरी ग्लैण्ड (Pituitory gland) में हार्मोनों की कमी के कारण भी हो सकता है। बहुत से बच्चे बचपन में तो तेजी से बढ़ते हैं, लेकिन फिर उनका बढ़ना अचानक रुक जाता है। उनका बौनापन हार्मोनों की कमी के कारण होता है। इस प्रकार के बौनेपन को हार्मोनों के इन्जेक्शन देकर दूर किया जा सकता है।

कुछ जातियां ऐसी होती हैं, जिनमें लोग आमतौर पर लम्बे होते हैं और कुछ जातियां ऐसी भी होती हैं, जिनके लोग छोटे कद के होते हैं। अफ्रीका में वातूसी (Watusi) और मासी (Masai) नामक जातियां ऐसी हैं, जिनमें लोग सात फुट तक लम्बे होते हैं। इसके विपरीत अफ्रीका में पिगमी जाति के लोगों की लम्बाई केवल साढ़े चार फुट होती है। कुछ बौने लोग ऐसे भी होते हैं, जिनका सिर और धड़ तो सामान्य आकार का होता है, लेकिन उनकी टांगें और बाहें छोटी होती हैं। ऐसा प्रायः हड्डियों की एक बीमारी के कारण होता है।

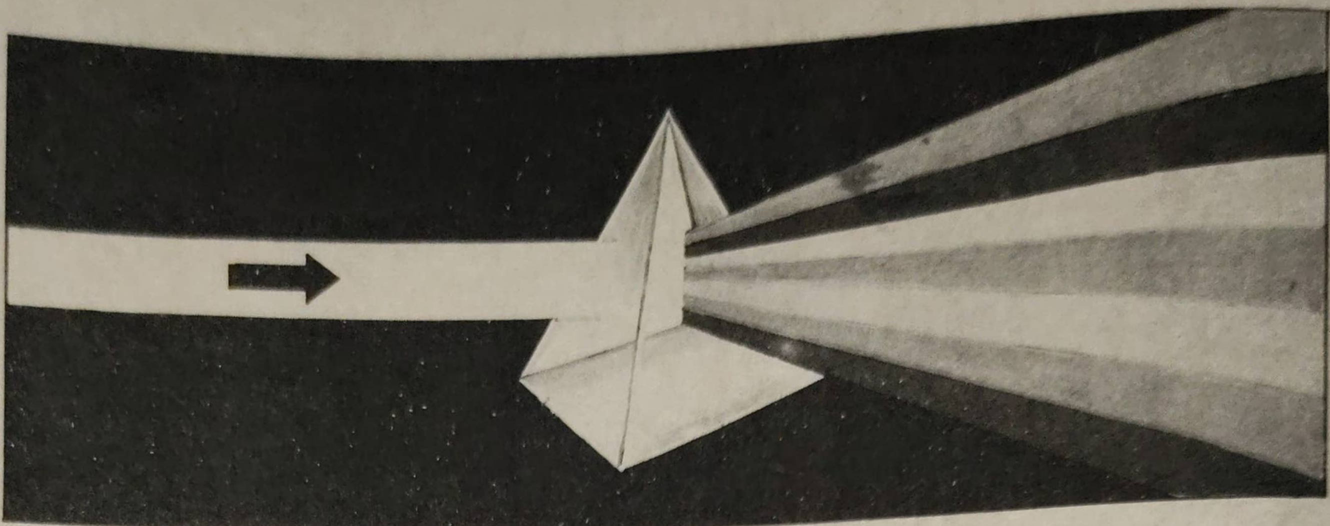


कंगारू लम्बी छलांग कैसे लगा लेता है ?

कंगारू आस्ट्रेलिया में पाया जाने वाला एक विचित्र जानवर है। इसीलिए आस्ट्रेलिया को कंगारुओं का देश भी कहते हैं। आस्ट्रेलिया महाद्वीप बहुत लम्बे समय से संसार के अन्य भूभागों से अलग-थलग रहा है, इसलिए यहां दुनिया से अलग किस्म के जानवर और पक्षी पाये जाते हैं। कंगारू पृथ्वी का सबसे विचित्र और पुराना जानवर है। कुछ हज़ार साल पहले कंगारू की एक ऐसी नस्ल भी पाई जाती थी, जो घोड़े के बराबर होती थी।

कंगारू की लम्बाई छः फुट तक होती है। इसकी आगे की टांगें छोटी और पीछे की टांगें काफी लम्बी होती हैं। पीछे की लम्बी और शक्तिशाली टांगों के कारण ही कंगारू 10 से 15 फुट लम्बी छलांग लगा सकता है। कंगारू की 4 फीट से भी अधिक लम्बी एक पूंछ होती है, जो छलांग लगाते समय संतुलन रखने में उसकी मदद करती है। जब कोई शिकारी या शिकारी कुत्ते कंगारू का पीछा करते हैं, तो वह लम्बी-लम्बी छलांगें मारता हुआ बड़ी तेज़ी से भागता है। यहां तक कि 25–30 फीट तक का फासला एक छलांग में तय कर सकता है। कई बार वह शिकारी कुत्तों को अपनी आगे की टांगों से पकड़ भी लेता है और पीछे की मज़बूत टांगों की सहायता से उन्हें मार डालता है। स्वभाव में कंगारू भेड़-बकरी की तरह डरपोक होता है। खरगोश की तरह वह भी ठीक अपने सामने की चीज को नहीं देख पाता, परन्तु उसमें सूंघने और सुनने की शक्ति तीव्र होती है।

इसके पेट पर पिछली टांगों के बीच एक थैली होती है। मादा कंगारू अपने बच्चों को इसी थैली में रखती है और बच्चे जब तक बड़े नहीं हो जाते, तब तक वे इसी थैली में रहते हैं। कंगारू का बच्चा जब पैदा होता है, तब वह ऊंचाई में एक इंच से अधिक नहीं होता। शिशु कंगारू को ही नहीं, युवा कंगारूओं को भी मां के संरक्षण की आवश्यकता होती है। जब मां युवा कंगारुओं को खतरे में देखती है, तो वह उन्हें भी अपने मुंह में पकड़ पर उठा लेती है और अपने थैले में रख लेती है।



प्रिज़्म से इन्द्रधनुषीय प्रकाश कैसे निकलता है?

सूर्य का प्रकाश जो हमें देखने में सफेद लगता है. वास्तव में सात रंगों से मिलकर बना होता है. सफेद दिखने वाले सूर्य के प्रकाश के रंगों को अलग-अलग करने का अध्ययन सर्वप्रथम सन् 1704 में भौतिकी के जन्मदाता सर आइज़क न्यूटन ने किया था. उन्होंने एक कांच के प्रिज़्म की सहायता से यह दिखाया कि सूर्य के प्रकाश में बैंगनी, जामुनी, नीला, हरा, पीला, नारंगी और लाल रंग होते हैं . प्रश्न उठता है कि प्रिज़्म क्या है और यह सूर्य के सफेद प्रकाश को सात रंगों में कैसे बांट देता है?

प्रिज़्म पारदर्शी कांच का एक तिकोना टुकड़ा होता है. इसके पांच तल होते हैं. नीचे और ऊपर के तल त्रिभुजाकार होते हैं और शेष तीन तल आयताकार होते हैं. यदि हम प्रिज़्म को आंख के पास रखकर किसी वस्तु को देखें, तो वह वस्तु रंगबिरंगी दिखाई देती है. जब प्रकाश की कोई किरण प्रिज़्म में से गुजरती है, तो वह अपने पथ से विचलित होकर प्रिज़्म के आधार की ओर झुक जाती है. प्रकाश के एक माध्यम से दूसरे माध्यम में जाने और अपने रास्ते से विचलित हो जाने के गुण को प्रकाश का अपवर्तन (Refraction of light) कहते हैं. जैसा कि हम बता चुके हैं कि प्रकाश की किरण सात रंगों का समूह होती है और इसमें उपस्थित रंग प्रिज़्म के बाहर अपने रास्ते से अलग-अलग कोणों पर विचलित होते हैं, इसलिये प्रिज़्म से बाहर निकलने पर सातों रंग अलग-अलग हो जाते हैं. इन रंगों की इस पट्टी को ही वर्णक्रम या स्पैक्ट्रम कहते हैं. अपने पथ से लाल रंग की किरण सबसे कम विचलित होती है और बैंगनी रंग की किरण सबसे अधिक विचलित होती है. इसलिए वर्ण क्रम में लाल रंग सबसे ऊपर होता और बैंगनी रंग सबसे नीचे. बीच में अन्य रंग होते हैं. सफेद रंग के प्रकाश का सात रंगों में अलग-अलग हो जाना वर्ण विक्षेपण कहलाता है. यही सात रंग इन्द्रधनुष में होते हैं. इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रिज़्म सफेद प्रकाश के सातों रंगों को अलग-अलग करके इन्द्रधनुषीय बना देता है.

सीखना व याद करना क्या है?



सीखना व याद करना मस्तिष्क की याददाश्त पर निर्भर करता है. किसी बात को सीखने व अनुभव करने के बाद उसको याददाश्त द्वारा ही कायम रखा जा सकता है. अनुभव और सीखी हुई बातों को मस्तिष्क द्वारा कायम रखने की क्षमता को ही याददाश्त कहते हैं. मनुष्य के जीवन में जो भी छोटी से छोटी या बड़ी से बड़ी घटना घटती है, उसका एक प्रकार का लेखा-जोखा (Record) मस्तिष्क में दर्ज हो जाता है. मस्तिष्क में घटनाओं का लेखा-जोखा धीरे-धीरे धुंधला (Fade) होता रहता है. इसी को हम भूलना कहते हैं. अतः यदि किसी अनुभव और सीखी हुई बात को बार-बार दोहराया जाए तो बार-बार ही उसका मस्तिष्क में प्रभाव होता रहेगा और वे अनुभव और सीखी हुई चीज़ें हमें याद रहेंगी.

मस्तिष्क की याददाश्त के विषय में अब तक दो सिद्धांत दिए गए हैं. एक सिद्धांत के अनुसार, याददाश्त एक गतिशील प्रक्रिया है. जब कोई भी चीज़ हम सीखते हैं या अनुभव करते हैं, तो उसके फलस्वरूप हमारे शरीर के तन्तुओं में आवेग (Nerve Impulse) पैदा होते हैं. ये तन्तु-आवेग हमारे मस्तिष्क में उपस्थित न्यूरोन्स (Neurons) पर अपना प्रभाव छोड़ देते हैं और इस प्रकार सीखे हुए अनुभवों का लेखा-जोखा हो जाता है. इस सिद्धांत को काफी मान्यता दी गई है. दूसरे सिद्धांत के अनुसार अनुभवों और सीखने के फलस्वरूप हुए संवेदन से मस्तिष्क में कुछ स्थाई परिवर्तन हो जाते हैं जो याददाश्त के रूप में रहते हैं. कुछ जीवशास्त्रियों के अनुसार मस्तिष्क में उपस्थित न्यूकलिक एसिड (आर०एन०ए० R.N.A.) में यादों का लेखा-जोखा होता रहता है. यह देखा गया है कि न्यूरोन्स में आर०एन०ए० (R.N.A.) की मात्रा 3 साल की उम्र से 40 साल की उम्र तक बढ़ती है. इन वर्षों में मनुष्य की याददाश्त भी बढ़ती है. 40 से 55 या 60 वर्ष की उम्र तक न्यूरोन्स में आर० एन० ए० की मात्रा लगभग स्थिर रहती है. इसलिए इस उम्र में लगभग याददाश्त भी स्थिर रहती है. 60 वर्ष के बाद आर० एन० ए० की मात्रा कम होने लगती है और याददाश्त भी कम होने लगती है.

सीखी हुई बातों या अनुभवों को याद के रूप में कायम रखने का केवल एक ही प्रभावशाली तरीका है और वह है, चीज़ों को बार-बार दोहराना. याददाश्त को प्रतिबिम्बों (Images) द्वारा कायम रखने का दूसरा तरीका भी मनोवैज्ञानिकों ने बताया है. यदि किसी घटना या वस्तु की मस्तिष्क में एक तस्वीर बना ली जाए, तो वह चीज़ बहुत दिनों तक याद रहती है. कुछ बातें सुनने से भी याद रहती हैं. जैसे कई गीत एक या दो बार सुनने से याद हो जाते हैं.



क्या धूल भी उपयोगी है?

धूल के विषय में अक्सर लोगों की धारणा है कि यह बेकार की चीज़ है. यह हमारे किसी भी काम नहीं आती, लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं है. धूल भी हमारे लिए बहुत उपयोगी है. धूल के उपयोग की बात करने से पहले यह जानना जरूरी है कि धूल क्या है और यह कैसे पैदा होती है?

प्रत्येक ठोस पदार्थ बहुत ही सूक्ष्म कणों से मिलकर बनता है. जब पदार्थ के ये छोटे-छोटे कण बिखर जाते हैं, तो धूल का रूप धारण कर लेते हैं. उदाहरण के लिए, यदि हम एक ईंट या पत्थर को तोड़ते चले जाएं, तो यह छोटे-छोटे कणों का रूप धारण कर लेगा. यही कण जब हवा में उड़ने लगते हैं, तो धूल का रूप ले लेते हैं. हवा के कारण धूल के कण एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचते जाते हैं. धूल बनने के कई कारण हैं. ठोस वस्तुओं के टूटने से धूल पैदा होती है. कोयला, लकड़ी, पेट्रोल आदि के जलने से जो धुआं पैदा होता है, वह भी धूल को जन्म देता है. ज्वालामुखी के मुंह से निकलने वाला लावा भी धूल को जन्म देता है. धरती की परत के कण भी धूल को जन्म देते हैं.

धूल के कणों का सबसे बड़ा उपयोग वर्षा से संबंधित है. बादलों में जो जलवाष्प होती है, वह धूल के कणों के कारण ही बूंदों का रूप ले पाती है. धूल के कणों पर जलवाष्प पानी के रूप में जमा हो जाती है और वर्षा के रूप में हमारी धरती को जीवन दान देती है. यदि धूल के कण नहीं हों, तो जलवाष्प से बूंदें बनना बहुत मुश्किल है. इसी प्रकार धुंध, कोहरा आदि धूल के कणों के कारण ही बन पाते हैं.

हमारे वायुमण्डल में उपस्थित धूल के कण सूर्य की किरणों को चारों ओर परावर्तित करते हैं. इसका एक लाभ यह होता है कि सूर्य छिपने के बाद भी एक दो घंटे तक एकदम अंधेरा नहीं होता. सूर्योदय और सूर्यास्त के समय सूरज का लाल दीखना भी धूल के कणों और वाष्प के कारण ही होता है. गोधूलि वेला में जो सूर्य की सुन्दर किरणें दिखाई देती हैं, वे भी धूल के कणों के कारण ही दिखाई देती हैं. इस प्रकार हम देखते हैं कि जिन धूल के कणों को हम बेकार समझते हैं, वे भी हमारे लिए काफी उपयोगी हैं.



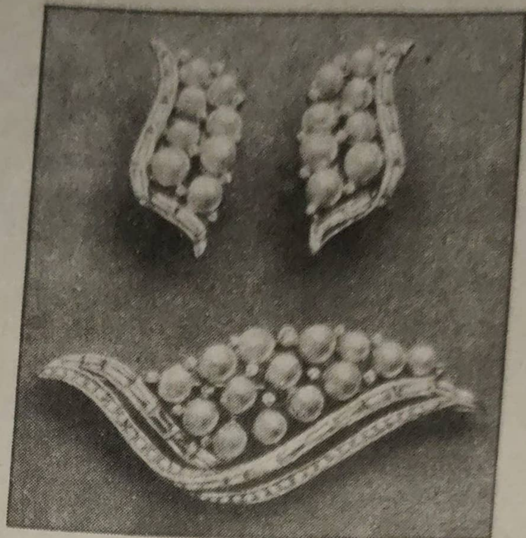
लोग गंजे क्यों होते हैं ?

गंजेपन के विषय में तरह-तरह की बातें प्रचलित हैं। कुछ लोग गंजेपन को वृद्धावस्था आने का लक्षण मानते हैं, कुछ दूसरे लोगों का कहना है कि गंजापन बुद्धिमानी की निशानी है। कुछ लोगों के अनुसार गंजा आदमी धनवान होता है और कुछ का विचार है कि गंजा आदमी मूर्ख होता है। गंजेपन का अर्थ कुछ भी हो, लेकिन यह निश्चित है कि गंजा आदमी अपने बालों को खोकर उस सौन्दर्य से वंचित हो जाता है, जो बालों के कारण उसे प्राप्त होता है।

गंजापन मुख्य रूप से दो प्रकार का होता है—स्थायी और अस्थायी। स्थायी गंजेपन के तीन कारण हैं। वंशानुगत, उम्र और एन्ड्रोजन हार्मोनों की कमी। स्थायी गंजापन त्वचा की कुछ बीमारियों के फलस्वरूप भी हो जाता है। भयानक चोट लगने या कुछ रासायनिक पदार्थों की प्रक्रिया के फलस्वरूप भी स्थायी गंजापन आ जाता है। एन्ड्रोजन हार्मोन केवल पुरुषों में होते हैं इसलिए पुरुषों की तुलना में स्त्रियां बहुत कम गंजी होती हैं। एन्ड्रोजन हार्मोनों के कारण पैदा होने वाले गंजेपन को इन हार्मोनों को देने से रोका जा सकता है।

अस्थायी गंजापन टाइफाइड, निमोनिया, इनफ्लुएन्जा, तेज बुखार, आदि बीमारियों के कारण होता है। इन बीमारियों से पैदा हुई कमजोरी के कारण बाल झड़ने लगते हैं लेकिन जैसे-जैसे शरीर में शक्ति आती है, वैसे-वैसे बाल उगने शुरू हो जाते हैं। अस्थायी गंजापन एक्स किरणों, कुछ औषधियों, त्वचा की बीमारियों और भोजन की कमी के कारण भी हो जाता है। बालों की सफाई में असावधानी और अंतः स्रावी ग्रंथियों में गड़बड़ी पैदा हो जाने के कारण भी गंजापन पैदा हो जाता है। बालों की सही तरीके से देखभाल करके गंजेपन पर कुछ हद तक काबू पाया जा सकता है। अभी तक गंजेपन के इलाज के लिए औषधियों का विकास नहीं हो पाया है।





सोना महंगा क्यों है?

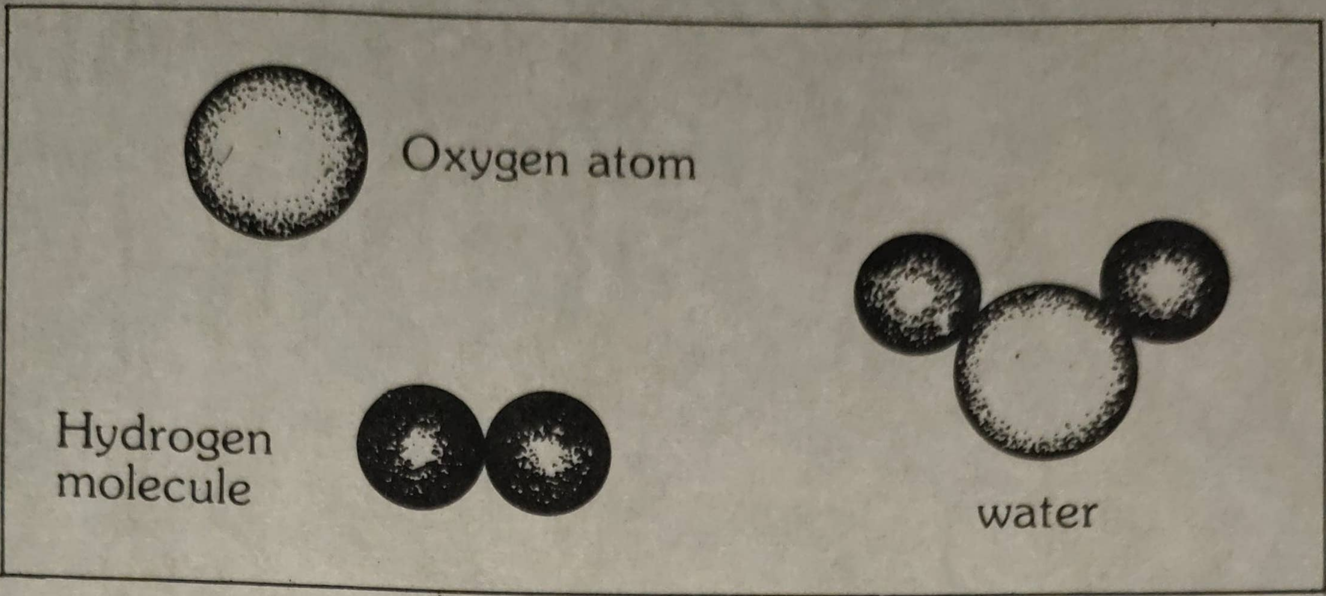
प्राचीन काल से ही सोना वैभव की वस्तु रही है. हमारे देवी देवताओं की मूर्तियां भी सोने के आभूषणों से सजी रहती हैं. राजा महाराजा भी सोने को बहुत महत्त्व देते हैं. सोने से सदा ही मनुष्य का बहुत अधिक लगाव रहा है. आखिर सोने में ऐसी क्या विशेषता है, जो सदा से ही यह महंगा रहा है और दिन प्रतिदिन महंगा ही होता जा रहा है.

किसी वस्तु का महंगा होना कई बातों पर निर्भर करता है. सबसे पहली बात तो यह है कि जो वस्तु जितनी दुर्लभ और कम मात्रा में मिलेगी, वह उतनी ही अधिक महंगी होगी. तीसरे, वस्तु की कीमत उसकी सुन्दरता से भी संबंधित होती है. आमतौर पर सुन्दर वस्तुओं के दाम अधिक होते हैं. चौथे, जो वस्तुएं सर्दी, गर्मी, वायु और नमी से कम प्रभावित होती हैं, वे महंगी होती हैं. सोना एक ऐसी धातु है, जिसके विषय में ये चारों बातें ही सत्य सिद्ध होती हैं. सोना एक दुर्लभ और कम मात्रा में मिलने वाली धातु है. इसका रंग और चमक बहुत आकर्षक है और इस पर सर्दी, गर्मी, वायु और नमी का प्रभाव नहीं पड़ता है. इसकी चमक कम नहीं होती. इसीलिए सोना एक महंगी धातु है.

सोना पीले रंग की चमकीली धातु है. सोना प्रकृति में बहुत ही कम मात्रा में मिलता है. यह स्वतन्त्र तथा संयुक्त दोनों ही अवस्थाओं में मिलता है. इसके अयस्कों (Ores) से शुद्ध सोना प्राप्त करना बहुत महंगा पड़ता है. यद्यपि विक्टोरिया (आस्ट्रेलिया) में साढ़े सत्तर किलो की एक चट्टान मिली, जिससे सत्तर किलो शुद्ध सोना निकला, लेकिन ऐसी चट्टानें बहुत ही दुर्लभता से मिलती हैं. जिन खानों से सोना निकाला जाता है, उनमें सोने की मात्रा बहुत कम होती है. समुद्र के पानी में भी बहुत सोना होता है, लेकिन इससे सोना निकालना इसकी कीमत से भी अधिक महंगा पड़ता है. इस प्रकार हम देखते हैं कि इसे प्राप्त करने में बहुत समय, मेहनत और धन खर्च होता है.

संसार के कुल उत्पादन का लगभग दस प्रतिशत सोना आभूषणों में प्रयोग होता है. सोने के आभूषणों का प्रयोग वैभव और बड़प्पन की बात मानी जाती है. सोने को औषधियों में भी प्रयोग किया जाता है. सन 1914 तक विश्व की विभिन्न मुद्राओं का लेन-देन सोने के रूप में ही होता रहा है. आज भी अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में सारा काम सोने की मदद से ही होता है. सोना दन्त चिकित्सा में भी प्रयोग होता है. इसको विद्युत उद्योग में भी काम में लाया जाता है. इस प्रकार सोना कई क्षेत्रों में उपयोगी है. सोना विद्युत का उत्तम चालक है. इसीलिए तो इसे विद्युत उद्योग में भी प्रयोग में लाया जाता है. यह बहुत ही कोमल और पीटने से फैलने वाली धातु है. इसलिए इसके पतले-पतले वर्क बनाए जाते हैं और अन्य धातुओं पर इसकी हल्की परत भी चढ़ाई जाती है. इसे सख्त बनाने के लिए इसमें अन्य धातु जैसे तांबा आदिं मिला देते हैं. इस पर अम्ल (Acid) और क्षारों (Alkalies) का प्रभाव नहीं पड़ता, परन्तु यह अम्ल राज (Aqua Regia) में घुल जाता है.

संसार में सोने का सबसे अधिक उत्पादन अफ्रीका, रूस और अमेरिका में होता है. भारत में सोने की सबसे बड़ी खानें मैसूर में हैं.

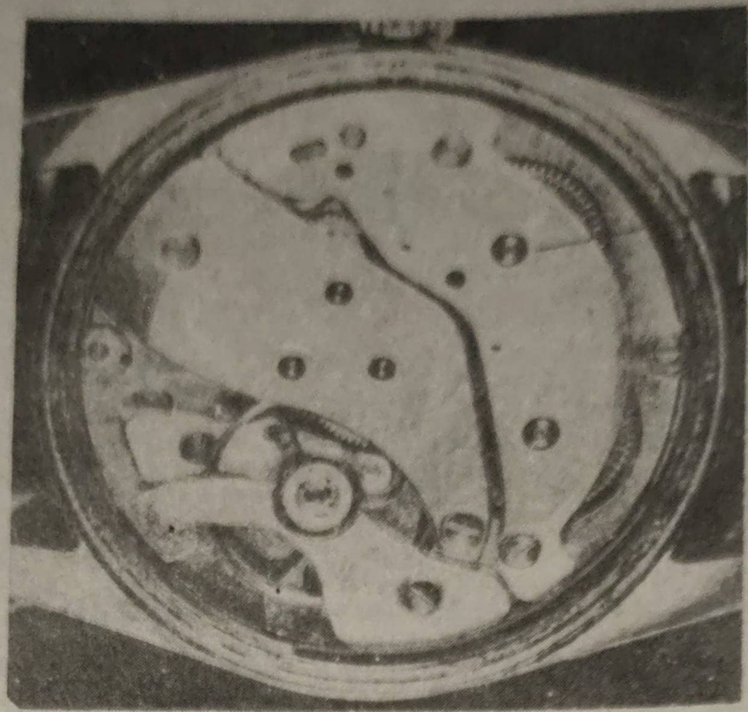


क्या हर पदार्थ के अणु गतिशील होते हैं?

प्रत्येक पदार्थ बहुत ही छोटे-छोटे कणों से मिलकर बना होता है, जिन्हें हम अणु कहते हैं. अणु पदार्थ का वह छोटे से छोटा अंश है, जो स्वतंत्र अस्तित्व रखता है और उसमें पदार्थ के सभी गुण मौजूद होते हैं. उदाहरण के लिए यदि हम चीनी के एक अणु को लें, तो उसमें चीनी का स्वाद, रूप, रंग और अन्य सभी गुण होंगे. अलग-अलग पदार्थों के अणुओं के आकार अलग-अलग होते हैं. किसी पदार्थ का अणु इंच के अरबवें भाग के बराबर होता है, तो किसी पदार्थ का अणु इंच के दस लाखवें भाग के बराबर. गैसों के अणु आकार में बहुत छोटे होते हैं. हवा के एक घन इंच में लगभग 500,000,000,000,000,000,000 अणु होते हैं.

यद्यपि पदार्थ के छोटे से टुकड़े में भी अणुओं की संख्या बहुत अधिक होती है फिर भी अणुओं के बीच में रिक्त स्थान (शून्य) होता है. पदार्थ के अणु सतत रूप से गति करते रहते हैं.यह गति ऊष्मा ऊर्जा के कारण होती है. जैसे-जैसे पदार्थ का तापमान बढ़ता है, वैसे ही वैसे अणुओं की गतिं तेज होती जाती है. गैसों में अणुओं की गति बहुत तेज होती है. द्रवों और ठोसों में यह गति कम होती जाती है, यहां तक कि बर्फ के टुकड़े में भी अणु गति करते हैं. अब प्रश्न यह है कि जब हर पदार्थ के अणु गतिशील रहते हैं, तो वस्तुएं हमें हिंलती हुई महसूस क्यों नहीं होतीं?

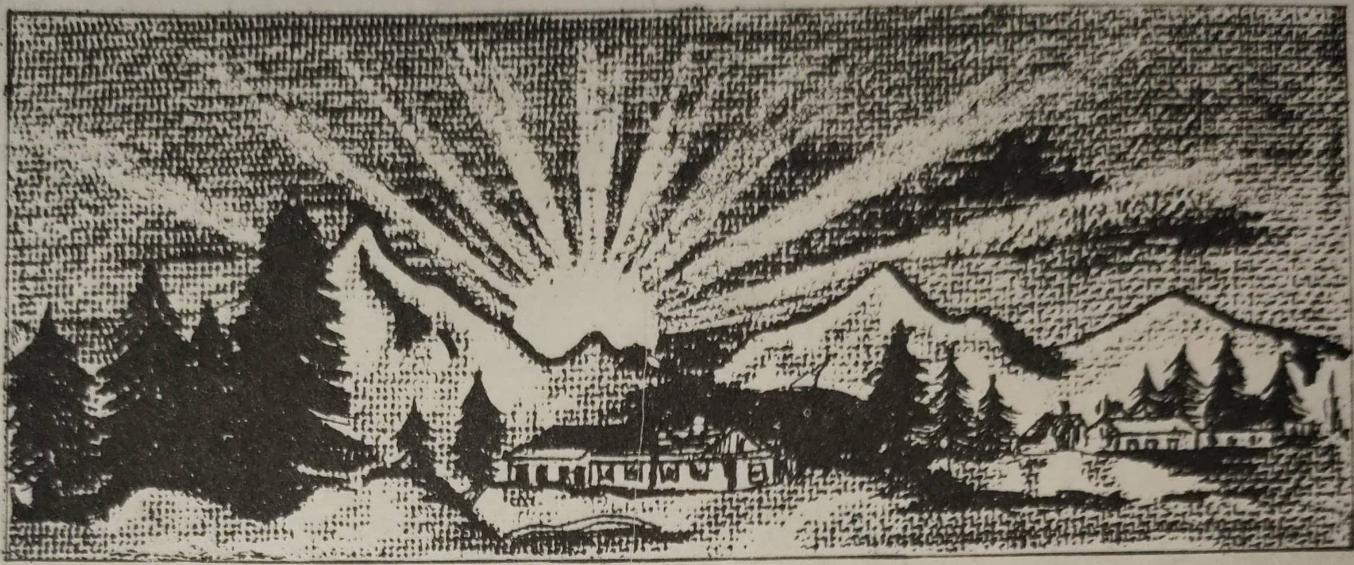
इसका कारण यह है कि पदार्थ में अणुओं के बीच एक आकर्षण बल होता है, जो उन्हें अपने स्थान पर रोके रखता है. यदि यह बल न हो, तो पदार्थ के अणु इधर उधर बिखर जाएं. यदि ठोस पदार्थ के अणुओं को ऊष्मा दी जाए तो अणुओं की गति तेज हो जाती है और आकर्षण बल कम हो जाता है। परिणाम यह होता है कि ठोस वस्तु तरल अवस्था में आ जाती है. इसी प्रकार यदि हम ऊष्मा बढ़ाना जारी रखें तो अणुओं की गति और भी तेज हो जाएगी और तरल पदार्थ तब गैसीय अवस्था में बदल जाएगा.



घड़ियों के माणिक (Jewels) क्या होते हैं?

घड़ी खरीदते समय अक्सर लोग यह जरूर पूछते हैं कि इस घड़ी में कितने ज्वेल्स हैं। सभी घड़ियों पर यह लिखा होता है कि उसमें कितने ज्वेल्स हैं। अक्सर लोगों का कहना है कि घड़ी में जितने अधिक ज्वेल्स होंगे, वह उतनी ही अधिक अच्छी और टिकाऊ होगी। अब प्रश्न यह है कि आखिर यह ज्वेल्स होते क्या हैं और घड़ियों में क्यों लगाए जाते हैं।

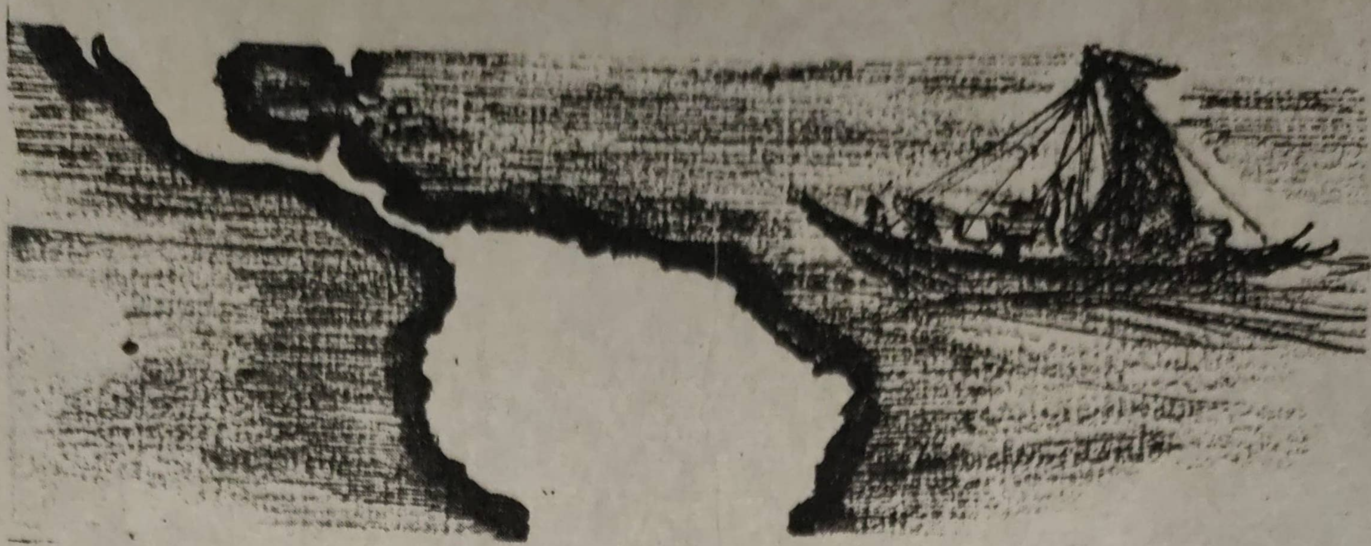
अच्छी घड़ी वही है, जो सही समय दे और जल्दी खराब न हो। यदि आप किसी घड़ी को खोल कर देखें तो आप देखेंगे कि इसके अन्दर का ढांचा बहुत पेचीदा है। इसमें बहुत से अलग-अलग तरह के छोटे बड़े पुर्जे होते हैं। एक घड़ी में 211 पुर्जे होते हैं। इन पुर्जों में एक छोटा सा पहिया होता है, जो हमें लगातार गतिशील दिखाई देता है। इसके साथ ही एक बाल जैसा पतला तार होता है, जिसे कमानी कहते हैं। जब कमानी में हम चाबी देते हैं, तो घड़ी टिक-टिक की आवाज करने लगती है। वास्तव में चाबी देने पर कमानी में जमा ऊर्जा ही घड़ी को चलाने के काम आती है। इस पहिये के अलावा और भी कई पहिये होते हैं, जो लगातार घूमते रहते हैं। यही पहिये घंटा, मिनट और सैकिन्डों की सुइयों को घुमाते रहते हैं। इन पहियों की धुरियां चूलों पर टिकी रहती हैं। इनके घूमने में इन चूलों और धुरियों के बीच में रगड़ यानी घर्षण पैदा होता है। इस रगड़ से चूल और धुरियां जल्दी ही घिस सकती हैं और इस तरह से घड़ी की कार्य-क्षमता जल्दी ही कम हो सकती है। इस घर्षण को कम करने के लिए चूलों के स्थान पर बहुत ही सख्त एवं चिकने पदार्थों के छोटे-छोटे टुकड़े लगाए जाते हैं। इन्हीं टुकड़ों को घड़ी का ज्वेल कहा जाता है। आमतौर पर जो पदार्थ ज्वेल के रूप में प्रयोग होते हैं, वे हैं रूबी यानी माणिक तथा नीलम। ये एक प्रकार के कीमती पत्थर हैं, जो हीरे से थोड़े ही कम सख्त होते हैं। ये बहुत चिकने होते हैं। इन पर टिकी घड़ी के पहियों की धुरियां बिना किसी घर्षण के घूमती रहती हैं। सख्त होने के कारण ये टुकड़े घिसते नहीं हैं, इसलिए घड़ी बहुत दिनों तक खराब नहीं होती। घर्षण कम हो जाने से इन पहियों की गति में रुकावट नहीं आती, इसलिए घड़ी ठीक समय प्रदर्शित करती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि अधिक समय तक ठीक समय बताने के लिए इन ज्वेल्स का घड़ियों में प्रयोग किया जाता है। घड़ी में जितने अधिक ज्वेल्स होंगे, उतना ही घड़ी ठीक समय देगी और अधिक दिन चलेगी।



उदय और अस्त के समय सूर्य लाल क्यों दिखाई देता है?

सुबह जब सूर्य निकलता है, वह एक लाल गोले की भांति दिखता है। जैसे-जैसे दिन चढ़ता है, वैसे ही वैसे सूर्य का रंग बदल कर सफेद होता जाता है, लेकिन शाम को जब सूर्य ढलने लगता है, तो उस का रंग फिर लाल हो जाता है। क्या तुम जानते हो कि सूर्य उगते और ढलते समय लाल क्यों दिखाई देता है?

हम जानते हैं कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करती रहती है। पृथ्वी के जिस स्थान पर सूर्य की किरणें पड़नी शुरू हो जाती हैं, वह प्रकाशमय हो जाता है और इसी को हम दिन कहते हैं। हम यह भी जानते हैं कि सूर्य का प्रकाश जो सफेद दिखता है, वास्तव में वह सात रंगों से मिलकर बना है। ये सात रंग हैं, बैंगनी (Violet), जामुनी (Indigo), नीला (Blue), हरा (Green), पीला (Yellow), नारंगी (Orange) और लाल (Red)। सुबह और शाम के वक्त जब सूरज क्षितिज के पास होता है, तो उससे आने वाले प्रकाश को दोपहर की अपेक्षा वायुमण्डल में बहुत लम्बा मार्ग तय करना पड़ता है। सुबह और शाम के समय सूर्य के प्रकाश द्वारा वायुमण्डल में तय की गई दूरी दोपहर के समय में तय की गई दूरी की अपेक्षा 50 गुना अधिक होती है। सुबह और शाम सूर्य की किरणों को वायुमण्डल से अधिक दूरी से गुजरना पड़ता है। वायुमण्डल में उपस्थित धूल, धुएं और भाप के कण-हरे, नीले, बैंगनी रंग के प्रकाश का प्रकीर्णन (Scattering अनियमित परावर्तन) कर देते हैं। इसलिए हमारी आंख तक पहुंचने वाले प्रकाश में बैंगनी, नीले और हरे रंग की मात्रा बहुत ही कम पहुंच पाती है। केवल लाल, नारंगी व पीले रंग का प्रकाश ही हमारी आंखों तक पहुंच पाता है। इन तीनों रंगों में लाल की मात्रा सबसे अधिक होती है। इसलिए इन तीनों रंगों का मिश्रण नारंगी लाल हो जाता है। यही कारण है कि सूर्य उदय और अस्त होते समय हमें लाल दिखता है।



अमेरिका का नाम कैसे पड़ा?

अमेरिका आज विश्व का सबसे समृद्ध तथा शक्तिशाली देश माना जाता है। मुख्य रूप से इसका विकास पिछले दो सौ वर्षों में ही हुआ है। इससे पहले यह 13 छोटी-छोटी बस्तियों में बंटा हुआ था। यह हम भलीभांति जानते हैं कि अमेरिका की खोज कोलम्बस (Columbus) ने की थी, फिर इसका नाम उसके नाम पर क्यों नहीं पड़ा? इसे कोलम्बस का दुर्भाग्य ही समझो। अमेरिका का नाम अमेरिका कैसे पड़ा? इसकी बड़ी दिलचस्प कहानी है।

इटली का विश्वविख्यात यात्री कोलम्बस, जो स्पेन में नौकरी करता था, भारत की तलाश के लिए समुद्री यात्रा पर निकला। 12 अक्तूबर 1492 की सुबह वह किसी द्वीप पर पहुंचा। स्पेन के राजा फर्डिनैण्ड और रानी इजाबेला के नाम से उसने इस द्वीप पर अधिकार जमा लिया और उसका सैन सल्वाडोर (San Salvador) नाम रखा। यह द्वीप अमेरिका का मुख्य भाग नहीं था, बल्कि एक छोटा सा हिस्सा था। इसे आज वार्टलिंग द्वीप (Watling Island) कहा जाता है। इस द्वीप को उसने भारत (India) समझा और वहां के लोगों को भारतीय (Indian) कहना शुरू कर दिया। आज भी उन्हें इसी नाम से पुकारा जाता है। यहां से वह जापान जाना चाहता था, लेकिन वह क्यूबा और हिस्पेनिओला पहुंच गया। भारत न मिलने पर वह निराश होकर 14 मार्च 1493 को स्पेन वापस लौट गया।

24 सितंबर 1493 की अपनी दूसरी यात्रा में उसने पोर्टोरिको व जमैका जैसे नये द्वीप खोज निकाले, लेकिन उसे भारत नहीं मिला। 1498 की तीसरी यात्रा में उसने ट्रिनिडाड को ढूंढ़ निकाला और वह दक्षिणी अमेरिका के मुंहाने तक पहुंच गया।

उन्हीं दिनों स्पेन के एक अमेरिगो वेसपूशी (Amerigo Vespucci) नामक दूसरे नाविक ने यह घोषणा कर दी कि दक्षिणी अमेरिका की मुख्य जमीन पर 16 जून 1497 को पहुंचने वाला वह पहला व्यक्ति था। यद्यपि विशेषज्ञों का कहना है कि 1499 तक अमेरिगो ने कोई समुद्री यात्रा नहीं की थी। सन 1499 में अलॉन्सो द ओजेदा (Alanso de Ojeda) ने फ्लोरेन्टाइन अमेरिगो वेसपूशी (Florentine Amerigo Vespucci) के साथ ओरिनोको (Orinoco) मुहाने तक यात्रा की और वेनेज्यूला (Venezuela) की खोज की। 1501-02 में वेसपूशी ने पुर्तगाल के झंडे के नीचे स्वयं एक समुद्री यात्रा का मार्ग निर्देशन किया और ब्राज़ील देश की खोज की। वेसपूशी को यह स्पष्ट था कि कोलम्बस ने जिस भूमिखण्ड को एशिया का एक भाग माना था, वास्तव में वह नयी दुनिया का एक महाद्वीप था। 1500 के आरम्भ में वेसपूशी के लेखों का काफी प्रचार हुआ और उसको इस बात का यश प्राप्त हो गया कि वह पहला योरोपीय (European) व्यक्ति है, जिसने दक्षिणी अमेरिका को खोजा है। जर्मन के एक भूगोलशास्त्री मार्टिन बाल्ड सी मूलर ने ब्राज़ील के भूमि क्षेत्र को, वेसपूशी को सम्मान देने के लिए, अमेरिका नाम दे दिया। यही नाम लोगों की दृष्टि में जम गया और सारे संसार में इसी नाम का प्रयोग होने लगा।



रेडक्रास क्या है और इसका जन्म कैसे हुआ ?

रेडक्रास एक अन्तर्राष्ट्रीय मानवीय संस्था है। प्रारंभ में इसका क्षेत्र केवल युद्ध में घायल सैनिकों की देखभाल करना था। किन्तु अब यह आमतौर से सभी प्रकार के मानवीय उत्पीड़न (Human Suffering) की रोकथाम और सहायता कार्य करती है। यह विश्व के सभी विपत्तिग्रस्त देशों के कल्याण के लिए काम करती है। संसार के लगभग सभी देशों में रेडक्रास संस्थाएं हैं, जो युद्ध और शांति के समय असहाय लोगों की बिना किसी जातिभेद और राष्ट्रभेद के पूरी निष्ठा से सेवा करती रहती है। शान्तिकाल में इसके कार्य प्राथमिक सहायता (First Aid) देना, दुर्घटनाओं की रोकथाम करना, पीने के पानी को सुरक्षित रखना, नर्सों और मातृ सहायकों को प्रशिक्षित करना, मातृ और शिशु केन्द्रों की देखभाल करना, चिकित्सा केन्द्रों को स्थापित करना, रक्तदान केन्द्रों (Blood Banks) की स्थापना करना आदि हैं। यह संस्था प्राणिमात्र की मित्र है। क्या तुम जानते हो कि इस संस्था का जन्म कैसे हुआ?

इस संस्था के जन्म की बड़ी रोचक कहानी है। इस संस्था के जन्मदाता स्विट्ज़रलैण्ड के निवासी जीन हेनरी ड्यूनाँ (Jean Henri Dunant) थे। 24 जून 1859 के दिन वे अपने व्यवसाय से सम्बन्धित किसी काम के लिए लावर्डी नगर में गए हुए थे। यह नगर उन दिनों फ्रांस और आस्ट्रिया के बीच हो रहे युद्ध का मंच बना हुआ था। युद्ध के कारण नगर में हजारों नर-नारी घावों के कारण तड़प रहे थे। मरहम पट्टी तथा अन्य अभावों के कारण बहुत से लोग बेमौत ही मर रहे थे। इस हृदय विदारक घटना से इनके दिल पर बहुत प्रभाव पड़ा। वे अपने काम को भूलकर दुःखी लोगों की सेवा में लग गए। उनके प्रयास से बहुत से लोग मौत के मुंह में जाने से बच गए।

इस युद्ध के बाद उन्होंने एक अपील जारी करके दुनिया भर के लोगों को बताया कि युद्ध में घायल होने वाले सैनिक किसी देश-विशेष के सिपाही नहीं होते, बल्कि असहाय व्यक्ति होते हैं और मानवता के नाते उनकी सेवा करना सबका कर्तव्य है। इस अपील का लोगों पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा और 1864 में जेनेवा में हुए अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में 14 देशों ने रेडक्रास की स्थापना को स्वीकार किया। स्विट्ज़रलैण्ड का झण्डा लाल आधार पर सफेद क्रास का था। इसे बदल कर सफेद आधार पर लाल क्रास को इस संस्था का झण्डा मान लिया गया। इस प्रकार रेडक्रास का जन्म हुआ।

रेडक्रास संस्था (Structure) के तीन अंग हैं। पहला अंग रेडक्रास की अंतर्राष्ट्रीय समिति (International Committee of Red Cross) है। यह स्विट्ज़रलैण्ड के पच्चीस नागरिकों की एक स्वतंत्र परिषद है। इसका मुख्य कार्यालय जेनेवा में है। दूसरा अंग रेडक्रास संस्थाओं का संघ (League of Red Cross Societies) है और तीसरा अंग है, राष्ट्रीय रेडक्रास संस्थाएं (NationalRedCross Societies) युद्ध काल के समय अन्तर्राष्ट्रीय समिति, राष्ट्रीय रेडक्रास संस्थाओं और युद्धरत देशों के बीच मध्यस्थ (Intermediary) का काम करती है। वह युद्ध कैम्पों में कैदियों की देखभाल करती है और राहत सामग्री देती है। पत्रादि की व्यवस्था करती है और उनके सम्बन्धियों से सम्पर्क स्थापित करती है। इतना ही नहीं, आंधी, तूफान, महामारी, अकाल आदि से पीड़ित व्यक्तियों की भी यह संस्था पूरी लगन से सेवा सकती है।



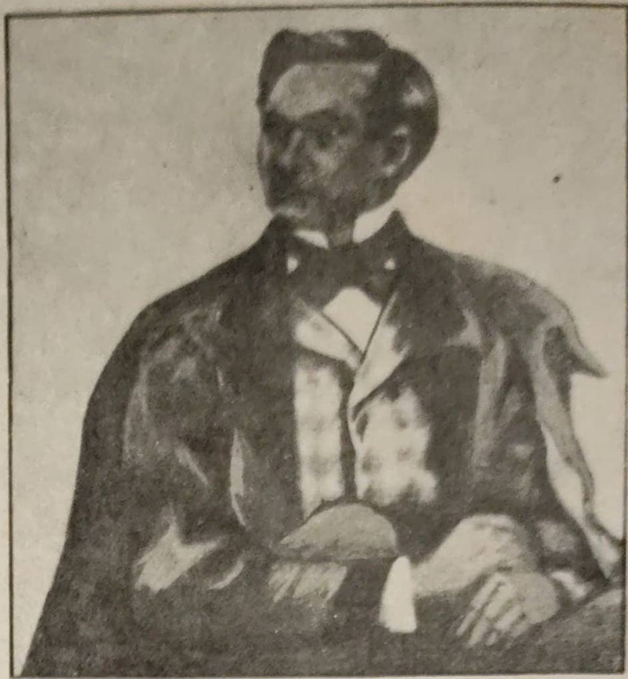
विज्ञापन कब शुरू हुए?

आज हम रेडियो, टेलीविज़न, समाचारपत्र और पत्रिकाओं में बाज़ार में बिकने वाली हज़ारों वस्तुओं के विज्ञापन सुनते और देखते हैं। विज्ञापन उत्पादक और उपभोक्ताओं के बीच में वस्तुओं की जानकारी पैदा करने का एक बहुत ही प्रभावशाली माध्यम बन गया है। विज्ञापन द्वारा वस्तुओं की बिक्री बढ़ जाती है। संसार के सभी देशों में विज्ञापन संस्थाएं बन गई हैं, जो बड़े ही आकर्षक तरीकों से वस्तुओं के विज्ञापन देती हैं। परन्तु विज्ञापनों में कुछ कानूनों का नियंत्रण रहने के कारण धोखाधड़ी और हेराफेरी की प्रवृति को कुछ सीमा तक रोका जा सकता है। चीजों की बिक्री बढ़ाने के अतिरिक्त विज्ञापनों का प्रयोग जनता को सचेत करने में भी किया ज़ाता है। कुछ देशों में निजी या समाजसेवी संस्थाएं, जंगल में लगी आग कैसे रोकें? अपंग लोगों को कैसे बचाएं? ट्रैफिक नियम क्या हैं? अपराधों की रोकथाम कैसे हो? आदि बातों के लिए अनेक विज्ञापन देती रहती हैं।

क्या तुम जानते हो कि विज्ञापनों की शुरुआत कैसे हुई? प्राचीन काल में जब मनुष्य ने व्यापार करना शुरू किया,तभी से उसने अपने सामान की विशेषताएं खरीदारों तक पहुंचाने के तरीकों को अपनाना शुरू किया। शुरू में व्यापारी लोगों के सेवक चिल्ला-चिल्ला कर वस्तुओं की विशेषताएं बताकर ग्राहकों को आकर्षित करने की कोशिश करते थे। थोड़े दिनों बाद विभिन्न वस्तुओं का विज्ञापन दीवारों पर लिखकर किया जाने लगा। सन् 1450 में छापेखाने का जन्म होने के बाद व्यापारी वर्ग को विज्ञापन के लिए एक सरल और सस्ता तरीका मिल गया। 1460 में पहली बार विलियम कैक्सटन नामक व्यक्ति ने एक धार्मिक पुस्तक का विज्ञापन प्रकाशित किया। समाचार पत्रों के शुरू होने के बाद तो विज्ञापनों की दुनिया में क्रांति आ गई।

अब व्यापारी ही नहीं, बल्कि राजनीतिज्ञ, समाजसेवी, प्रकाशक और सरकारें भी जनता तक अपने संदेश पहुंचाने के लिए विज्ञापनों का सहारा लेते हैं। दुनिया में विज्ञापनों पर प्रतिवर्ष अरबों रुपया खर्च किया जाता है। 1968 में केवल अमेरिका ने 180 करोड़ डालर विज्ञापनों पर खर्च किए थे। इसी प्रकार पश्चिमी जर्मनी ने 40 करोड़ डालर, जापान ने 15 करोड़ डालर, ब्रिटेन ने 12 करोड़ डालर, फ्रांस तथा कनाडा ने 10 करोड़ डालर खर्च किए थे।

विज्ञापनों की संख्या आज इतनी अधिक रहती है कि लोग इनकी तरफ अधिक ध्यान नहीं दे पाते। लोग उन्हें पढ़ें, इसके लिए विज्ञापनों में कई तरह के आश्वासन और उपहार देने की बातें भी लिखी जाती है। भारत में रेडियो पर विज्ञापन सेवा 15 नवम्बर 1967 में विविध भारती ने शुरू की थी। टेलीविज़न पर यह सेवा 4 जनवरी 1976 को शुरू हुई थी। आज विज्ञापन एक कला के साथ विज्ञान भी माना जाने लगा है। ग्राहकों की रुचि और आदतों के अनुसार अलग-अलग प्रकार के विज्ञापन तैयार किए जाते हैं, ताकि वे अधिक से अधिक ग्राहकों को आकर्षित कर सकें।



नोबल पुरस्कार क्या है?

नोबल पुरस्कारों की घोषणा हर वर्ष की जाती है और जिन व्यक्तियों को नोबल पुरस्कार मिलता है, वे संसार भर में चर्चा का विषय बन जाते हैं। समाचार-पत्रों में उनकी जीवनियां और कार्य छपते हैं। रेडियो और टेलीविज़न पर उनका नाम आता है। आखिर नोबल पुरस्कार क्या है और इसको इतना महत्त्व क्यों दिया जाता है?

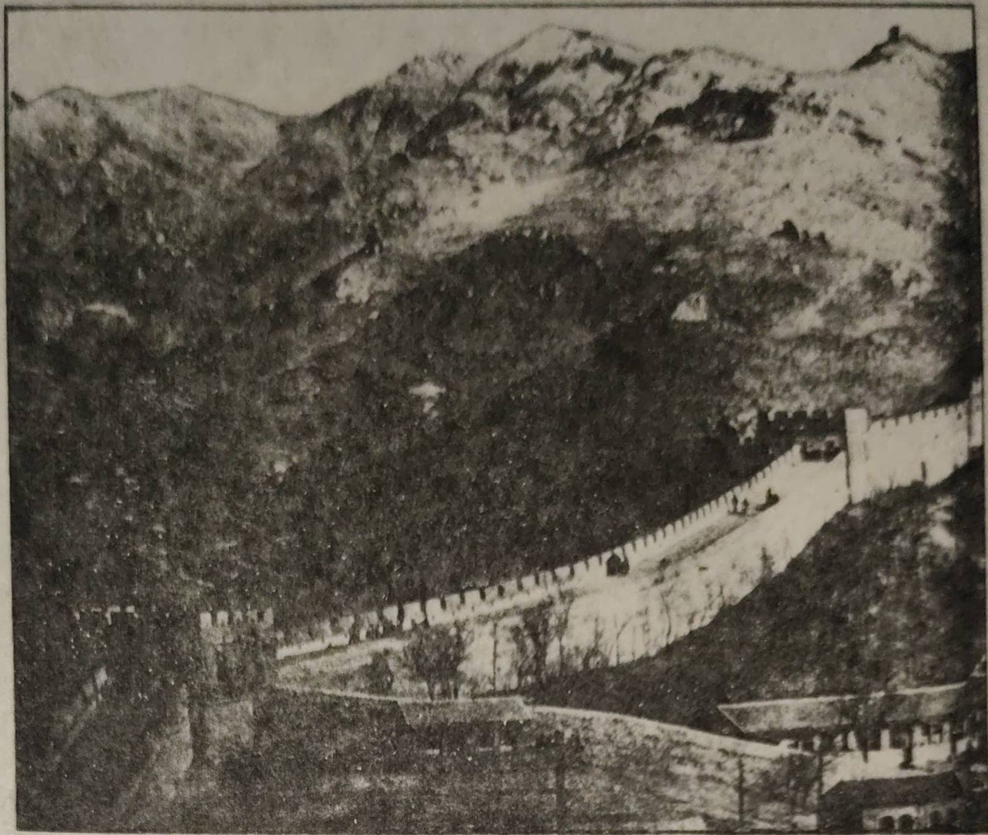
नोबल पुरस्कार संसार का सबसे बड़ा पुरस्कार है। इस पुरस्कार के अंतर्गत एक गोल्ड मैडल, एक सर्टीफिकेट और अच्छी खासी धनराशि पुरस्कार पाने वाले व्यक्ति को दी जाती है। यह पुरस्कार पांच क्षेत्रों में संसार में सर्वाधिक उल्लेखनीय काम करने वाले व्यक्तियों को दिया जाता है। ये क्षेत्र हैं—शान्ति (Peace), भौतिकशास्त्र (Physics), रसायनशास्त्र (Chemistry), साहित्य (Literature) और शरीर विज्ञान एवं चिकित्सा (Physiology & Medicine), हर एक क्षेत्र में एक-एक पुरस्कार दिया जाता है। यदि एक क्षेत्र में एक से अधिक व्यक्ति होते हैं तो धनराशि को बराबर भागों में बांट दिया जाता है।

क्या तुम जानते हो कि नोबल पुरस्कार का आरम्भ कैसे हुआ? यह पुरस्कार उस व्यक्ति ने शुरू किए जो विध्वंस के विज्ञान का प्रणेता था। यह वैज्ञानिक अल्फ्रेड बरनार्ड नोबल थे। इन्हीं के नाम पर नोबल पुरस्कार दिया जाता है। इनका जन्म स्टाकहोम में 21 अक्तूबर 1833 को हुआ और 10 दिसम्बर 1896 में इनकी मृत्यु हुई। इनके पिता भी एक वैज्ञानिक थे। इनकी शिक्षा रूस में हुई, यद्यपि ये स्वीडन के रहने वाले थे। इन्होंने डायनामाइट नामक विस्फोटक पदार्थ की खोज की। इस पदार्थ का प्रयोग चट्टानों को तोड़ने, पेट्रोल के कुएं खोदने और युद्धों में बहुत अधिक हुआ। इस पदार्थ के प्रयोग के कारण नोबल संसार भर में प्रसिद्ध हो गए। उन्होंने इस पदार्थ से बहुत धन कमाया। अपनी मृत्यु के समय इन्होंने 9200,000 डालर की भारी धनराशि छोड़ी। अपनी मृत्यु के समय इन्होंने एक वसीयत की थी कि इस धनराशि से प्राप्त होने वाले ब्याज को भौतिकशास्त्र, रसायनशास्त्र, चिकित्सा साहित्य और शान्ति प्रयासों में उल्लेखनीय कार्य करने वाले व्यक्तियों को पुरस्कार देने में लगाया जाए। इन्हीं के नाम पर इस पुरस्कार का नाम नोबल पुरस्कार पड़ा। पहला नोबल पुरस्कार 10 दिसंबर 1901 में रंटगेन (Roentgen) नामक वैज्ञानिक को दिया गया। इन्हें एक्स किरणों के अनुसंधान के लिए पुरस्कृत किया गया था। इस पुरस्कार की धनराशि 40,000 डालर थी। यद्यपि इस पुरस्कार में धनराशि बहुत अधिक नहीं होती, लेकिन इस पुरस्कार को पाने वाले व्यक्ति को सारे संसार में आदर की दृष्टि से देखा जाता है।

नोबल फाउण्डेशन आफ़ स्वीडन नामक परिषद नोबल पुरस्कारों का वितरण करती है। भौतिक व रसायन शास्त्र के लिए, रायल एकेडेमी आफ़ साइंस, स्टाकहोम सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिकों का चयन करती है। चिकित्सा विज्ञान के लिए कारोलिन इन्स्टीट्यूट आफ़ स्टाकहोम, साहित्य के लिए स्वीडिश एकेडेमी आफ़ लिटरेचर, सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों को चुनती है। इसी प्रकार शान्ति के लिए, पांच व्यक्तियों की एक समिति जिस नार्वे की संसद चुनती है व्यक्तियों का चयन करती है।

अब तक संसार के बहुत से प्रतिभाशाली व्यक्तियों को ये पुरस्कार मिल चुके हैं। इनमें से कुछ के नाम हैं : अलबर्ट आइंस्टाइन, जार्ज बर्नार्ड शा, मेरी क्यूरी, रवीन्द्र नाथ टैगोर, सर सी०वी० रमन, हरगोविन्द खुराना और मदर टेरिसा आदि। सबसे छोटी उम्र में यह पुरस्कार ग्रहण करने का श्रेय इंगलैंड के सर विलियम लारेंस ब्रेग को हैं। जिन्हें 1915 में 25 वर्ष की आयु में भौतिक विज्ञान के लिए पुरस्कृत किया गया था।

नोबल महोदय संसार में इतने प्रसिद्ध हो गए कि उनके नाम पर 102वें तत्त्व का नाम नोबेलियन रखा गया है। उन्हीं के नाम पर स्वीडन में एक संस्था का नाम, नोबल इन्स्टीट्यूट आफ़ स्वीडन रखा गया है।

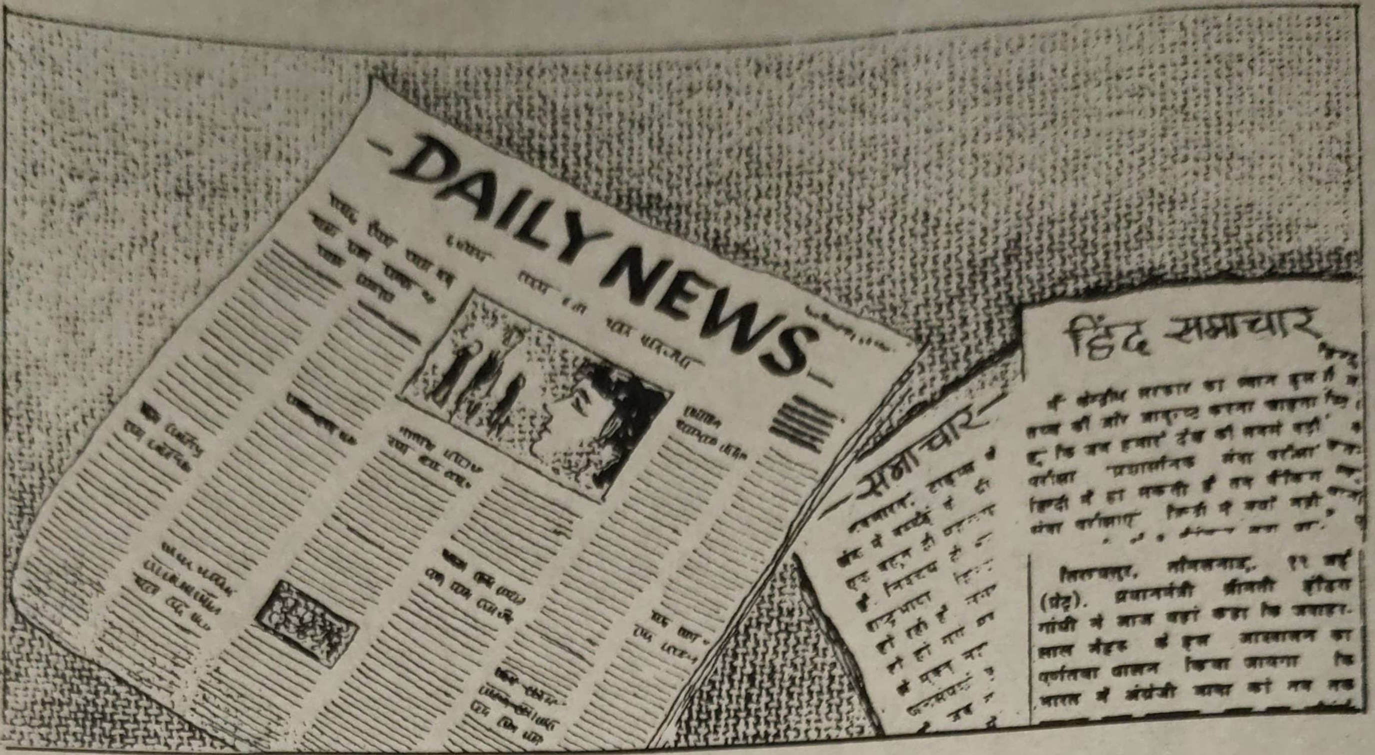


चीन की महान दीवार क्यों बनाई गई?

चीन की महान दीवार का नाम तो सभी ने सुना ही होगा। यह संसार के महान आश्चर्यों में से एक है। यह संसार की सबसे बड़ी दीवार है। इसका निर्माण ईसा से 221 वर्ष पूर्व हुआ था। इसको बनाने में लगभग 15 वर्ष लगे। इसकी लम्बाई 2694.4 कि०मी० (1684 मील) है। यह 4.57 से 9.2 मीटर (15 से 30 फुट) तक ऊंची है और 9.75 मीटर (32 फुट) मोटी है। जगह-जगह पर इसके ऊपर छोटी-छोटी मीनारें बनी हुई हैं। इस दीवार को ईंटों और पत्थरों से बनाया गया था। तुम्हारे मन में इतनी बड़ी दीवार की कल्पना से ही प्रश्न उठता होगा कि ऐसी महान दीवार बनाने की क्या जरूरत पड़ी?

इस दीवार के निर्माण के पीछे चीन देश की सुरक्षा का उद्देश्य था। ईसा से लगभग 246 वर्ष पूर्व चीन छोटे-छोटे प्रांतों में बंटा हुआ था। इन प्रांतों को राजा शीह हुआंग ने मिलाकर अपना बड़ा सा साम्राज्य स्थापित किया। उसके इस साम्राज्य के उत्तरी सिरों पर रहने वाले मंगोलों से उसे हमेशा आक्रमण का खतरा रहता था। इस खतरे से मुक्ति पाने के लिए उसने एक बहुत बड़ी दीवार बनाने का फैसला किया। उसके मन में यह धारणा थी कि इस दीवार के बन जाने के बाद बाहरी आक्रमण का खतरा समाप्त हो जाएगा। पोहाई की खाड़ी में शान हाइकुआन नामक स्थान से लेकर कांशु में चियायुकुमान तक एक लम्बी दीवार बनाई गई। जिस काम के लिए यह दीवार बनाई गई थी, वह काम कभी भी पूरा न हो पाया, क्योंकि दीवार कभी न कभी, कहीं न कहीं से टूटती रहती थी, जिससे हमला करने वाले मंगोलों को प्रवेश करने का मौका मिल जाता था।

इस दीवार की बहुत बार मरम्मत की गई। अब तो इस दीवार के कई हिस्से टूट चुके हैं, लेकिन फिर भी इसका बहुत बड़ा हिस्सा सुरक्षित है। अब तो चीन के लोग दीवार के बाहरी भागों में भी खेती करने लगे हैं।



समाचार-पत्र कब शुरू हुए?

समाचार-पत्र एक ऐसा आधुनिक साधन है, जिसके द्वारा घर बैठे ही हमें देश-विदेश में होने वाली घटनाओं का पता रोजाना चल जाता है। समाचार-पत्रों की सहायता से अब दुनिया छोटी हो गई है। संसार में लाखों समाचार-पत्र रोजाना छपते हैं। विश्व की सभी भाषाओं में समाचार-पत्र छपते हैं। क्या तुम जानते हो कि समाचार पत्रों की शुरुआत कब हुई और उन्हें आज के रूप में लाने में लोगों को कितना परिश्रम करना पड़ा?

लिखित प्रमाणों के अनुसार विश्व का सबसे पहला समाचार-पत्र लगभग 1300 वर्ष पूर्व चीन में शुरू हुआ था। इसका नाम 'चिन्ग पाओ' (Tching Pao) था। जिसका अर्थ होता है : राजधानी का समाचार। इस समाचार पत्र द्वारा सरकार मुख्य-मुख्य घटनाओं की खबर जनता तक पहुंचाती थी। दूसरा समाचार-पत्र रोम का 'एक्टा ड्यूरना' थां, जो दिन प्रतिदिन का ब्योरा जनता को देता था।

विश्व का सर्व-प्रथम दैनिक समाचार-पत्र 'मार्निंग पोस्ट' था, जो 1762 में लन्दन से छपना शुरू हुआ था। इसके बाद 1785 में लन्दन से ही 'दी टाइम्स, लन्दन' (The Times, London) नामक अखबार छपना शुरू हुआ, जो आज भी छपता है।

भारत में सबसे पहला समाचार-पत्र 'बंगाल गजट' के नाम से 29 जनवरी 1780 को छपना शुरू हुआ था। बाद में इसका नाम 'इंगलिश मैन' कर दिया गया था। आज तो भारत में अंग्रेज़ी के अतिरिक्त अन्य सभी प्रादेशिक भाषाओं में भी समाचार-पत्र प्रकाशित होते हैं।

विश्व में आज हर रोज लगभग पचास करोड़ लोग अखबार खरीदते हैं। केवल रूस में आठ हज़ार से अधिक तरह के समाचार-पत्र छपते हैं, जिन्हें बारह-तेरह करोड़ लोग पढ़ते हैं। संसार में सबसे अधिक समाचार-पत्र रूस में छपते हैं।

दस लाख की प्रसार संख्या पार करने वाला पहला समाचार पत्र पेरिस का 'ला पेटिट जर्नल' था, जिसने 1886 में यह सीमा रेखा पार की। 1970 में जापान के 'आशाशि शिम्बुन' समाचार-पत्र की प्रसार संख्या एक करोड़ तक पहुंच चुकी थी। किसी एक समाचार-पत्र का सबसे बड़ा संस्करण रविवार 10 अक्तूबर 1971 को 'दि न्यूयार्क टाइम्स' का निकाला गया। इसमें 15 भाग, 972 पेज, 12 लाख लाइनें विज्ञापनों की थीं और इसका वज़न साढ़े सात पौन्ड था। इसकी कीमत 50 सैन्ट थी।



दलदल (Quick-sand) क्या है?

दलदल प्रकृति में एक ऐसी विचित्र स्थिति है, जो देखने में तो साधारण लगती है, लेकिन होती बड़ी खतरनाक है। दूर से देखने से दलदल और जमीन में कोई अन्तर नहीं लगता, लेकिन गलती से यदि कोई आदमी दलदल में घुस जाए तो उस व्यक्ति का धीरे-धीरे उसमें धंसना शुरू हो जाता है और फिर वह उसी में डूब जाता है। दलदल में एक बार फंसने के बाद निकलना बहुत कठिन है, लेकिन इसकी गहराई बहुत अधिक होती है। दलदल आमतौर पर बड़ी-बडी नदियों के किनारे और समुद्र तट पर बनते हैं। जिन नदियों के किनारे या समुद्र तट की धरती में चिकनी मिट्टी की परत होती है और रेत की मात्रा अधिक होती है, वहां पर पानी की लहरों के बहाव से रेत और मिट्टी में जमा होता रहता है। चिकनी मिट्टी की भीतरी परत इस पानी को सूखने नहीं देती। धीरे-धीरे यह रुका हुआ पानी सड़ने लगता है और मिट्टी एक गहरे कीचड़ के रूप में बदल जाती है। इसकी संरचना ठोस न रह कर कुछ ढीली हो जाती है। इसी को दलदल कहते हैं।

दलदल में द्रव पदार्थ की मात्रा मिट्टी से अधिक होती है। इसलिए कोई व्यक्ति इसमें तैर सकता है। इसके लिए यह जरूरी है कि दलदल में पहुंचते ही हाथ पैर तेजी से नहीं चलाने चाहिए, बल्कि धीरे-धीरे हाथ पैर चलाकर दलदल के द्रव पदार्थ को अपने चारों ओर जमा होने देना चाहिए। इस पानी में व्यक्ति आसानी से तैर सकता है और तैर कर किनारे की ठोस भूमि तक आ सकता है तथा इस प्रकार अपने को दलदल से बचा सकता है।



ओस कैसे बनती है?

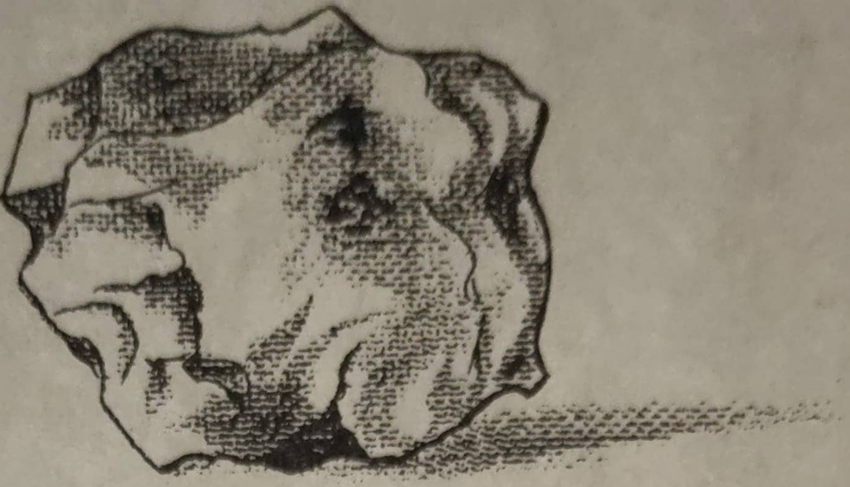
सुबह के समय तुमने घास और पेड़-पौधों पर पानी की छोटी-छोटी बूंदें देखी होंगी, जो सूरज की रोशनी में मोतियों की तरह चमकती हैं। पानी की इन बूंदों को ओस कहते हैं। अक्सर लोग यह सोचते हैं कि ओस की बूंदें वर्षा के पानी की तरह रात को जमीन पर आकाश से गिरती हैं, लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं होता।

क्या तुम जानते हो कि ओस कहां से आती है? हमारे चारों ओर जो हवा होती है, उसमें जलवाष्प होती है, जिसे हम नमी या आर्द्रता कहते हैं। गर्म हवा में ठंडी हवा की अपेक्षा ज्यादा नमी होती है। रात को जब गर्म हवा किसी ठंडी सतह को छूती हुई बहती है, तो उसमें उपस्थित जलवाष्प पानी के कणों के रूप में उस सतह पर संघनित हो जाती है। इन्हीं पानी के कणों को हम ओस कहते हैं।

ओस का बनना हम एक सरल प्रयोग द्वारा देख सकते हैं। एक गिलास लो और उसे अपनी मेज पर रख लो। अब बर्फ या बर्फ का ठंडा पानी गिलास में डाल दो। कुछ मिनटों में तुम देखोगे कि गिलास की बाहरी सतह पर पानी की छोटी-छोटी बूंदें जम गई हैं। ये पानी की बूंदें हवा में उपस्थित जलवाष्प के संघनित होने से ही बनती हैं। ठीक इसी प्रकार पेड़-पौधे और घास जो रात में काफी ठंडे हो जाते हैं, जलवाष्प को संघनित करके ओस का रूप दे देते हैं।

जब आसमान साफ़ होता है, तो ओस अधिक बनती है, लेकिन जब बादल छाये होते हैं, तो ओस कम बनती है। इसका कारण यह है कि आसमान साफ होने पर धरती से पानी का वाष्पीकरण अधिक होता है और पेड़-पौधे भी रात को ठंडे हो जाते हैं, जिससे ओस अधिक बनती है।

लेकिन जब बादल छाये होते हैं, तब घास और पौधे रात में अधिक ठंडे नहीं हो पाते, इसलिए ओस कम जमती है। धूप निकलने पर ओस की बूंदें अधिक देर नहीं रुक पाती, क्योंकि धूप की गर्मी से पानी की ये बूंदें वाष्पित होकर फिर से वायु में मिल जाती हैं।



सिलिकान

सिलिकान एक अधातु तत्त्व है। प्रकृति में यह शुद्ध अवस्था में नहीं मिलता। शुद्ध सिलिकान एक कठोर गहरे भूरे रंग का, धातु जैसी चमक वाला और कई गुणों में हीरे से मिलता जुलता, रवेदार पदार्थ होता है। सामान्य ताप का इस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, लेकिन अधिक तापक्रम पर यह अन्य तत्त्वों से मिल जाता है। हमारी पृथ्वी की पपड़ी में 28% और चीनी मिट्टी में 50% सिलिकान होता है। यह चट्टानों, बालू, पानी, हड्डियों और जन्तुओं में भी पाया जाता है। बालू में इसकी मात्रा बहुत अधिक होती है।

सिलिकान तत्त्व को सिलिकान-डाइ-ऑक्साइड से प्राप्त किया जा सकता है। सिलिकान-डाइ-ऑक्साइड विद्युत द्वारा गर्म करके ऑक्सीजन से रहित कर लेते हैं और सिलिकान अलग हो जाता है।

सिलिकान का अधिकतर भाग सिलिका के रूप में पाया जाता है। इसे ही सिलिकान-डाइ-ऑक्साइड कहते हैं। यह सिलिकान और ऑक्सीजन का एक यौगिक है। क्वार्ट्ज़ (बिल्लौर), जास्पर, दूधिया पत्थर और बालू आदि सभी सिलिका के रूप हैं। सिलीकेट सिलिका का दूसरा यौगिक है। माइका और ऐसबेस्टस सिलीकेटों के रूप में मिलते हैं।

सिलिकान हमारे लिए बहुत उपयोगी है। अनेक प्रकार के कांच, तामचीनी, चीनी मिट्टी (China Clay) आदि को बनाने में सिलिकेट को काम में लाते हैं। सोडियम सिलिकेट का उपयोग साबुन बनाने में, लकड़ी को सड़ने से बचाने में, अंडों को सड़ने से रोकने में और रंगाई (Dying) में किया जाता है। यहां तक कि इसे चिकनाहट के लिए, और कृत्रिम रबर बनाने के लिए भी काम में लाते हैं।

अत्यधिक शुद्ध सिलिकान का प्रयोग फोटोग्राफी, ट्रान्जिस्टरों और दूसरे इलैक्ट्रानिक पुर्जों में किया जाता है। सिलिकान और कार्बन का एक यौगिक, जिसे सिलिकान कार्बाइड या कार्बोरन्डम कहते हैं, धातुओं पर पॉलिश करने के काम आता है। सिलिकान को स्टील में मिलाकर स्टील को और अधिक उपयोगी बनाया जाता है। सिलिकान से अर्द्धचालक भी बनते हैं, जो हमारे जीवन में बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

बालू और मिट्टी में मिले हुए सिलिकान का उपयोग ईंटों के बनाने में किया जाता है।



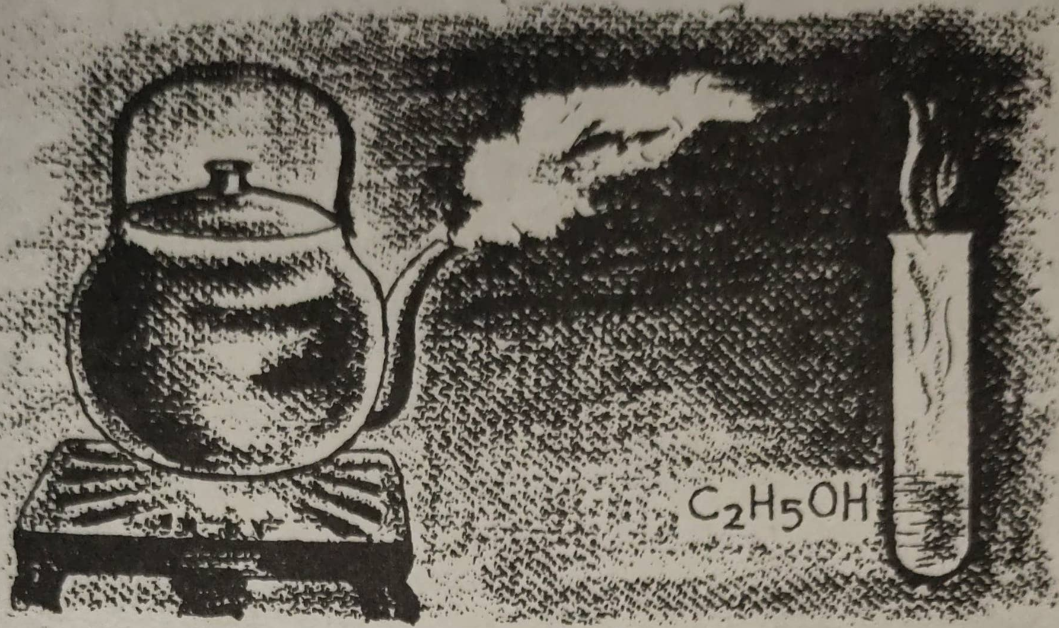
गर्म चीजों के छूने से जलन क्यों हो जाती है?

गर्म चीज़ों का मतलब उन वस्तुओं से है, जिनका तापमान हमारे शरीर से अधिक होता है। जब उन्हें हम छूते हैं, तो उसमें से ऊष्मा हमारे शरीर में आती है, जिससे वे हमें गर्म महसूस होती हैं। उसी प्रकार हमें वे वस्तुएं ठंडी लगती हैं, जिनका तापमान हमारे शरीर से कम होता है, क्योंकि ऊष्मा हमारे शरीर में से निकलकर उनमें जाती है।

जब हमारे शरीर के किसी अंग से गर्म वस्तु का स्पर्श होता है, तो उस हिस्से में जलन पैदा होने लगती है। क्या तुम जानते हो कि ऐसा क्यों होता है?

हम जानते हैं कि हमारा शरीर कोशिकाओं से मिलकर बना है और ये कोशिकाएं अणुओं से मिलकर बनी हैं। उस तापमान पर गर्म वस्तुओं के अणु, हमारी त्वचा की कोशिकाओं के अणुओं में अचानक ही तीव्र गति पैदा कर देते हैं। यह तीव्र कम्पन हमारी कोशिकाओं के अणु सह नहीं पाते और परिणाम यह होता है कि कोशिकाएं टूट जाती हैं। कोशिकाओं के टूटने से ही हमें जलन का आभास होता है। टूटी हुई कोशिकाओं को ठीक करने के लिए खून का बहाव उस स्थान की ओर तेजी से हो जाता है। यही कारण है कि जहां गर्म चीज़ हमारे शरीर को स्पर्श करती है, वह जगह लाल हो जाती है।

यदि स्पर्श करने वाली वस्तु का तापमान काफी अधिक होता है, तो त्वचा के अन्दर की बहुत सी कोशिकाएं, चर्बी (fats) और हड्डियों के अणु भी छिन्न-भिन्न हो जाते हैं। इससे शरीर में गहरे घाव हो जाते हैं। इस प्रकार के जलने को त्वचा आरोपित करके ठीक किया जाता है।



तरल पदार्थ भाप में कैसे बदलते हैं ?

बरसात के दिनों में सड़कों और गलियों में भरा पानी कुछ ही घंटों में सूख जाता है। इसी प्रकार गर्मियों में गीले कपड़े कुछ ही समय में सूख जाते हैं। खुले बर्तनों में रखा पानी कम हो जाता है। क्या तुम जानते हो कि यह पानी कहां चला जाता है? हम कहते हैं कि पानी भाप बनकर उड़ गया या पानी का वाष्पीकरण हो गया।

वाष्पीकरण कैसे होता है? इस बात को समझने के लिए हमें पदार्थ की संरचना के विषय में जानना होगा। प्रत्येक पदार्थ अणुओं से मिलकर बना होता है और इन अणुओं के बीच में आकर्षण-बल होता है। इस बल को संशक्ति-बल(Cohesive Force) कहते हैं। इसी बल के द्वारा अणु एक जगह बंधे रहते हैं और तितर-बितर नहीं होते। जब यह आकर्षण-बल बहुत अधिक होता है, तो पदार्थ ठोस अवस्था में रहता है। जब हम पदार्थ को गर्म करते हैं, तो पदार्थ के अणु अधिक गतिशील हो जाते हैं। अणुओं की यह गति उनके बीच के आकर्षण-बल पर काबू पाने लगती है, अर्थात् अणुओं की यह गति उन्हें अलग-अलग करने की कोशिश करती है।जब अणुओं की गति से पैदा हुआ बल संशक्ति(Cohesion)बल के बराबर हो जाता है, तो पदार्थ ठोस अवस्था से तरल अवस्था में आ जाता है। यदि तरल को और अधिक गर्म किया जाये, तो ऊष्मा द्वारा अणुओं की गति का बल संशक्ति बल से अधिक हो जाता है और तरल के अणु मुक्त होकर हवा में जाने लगते हैं अर्थात् द्रव की सतह से अणुओं का मुक्त होकर वायु में जाना ही वाष्पीकरण कहलाता है। इसी क्रिया के फलस्वरूप गीले कपड़े सूख जाते हैं। यदि गीले कपड़ों को धूप में सुखाया जाये, तो पानी जल्दी उड़ जाता है, क्योंकि अधिक गर्मी से अणुओं की गति भी अधिक तेज हो जाती है और वाष्पीकरण तेजी से होने लगता है। वाष्पीकरण हर तापमान पर होता रहता है, लेकिन जैसे-जैसे तापमान बढ़ता है, वाष्पीकरण और तेजी से होने लगता है।



आक्सीजन गैस हमारे लिए किस प्रकार उपयोगी है?

हमारी धरती के वायुमण्डल में यदि आक्सीजन न होती, तो कोई भी प्राणी जीवित नहीं रह पाता। आक्सीजन की अनुपस्थिति में कोई वस्तु जल भी नहीं सकती थी। आदमी तो क्या पेड़-पौधे और जल में रहने वाले जीव-जन्तु भी जीवित नहीं रह पाते। इसलिए आक्सीजन को जीवनदायिनी कहना गलत न होगा। क्या तुम जानते हो कि यह आक्सीजन गैस क्या है और हमारे लिए यह इतनी जरूरी क्यों है?

आक्सीजन एक गैसीय तत्व है। सबसे पहले इसकी खोज लैवोजियर और प्रीस्टले ने की थी। यह एक रंगहीन, स्वादहीन तथा गंधरहित गैस है। वायुमण्डल में 21% आक्सीजन है और शेष भाग में नाइट्रोजन व अन्य गैसें हैं। पृथ्वी की पपड़ी में यह धातुओं के आक्साइडों के रूप में संयुक्त अवस्था में 50% तक पाई जाती है। 125 डिग्री सेंटीग्रेड पर इसे द्रव अवस्था में परिवर्तित कर सकते हैं। द्रव अवस्था में इसका रंग हल्का नीला हो जाता है। −219 डिग्री सेंटीग्रेड पर इसे ठोस अवस्था में भी परिवर्तित कर सकते हैं।

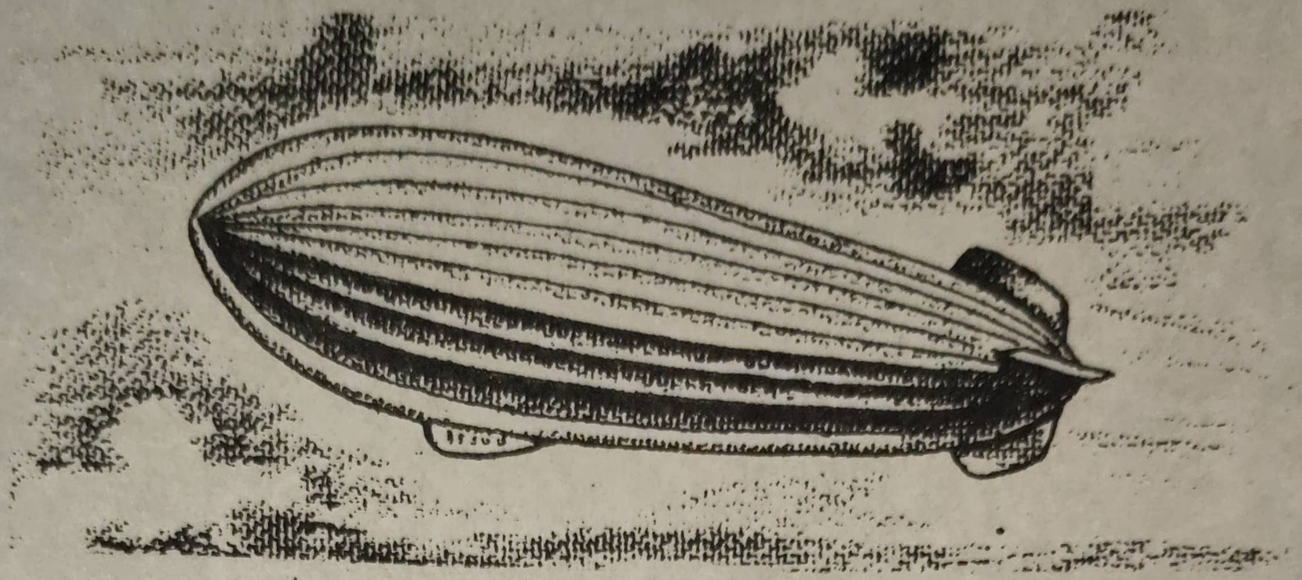
प्रयोगशाला में यह पोटेशियम क्लोरेट और मैन्गनीज-डाइ-आक्साइड को मिलाकर गर्म करके तैयार की जाती है। वायुमण्डल से हवा के आंशिक द्रवीकरण की विधि से इसे प्राप्त किया जाता है। हवा पर वायुमण्डल के दबाव से लगभग 200 गुना दबाव डालकर इसे एक छोटे छिद्र द्वारा एक कोष्ठ में निकाल दिया जाता है। दबाव एकाएक घटता है और हवा ठंडी हो जाती है। द्रवीभूत होकर यह कोष्ठ में इकट्ठा होने लगती है। इसमें से नाइट्रोजन विशेष विधि से अलग कर लेते हैं और आक्सीजन द्रव रूप में शेष रह जाती है।

आक्सीजन हमारे लिए अनेक प्रकार से उपयोगी है। इसमें सभी जीव-जन्तु सांस लेते हैं। पेड़-पौधे रात्रि में आक्सीजन लेकर जीवित रहते हैं। इसे ऐसीटिलीन गैस के साथ जलाकर उच्च तापमान की लौ प्राप्त करते हैं, जो धातुओं के जोड़ने और काटने के काम आती है। मिसाइलों (Missiles) और रॉकेटों (Rockets) को आकाश में ऊंचाई पर भेजने में आक्सीजन को ईंधन के रूप में काम में लाते हैं।

रोगियों का दम घुटने पर सांस लेने के लिए इस गैस को दिया जाता है। पहाड़ों पर चढ़ने और समुद्र की गहराइयों में जाने में भी आक्सीजन को सांस लेने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। इसीसे हमारे शरीर में भोजन का आक्सीकरण होता है। जिसके फलस्वरूप हमें ऊर्जा मिलती है। आक्सीजन से ही हमारा ईंधन जलता है और इससे पानी में प्राणी जीवित रहते हैं।

शुद्ध आक्सीजन में हम बहुत लम्बे समय तक सांस नहीं ले सकते। ताजी हवा इसलिए आवश्यक है, क्योंकि उसमें आक्सीजन अधिक होती है। अतः ताजी हवा में सांस लेने के लिए हमें कमरे के दरवाजे और खिड़कियों को खुला रखना चाहिए। रात में हमें मुंह ढक कर नहीं सोना चाहिए, क्योंकि इससे पर्याप्त आक्सीजन नहीं मिल पाती।

अत्यधिक भीड़ में हम इसलिए व्याकुल होने लगते हैं, क्योंकि वहां की हवा में आक्सीजन की कमी हो जाती है। जाड़े के दिनों में कमरे के भीतर जलती अंगीठी रखकर नहीं सोना चाहिए। कोयले के जलने से कमरे की आकसीजन,कार्बन डाई आक्साइड और कार्बन मोनोआक्साइड में परिवर्तित हो जाती है। कार्बन मोनोआक्साइड विषैली गैस है, जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।



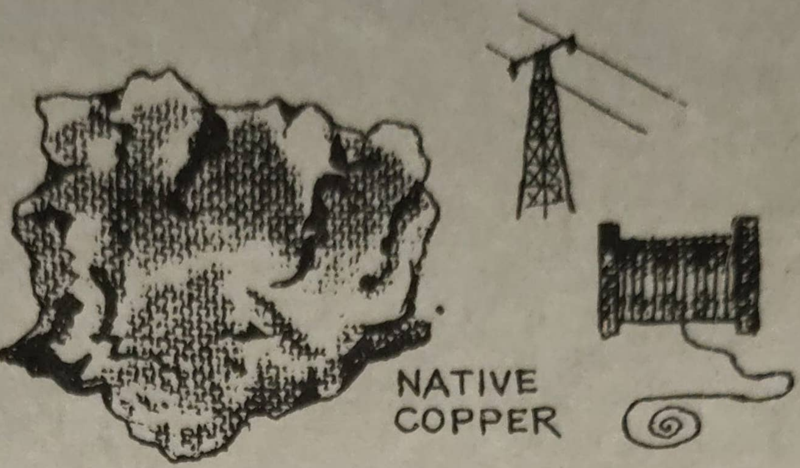
हीलियम गैस क्या है?

अधिकतर गैसें ऐसी हैं, जिन्हें प्रयोगशाला में तैयार किया जा सकता है, लेकिन कुछ गैसें ऐसी भी हैं, जो हमें केवल प्रकृति से ही प्राप्त होती हैं।

हीलियम गैस भी एक ऐसी ही गैस है। यह एक अक्रियाशाली (inactive) गैस है। इसमें न कोई रंग होता है, न कोई गंध और न कोई स्वाद। हीलियम की कुछ ऐसी विशेषताएं हैं, जिनके कारण यह हमारे लिए बहुत महत्त्पूर्ण सिद्ध हुई है। हल्केपन में इस गैस का हाइड्रोजन के बाद दूसरा स्थान है, लेकिन इसकी विशेषता है कि यह आग नहीं पकड़ती, जबकि हाइड्रोजन आग पकड़ती है। इसके हल्केपन और आग न पकड़ने के गुण के कारण इसे मौसम की जानकारी प्राप्त करने वाले गुब्बारों में प्रयोग किया जाता है। इसी कारण इसे सेना और नौसेना में भी इस्तेमाल किया जाता है। दमे के मरीजों को आसानी से सांस लेने के लिए हीलियम दी जाती है। गोताखोर जब अपना काम समाप्त करके लौटते हैं, तो उन्हें सामान्य स्थिति में लाने के लिए हीलियम और आक्सीजन का मिश्रण दिया जाता है। इसे एल्यूमुनियम धातु को वेल्ड करने के काम में भी लाते हैं। हीलियम और नियान के मिश्रण से एक विशेष प्रकार की किरणें पैदा की जाती हैं, जिन्हें 'लेसर किरणें' कहते हैं। हीलियम को द्रव रूप में बदला जा सकता है। द्रव रूप में इसका तापमान 268–4 डिग्री सेंटीग्रेड होता है।

इस गैस का पता सबसे पहले 1868 में अंग्रेज वैज्ञानिक सर नार्मन लॉकायर (Joseph Norman Lockyer) और पियरे जैनसेन (Pierre Janssen) ने अलग-अलग लगाया। सूर्य में उपस्थित तत्वों की जानकारी प्राप्त करने के लिए वे अपने स्पेक्ट्रोस्कोप द्वारा सूर्य के वर्णक्रम (Spectrum) का अध्ययन कर रहे थे। उन्हें इस वर्णक्रम में एक ऐसी रेखा (Line) मिली, जो पहले कभी नहीं देखी गई थी। यह रेखा नए तत्व की उपस्थिति बताती थी। इस तत्व का नाम यूनानी शब्द हीलियोस (Helios) जिसका अर्थ सूर्य होता है, के नाम पर हीलियम रखा गया। बाद में वैज्ञानिकों ने यह जानने की कोशिश की कि क्या हमारे वायुमण्डल में भी हीलियम मौजूद है। उन्हें पता लगा कि वायुमण्डल में भी हीलियम है, लेकिन इसकी मात्रा बहुत कम है। वायुमण्डल के लगभग ढाई लाख क्यूबिक फुट में एक क्यूबिक फुट हीलियम होती है।

अमेरिका के कुछ भाग जैसे टैक्साज, न्यूमैक्सिको, कन्सास आदि ऐसे स्थान हैं, जहां पर हीलियम की मात्रा 1% से 2% तक होती है। यह गैस कनाडा, अफ्रीका और सहारा मरुस्थल में पाई जाती है। संसार में हीलियम अमेरिका में सबसे अधिक मात्रा में मिलती है, इसलिए अमेरिका ही अन्य देशों को सबसे अधिक हीलियम बेचता है। पहले यह गैस बहुत मंहगी थी, लेकिन अब काफी सस्ती हो गई है।



तांबा हमारे लिए किस प्रकार उपयोगी है?

तांबा (Copper) एक ऐसी धातु है, जिसका पता मनुष्य ने पाषाण काल के अंत में ही लगा लिया था। यह प्रकृति में दाने या पिण्डों के रूप में ही मिलता है और शायद मानव को यह धातु पिण्ड रूप में ही मिली होगी। ईसा से 6000 वर्ष पूर्व मनुष्य तांबे के औजार, हथियार और आभूषण प्रयोग में लाने लगा था। ईसा से लगभग 4000 वर्ष पूर्व मनुष्य ने तांबे को खानों से निकालना शुरू कर दिया था। हज़ारों वर्ष तक तांबा ही एक ऐसी धातु थी जिसका प्रयोग मनुष्य करता रहा। इसके बाद जब आदमी को यह पता चला कि तांबा और टिन मिलकर कांसा नाम की मिश्र धातु बनती है, जो तांबे से अधिक सख्त होती है, तो उसने कांसे को प्रयोग में लाना शुरू किया।

पिछले सौ वर्ष में तांबे का उपयोग बहुत बढ़ गया है। यह विद्युत उद्योग में तार बनाने में बहुत अधिक मात्रा में होता है। इसका कारण यह है कि यह एक मुलायम धातु है, जिससे इसके तार आसानी से खींचे जा सकते हैं। यह विद्युत और ऊष्मा का बहुत अच्छा चालक (Conductor) है। हज़ारों टन तांबा बिजली के तार बनाने में संसार में हर वर्ष प्रयोग में आता है। इसे मोटर, डायनमो आदि में भी प्रयोग करते हैं। तांबे के सिक्के तो सारे संसार में चलते ही रहे हैं।

तांबा दूसरी धातुओं के साथ मिलकर मिश्र धातु बनाता है। इसकी दो मिश्र धातुएं मुख्य हैं। पहली कांसा और दूसरी पीतल। कांसे में 90 प्रतिशत तांबा, 4 प्रतिशत टिन और शेष जस्ता, सीसा और निकल होते हैं। पीतल में 70 प्रतिशत तांबा और 30 प्रतिशत जस्ता होता है। ये दोनों ही मिश्र धातुएं हमारे लिए बहुत उपयोगी हैं। इनसे अनेकों प्रकार के बर्तन तथा उद्योगों में काम आने वाली चीजें बनाई जाती हैं। तांबा और एल्यूमिनियम भी एक मिश्र धातु बनाते हैं। जिसे एल्यूमिनियम ब्रोन्ज़ कहते हैं। यह भी आजकल बहुत प्रयोग में आ रही है।

तांबा दूसरे तत्वों से मिलकर दूसरे यौगिक बनाता है। इसके सभी यौगिक जहरीले होते हैं, इसलिए इन यौगिकों को कीटाणु विनाशक के रूप में प्रयोग किया जाता है, जैसे कृषि में इन यौगिकों को कीटाणु मारने के लिए प्रयोग में लाया जा रहा है।

तांबा हमारे लिए इतना उपयोगी सिद्ध हुआ है कि दिन प्रतिदिन संसार में इसका उत्पादन बढ़ाने के अधिकाधिक प्रयास किए जा रहे हैं। तुम्हें आश्चर्य होगा कि सन् 1961 में सारे संसार में लगभग 41 लाख टन तांबे का उत्पादन हुआ और सन् 1970 में यह उत्पादन बढ़कर लगभग 65 लाख टन हो गया। इससे हम कल्पना कर सकते हैं कि तांबा हमारे लिए कितना उपयोगी है।

मनुष्य के शरीर में भी अल्पमात्रा में तांबा पाया जाता है। यह हीमोग्लोबिन बनाने में सहायता करना है।

भेड़ से ऊन कैसे निकाली जाती है?

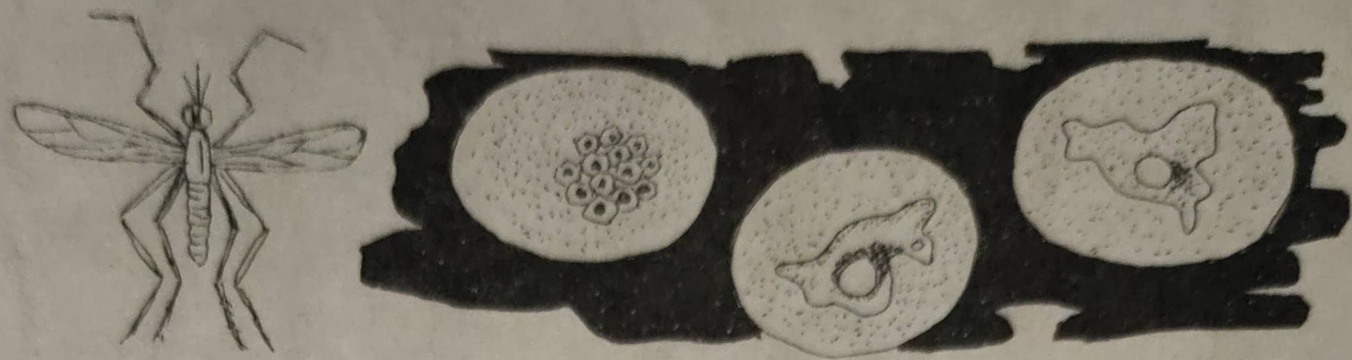


सर्दियों में हम गर्म कपड़े पहनते हैं। ये गर्म कपड़े ऊन से बनाये जाते हैं। ऊन हमें भेड़ों से प्राप्त होती है। जिस प्रकार हमारे सिर पर बाल उगते हैं, ठीक उसी प्रकार भेड़ के शरीर पर भी बाल उगते हैं। भेड़ के ये बाल ही ऊन कहलाते हैं। भेड़ के ये बाल ठंड से उसकी रक्षा करते हैं। क्या तुम जानते हो कि भेड़ से ऊन किस प्रकार तैयार की जाती है?

साल में एक बार भेड़ के बाल काटे जाते हैं। जब जाड़े का मौसम समाप्त होने को होता है और गर्मी आने को होती है, तब भेड़ को बालों की जरूरत नहीं होती। उसी समय भेड़ के बालों को बड़ी-बड़ी कैंचियों द्वारा काट लिया जाता है। इन बालों में कांटे, गंदगी और चिकनाई होती है। बालों को साफ करने के लिए उनके गोले बनाकर ऊन को सुतलियों में बांध दिया जाता है। अब इस ऊन की सफाई की जाती है। इसके बाद मशीनों की सहायता से ऊन की ऐंठन निकाली जाती है। अन्त में इसे धागे के रूप में कात लिया जाता है। इसी ऊनी धागे से गर्म कपड़े बनाये जाते हैं।

यह बताना तो कठिन है कि मनुष्य ने भेड़ों को कब पालना शुरू किया, लेकिन प्राचीन काल से ही मनुष्य भेड की ऊन और मांस का प्रयोग करता रहा है। सदियों के परिश्रम के बाद मनुष्य ने भेड़ों की कई किस्में विकसित कर ली हैं। इसमें कुछ किस्में मांस के लिए प्रयोग होती हैं और कुछ किस्में ऊन देने वाली हैं। स्पेन और अफ्रीका में 'मैरिनो' नामक भेड़ मिलती है, जो ऐसे लगती है, जैसे ऊन की ही बनी हो। इसकी नाक और टांगें ही बिना ऊन के दिखती हैं, बाकी का शरीर ऊन से ढका रहता है। अब अमेरिका और आस्ट्रेलिया में भी 'मैरिनो' जाति की भेड़ें बहुत मिलती हैं, जिनसे ऊन प्राप्त किया जाता है। इस जाति की भेड़ से मिलने वाली ऊन काफी गर्म होती है।

आस्ट्रेलिया में संसार में सबसे अधिक ऊन का उत्पादन होता है। सारे संसार की 30% ऊन आस्ट्रेलिया से प्राप्त होती है। आस्ट्रेलिया के बाद दूसरा नम्बर अमेरिका का आता है। अमेरिका में तीस करोड़ पौंड ऊन का प्रतिवर्ष उत्पादन होता है।



मलेरिया कैसे होता है ?

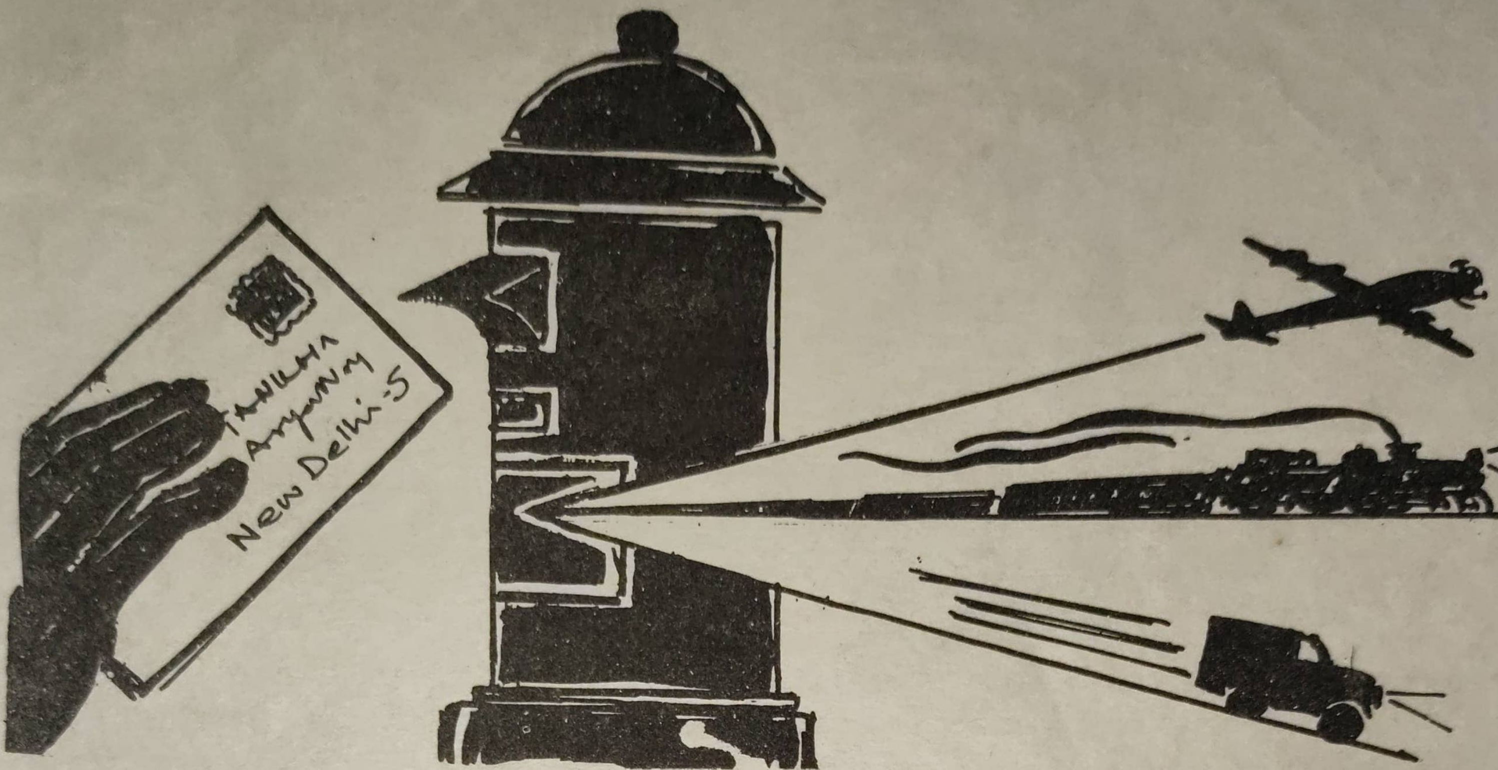
मलेरिया एक ऐसी बीमारी है, जिससे सभी भली-भांति परिचित हैं। संसार में हर वर्ष इस बीमारी के कारण 20 लाख से अधिक लोग मौत के मुंह में चले जाते हैं। यह एक ऐसी बीमारी है, जो संसार के सभी देशों में पाई जाती है। मध्य और दक्षिणी अमेरिका, उत्तरी भूमध्य सागरीय देश, मध्य अफ्रीका, मध्य सुदूर पूर्वीय एशिया, ऊष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों और समुद्र के किनारे वाले स्थानों में इस बीमारी का प्रकोप अधिक होता है। पहले यह माना जाता था कि मलेरिया अंधेरे और सीलन वाले स्थानों में पैदा होने वाली एक विषैली गैस के कारण होता है। मलेरिया शब्द इटेलियन भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है—दूषित वायु। सबसे पहले सर रोनाल्ड रौस ने सन् 1902 में यह सिद्ध कर दिखाया कि मलेरिया मच्छरों से फैलता है। इस खोज के लिए उन्हें नोबल पुरस्कार मिला था।

वैज्ञानिक परीक्षणों ने यह सिद्ध कर दिया है कि मलेरिया एक परजीवी (Parasite) रोगाणु द्वारा होता है, जिसे प्लास्मोडियम (Plasmodium) कहते हैं। मलेरिया के रोगाणु मादा एनाफलीज़ मच्छर के पेट में पलते हैं। पेट का सम्बन्ध मच्छर के मुंह की लार ग्रंथियों से रहता है और ये रोगाणु मच्छर के मुंह में आते जाते रहते हैं। जब मादा एनाफलीज़ मच्छर किसी स्वस्थ व्यक्ति को काटती है, तो मलेरिया के रोगाणु मनुष्य के रक्त में प्रवेश कर जाते हैं। मनुष्य के शरीर के भीतर पहुंचकर ये रोगाणु रक्त की लाल कोशिकाओं (Red Blood Corpuscles) पर हमला करते हैं और उन्हें नष्ट करने लगते हैं। फल यह होता है कि मनुष्य को कंपकंपी आने लगती है और ठंड के साथ तेज बुखार आता है। ठंड के साथ बुखार आना ही मलेरिया का प्रमुख लक्षण है। यदि इसका ठीक प्रकार इलाज नहीं होता तो लाल रक्त कोशिकाओं की शरीर में कमी हो जाती है और मस्तिष्क की रक्त शिराओं में रुकावट आ जाती है एवं अन्त में मरीज की मृत्यु हो जाती है।

अब मलेरिया का इलाज आसानी से उपलब्ध है। जब किसी को मलेरिया हो, तो उसे क्लोरोक्वीन की गोलियां लेनी चाहिए। मलेरिया के आक्रमण से बचने के लिए डाक्टर प्राइमक्वीन की गोलियां लेने की भी सिफारिश करते हैं।

मलेरिया की रोकथाम के विषय में स्वास्थ्य विशेषज्ञों की राय है कि एक दिन मलेरिया को धरती पर से साफ किया जा सकता है। उनका कहना है कि मलेरिया की रोकथाम के लिए एनाफलीज मच्छरों को समाप्त करना होगा। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए संसार भर के स्वास्थ्य संगठनों और विश्व की कई सरकारों ने मिला जुला कार्यक्रम बनाया है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत मलेरिया की रोकथाम के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए गए हैं।

जहां मलेरिया की संभावना है, वहां मच्छरों को समाप्त करने के लिए डी० डी० टी० दवा का छिड़काव करना चाहिए। पानी को एक स्थान पर जमा होने से रोकना चाहिए ताकि उसमें मच्छर पैदा न हो सकें। रात को मच्छर-दानी लगाकर सोना चाहिए। सोते समय शरीर के खुले भागों पर कड़ुवा तेल लगाकर सोना चाहिए। जहां पर पानी इकट्ठा हो गया हो, उस पर मिट्टी का तेल छिड़कना चाहिए। घर के अंधेरे स्थानों में फिलट छिड़कनी चाहिए। मलेरिया रोकने का सबसे बड़ा सिद्धांत यह है कि रोग ग्रसित और निरोग व्यक्ति के बीच रोगाणु संचार को किसी न किसी प्रकार रोक दिया जाए।



डाक-व्यवस्था कब और कैसे शुरू हुई?

डाक-व्यवस्था आज सारी दुनिया में प्रचलित है। इंगलैंड या अमेरिका में बैठे हुए हमारे मित्रों या सम्बन्धियों द्वारा लिखे गये पत्र हमें छः सात दिन में प्राप्त हो जाते हैं। इसी प्रकार बम्बई, कलकत्ता या दूसरे स्थान से लिखा गया पत्र हमें तीन दिन में मिल जाता है। यह सब डाक-व्यवस्था का कमाल है। हमारे द्वारा भेजे गए पत्रों को ले जाने का काम मोटर गाड़ियों, रेलों और हवाई जहाज़ों द्वारा किया जाता है। एक स्थान से दूसरे स्थान तक पत्रों को ले जाने का कार्य हज़ारों लाखों लोग करते हैं।

क्या तुम जानते हो कि डाक-व्यवस्था का आरम्भ कब और कैसे हुआ? प्राचीन काल में संदेश भेजने का काम लोग निजी तौर पर किया करते थे। सोलहवीं सदी में डाक-व्यवस्था का कार्य सरकारों ने अपने हाथ में लिया। इसके तीन मुख्य कारण थे। पहली बात यह थी कि सरकार लोगों के संदेहपूर्ण संदेशों पर नजर रखना चाहती थी। दूसरा काम डाक-व्यवस्था से देश के लिए धन इकट्ठा करना था और तीसरा उद्देश्य जनता की भलाई का था। अब जनता की सेवा ही डाक-व्यवस्था का मुख्य उद्देश्य है। सन् 1609 तक सरकार द्वारा नियुक्त किए गए विशेष संदेशवाहक ही पत्र ले जाने का काम करते थे। सन् 1680 में लन्दन के एक व्यापारी ने शहर व आसपास के इलाकों के लिए अपनी डाक-व्यवस्था शुरू की। सन् 1840 में इंगलैंड में डाक-व्यवस्था का सारा ढांचा बदल गया। इसी वर्ष डाक टिकटें जारी की गईं और सारे देश के लिए डाक दरें समान कर दी गईं। इंगलैंड की इस व्यवस्था को अन्य देशों ने भी शुरू कर दिया और इस प्रकार सारे विश्व में डाक-व्यवस्था कायम हो गई।

आज दुनिया की सबसे बड़ी डाक सेवा अमेरिका की है। अमेरिका की डाक सेवा में लगभग साढ़े सात लाख कर्मचारी हैं और वहां हर वर्ष दस हज़ार करोड़ पत्र डाले जाते हैं। भारत में डाक सेवा 1854 में शुरू हुई थी। एयर मेल सेवा 10 फरवरी 1911 को शुरू हुई। भारत की डाक-व्यवस्था बेहतर सुविधा के दृष्टिकोण से अमेरिका से श्रेष्ठ मानी जाती है।



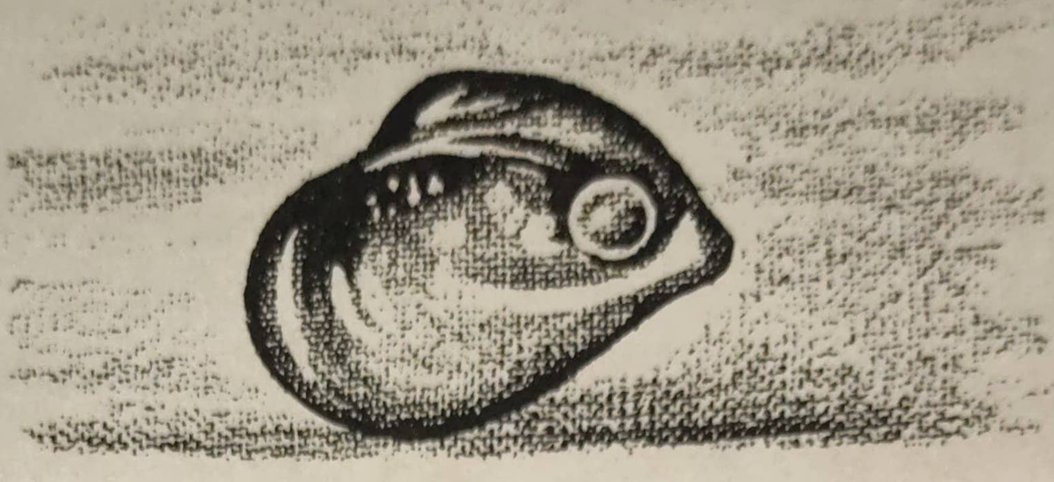
रबर क्या है ?

रबर का इतिहास भी उतना ही पुराना है जितना प्रकृति का। रबर एक प्रकार के पेड़ों से प्राप्त की जाती है। रबर जिन पेड़ों से प्राप्त की जाती है, उनके 30 लाख वर्ष पुराने अवशेष प्राप्त हुए हैं। रबर वास्तव में एक ठोस कार्बनिक पदार्थ है, जिसमें लचीलेपन और आसानी से खिंचने का गुण होता है। यह अपनी लम्बाई से आठ गुनी अधिक लम्बाई तक खिंच जाती है। जिस पेड़ से रबर प्राप्त की जाती है, उसमें से एक सफेद रंग का तरल पदार्थ निकलता है, जिसे लेटेक्स कहते हैं। इसी तरल पदार्थ के सूखने से रबर बनती है। इसको प्राकृतिक रबर कहते हैं। वास्तव में जिन पेड़-पौधों के रस से रबर बन सकती है, उनकी चार सौ से भी अधिक किस्में हैं। हरेक प्रकार के पौधे से अलग-अलग मात्रा में रबर प्राप्त होती है।

रबर जिस पेड़ से सबसे अधिक मात्रा में मिलती है, उसका नाम हैविया ब्रैसिलीनसिस (Hevea Brasiliensis) है। यह करीब 120 फुट ऊंचा होता है। एक दूसरा पेड़ जिससे रबर मिलती है, उसे कैस्टिला कहते हैं। रबर उत्पादन का वास्तविक विकास 18वीं शताब्दी में हुआ, जब इसके पेड़ों के नमूने अमेरिका पहुंचे। रबर के विषय में एक बड़ी दिलचस्प बात है। जब कोलम्बस ने अपनी दूसरी समुद्री यात्रा की तो उसने हाइटी के निवासियों के बच्चों को एक गेंद से खेलते देखा जो उछलती थी। यह गेंद भी उसी पेड़ के रस को जमा कर बनाई गई थी। इस रस को योरुप ले जाया गया। वहां के एक अंग्रेज़ वैज्ञानिक जोसफ गेस्टले ने देखा कि इसके रगड़ने से पेन्सिल का लिखा मिट जाता है, तो उसने इसका नाम रबर रख दिया।

19वीं शताब्दी में रबर का उपयोग इसके अद्‌भुत गुणों के कारण बहुत बढ़ गया और प्राकृतिक तरीकों से प्राप्त रबर से संसार की मांग को पूरा करना मुश्किल हो गया, तब वैज्ञानिकों ने रबर निर्माण के कृत्रिम तरीकों का विकास करना शुरू किया। कृत्रिम रबर का निर्माण प्रथम महायुद्ध के दौरान सर्वप्रथम जर्मनी में हुआ। इसके बाद अन्य देशों में भी कृत्रिम तरीकों से रबर बनाई जाने लगी। आज संसार के समस्त उत्पादन में 50% प्रतिशत रबर कृत्रिम तरीकों से बनाई जाती है।

रबर हमारे लिए बहुत उपयोगी है। इससे लाखों वस्तुएं बनाई जाती हैं। इससे टायर, ट्यूब, पाइप, बरसाती, कारपेट, वाटर प्रूफ कपड़े का निर्माण होता है। बिजली के तारों को विद्युत कुचालक बनाने के लिए रबर की तह चढ़ाई जाती है। रबर कुछ कार्बनिक पदार्थों में घुल जाती है, इसलिए इसे किसी भी रूप में ढाला जा सकता है। आज रबर का प्रयोग इतना बढ़ गया है कि सन् 1972 में सारे विश्व में लगभग 31 लाख टन प्राकृतिक रबर और लगभग 53 लाख टन कृत्रिम रबर का उत्पादन किया गया था।

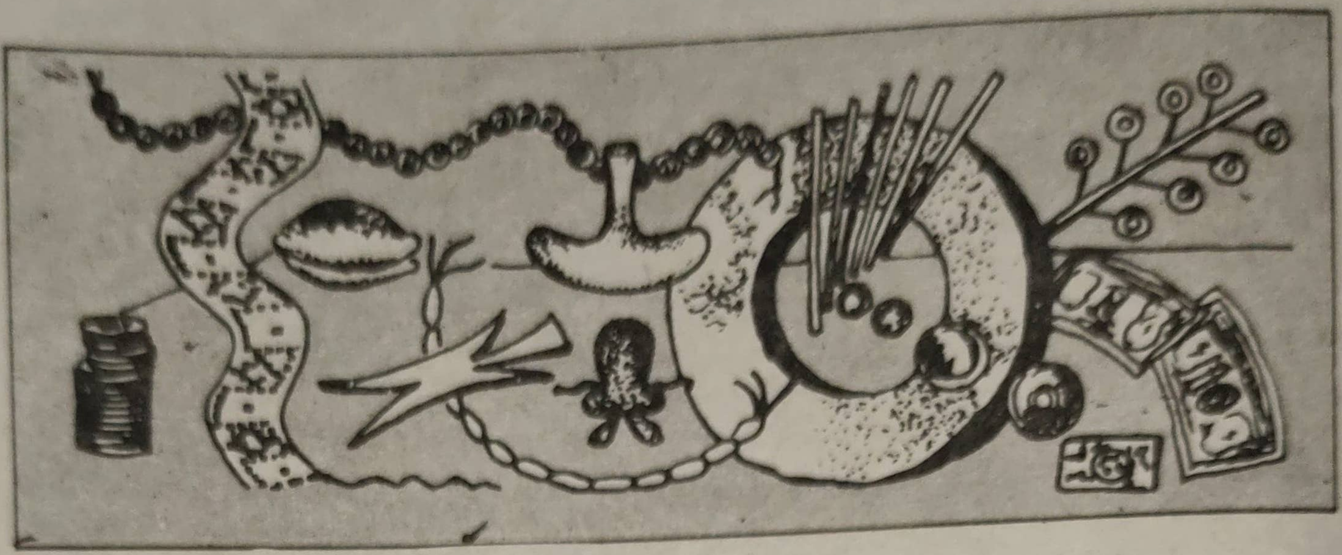


मोती कैसे बनते हैं?

सच्चा मोती बहुत कीमती होता है। तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि मोती समुद्र में रहने वाले एक छोटे से जीव द्वारा बनाये जाते हैं। इस जीव को घोंघा (Oyster) कहते हैं। यह जीव जमीन पर भी सरक सकता है। इस जीव के साथ सबसे बड़ी मुसीबत यह है कि समुद्र में इसे बड़ी मछलियां या इसके ही परिवार के बड़े सदस्य खा जाते हैं। जान बचाने के लिए जब यह धरती पर आता है, तो मनुष्य इसे खा जाता है। अपनी जान बचाने के लिए यह अपने शरीर के ऊपर एक कड़े खोल का निर्माण करता है, जिसे सीप कहते हैं। इस सीप के अंदर ही यह मोती का निर्माण करता है।

मोती की खोज की कहानी भी बड़ी दिलचस्प है। लगभग चार हज़ार वर्ष पहले एक चीनी आदमी भूख से बहुत पीड़ित था। अपनी भूख शांत करने के लिए उसने कुछ सीपियों को खोला कि शायद इसमें कुछ खाने की चीजें मिल जाएं। एक सीप के अंदर से एक गोल चमकदार चीज़ निकली। इसी चमकदार वस्तु को मोती कहा जाने लगा।

क्या तुम जानते हो कि घोंघा मोती का निर्माण कैसे करता है? घोंघे की सीप में जब कोई बालू का कण अंदर चला जाता है, तो घोंघा इस कण पर सीप के पदार्थ की परत पर परत चढ़ाए चला जाता है। यह परत कैल्शियम कार्बोनेट (Calcium Carbonate) की होती है। कुछ समय में सीप के अंदर मोती बन जाता है, जो गोल सफेद और चमकदार होता है। इसी को सच्चा मोती कहते हैं। यह आवश्यक नहीं कि मोती सफेद ही हों। इसका रंग काला और गुलाबी भी हो सकता है। अब तो मनुष्य ने मोती बनाने के कुछ कृत्रिम तरीकों का भी विकास कर लिया है। इस तरीके में वे सीप के अंदर बालू के कण प्रवेश करा देते हैं। दो या तीन साल बाद जब खोल को पानी के बाहर निकाल कर देखा जाता है, तो उसके अंदर मोती मिलता है। इन मोतियों को कल्चर्ड (Cultured) मोती कहते हैं। जापान में सुन्दर मोती बनाने की तकनीकों का विकास कर लिया गया है। सच्चे मोती बहुत कीमती होते हैं, अतः हम आमतौर पर इन्हीं कृत्रिम विधि से बनाये गये मोतियों को खरीदते हैं। 7 मई 1934 को फिलीपीन्स में एक ऐसा मोती पाया गया था, जो साढ़े नौ इंच लंबा व साढ़े पांच इंच व्यास का था। मोती का वज़न लगभग 7 कि० ग्रा० था।



मुद्रा का प्रचलन कब और कैसे शुरू हुआ?

आमतौर पर मुद्रा शब्द चालू सिक्कों व कागज के नोटों के लिए प्रयोग होता है, जिनके बदले में हम अनेकों चीजें खरीदते हैं। आज विश्व के सभी देश सिक्कों और नोटों का प्रयोग करते हैं और इन्हीं के बूते पर सारा व्यापार चल रहा है। क्या तुम जानते हो कि इन धातु के सिक्कों और कागज के नोटों का प्रचलन कब और कैसे शुरू हुआ?

सभ्यता के आरम्भिक काल में जब किसी व्यक्ति को कोई चीज खरीदनी होती थी, तो वह उस वस्तु के बदले अनाज, तम्बाकू, चमड़ा, नमक आदि देकर वस्तु को प्राप्त करता था। गांवों में आज भी छोटी-छोटी घरेलू उपयोग की वस्तुएं अनाज के बदले लोग दुकानों से खरीदते हैं। इस प्रकार के लेन-देन में लोगों को बड़ी असुविधा होती थी। इस परेशानी से छुटकारा पाने के लिए सबसे पहले लोगों ने सोने और चांदी की छड़ों के बदले चीज़ें खरीदना शुरू किया, लेकिन इसमें उपयोग होने वाले सोने और चांदी की शुद्धता का पता नहीं चलता था।

सर्वप्रथम ईसा से सात सौ वर्ष पहले लीडिया (आज का टर्की) के राजा गायजैस ने 'इलेक्ट्रम' नामक धातु के सिक्कों का प्रचलन किया। इस धातु में पच्चीस प्रतिशत चांदी और पचहत्तर प्रतिशत सोना होता था। इन सिक्कों का आकार सेम जैसा होता था। यूनानियों ने जब इन सिक्कों को देखा तो उन्हें दिन-प्रतिदिन के काम-काज के लिए इनका प्रयोग काफी अच्छा लगा। उन्होंने भी सिक्के बनाना शुरू कर दिया। कुछ ही वर्षों में इन सिक्कों का प्रचलन बहुत से देशों में शुरू हो गया। बाद में सोने और चांदी की जगह तांबे के सिक्के बनने लगे।

सिक्कों के प्रयोग से लोगों की कुछ समस्या तो हल हो गई, लेकिन अधिक मात्रा में लेन-देन के लिए इनका प्रयोग उन्हें असुविधाजनक लगा, क्योंकि ये धातु के सिक्के काफी भारी हो जाते थे। भार की समस्या को हल करने के लिए नोटों का प्रचलन शुरू हुआ। कागज की यह मुद्रा सबसे पहले चीन के लोगों के दिमाग में आई। चीन के लोगों ने लगभग ईसा से 119 वर्ष पूर्व कागज़ के नोटों की शुरुआत कर दी थी। नोट किसी बैंक द्वारा दिए जाते थे। इन पर लिखे धन की अदायगी की गारंटी बैंक की होती थी। किसी बैंक द्वारा विश्व का पहला नोट जुलाई सन् 1661 में स्वीडन के स्टाक होम्स बैंकों की ओर से जारी किया गया था। अब तो नोटों के साथ-साथ चैकों का इस्तेमाल भी शुरू हो गया है। इस प्रकार लेन-देन में आज के मनुष्य को अनेक सुविधाएं हो गई हैं।

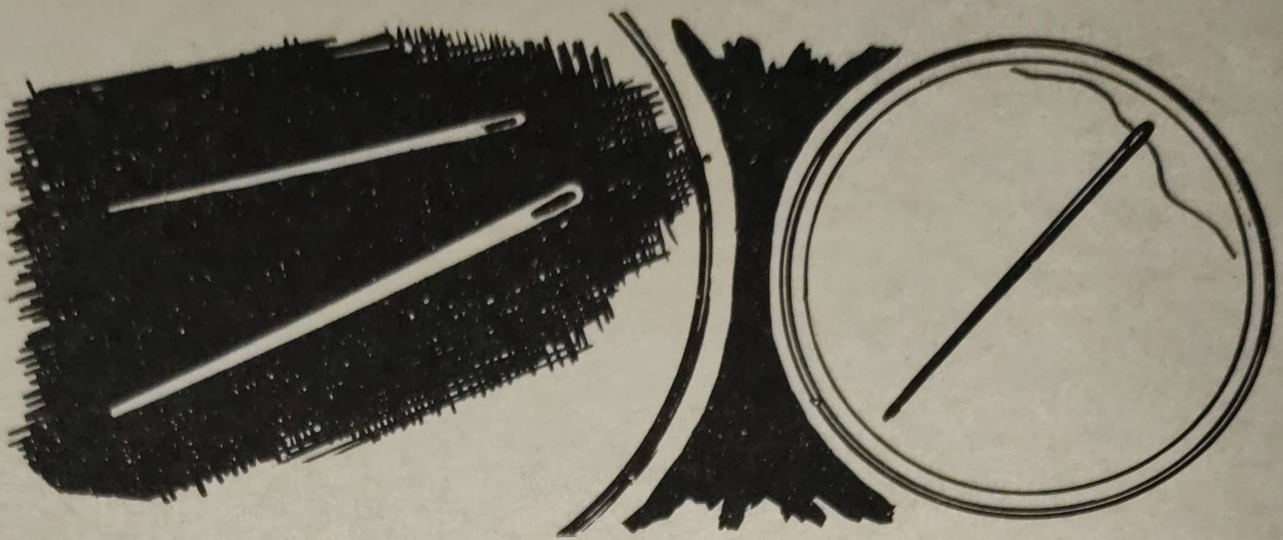


जनगणना क्यों की जाती है?

दुनिया के सभी देशों में आज जनगणना किये जाने की परम्परा प्रचलित है। इसकी शुरुआत कब और कैसे हुई? इस विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता, लेकिन जब मनुष्य ने बडे-बड़े समूहों में रहना शुरू किया था, शायद तभी उसने जनगणना का महत्त्व समझ लिया था। कहा जाता है कि ईसा से 4000 साल पहले दुनिया की जन-संख्या साढ़े आठ करोड़ थी। इसका मतलब है कि उस समय भी जनगणना की पद्धति काफी विकसित थी। आखिर जनगणना क्यों की जाती है? अलग-अलग समय पर इसके अलग-अलग कारण रहे हैं। प्राचीन समय में राजा इसलिए जनगणना करवाते थे ताकि वे यह जान सकें कि कितने लोगों को युद्ध पर भेजा जा सकता है। कर वसूलने के लिए भी जनगणना की जाती थी। पहले शायद जनगणना करने के यही दो कारण थे, लेकिन अब तो जनगणना करना बहुत ही महत्त्वपूर्ण हो गया है।

जनगणना से हर वर्ष व हर पेशे से सम्बन्धित लोगों की एक सही तस्वीर सरकार के सामने आ जाती है, जिससे सरकार को शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार तथा अन्य योजनाएं बनाने और लागू करने में मदद मिलती है। जनगणना से इस बात का पता लगता है कि देश की जनसंख्या बढ़ रही है या घट रही है और किस दर से बढ़ या घट रही है। इस घटने और बढ़ने की दर के हिसाब से ऐसी योजनाएं बनाई जाती हैं, जो आने वाले समय में लोगों की आवश्यकताओं को पूरा कर सकें। जनगणना से शहरों और गांवों में रहने वाले लोगों का अनुपात भी पता लग जाता है। जनगणना चुनाव कार्यों के लिए भी बहुत उपयोगी है, क्योंकि इसी के आधार पर जन प्रतिनिधियों की संख्या निर्धारित की जाती है। इसके अलावा कानून, व्यवस्था, आर्थिक, सामाजिक स्थितियों को सुधारने में भी जनगणना से बहुत सहायता मिलती है।

हमारे देश में पहली बार 1872 में जनगणना हुई थी। तब से हर दस वर्ष बाद जनगणना होती है। इस बार सन् 1981 में भी देश में जनगणना की गई।



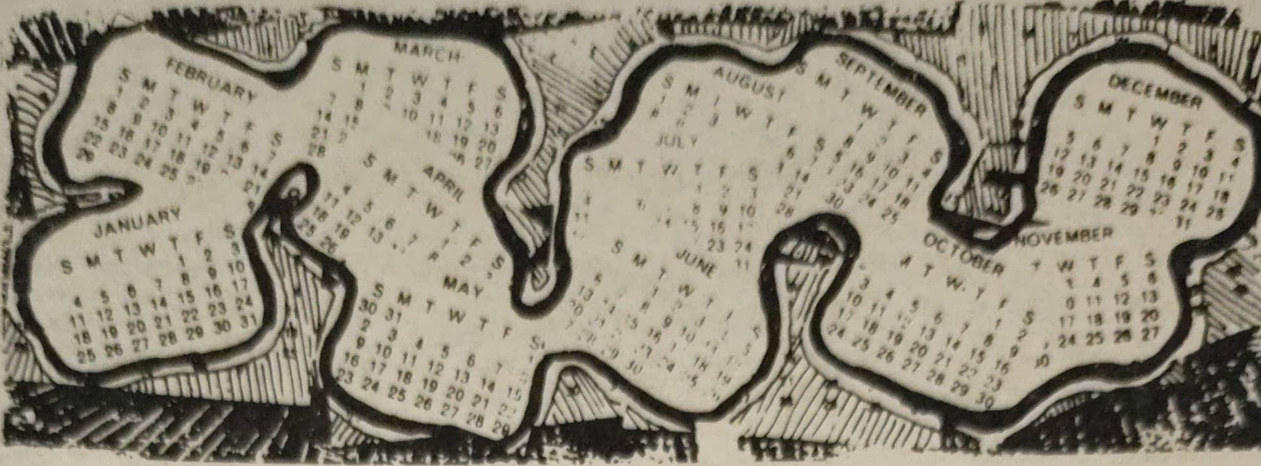
सुई का विकास कैसे हुआ?

सुई है तो छोटी सी चीज़, लेकिन है बहुत काम की। बिना सुई के हमें सिले हुए कपड़े कभी न मिलते। सुई पिछले हज़ारों वर्षों से मानव जाति की सेवा करती आ रही है। आज जो हम भांति-भांति के सिले हुए सुन्दर कपड़े पहनते हैं, ये सब सुई का ही तो कमाल है। इतना ही नहीं, संसार में लाखों करोड़ों लोग सुई की सहायता से अपनी रोजी-रोटी कमाते हैं। क्या तुम जानते हो कि सुई का आविष्कार कैसे हुआ?

सुई का आविष्कार कब हुआ, इस विषय में, हमें कोई निश्चित जानकारी नहीं है, लेकिन इतना अवश्य है कि जब आदिमानव ने छाल व चमड़ें से अपने शरीर को ढकना शुरू किया तभी उसे टांके लगाने के लिए सुई जैसी वस्तु की जरूरत हुई होगी और उसने इस काम को करने के लिए सुई जैसी कोई चीज़ बनाई होगी। प्राचीन काल में हड्डी, हाथीदांत, लकड़ी, कांसा और कांटे की सुइयां बनाई जाती थीं, जो देखने में बड़ी बेडौल होती थीं। उनके एक सिरे में छेद नहीं होता था। हज़ारों साल से मनुष्य हड्डी से बनी सुइयों को काम में लाता रहा, जिनमें बाद में एक सिरे पर छेद भी किया जाने लगा।

आधुनिक ढंग की स्टील की सुइयों का निर्माण सर्वप्रथम चीन में शुरू हुआ। चीन से ये सुइयां योरोप में पहुंचीं। इस प्रकार चौदहवीं शताब्दी में न्यूरेमबर्ग(जरमनी) में भी स्टील की सुइयां बननी शुरू हुईं। एलिजाबेथ प्रथम के शासन काल में जरमनी के इलयास ग्राउस नामक व्यक्ति ने इंगलैंड के लोगों को सुई निर्माण की कला का ज्ञान कराया। अब तो संसार के हर देश में सुइयां बनने लगी हैं व इंगलैंड व फ्रांस में संसार के सभी देशों से अधिक सुइयों का उत्पादन होता है। यद्यपि सुई एक छोटी सी चीज़ है और इसके निर्माण में मशीनों का प्रयोग होता है फिर भी निर्माण के दौरान इसे बीस लोगों के हाथों से गुजरना पड़ता है।

20 मार्च 1971 को विस्टर शायर (इंगलैंड) की एक छात्रा ने बेहद छोटे छेद वाली सुई में दो घंटे में 3795 बार धागा डालकर ऐसा कीर्तिमान कायम किया, जो आज तक नहीं टूटा है।



कैलेंडर की शुरुआत कैसे हुई ?

सभ्यता के आरम्भ में मनुष्य ने जब सूर्य को उदय-अस्त होते देखा, तो उसे दिन और रात का ज्ञान हुआ। चंद्रमा के घटने और बढ़ने से उसने महीने की धारणा बनाई और शायद मौसमों के बदलने से उसे वर्ष का ज्ञान हुआ। जैसे-जैसे विज्ञान का विकास हुआ वैसे ही वैसे मनुष्य को कुछ सही-सही बातों का ज्ञान प्राप्त होता गया। सूर्य के चारों ओर पृथ्वी को एक परिक्रमा करने में जितना समय लगता है, उसने उसे वर्ष कहना शुरू किया। चंद्रमा पृथ्वी के चारों ओर परिक्रमा करने में जितने दिन लेता है, वह एक महीना कहलाया और पृथ्वी अपने अक्ष (Axis) पर एक चक्कर पूरा करने में जितना समय लेती है, उसे दिन कहा गया। मिस्र (Egypt) के प्रारंभिक कैलेंडरों में एक वर्ष 12 महीने का होता था और महीना 30 दिन का हुआ करता था, यद्यपि बाद में अतिरिक्त 5 दिन वर्ष के अंत में जोड़ दिये जाते थे, ताकि एक वर्ष ठीक 365¼ दिनों का हो जाए। यूनान के लोग चन्द्र कैलेंडर (Lunar Calendar) का प्रयोग किया करते थे, जिसमें अतिरिक्त 3 माह हर आठ वर्ष बाद जोड़ दिए जाते थे। यद्यपि 432 ई. पू. से ज्योतिषी मेटन ने ज्ञात किया कि 235 चन्द्रमास 19 वर्षों में सही ढंग से फिट हो जाते हैं। यही कैलेंडर उस समय के यहूदियों और धर्म संबंधी कैलेंडरों का आधार बना।

कैलेंडर के विकास की दिशा में सबसे पहला सही कदम 46 ई. पू. में रोम के शासक 'जूलियस सीजर' (Julius Caesar) ने उठाया। उसने इस कार्य में अपने ज्योतिषशास्त्री 'सौसीजन' (Sosigenes की सहायता ली। यह कैलेंडर पृथ्वी द्वारा सूर्य के चारों ओर एक परिक्रमण में लिए गए समय पर आधारित था। इसका नाम सौर कैलेंडर (Solar Calendar) था। पृथ्वी 365.25 दिन में सूर्य की एक परिक्रमा करती है, इसलिए इस समय को एक वर्ष माना गया। सीजर के ज्योतिषियों ने वर्ष को 365 दिन का तथा हर चौथे वर्ष को 366 दिन माना, ताकि हर वर्ष का चौथाई दिन चार वर्षों में पूरा हो जाए। इस चौथे वर्ष को लीप ईयर (Leap Year) कहा गया। जिस वर्ष के अंक 4 से विभाजित हो जाते थे, उस साल को लीप ईयर मान लिया जाता था। 365 दिनों को 12 महीनों में विभाजित किया गया। इनमें से जनवरी, मार्च, मई, जुलाई, अगस्त, अक्तूबर और दिसम्बर 31 दिनों के महीने थे और अप्रैल, जून, सितम्बर और नवम्बर 30 दिन के थे। फरवरी 28 दिन की होती है। यह कैलेंडर लगभग 1600 वर्षों तक चलता रहा। बाद में इसमें 10 दिन की गड़बड़ी पाई गई। 1582 में इटली के 'पोप ग्रेगरी' ने इस कैलेंडर में सुधार किए, क्योंकि इसमें एक कमी रह गई थी। चूंकि पृथ्वी को सूर्य की परिक्रमा में वास्तव में 365.2422 दिन लगते हैं अतः एक हज़ार साल की अवधि में 7–8 दिन का अंतर पड़ जाना स्वाभाविक था। इस अंतर को दूर करने के लिए ग्रेगरी (Gregory) महोदय ने 1522 में यह सुधार किया कि जिन शताब्दियों की संख्या 400 से विभाजित नहीं हो पाती, उन शताब्दियों में फरवरी 28 दिन की होगी, जैसे सन् 1700, 1800, 1900 में फरवरी 28 दिन की

थी, लेकिन सन् 2000 में यह 29 दिन की होगी। इस कैलेंडर को ग्रेगोरियन कैलेंडर कहते हैं। इसका प्रयोग आज विश्व में हर जगह होता है।

दूसरा कैलेंडर चन्द्रमा की गति पर आधारित है। इसे चन्द्र कैलेंडर या (Lunar Calendar) कहते हैं। चूंकि चन्द्रमा 29½ दिन में पृथ्वी की एक परिक्रमा पूरी करता है, अतः चन्द्रमा की 12 परिक्रमाओं में 29½ × 12 = 354 दिन हुए। इस प्रकार चन्द्र वर्ष 354 दिन का बैठता है, जो सौर वर्ष से लगभग 11 दिन कम है। इस प्रकार तीन वर्षों में लगभग 33 दिन का अंतर आ जाता है। इस कमी को तीन वर्षों में 13 महीने का वर्ष मानकर पूरा कर लिया जाता है। इस अतिरिक्त एक महीने को 'मलमास' कहते हैं। महीने के दिनों को पूरा करने के लिए तिथियों को घटा बढ़ाकर ठीक कर लिया जाता है। भारत सरकार ने 22 मार्च 1957 से चन्द्र कैलेंडर के आधार पर शक संवत् को राष्ट्रीय कैलेंडर के रूप में स्वीकार किया। शक संवत् ईस्वी संवत् से 78 वर्ष पीछे पड़ता है।

इन दोनों कैलेंडरों के अतिरिक्त संसार के कुछ देशों में दूसरे अन्य कैलेंडर भी प्रचलित हैं, जो वहां के धार्मिक कार्यों में प्रयुक्त होते हैं।

आप यह पढ़ चुके हैं कि कैलेंडर बनाते समय वर्ष के 365 दिनों को 12 महीनों में विभाजित किया गया। इन महीनों को हम जनवरी, फरवरी, मार्च, अप्रैल, मई, जून, जुलाई, अगस्त, सितम्बर, अक्तूबर, नवम्बर, दिसम्बर के नाम से पुकारते हैं। क्या आप जानते हैं कि वर्ष के इन महीनों को ये नाम किस प्रकार दिए गए।

जनवरी (January) वर्ष का प्रथम महीना है। इसकी उत्पत्ति रोम के देवता 'जेनस' (Janus) के नाम से हुई। रोम के निवासी इस देवता के दो मुख मानते हैं, जो भूत और भविष्य में देखते रहते हैं।

फरवरी (February) रोमन त्यौहार 'फैब्रुआ' (Fabrua) से निकला है।

मार्च (March) या मंगल रोम के निवासियों का युद्ध देवता था। इसी के नाम पर मार्च महीने का नाम रखा गया।

अप्रैल (April) सम्भवतः लैटिन भाषा के शब्द 'एपेरिर' (Epirer) से लिया गया है। इसका अर्थ खुलना होता है। चूंकि इस महीने में वसंत ऋतु में वनस्पतियां खिलती हैं, इसलिए इसको अप्रैल नाम दे दिया गया।

मई (May) शब्द की उत्पत्ति रोम के निवासियों की देवी 'माइमा' (Myma) के नाम से हुई है।

जून (June) की उत्पत्ति का सही पता नहीं है, लेकिन शायद यह स्वर्ग की रानी 'जूनो' (Juno) के नाम से लिया गया है।

जुलाई (July) 'जूलियस सीज़र' (Julius Caesar) के नाम से लिया गया है। वह इसी महीने में पैदा हुआ था। यही सबसे पहला व्यक्ति था जिसने आधुनिक कैलेंडर के विकास में बहुत बड़ा योग दिया था।

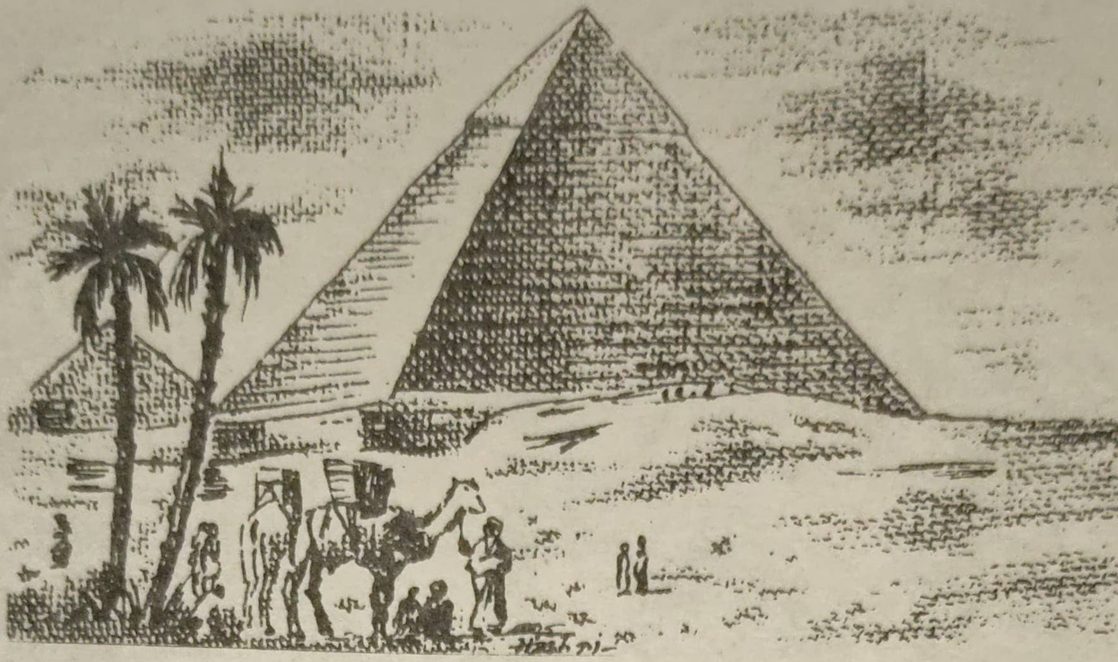
अगस्त (August) मास की उत्पत्ति रोम के राजा 'आगसटस' के नाम पर हुई है। उसने इस महीने में कई विजयें प्राप्त की थीं।

सितम्बर (September) शब्द लैटिन भाषा के शब्द 'सप्तम' यानी सात से लिया गया है। पुराने रोमन कैलेंडर में यह सातवां महीना था।

अक्तूबर (October) लैटिन शब्द 'आक्टो' अथवा आठ से निकला है। पुराने रोमन कैलेंडर में यह आठवां महीना था।

नवम्बर (November) लैटिन शब्द 'नवम' (Novem) अर्थात् नौ से निकला है। यह पुराने कैलेंडर में नौवां महीना था।

दिसम्बर (December) लैटिन शब्द डीसेम (Decem) से लिया गया है जिसका अर्थ दसवां होता है यह पुराने रोमन कैलेंडर में दसवां महीना था।



विश्व के सात आश्चर्य कहां गए ?

संसार के सात महान आश्चर्यों के विषय में हम सभी सुनते रहते हैं। ये सात आश्चर्य क्या हैं? ये हैं—1- मिस्र के पिरामिड (Pyramids of Egypt), 2- बेबीलोन के तल्लेदार बाग (The hanging Gardens of Babylon) 3- मासोलस का मकबरा (The Tomb of Mouslus), 4- देवी डायना का मंदिर (The Temple of Diana)। 5- हीलियोस की कांसे की प्रतिमा (The Colosses of of Rhodes of Hilious), 6- जीयस देवता की मूर्ति (The Statue of God Zeus), 7- फ़ैरो का प्रकाश स्तम्भ (The Light House of Pharos near Alexandria)। इन सातों आश्चर्यों में से आज केवल एक मात्र मिस्र के पिरामिड ही सुरक्षित हैं। शेष सभी नष्ट हो गए हैं। क्या तुम ज्ञानते हो कि इन आश्चर्यों की क्या कहानी है और ये कहां चले गए हैं?

एकमात्र सुरक्षित 'मिस्र के पिरामिडों' का निर्माण आज से लगभंग 5000 वर्ष पूर्व हुआ था। वास्तव में ये पिरामिड मिस्र के शासकों के मकबरे हैं। सबसे बड़ा पिरामिड काहिरा से कुछ दूर 'गीजा' (Gizeh) कस्बे में स्थित है। यह राजा फैरो खूफू (Pharaoh Cheops) और उसकी रानी का मकबरा है। 481 फुट ऊंचे इस मकबरे की वर्गाकार आधार की प्रत्येक दीवार की लम्बाई 750 फुट के लगभग है। इसमें 20 लाख से अधिक शिलाखण्ड लगे हैं। कहा जाता है कि 2000 से भी अधिक मजदूरों ने 20 वर्ष तक कार्य करके इसे तैयार किया था।

दूसरा आश्चर्य 'बेबीलोन के झूलते हुए बाग' थे। लगभग 2500 वर्ष पूर्व वहां के राज़ा नेबूचदनेजार (Nebuchadnezzar) ने अपनी रानी के कहने से राजमहल के चारों ओर दीवारों पर खूबसूरत बाग लगवाए थे। इन बागों की ऊंचाई बहुत थी, इन्हें देखकर आश्चर्य होता था कि इतनी ऊंचाई पर पानी कैसे पहुंचाया जाता होगा। 514 ई. तक तो ये ठीक हालत में थे, लेकिन उसी साल पोर्शिया ने बेबीलोन पर हमला कर दिया और इन दीवारों और बगीचों को नष्ट कर दिया।

संसार का तीसरा आश्चर्य हैलीकारनासस (Halicarnassus) के शासक 'मासोलस का मकबरा' था, जिसका निर्माण उसकी मृत्यु के बाद उसकी रानी ने करवाया था। यह लगभग 100 फट ऊंचा था और उसके ऊपर घोड़े जूते रथ पर राजा-रानी की मूर्तियां थीं। निर्माण के कुछ ही दिनों बाद सिकन्दर महान के आक्रमण के कारण यह मकबरा ध्वस्त हो गया। 1857 में एक अंग्रेज यात्री वहां गया तथा राजा की प्रतिमा उठा लाया। यह प्रतिमा आज भी ब्रिटिश संग्रहालय में सुरक्षित है।



Temple of Goddess Diana



Hanging Garden of Babylon



Statue of Zeus



Tomb of Mousolus



Lighthouse



Rhodes of Helios

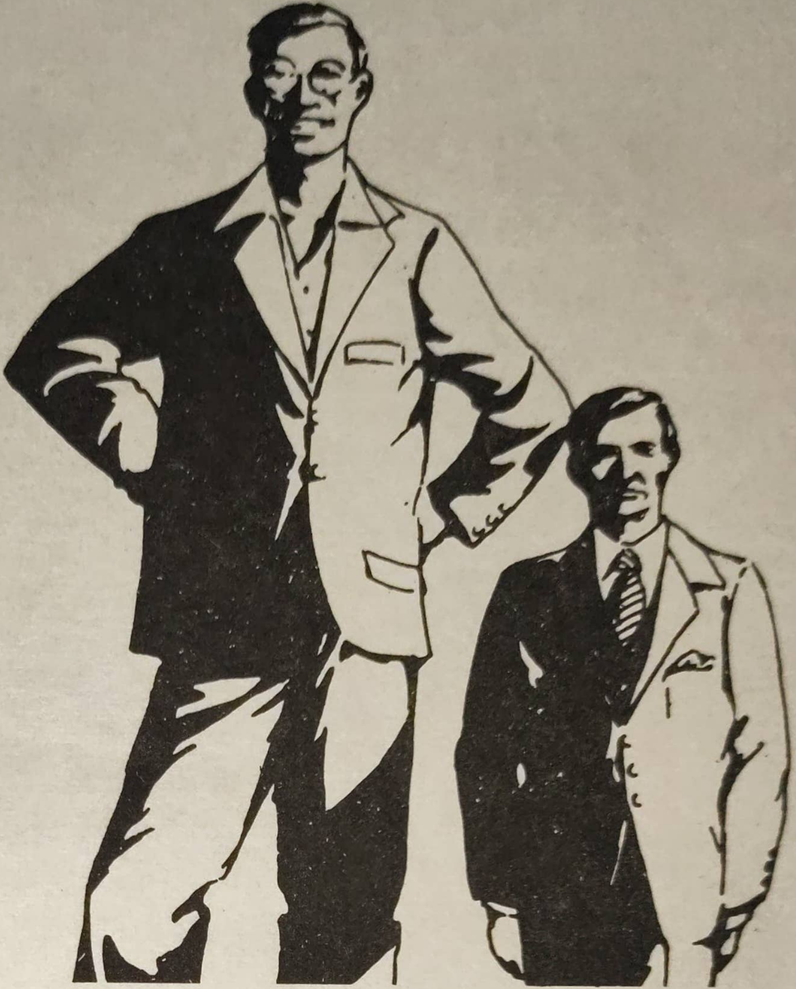
विश्व का चौथा आश्चर्य 'एफसेस (Ephesus) में देवी डायना का मंदिर' था। साठ फुट ऊंचे खंभों पर टिकी छत वाले इस मंदिर का निर्माण ईसा से 350 वर्ष पूर्व टर्की में हुआ था। तब यह मंदिर इतना पवित्र माना जाता था कि लोग अपना धन व कीमती वस्तुएं इस मंदिर में रखकर निश्चिंत हो जाते थे। 262 ई० में 'गोथ्स' (Goths) ने इस मंदिर को जला डाला था।

विश्व का पांचवां आश्चर्य 'हीलियोस की कांसे की प्रतिमा', जो लगभग 100 फुट ऊंची थी। यह रोड्स द्वीप में थी। इसका-निर्माण ईसा से 280 वर्ष पूर्व हुआ था। निर्माण के 56 वर्ष बाद यह मूर्ति एक भूकम्प में नष्ट हो गई।

विश्व का छठा आश्चर्य ओलंपिया में स्थित 'जियस देवता की मूर्ति' थी। जिसे प्रसिद्ध शिल्पकार 'फिडियस' (Phidias) ने ईसा से 450 वर्ष पूर्व बनाया था। 40 फुट ऊंची इस मूर्ति के कपड़े सोने के थे। शरीर हाथी दांत का और आंखें कीमती हीरों से बनवायी गई थीं। इस मंदिर को ईसाई धर्म के अनुयायियों ने नष्ट कर दिया।

विश्व का सातवां आश्चर्य सिकन्दरिया के बन्दरगाह के पास एक द्वीप पर बना 'फैरो का प्रकाश-स्तम्भ' था। सफेद संगमरमर से बना यह प्रकाश स्तम्भ 600 फुट ऊंचा था। इसका निर्माण ईसा से 283 वर्ष पूर्व हुआ था। यह प्रकाश स्तम्भ 1500 वर्ष तक ठीक हालत में रहा, उसके बाद एक भूकम्प से यह नष्ट हो गया।

इस प्रकार 'मिस्र के पिरामिडों' को छोड़कर विश्व के सभी आश्चर्य किसी न किसी प्रकार से नष्ट हो गए।

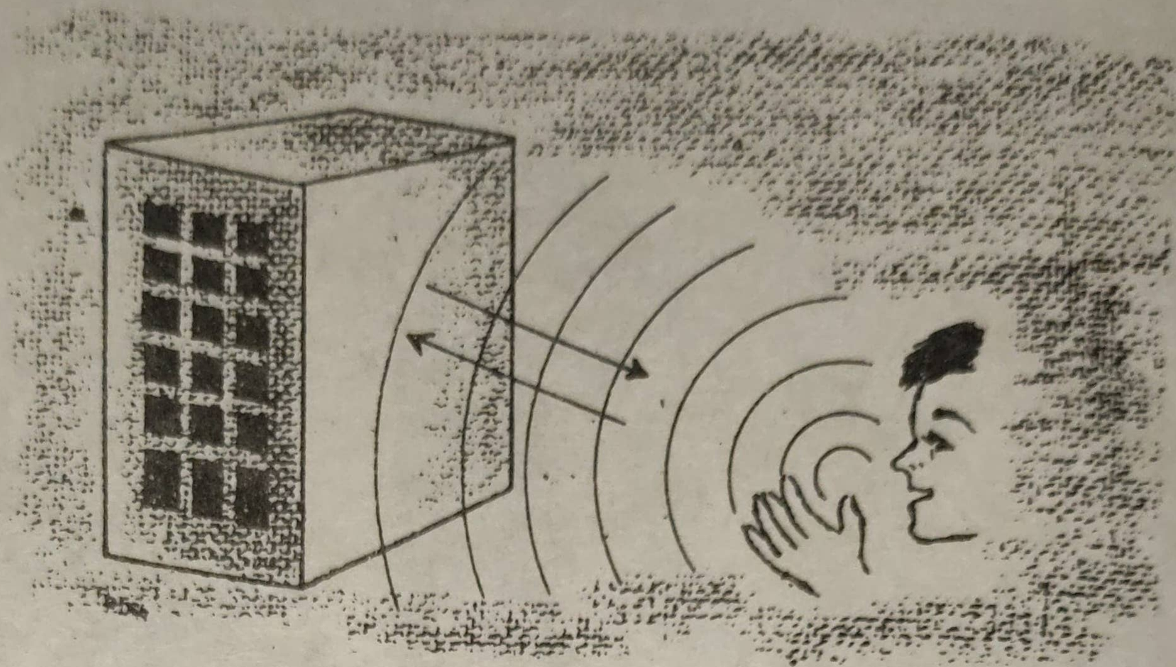


क्या पृथ्वी पर दैत्याकार मनुष्य भी रहते हैं?

बहुत सी कहानियों में दानव, राक्षस और दैत्याकार मनुष्यों का जिक्र आता है। इन कहानियों को पढ़कर ऐसा लगता है कि पृथ्वी के किसी हिस्से पर दैत्याकार मनुष्यों की कोई जाति रही होगी, जिनका शरीर आम मनुष्यों की अपेक्षा बहुत बड़ा और लम्बा चौड़ा होता होगा। जिस प्रकार धरती पर बौने मनुष्यों की कई जातियां पाई जाती हैं, उसी प्रकार विशालकाय मनुष्यों की जातियां भी होनी चाहिए। लेकिन वास्तव में पृथ्वी पर दैत्याकार मनुष्यों की कोई जाति नहीं पाई गई है। दानव और राक्षस केवल कथा कहानियों की ही बात रहे हैं।

संसार के मनुष्यों के कदों में विविधता अवश्य पायी जाती है। कुछ लोगों का कद सामान्य होता है, तो कुछ जातियां ठिगने और लम्बे कद की होती हैं। एस्कीमो और कुछ भारतीय व दक्षिणी अमेरिका की जातियां ठिगने कद की होती हैं, जबकि पूर्वी अफ्रीका की कुछ जातियों का सामान्य कद साढ़े छः फुट होता है। लेकिन इस लम्बे कद वाले लोगों को दानव और राक्षस नहीं माना जा सकता।

विज्ञान ने आज तक किसी दैत्याकार मानव जाति के अस्तित्व की पुष्टि नहीं की है। कभी-कभी समाचार-पत्रों में किसी ऐसे व्यक्ति के बारे में पढ़ने को मिलता है, जो असाधारण रूप से लम्बा चौड़ा होता है। वास्तव में ऐसे गिने चुने व्यक्ति हो सकते हैं, जिनकी लम्बाई चौड़ाई शरीर के किसी विकार के कारण अधिक हो जाती है। ऐसा प्रायः पिट्यूटरी ग्रन्थियों में विकास के कारण होता है। ये ग्रन्थियां असामान्य स्थिति में कुछ ऐसे विशेष हार्मोन पैदा करती हैं, जो अतिरिक्त वृद्धि के लिए जिम्मेदार होते हैं। इस प्रकार के मनुष्य की लम्बाई आठ फुट तक हो सकती है। इस स्थिति को दैत्याकार तो कहा जा सकता है, लेकिन यह जातिगत या वंशानुगत कारणों से नहीं होती, बल्कि शरीर में खराबी के कारण होती है।



गूंज कैसे पैदा होती है?

यदि तुम किसी बड़े कमरे में या मंदिर में जोर से आवाज़ लगाओ, तो तुम्हें अपनी ही आवाज़ बार-बार सुनाई देती है, इसे हम गूंज या प्रतिध्वनि कहते हैं। इसी प्रकार की गूंज किसी गहरी खाई या कुएं के पास आवाज़ लगाने पर भी सुनाई देती है। क्या तुम जानते हो कि गूंज कैसे पैदा होती है?

हम जानते हैं कि ध्वनि तरंगों (Waves) के रूप में एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाती है। हवा में ध्वनि का वेग 340 मीटर या 1100 फुट प्रति सेकण्ड होता है। जब हम बोलते हैं, तो हमारे मुंह से निकली आवाज़ की तरंगें किसी दीवार या रुकावट से टकराती हैं, तो वापस लौट जाती हैं। यह परावर्तित ध्वनि तरंगें हमें गूंज के रूप में सुनाई देती हैं। लेकिन यह जरूरी नहीं कि किसी बाधा से आवाज़ टकरा कर गूंज में बदल जाए। इसके लिए यह जरूरी है कि जिस वस्तु से आवाज़ टकराकर लौटती है, उसकी दूरी बोलने वाले व्यक्ति से कम से कम 17 मीटर (55 फीट) अवश्य होनी चाहिए। इसका कारण यह है कि किसी भी ध्वनि का प्रभाव हमारे कान पर एक सेकण्ड के दसवें भाग तक रहता है। यदि एक आवाज़ कान पर पड़ने के बाद दूसरी आवाज़ 1/10 सेकण्ड से पहले कान पर पड़ती है, तो वह आवाज़ हमें सुनाई नहीं देगी। ध्वनि 1/10 सेकण्ड में लगभग 34 मीटर (110 फुट) की दूरी तय करती है। इसलिए यदि ध्वनि परावर्तित करने वाली वस्तु हमसे 55 फुट दूर होगी तो हमारे मुंह से उस व्यक्ति तक जाने और लौटकर आने में लिया गया समय 1/10 सेकण्ड हो जाएगा और वह ध्वनि हमें गूंज के रूप में सुनाई पड़ेगी।

सभी वस्तुएं ध्वनि को परावर्तित नहीं करतीं। कुछ वस्तुएं जैसे लकड़ी, जूट, गत्ता, आदि ध्वनि तरंगों को अवशोषित कर लेते हैं। ईंटों की दीवार, चट्टान, पानी, आदि ध्वनि तरंगों को परावर्तित करके गूंज पैदा कर सकते हैं। बादलों का गर्जन जो हमें बार-बार सुनाई देता है वह भी गूंज का एक उदाहरण है। सिनेमाघरों, बड़े-बड़े भाषण वाले कमरों में गूंज के प्रभाव को कम करने के लिए ऐसे पदार्थ लगाए जाते हैं, जो ध्वनि को अवशोषित कर लेते हैं।



विश्व मेलों की शुरुआत कैसे हुई?

मेलों का आयोजन कब शुरू हुआ, इस सम्बन्ध में कोई प्रामाणिक जानकारी नहीं मिलती, लेकिन प्राचीन काल में जब आवागमन के साधन नहीं थे और मनुष्य को अपनी दैनिक आवागमन की वस्तुओं के लिए दूर-दूर जाना पड़ता था तब व्यापारी सप्ताह के किसी एक विशेष दिन नियत स्थान पर रोजाना की जरूरत की वस्तुओं की हाट लगाते थे। लोग यहीं से जानवरों की खाल या अनाज के बदले अपनी आवश्यकताओं की चीज़ें खरीद ले जाते थे। बाद में आवागमन के साधन उन्नत होने पर मेलों का व्यापारिक महत्त्व कम होता गया और मेले आमोद-प्रमोद व सांस्कृतिक उत्सवों के रूप में मनाये जाने लगे। सभ्यता के विकास और औद्योगिक उन्नति के बाद मेले किसी भी देश की प्रगति व उपलब्धियों को प्रदर्शित करने के माध्यम बन गए। उन्नीसवीं शताब्दी में तो मेले अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और व्यापार का प्रतीक बन गए और इन मेलों को विश्व मेलों के नाम से पुकारा जाने लगा।

पहला विश्व मेला 1851 में लंदन के हाइड पार्क में लगाया गया। इसके लिए 'क्रिस्टल पैलेस' नामक भवन का निर्माण किया गया। यह भवन लोहे या कांच का बनाया गया था। यह मेला 141 दिन चला और इसे 60 लाख 39 हजार 195 लोगों ने देखा। 1936 में आग लग जाने से यह इमारत नष्ट हो गई थी।

अमेरिका का पहला अंतर्राष्ट्रीय मेला 1853 में न्यूयार्क में आयोजित किया गया। इसमें 23 देशों ने भाग लिया और 5000 लोगों ने अपने मंडल लगाए। लेकिन यह अधिक सफल न हुआ। इसके बाद 1876 में स्वतंत्रता की सौवीं वर्षगांठ के अवसर पर अमेरिका ने पेनसिल्वेनिया नामक स्थान पर एक बड़े मेले का आयोजन किया, जिसमें अमेरिका द्वारा विकसित वस्तुओं का प्रदर्शन किया गया। इसी मेले में ग्राहम बेल ने पहली बार अपने बनाये हुए टेलीफोन का प्रदर्शन किया। इसके बाद अमेरिका में विश्व का सबसे बड़ा मेला-स्थल बनाया गया। यह स्थल न्यूयार्क में 1939-40 में बनाया गया। यह 1216.5 एकड़ जमीन पर बनाया गया है। इस स्थान पर 1964-65 में एक विश्व मेले का आयोजन हुआ, जो 5 करोड़ 16 लाख 7 हज़ार 37 लोगों ने देखा। जापान में ओसाका नामक स्थान पर लगे एक्सपो-70 मेले को छः करोड़ लोगों ने देखा। यह मेला मार्च 1970 से सितम्बर 1970 तक चला। भारत में एशिया-72 के नाम से दिल्ली के प्रगति मैदान में 1972 में विश्व मेले का आयोजन हुआ था, जिसे करोड़ों लोगों ने देखा।



पक्षी चोंच से अपने पंख क्यों संवारते हैं?

प्रायः सभी पक्षी खाली समय में अपनी चोंच से पंख संवारते रहते हैं। पक्षी ऐसा क्यों करते हैं? पक्षियों का अध्ययन करने से पता चला है कि जब उनके पंख निकलने शुरू होते हैं, तभी से वे उन्हें संवारने की आदत डाल लेते हैं। ऐसा करने से उन्हें शक्ति मिलती है। पंखों को साफ करने का भी पक्षियों का यह एक तरीका है। पंखों को कुरेदने से उनके पंख मुलायम रहते हैं। हर पक्षी की पीठ पर पूंछ के पास तेल की ग्रंथियां होती हैं। जब चोंच इन ग्रंथियों से टकराती है, तो तेल निकल कर पंखों पर फैल जाता है। यह तेल पंखों को साफ रखने के साथ-साथ चमकदार भी बनाता है। इस तेल के कारण पक्षियों के पंखों पर पानी का असर नहीं हो पाता। चोंच के द्वारा जब यह तेल पक्षियों के मुंह में चला जाता है, तो यह विटामिन डी के रूप में उनके शरीर को शक्ति देता है।

कुछ पक्षियों में पानी और रेत की सहायता से पंख संवारने की आदत होती है, जैसे बत्तख पानी में डुबकी लगाकर अपने पंखों को साफ करती है। कुछ पक्षियों को अपने पंख संवारने में काफी मेहनत करनी पड़ती है, क्योंकि उनके पंख ही कुछ विचित्र होते हैं, जैसे जापान में एक लम्बी पूंछ वाला मुर्गा पाया जाता है। इसके शरीर पर तो पंख होते ही हैं, साथ ही उसकी 30 फुट लम्बी पूंछ भी पंखों से भरी होती है। इस मुर्गे को अपने पंख साफ करने में बड़ी मेहनत करनी पड़ती है।

इस प्रकार पक्षी अपने पंखों को अपनी चोंच से संवार कर सुंदर बनाते हैं।



लोग डाक-टिकट क्यों संग्रह करते हैं ?

विश्व के लाखों लोगों को डाक-टिकट जमा करने का शौक है। यह शौक पिछले सौ वर्षों से कुछ अधिक ही बढ़ गया है। क्या तुम जानते हो कि लोग डाक-टिकटें क्यों जमा करते हैं?

डाक-टिकट इकट्ठा करने के कई कारण हैं। कुछ लोग टिकटें इसलिए इकट्ठी करते हैं कि वे उनसे कुछ धन प्राप्त कर सकें और कुछ दूसरे लोग डाक-टिकटें केवल शौक के लिए जमा करते हैं। कुछ लोगों का ऐसा भी विचार है कि डाक-टिकटों के पुराने होने पर और उनके न मिलने के कारण डाक-टिकटों का महत्त्व अधिक हो जाएगा। इसमें कोई संदेह नहीं कि मुश्किल से मिलने वाली चीज़ें महंगी हो जाती हैं। इस विषय में विश्वविख्यात टिकट 'केप ट्राइंगल' की कहानी बहुत दिलचस्प है। सन् 1861 की बात है कि दक्षिण अफ्रीका में अचानक केप ट्राइंगल वाली डाक-टिकटों की कमी हो गई। इस कमी को पूरा करने के लिए सरकार ने एक प्राइवेट कंपनी को ये टिकटें छापने का ठेका दिया। कंपनी को एक पैनी और चार पैनी की टिकटें छापनी थीं। कंपनी से टिकटें छापने में एक गलती हो गई। एक पैनी की टिकट का रंग लाल की जगह नीला हो गया तथा चार पैनी की टिकट का रंग नीले की जगह लाल हो गया। बाद में जब सरकारी डाकखाना टिकटें छापने लगा, तो इन टिकटों को नष्ट करने का आदेश दे दिया गया। बचे-खुचे इन गलत टिकटों की आज बड़ी कीमत है और कोई भी शौकीन व्यक्ति इनके मुंह मांगे दाम दे सकता है।

इसी तरह 1870 के आसपास एक व्यापारी को एक विशेष प्रकार की टिकटें खरीदने और उन्हें नष्ट करने का शौक चढ़ा। इस शौक का परिणाम यह हुआ कि इस प्रकार के टिकटों की कमी हो गई। आज उसी किस्म कीं टिकटों की बड़ी कीमत है। आपको आश्चर्य होगा कि फ्रांस में एक डाक-टिकट संग्रह-कर्ता थे, जिनका नाम मारिस बुरुस था। जब 1959 में उनकी मृत्यु हुई और डाक-टिकट संग्रह को नीलाम किया गया, तो उससे लगभग 40 लाख डालर की धनराशि प्राप्त हुई।

अब प्रश्न यह आता है कि डाक-टिकट संग्रह का शौक कैसे पैदा होता है? स्पष्ट है कि विभिन्न डाकघर समय-समय पर नये-नये टिकट निकाल कर इस शौक को बढ़ावा देते हैं। इन टिकटों में छोटे-बड़े सभी टिकट आते हैं। इस शौक की विचित्रता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि 1847 में अमेरिका में छपा एक डाक-टिकट का जोड़ा 1897 में 5 डालर में बिका, लेकिन 21 अक्तूबर 1968 को न्यूयार्क की नीलामी में यही टिकट का जोड़ा 380,000 डालर में बिका।

कार्क पानी में क्यों तैरता है?

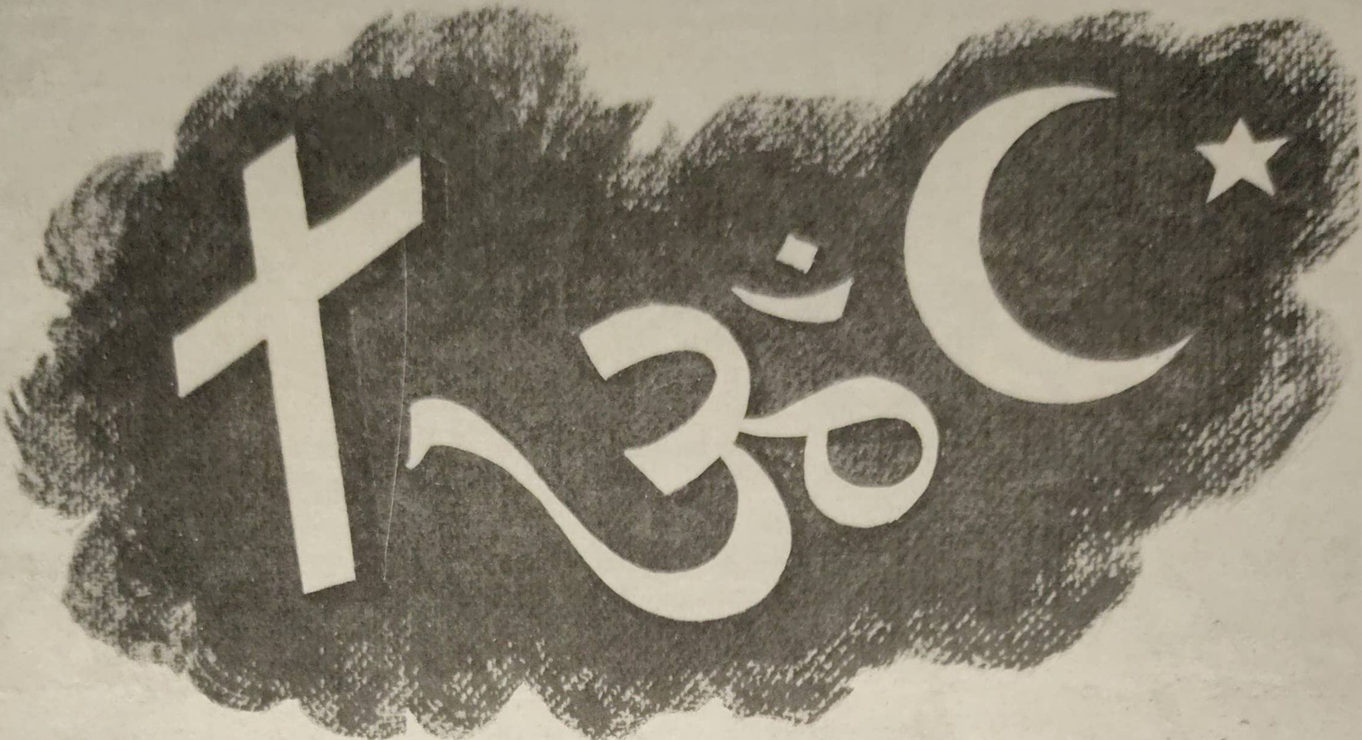


जब हम एक कार्क के टुकड़े को पानी में डालते हैं, तो देखते हैं कि यह उसमें डूबा नहीं, बल्कि तैरता रहता है। कार्क के पानी में तैरने के गुण को लोग हजारों वर्षों से जानते हैं, इसलिए बहुत पहले कार्क के बड़े-बड़े टुकड़ों को, पानी में डूबते मनुष्य को बचाने के लिए प्रयोग किया जाता था।

क्या तुम जानते हो कि कार्क पानी में क्यों तैरता है? यह एक वैज्ञानिक तथ्य है कि जो वस्तु पानी से हल्की होगी, वह पानी में डूबेगी नहीं, बल्कि तैरेगी। कार्क भी पानी से हल्का होता है, इसलिए वह पानी में तैरता है। कार्क की आंतरिक संरचना ऐसी होती है कि इसकी कोशिकाएं एक दूसरे से अलग-अलग होती हैं। उनके बीच में हवा होती है। इसके फलस्वरूप कार्क पानी से हल्की हो जाती है और वह पानी में डालने पर तैरती रहती है। कार्क पानी के 1/5वें भाग के बराबर होती है, इसलिए पानी में डालने पर इसका 1/5 भाग पानी में डूब जाता है और शेष भाग पानी के ऊपर रहता है।

कार्क हमें ओक नामक वृक्ष की छाल से प्राप्त होता है। ये वृक्ष स्पेन और पुर्तगाल में बहुत अधिक मात्रा में पाए जाते हैं। ये पेड़ भूमध्य सागर के क्षेत्र, भारत और पश्चिमी अमेरिका में भी उगाए जाते हैं। संसार में कार्क की दो तिहाई मात्रा इन्हीं देशों से प्राप्त होती है। कार्क के वृक्ष 20 से 40 फुट से ऊंचे होते हैं और इनका तना लगभग चार फुट मोटा होता है। इसका ऊपरी भाग फैला हुआ गोल होता है। रंग चमकीला हरा होता है। कार्क प्राप्त करने के लिए ओक वृक्ष की छाल ली जाती है और उसके तने को छोड़ दिया जाता है। जब ओक वृक्ष की उम्र लगभग 20 वर्ष हो जाती है, तब उससे पहली बार छाल उतारी जाती है। इसके नौ वर्ष बाद दूसरी परत तराशी जाती है।

कार्क छाल के भीतरी हिस्से से बनाया जाता है। छाल का बाहरी भाग बेडौल होने से छील कर अलग कर दिया जाता है। कार्क हमारे जीवन में बहुत उपयोगी है। इसे बोतलों में ढक्कन लगाने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। इसका सबसे अधिक उपयोग बड़े-बड़े कमरों को साउंड प्रूफ बनाने के लिए किया जाता है। इसके अलावा कार्क का वेयर हाउसों और रेफ्रिजरेटरों में भी प्रयोग किया जाता है। ताप के प्रभाव को कम करने के लिए भी कमरों की छतों में इसकी परत लकड़ी के सहारे लगा दी जाती है।

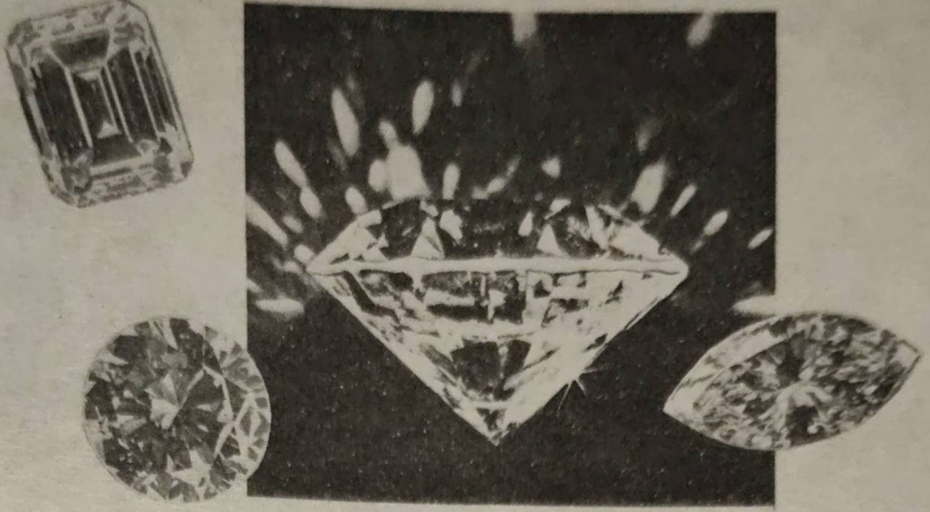


विभिन्न धर्मों की शुरुआत कैसे हुई?

आज संसार में छोटे-बड़े हज़ारों धर्म प्रचलित हैं। विश्व में पहला धर्म कौन सा था, इस बात का निश्चित उत्तर नहीं दिया जा सकता। धर्मों की शुरुआत की बात बड़ी ही दिलचस्प है। प्राचीन काल से ही मनुष्य किसी ऐसी शक्ति की पूजा करता रहा है, जो उसके कष्टों का निवारण कर सके। इसके लिए उसने किसी शक्तिशाली या आदर्श चीज़ को चुना। इसी शक्ति या आदर्श की उसने विभिन्न उत्सवों और पर्वों पर पूजा करनी शुरू की। किसी खास शक्ति या आदर्श को पहले पंथ कहा गया और उसी को बाद में धर्म का नाम दे दिया गया। अब प्रश्न यह है कि संसार के अनेकों मुख्य धर्मों की शुरुआत कैसे हुई?

आज संसार में मुख्य रूप से हिन्दू, बौद्ध, कन्फ्यूशियस, ताओ, शिन्तो, इस्लाम, यहूदी, ईसाई व पारसी धर्म प्रचलित हैं। इन प्रमुख धर्मों को मानने वालों की संख्या तीन अरब से अधिक है।यह संख्या विश्व की कुल जनसंख्या का तीन चौथाई भाग है। ईसाई धर्म को लगभग एक अरब लोग मानते हैं। इस धर्म को मानने वालों की संख्या संसार में सबसे अधिक है। इसके अतिरिक्त बावन करोड़ से अधिक लोग हिन्दू धर्म को, तेईस करोड़ बौद्ध धर्म को, साढ़े सत्ताइस करोड़ कन्फ्यूशियस धर्म को, तीन करोड़ लोग ताऊ धर्म को (चीन में), साढ़े छः करोड़ लोग शिन्तो धर्म को (जापान में) बावन करोड़ लोग इस्लाम धर्म को, डेढ़ करोड़ लोग यहूदी धर्म को मानतें हैं।

हिन्दू धर्म की शुरुआत सृष्टि के निर्माता ब्रह्मा द्वारा मानी जाती है। बौद्ध धर्म आज से 2500 वर्ष पहले महात्मा गौतम बुद्ध के नाम से शुरू हुआ। कन्फ्यूशियस धर्म की स्थापना महात्मा कन्फ्यूशियस के अनुगामियों द्वारा की गई। ताओ धर्म लाओत्सी द्वारा लिखी गई पुस्तक ताओ ते किंग से पैदा हुआ। शिन्तो धर्म जापान का प्राचीन धर्म है। इस्लाम धर्म का आरम्भ मुहम्मद की शिक्षाओं से हुआ। इसी प्रकार दूसरे धर्म भी किसी न किसी महान व्यक्ति के अनुयायिओं द्वारा ही चलाए गए हैं।



हीरे कीमती क्यों होते हैं?

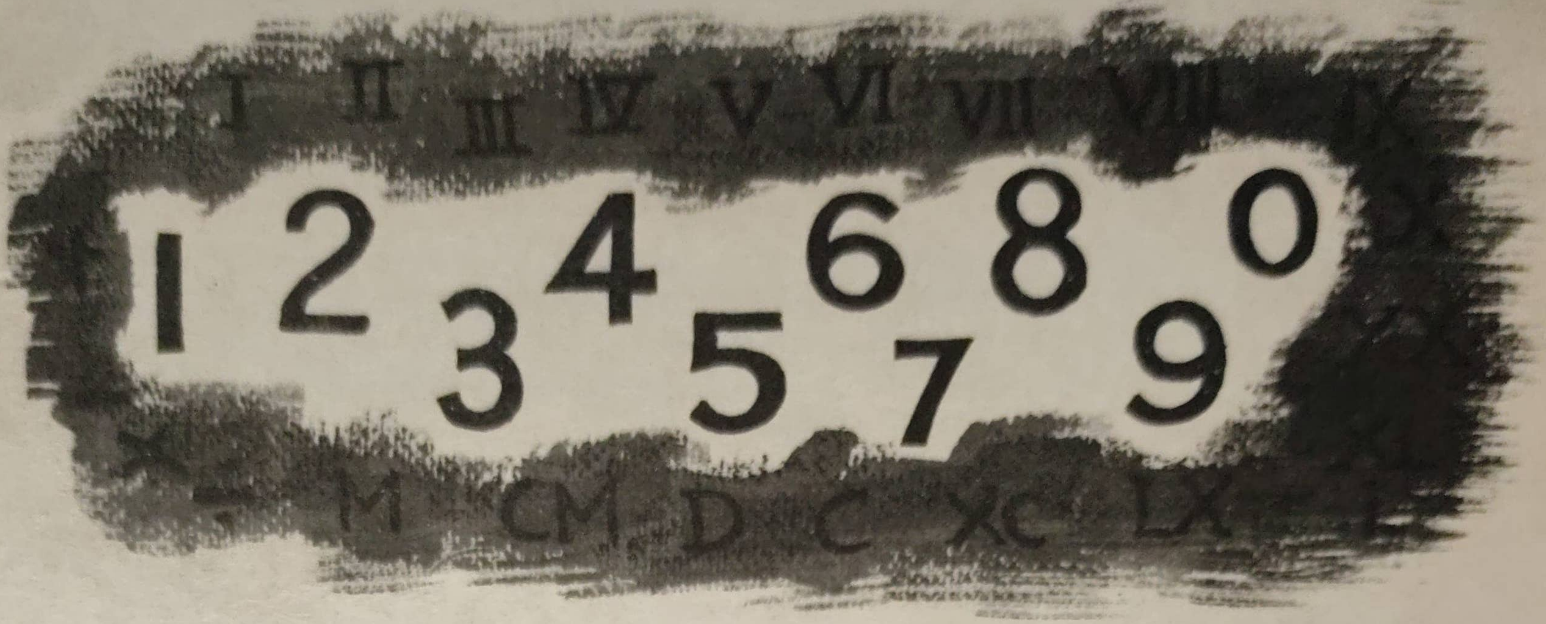
प्राचीन काल से ही मनुष्य का मोह हीरों से रहा है। हर आदमी हीरे पाने के लिए उत्सुक रहता है। शुरू से ही हीरों को कीमती माना जाता रहा है। क्या तुम जानते हो कि हीरों में ऐसी क्या विशेषताएं हैं, जिनके कारण उनको इतना महत्त्व दिया जाता है?

हीरों का कीमती होना कई बातों पर निर्भर करता है। सबसे पहली बात यह है कि हीरे दुर्लभ वस्तु हैं और संसार में जो वस्तु मुश्किल से प्राप्त होती है, उसकी कीमत अधिक होती है। हीरा रोशनी में अधिक चमकीला और आकर्षक लगता है। इस खास गुण के कारण भी हीरा लोगों की प्रिय वस्तु बन गया है। हीरे का कीमती होने का तीसरा कारण यह है कि यह संसार में सभी पदार्थों से कठोर पदार्थ है। कठोरता के गुण के कारण यह सैकड़ों वर्षों तक घिसता नहीं है। इसकी चमक खराब नहीं होती है। इसका रूप नहीं बिगड़ता है। इन सभी गुणों के कारण हज़ारों वर्षों से हीरा एक कीमती वस्तु रही है।

प्रकृति से मिलने वाले हीरे सुन्दर नहीं होते, उन्हें कलात्मक ढंग से तराशा जाता है, एक निश्चित रूप और आकार में लाया जाता है, फिर इस पर पालिश की जाती है। हीरे को तराशकर खूबसूरत बनाना कोई आसान कार्य नहीं है। हीरे को कुशल और अनुभवी कारीगर ही तराश सकते हैं। हीरा इतना कठोर होता है कि इसे काटने के लिए हीरे को ही प्रयोग में लाया जाता है। इसे कीमती बनाने के लिए इसमें बहुत से फलक (Surfaces) बनाए जाते हैं और उन पर पालिश की जाती है।

हीरों की कीमत उनके आकार पर निर्भर करती है। हीरा आकार में जितना बड़ा होगा, उतना ही मूल्यवान होगा। हीरों के कुछ रंग ऐसे हैं जो मुश्किल से मिलते हैं। खास तौर पर लाल और नीली झलक वाले हीरे बहुत कम मिलते हैं, इसलिए वे बहुत कीमती होते हैं। कुछ कीमती हीरे रंगहीन भी होते हैं।

कहा जाता है कि हीरे की खोज सबसे पहले भारत में हुई थी। भारत के कोहिनूर हीरे से हम सभी परिचित हैं। कुछ वर्ष पहले तक हीरे हमें प्रकृति से ही प्राप्त होते थे, लेकिन आज वैज्ञानिकों ने हीरे बनाने के कृत्रिम तरीकों का भी विकास कर लिया है।



अंकगणित की शुरुआत कैसे हुई ?

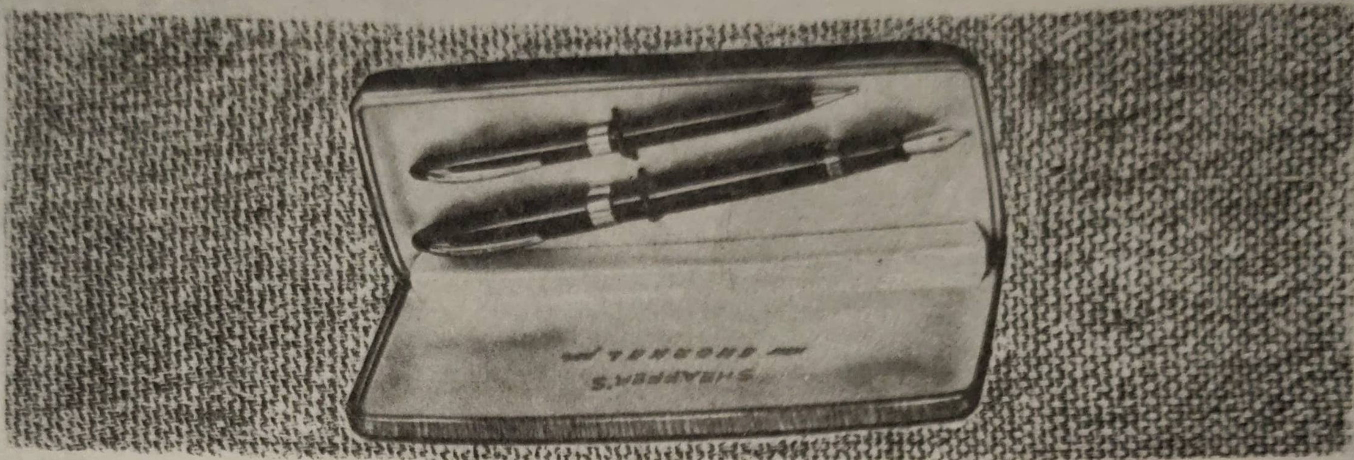
अंकगणित का अर्थ है 'अंकों का विज्ञान'। अंग्रेज़ी में अंकगणित को अरिथमेटिक (Arithmetic) कहते हैं। अरिथमेटिक शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द के अरिथमोज (Arithmos) शब्द से हुई, जिसका अर्थ है संख्या का अंक। सभ्यता के आदि काल में मनुष्य अपनी भेड़ों, गायों, बैलों और ऐसे ही जानवरों को अपने हाथों की उंगलियों पर गिना करता था। अंक शब्द जीरो से नौ तक की संख्या के लिए प्रयोग होता है। इसे अंग्रेज़ी में डिजिट (Digit) कहते हैं। यह डिजिट शब्द लैटिन भाषा में उंगली के लिए प्रयोग होता है। इसके बाद मनुष्यों ने लकड़ी के छड़ पर निशान लगाकर गिनना शुरू किया, लेकिन यह सिलसिला जल्दी ही समाप्त हो गया और मनुष्य ने हर अंक के लिए अलग-अलग चिन्हों का इस्तेमाल करना शुरू कर दिया।

मिस्र के लोग एक से दस तक गिनती के लिए सीधी रेखाओं से काम लेते थे। यूनान के लोग अपनी वर्णमाला के अक्षरों को ही संख्या लिखने के लिए प्रयोग करते थे और अन्तर स्पष्ट करने के लिए वे एक छोटा सा चिन्ह लगा देते थे। जैसे एक के लिए a, दो के लिए b और दस के लिए j लिखा जाता था।

रोम के लोग प्रथम पांच अंकों को I, II, III, IV, V के रूप में लिखा करते थे। वे दस के लिए X, 50 के लिए L, सौ के लिए C, 500 के लिए D और 1000 के लिए M का प्रयोग करते थे। रोमन भाषाओं में आज भी संख्याओं को इसी प्रकार लिखा जाता है।

जिन अंकों को हम प्रयोग करते हैं, उसी के आधार पर अरब के लोगों ने भी अंकन पद्धति लागू की। वे आज भी इन्हीं अंकों को प्रयोग करते हैं। अरबी लोग शून्य को सिफ्र कहते थे, जो बाद में सिफर कहलाने लगा। अरब पद्धति पर आधारित अंकगणित की पहली पुस्तक 1202 में इटली के एक निवासी ने तैयार की थी। लैटिन भाषा का पहला अंकगणित 1478 में छापा गया। उस समय जोड़ने, घटाने, भाग व गुणा करने की विधियां अंकगणित में पूरी तरह विकसित हो गई थीं। इस प्रकार अंकगणित सारी दुनिया में प्रचलित हो गया।

पेन का आविष्कार कैसे हुआ?

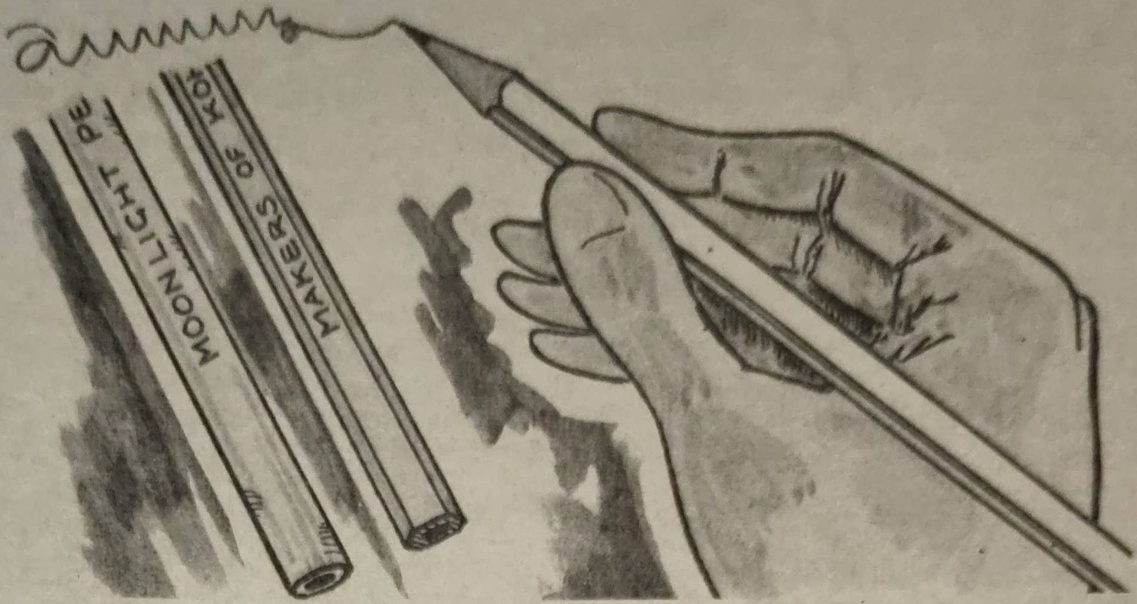


सभ्यता के विकास में लिखने की कला का सबसे महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है और लिखाई केवल कलम या पेन के द्वारा ही आधुनिक रूप में आ पाई है। पेन शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के पेन्ना (Penna) शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है 'पंख'। जिस रूप में लिखने के लिए हम पेन को आज प्रयोग करते हैं, उस रूप को प्राप्त करने में इसे कई हजार वर्ष लगे हैं। क्या तुम जानते हो कि पेन का आविष्कार और विकास कैसे हुआ?

प्राचीन काल में मनुष्य जब गुफाओं में रहता था, तब वह नुकीली चीज़ों से गुफाओं की दीवारों पर चित्र या लकीरें खींचा करता था। यहां तक कि वह अपनी उंगली पेड़ के रस या जानवरों के खून में डुबोकर लिखाई का काम किया करता था। इसके बाद उसने मिट्टी और चूना पत्थर से लिखना शुरू किया। चीन के लोग ऊंट के बालों से बने ब्रुश से लिखाई किया करते थे।

सम्भवतः सबसे पहले पेन मिस्र के लोगों ने बनाया। इसमें तांबे की निब थी, जिसे पेड़ की लकड़ी के सिरे पर लगाकर लिखा जाता था। पेन द्वारा लिखाई का काम लगभग 4000 वर्ष पहले यूनान में शुरू हुआ। ये लोग हाथी के दांतों से बने पेन का प्रयोग करते थे और मोम के टुकड़ों पर लिखते थे। मध्ययुग में कागज का आविष्कार हो जाने के बाद लोगों ने जानवरों के पंखों से लिखना शुरू किया।

1780 में इंगलैंड में पहली बार स्टील के पेन बने, लेकिन चालीस वर्षों तक इन्हें लोकप्रियता नहीं मिली। सबसे पहला फाउन्टेन पेन अमेरिका के एल० ई० वाटरमैन ने 1884 में बनाया। पेन की निब 14 कैरट सोने की थी और निब का ऊपरी सिरा इरीडियम धातु से बनाया गया था। इसके बाद पेन का निर्माण दूसरे देशों में भी होने लगा और इसकी लोकप्रियता दिन प्रति दिन बढ़ती गई। बीसवीं शताब्दी में बॉल पॉइन्ट पेन का आविष्कार हुआ। आज तो अनेक प्रकार के पेनों का विकास हो गया है, जिनसे लिखाई के क्षेत्र में बहुत सुविधा हो गई है।



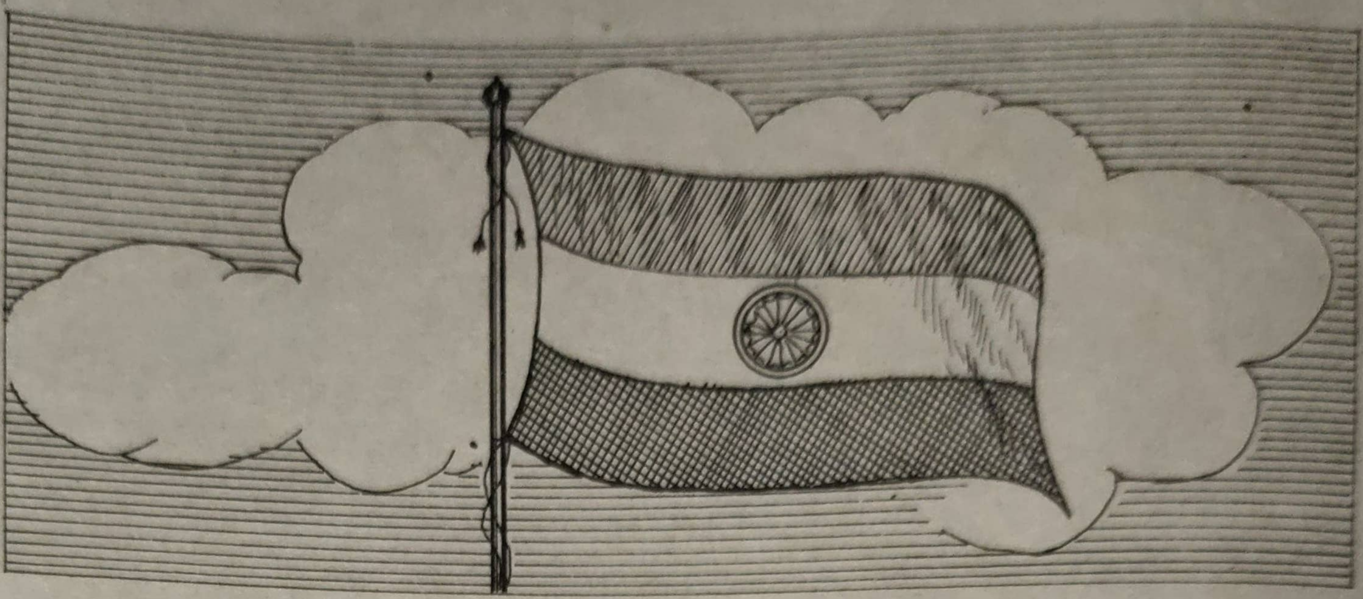
पेन्सिल का आविष्कार कब हुआ?

पेन की तरह पेन्सिल भी बड़े काम की चीज़ है। इसका लिखने के लिए तो प्रयोग होता ही है, साथ ही साथ तरह-तरह के चित्र बनाने में भी पेन्सिल काम आती है। विद्यार्थी ज्योमेट्री और ड्राइंग की आकृतियां बनाने में पेन्सिल का प्रयोग करते हैं। इंजीनियर नक्शा बनाने में पेन्सिल को काम में लाते हैं। क्या तुम जानते हो कि पेन्सिल का आविष्कार कब और किसने किया।

पेन्सिल शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा 'पेनिकुलस' (Penicullus) शब्द से हुई, जिसका अर्थ है 'छोटी पूंछ'। वास्तव में शुरू-शुरू में पेन्सिल शब्द इस प्रकार के नुकीले ब्रुश के लिए प्रयोग होता था, लेकिन आज की पेन्सिल उस ब्रुश से एकदम भिन्न हैं। पेन्सिल का निर्माण लगभग 200 साल पहले शुरू हुआ था। लगभग 500 वर्ष पहले कम्बरलैण्ड (इंगलैंड) की एक खान से लोगों ने ग्रेफाइट का पता लगाया। तब इससे कुछ पेन्सिलें बनायी गई थीं। पेन्सिल बनाने के लिए ग्रेफाइट का प्रयोग बड़े पैमाने पर 1760 में न्यूरेमबर्ग (जर्मनी) के फेबर परिवार ने किया, लेकिन पेन्सिल बनाने में इन्हें अधिक सफलता नहीं मिली। 1765 में एन० जे० कोन्ते नाम के व्यक्ति ने ग्रेफाइट में चिकनी मिट्टी मिलाई और इस मिश्रण की पतली-पतली सलाइयां बनाकर भट्टी में तपाया। इन्हीं सलाइयों से पेन्सिल बनाई गईं, जो बहुत ही लोकप्रिय सिद्ध हुईं। आज भी इसी तरीके से पेन्सिल बनाई जाती हैं।

जिन पेन्सिलों को हम लेड (Lead) पेन्सिल कहते हैं, उनमें लेड नहीं होता, बल्कि वह भी ग्रेफाइट से ही बनाई जाती हैं। पहले ग्रेफाइट को बारीक पीस लिया जाता है। फिर इसमें मिट्टी मिलाकर आटे की तरह गूंद लिया जाता है। एक मशीन की सहायता से इस मिश्रण से पतली-पतली सलाइयां बना ली जाती हैं। इन सलाइयों को भट्टी में तपा लिया जाता है, जिससे वे सख्त हो जाती हैं। एक सलाई को देवदार की लकड़ी की एक खांचा बनी हुई पट्टी पर रखकर, इसके ऊपर दूसरी पट्टी चिपका दी जाती है। अब इसे पेन्सिल के आकार में काटकर पालिश कर दी जाती है। पेन्सिल की सलाई जितनी नर्म होगी, उतनी ही वह लिखाई के लिए अच्छी होगी।

आज संसार में अलग-अलग कामों के लिए 350 से अधिक प्रकार की पेन्सिलें बनाई जाती हैं। 72 से अधिक किस्मों की रंगीन पेन्सिलें भी आज मिलती हैं। ऐसी पेन्सिलें भी बनाई जा चुकी हैं, जिनसे कांच, कपड़ा, प्लास्टिक और फिल्मों पर लिखा जा सकता है। इंजीनियरों के महत्त्वपूर्ण कार्यों के लिए कुछ विशेष प्रकार की पेन्सिलें बनाई जा चुकी हैं, जिनका लिखा वर्षों तक भी धुंधला नहीं पड़ता।



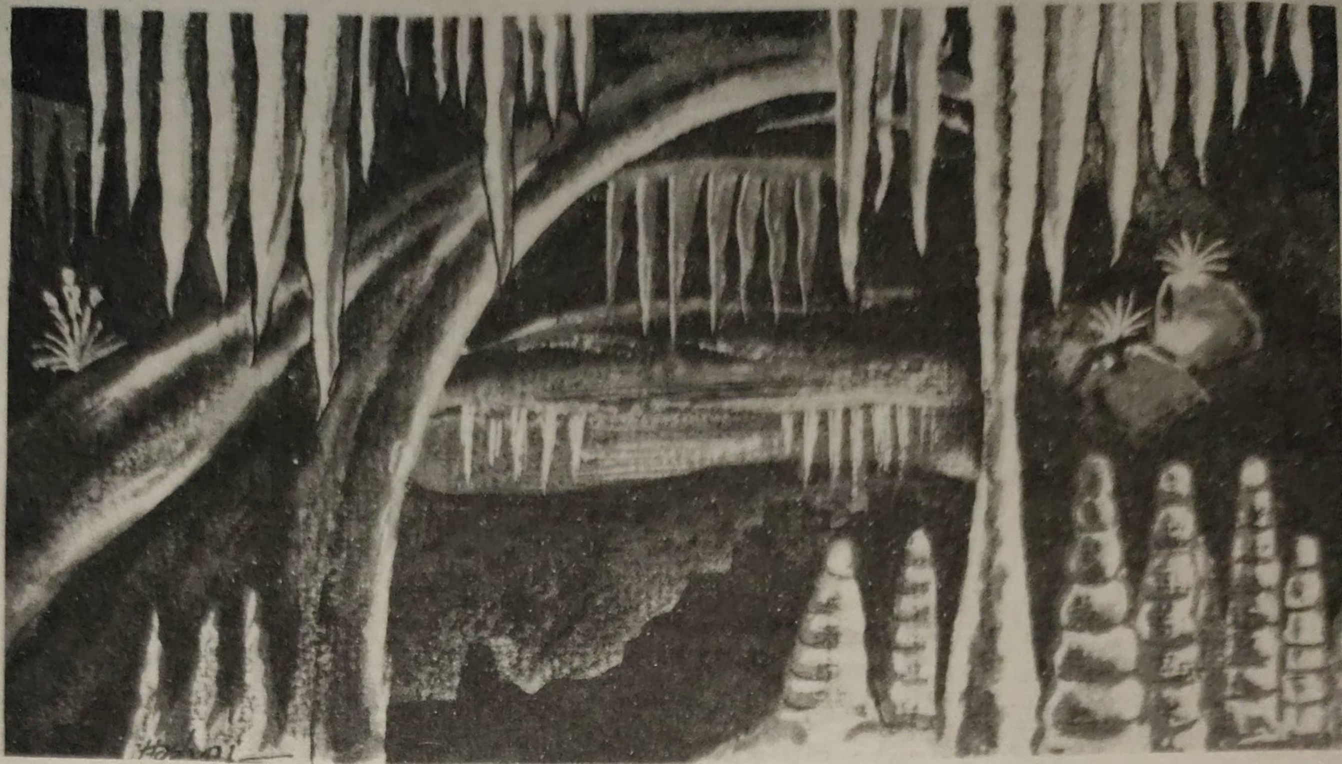
झंडे की शुरुआत कैसे हुई?

झंडे की शुरुआत कैसे हुई, इस विषय पर कोई निश्चित जानकारी उपलब्ध नहीं है, लेकिन इसका प्रयोग सबसे पहले सेनाओं द्वारा शुरू हुआ। लड़ाई के मैदान में सैनिकों को एकत्र करने के लिए कोई स्थान निश्चित किया जाता था। उस स्थान पर किसी डंडे के ऊपर रंगीन कपड़ा टांग दिया जाता था और उस डंडे को जमीन में गाड़ दिया जाता था ताकि दूर से ही उस निशान को देखकर सैनिक उस स्थान पर आ सकें। इस प्रकार का पहला झंड़ा असीरियों और पारसियों द्वारा प्रयोग में लाया गया। बाइबिल में भी जिक्र आता है कि यहूदियों के अपने झंडे होते थे। मध्ययुग में झंडे का प्रयोग काफी मात्रा में होने लगा था। प्राचीन काल में लकड़ी के डंडों को खुरचकर उस पर विभिन्न आकार बना दिए जाते थे और लोग इसे झंडे के रूप में प्रयोग करते थे। कपड़े के झंडे का सबसे पहले रोम में इस्तेमाल किया गया। इसमें किसी भाले पर कपड़े की चौकोर पट्टी को झंडे के रूप में प्रयोग किया गया था।

संसार में सबसे पुराने राष्ट्रीय झंडे डेनमार्क और स्विट्जरलैंड के हैं, जिनकी शुरुआत क्रमशः 1219 और 1339 में हुई। अमेरिका द्वारा अपना राष्ट्रीय झंडा चुन लेने के बाद दूसरे देशों ने भी अपने झंडे चुनने शुरू कर दिए। फ्रांस की क्रांति के बाद वहां पर भी तीन रंग का झंडा चुन लिया गया। 1805 में इटली वालों ने भी अपना झंडा चुना। इस प्रकार 19वीं शताब्दी में सभी राष्ट्रों ने अपने-अपने झंडे चुन लिए।

विश्व का सबसे बड़ा झंडा डेट्रायट (अमेरिका) के जे. एल. हडसन के मुख्य स्टोर में 14 जून 1949 को पहली बार फहराया गया। यह झंडा 104 फुट चौड़ा और 325 फुट लम्बा है। इसका वज़न 1500 पौण्ड है। अब हर साल 14 जून को इस झंडे को फहराया जाता है। भारत का राष्ट्रीय झंडा सन् 1947 में स्वीकार किया गया। इसमें तीन रंग हैं। केसरिया रंग वीरता, सफेद रंग शांति व हरा रंग हरियाली और समृद्धि का प्रतीक है। इसकी सफेद पट्टी में अशोक चक्र है, जिसमें 24 स्पोक्स (छड़े) हैं। हमारे देश में ध्वज सम्बन्धी कुछ नियम हैं।

- ध्वज के ऊपर या दाईं ओर कोई दूसरा ध्वज या चिन्ह नहीं होना चाहिए।
- किसी राजनेता की मृत्यु पर सरकारी इमारतों पर झंडा आधा झुका दिया जाता है।
- झंडे के लिए हमेशा खादी के कपड़े का प्रयोग किया जाता है।
- राष्ट्रीय पर्वों पर झंडे को सलामी दी जाती है।



गुफाएं

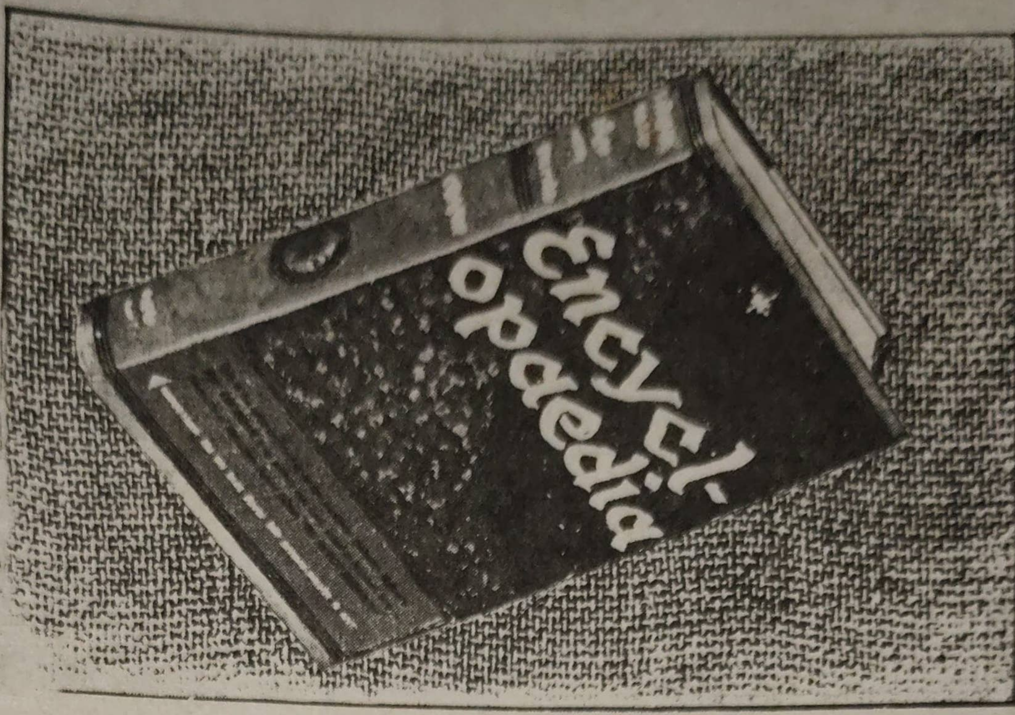
प्राचीन काल से ही मनुष्य का सम्बन्ध गुफाओं से रहा है। पाषाण युग में मानव ठण्ड से बचने के लिए गुफाओं में ही रहता था। बाद में गुफाओं के विषय में लोगों की अलग-अलग धारणाएं बन गईं। यूनान के लोगों का विचार था कि उनके देवता जियस, पान, डियोनीसिस और प्लूटो गुफाओं में ही रहते थे। रोम के लोगों का विश्वास था कि गुफाओं में परियों व जादू-टोना करने वाले लोग रहते हैं। फारस के लोग गुफाओं को देवताओं का निवास स्थान मानकर उनकी पूजा करते थे। आज दुनिया भर में फैली, बड़ी-बड़ी सुन्दर गुफाएं पर्यटकों के लिए आकर्षण का केन्द्र बनी हुई हैं। क्या तुम जानते हो कि ये गुफाएं कैसे बनीं?

पहाड़ों में गहरी खाली जगह को गुफाएं कहते हैं। गुफाएं कई तरीकों से बनती हैं। समुद्र से आने वाली पानी की लहरें तब चट्टानों से टकराती हैं, तो चट्टानों के बीच में स्थित मुलायम पत्थर को अपने साथ बहा ले जाती हैं। हज़ारों साल के इस क्रम का परिणाम यह होता है कि पहाड़ के अन्दर की काफी जगह खोखली हो जाती है। यह टेढ़ी-मेढ़ी खोखली जगह गुफा कहलाती है।

कुछ गुफाएं जमीन के अंदर भी मिलती हैं। इन गुफाओं का निर्माण जमीन के अंदर बहने वाली पानी की धाराओं के बहने के कारण होता है। पानी की ये धाराएं चट्टानों में से चूने को बहा ले जाती हैं और जो खोखला हिस्सा रह जाता है, वही गुफा कहलाने लगता है। कई बार पानी के झरनों के गिरने से भी चट्टानों का कटाव हो जाता है। ये खोखली चट्टानें गुफा बन जाती हैं। इस प्राकर की गुफाएं अमेरिका में हैं, जो नियागरा जलप्रपात के बनी हुई हैं।

पृथ्वी की सतह में होने वाले ज्वालामुखीय परिवर्तनों से भी गुफाओं का निर्माण होता है। कुछ गुफाएं लम्बी होती हैं, तो कुछ ऐसी होती हैं, जिनकी गहराई अधिक होती है। सबसे गहरी गुफा 'गुफरेडी ला पियरे सेंट' है, जो फ्रांस व स्पेन की सीमा पर है। इसकी गहराई 1310 मीटर (4300 फुट) है। सबसे लम्बी गुफा 'फिलिट रिज केव सिस्टम' अमेरिका में है, जो करीब 116·8 कि० मी० (73 मील) लम्बी है।

भारत में अजन्ता और एलोरा की गुफाएं बहुत प्रसिद्ध हैं। लाखों लोग इन्हें देखने जाते हैं। इन गुफाओं में बड़े-बड़ें सुन्दर चित्र॰बने हुए हैं। एलोरा में लगभग 36 गुफाएं हैं, जो पहाड़ों में दूर-दूर तक फैली हैं। इन गुफाओं का निर्माण 300 ई० में शुरू हुआ और 1300 ई० में ये बनकर तैयार हुईं।



विश्वकोश कैसे तैयार हुआ?

विश्वकोश को अंग्रेज़ी भाषा में 'एनसाइक्लोपीडिया' (Encyclopaedia) कहते हैं। आधुनिक परिभाषा के अनुसार विश्वकोश उन पुस्तकों के समूह को कहते हैं, जिनमें विश्व के समस्त ज्ञान को वर्णमाला क्रम से प्रस्तुत किया गया हो। एक ही प्रकार के विश्वकोश की कई पुस्तकें होती हैं। आजकल कई प्रकार के विश्वकोश बाजार में मिलते हैं। कुछ विश्वकोश सामान्य ज्ञान से सम्बन्धित होते हैं, तो कुछ बच्चों के ज्ञान से सम्बन्धित होते हैं। कुछ विश्वकोश विज्ञान के अलग-अलग विषयों में प्राप्त ज्ञान को प्रस्तुत करते हैं। क्या तुम जानते हो कि आज के इस रूप को प्राप्त करने में विश्वकोश को कितना समय लगा है।

सबसे पहला विश्वकोश ईसा से 338 वर्ष पूर्व प्लेटो के भतीजे स्पेसीपस ने लिखा था। इसमें इतिहास, गणित और दर्शन शास्त्र से सम्बन्धित ज्ञान का विवरण दिया गया था। संसार का सबसे पुराना विश्वकोश, जो आज भी मौजूद है, रोम के प्लिनी ने पहली शताब्दी में लिखा था। इसका नाम 'नैचुरल हिस्ट्री' है। इसके 37 भागों में 450 लेखकों की 20,000 रचनाएं हैं। यह विश्वकोश इतना प्रसिद्ध हुआ कि 1536 तक उसके 43 संस्करण निकल चुके थे। 1403 से 1408 के बीच में 2000 चीनी विद्वानों द्वारा संसार का सबसे बड़ा विश्वकोश 'ग्रेट स्टैंडर्ड एनसाइक्लोपीडिया' हाथ से लिखा गया था। वर्णमाला क्रम से लिखा सबसे पहला विश्वकोश 'यूनिवर्सल इंग्लिश डिक्शनरी आफ़ आर्ट्स एण्ड साइंस' (Universal English Dictionary of Arts and Science) इंग्लैंड के पादरी जान हैरिस ने तैयार किया था।

आधुनिक विश्वकोशों का विकास मुख्य रूप से मुद्रण कला के शुरू होने के बाद 17वीं 18वीं शताब्दी में हुआ। 'एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका' आज विश्व का सबसे विकसित विश्वकोश है। इसका पहला संस्करण 1768 में प्रकाशित हुआ था। अमेरिका में इसे 1911 में छापा गया। इस विश्वकोश के 30 भाग हैं, जिनका वज़न लगभग 50 कि० ग्रा० है। 1961 से इस विश्वकोश की साढ़े चार लाख प्रतियां हर साल बिक रही हैं।

विश्वकोश हमारे लिए बहुत उपयोगी है। इसकी सहायता से किसी भी विषय पर क्षण भर में हम जानकारी प्राप्त कर लेते हैं। संसार के ज्ञान को विश्वकोशो द्वारा सुरक्षित रखा जा रहा है।



पुलिस व्यवस्था कब शुरू हुई?

पुलिस का अर्थ एक ऐसी व्यवस्थित शक्ति से है, जो देश के अंदर कानून और व्यवस्था की रक्षा करती है। देश के अंदर शांति स्थापित करना, अपराधियों को पकड़ना तथा अपराधियों की जानमाल की रक्षा करना पुलिस के मुख्य कार्य हैं। आज संसार के हर देश में पुलिस व्यवस्था है। क्या तुम जानते हो कि ये पुलिस व्यवस्था कब और कैसे शुरू हुई?

मानव के प्राचीन इतिहास को देखने से पता चलता है कि शुरू-शुरू में किसी जाति या कबीले का नेता अपने लोगों में शांति बनाये रखने के लिए कुछ योद्धाओं पर निर्भर रहता था। उस समय राजा लोग अपनी सेना के सिपाहियों का ही पुलिस के रूप में प्रयोग करते थे। सबसे पहले ईसा के जन्म के आसपास रोम के सीज़र आगस्टस (Ceasar Augustus) ने देश में शांति के लिए एक विशेष पुलिस दस्ते का गठन किया। यह व्यवस्था 350 वर्ष तक चली। इस पुलिस का कार्य केवल राजा के आदेशों का पालना करना था। सातवीं और आठवीं शताब्दी के बीच सुरक्षा पुलिस का विचार लोगों के मन में आया। उस समय ऐसा महसूस किया गया कि एक ऐसी पुलिस शक्ति का गठन किया जाए जो राजा के आदेशों का पालन करने के बजाए कानून और लोगों की सुरक्षा कर सके। इस प्रकार का विचार इंग्लैंड के लोगों के मन में आया, जो बाद में अमेरिका में भी विकसित हुआ।

इंग्लैंड की जनता ने अपनी देखभाल और रक्षा के लिए पुलिस व्यवस्था शुरू की। 7 दिसम्बर 1792 को ईस्ट इण्डिया कम्पनी (East India Company) ने हमारे देश में पुलिस व्यवस्था शुरू की। हर महत्त्वपूर्ण स्थान पर एक थानेदार नियुक्त किया गया, जिसके साथ एक जमादार, दस सिपाही और एक मुंशी होता था। 1861 में पुलिस एक्ट बना, जिसमें पुलिस कर्मचारियों की पोशाक, उनके वेतन व नौकरी के नियम बनाए गए। तब उनकी पोशाक में लाल व नीले रंग का साफा और नीले रंग के कपड़े निश्चित किए गए थे। इसके बाद इसमें काफी परिवर्तन हुए। आज भारत में अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग पुलिस व्यवस्थाएं हैं, जो हर प्रकार से नागरिक सुरक्षा का ध्यान रखती हैं।



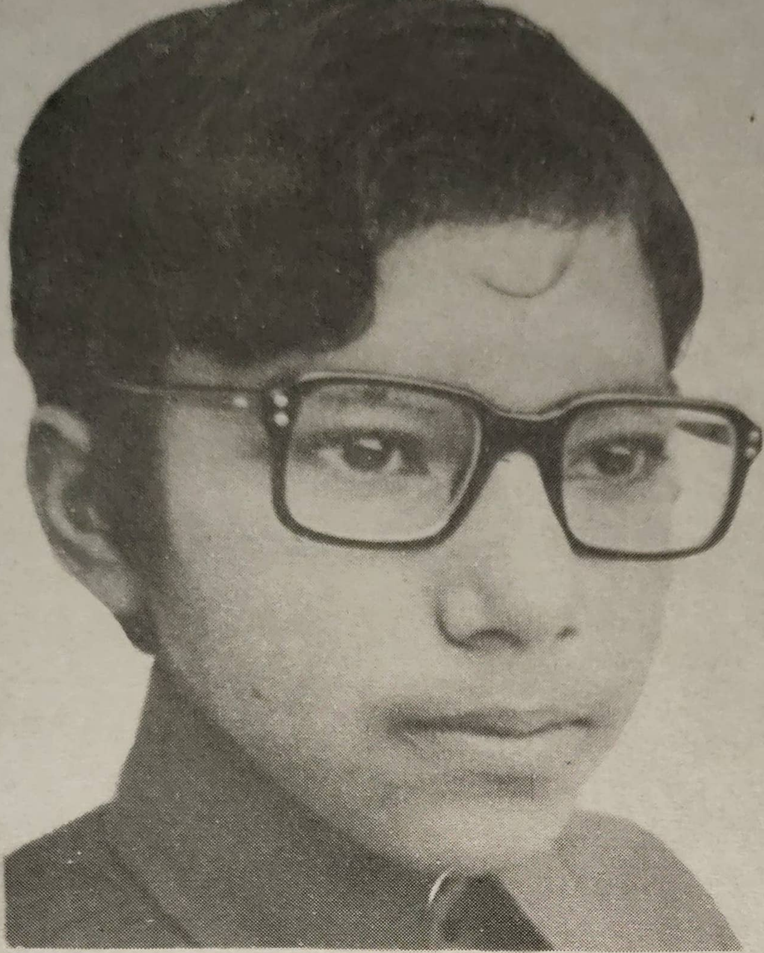
विश्वविद्यालय की शुरुआत कब हुई?

शुरू-शुरू में कॉलेज शब्द का अर्थ एक ऐसी संस्था से था, जहां कई लोग मिलकर कोई समाज उपयोगी कार्य करते थे। उदाहरण के लिए रोम में एक कॉलेज था, जो वहां के पोप का चुनाव करता था। इसी प्रकार अमेरिका का एक कॉलेज राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति का चुनाव करता था। मध्ययुग तक ऐसी संस्थाओं को विश्वविद्यालय कहा जाने लगा। शुरू-शुरू में विश्वविद्यालय कुछ विद्वानों के एकत्रित होने का केन्द्र ही था। इनकी न कोई इमारत होती थी और न ही नियुक्त किए गए शिक्षक। जिन लोगों को शिक्षा पानी होती थी, वे कोई बड़ा कमरा किराये पर ले लेते थे और कुछ शिक्षक मिलकर शिक्षा देने का कार्य करते थे।

धीरे-धीरे समय बदला, शिक्षा का महत्त्व बढ़ा और शिक्षण संस्थान बढ़े। विश्वविद्यालयों के लिए पक्की इमारतें बनने लगीं और इनके संचालन के लिए कुछ नियम और कानून बनाये गए। आधुनिक पद्धति का पहला विश्वविद्यालय इटली के सालेरनो नामक स्थान पर शुरू हुआ। नौवीं शताब्दी में इसे चिकित्सा का महान विद्यालय माना जाता था। सन् 1231 में इसे विश्वविद्यालय घोषित कर दिया गया। यद्यपि अपने ढंग का विश्व का सबसे पुराना विश्वविद्यालय 'कारूइन' का विश्वविद्यालय है, जिसकी 859 में मोरक्को में स्थापना हुई थी।

12वीं शताब्दी के अंत तक इटली में कई विश्वविद्यालय खुल गए थे। जिस विश्वविद्यालय ने दुनिया भर के सामने आदर्श विश्वविद्यालय की रूपरेखा प्रस्तुत की, वह पेरिस विश्वविद्यालय था। इस विश्वविद्यालय की स्थापना 12वीं शताब्दी के मध्य में हुई। प्राचीन भारत में तक्षशिला और नालंदा विश्वविद्यालयों ने दुनिया भर में तहलका मचा रखा था। 13वीं शताब्दी में विश्वविख्यात आक्सफ़ोर्ड (Oxford) और कैम्ब्रिज (Cambridge) विश्वविद्यालय खोले गए। इसके बाद संसार के कई देशों में अनेकों विश्वविद्यालय बन गए। भारत में पश्चिमी शिक्षा पर आधारित कॉलेज हिन्दू कॉलेज के नाम से कलकत्ता में 1817 में स्थापित हुआ। आज इसका नाम प्रैसीडैन्सी कॉलेज है।

आधुनिक विश्वविद्यालयों की रूपरेखा ही अलग है। इन विश्वविद्यालयों से सम्बन्धित बहुत से कॉलेज होते हैं, जिनमें विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करने के लिए आते हैं। विश्व के अलग-अलग देशों में अलग-अलग शिक्षा पद्धतियां प्रचलित हैं। शिक्षा के विशेष क्षेत्रों के लिए आज अलग-अलग शिक्षा संस्थान बने हुए हैं, जो शिक्षा ग्रहण करने वाले विद्यार्थियों को डिग्री प्रदान करते हैं। ये शिक्षा संस्थान किसी न किसी विश्वविद्यालय से सम्बद्ध रहते हैं।



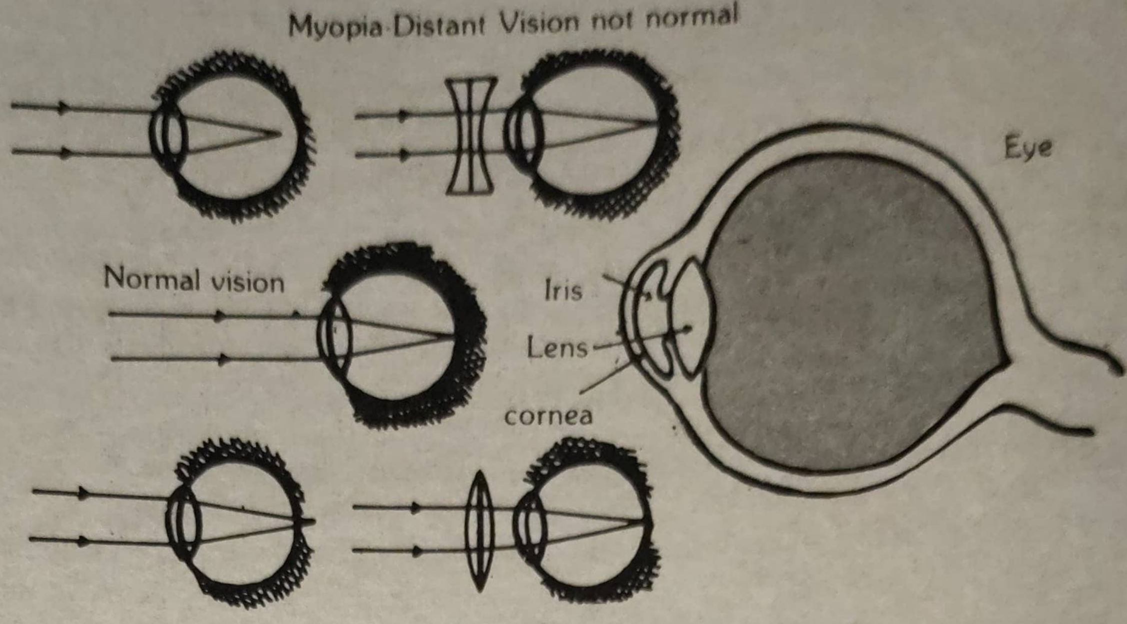
चश्मे में से सही कैसे दिखाई देता है?

चश्मे का चलन आज एक आम बात हो गई है। बूढ़े, बच्चे और जवान, जिनकी दृष्टि कमजोर होती है,सभी चश्मों का इस्तेमाल करते हैं। वैज्ञानिकों ने आज ऐसे चश्मे बनाने के तरीके निकाल दिए हैं, जिनके द्वारा दूर की और नजदीक की साफ न दिखाई देने वाली वस्तु स्पष्ट देखी जा सकती है। आज ऐसे भी चश्मे बन गए हैं, जिनके लेन्स आंखों के अंदर लगा दिए जाते हैं। क्या तुम जानते हो कि चश्मे की खोज कब हुई और चश्मे की सहायता से वस्तुएं स्पष्ट कैसे दिखाई देती हैं?

चश्मे की शुरुआत लगभग 700 वर्ष पहले हुई थी। 1266 में इंग्लैंड के रोजर बेकन (Roger Bacon) नामक व्यक्ति ने किताब पर लिखे अक्षरों को बड़ा करके देखने के लिए कांच के एक टुकड़े का इस्तेमाल किया। कांच का यह टुकड़ा एक गेंद के आकार के शीशे में से काटा गया था। लेकिन निश्चयपूर्वक यह मालूम नहीं कि ऐसे कांच के टुकड़ों को चश्मों के रूप में कब इस्तेमाल किया गया।

1352 में बनाए गए कार्डिनल उगोन (Cardinal Ugon) नामक एक व्यक्ति के चित्र में आंखों पर चश्मा लगाया हुआ दिखाया गया है। इससे यह सिद्ध होता है कि चश्मे की खोज 1266–1352 के बीच में ही हुई। 16वीं सदी तक चश्मों का प्रचलन काफी हो गया था। 1784 में बेन्जामिन फ्रेंकलिन (Benjamin Franklin) ने द्विफोक्सी (Bi-focal) लेन्सों के निर्माण से चश्मों की दुनिया में क्रांति ला दी। अब प्रश्न यह उठता है कि चश्मे से हमें साफ-साफ कैसे दिखाई देता है?

हमारी आंख एक कैमरे की तरह काम करती है। आंख की काली पुतली के बीच से प्रकाश की किरणें अंदर प्रवेश करती हैं। आंख के अंदर एक कॅनवैक्स लेन्स होता है और इस लेन्स के पीछे एक पर्दा, जिसे रेटीना (Retina) कहते हैं। वस्तु से आने वाली प्रकाश की किरणें लेन्स की सहायता से वस्तु का प्रतिबिम्ब (Image)



रेटीना पर बनाती हैं। मस्तिष्क इस प्रतिबिम्ब को सीधा कर देता है और वस्तु हमें साफ दिखाई पड़ जाती है। यदि आंख में कोई दोष नहीं है, तो इस लेन्स की फोकस दूरी अपने आप समायोजित हो जाती है और वस्तु का प्रतिबिम्ब हमेशा ही ठीक रेटीना पर बनता है, परन्तु कभी-कभी आंख में कुछ दोष उत्पन्न हो जाते हैं, जिनकी वजह से प्रतिबिम्ब रेटीना के आगे या पीछे बनता है। इस कारण वस्तु धुंधली दिखाई देती है। जिन लोगों की आंखों में ऐसे दोष पैदा हो जाते हैं, उन्हें चश्मे की आवश्यकता होती है। आंख के दोष मुख्य रूप से तीन प्रकार के होते हैं।

दूरान्धता दोष (Myopia) :—पहले दोष को दूरान्धता दोष (Myopia) कहते हैं। जिस व्यक्ति की आंख में यह दोष होता है, उसे पास की वस्तुएं तो साफ दिखाई देती हैं, लेकिन उसे दूर की वस्तुएं स्पष्ट नहीं दिखाई देती हैं। दूर की वस्तुओं का प्रतिबिम्ब रेटीना से पहले ही बन जाता है। इस दोष को अवतल लेन्स (Concave Lens) से बने चश्मे द्वारा ठीक किया जाता है, जिससे दूर की वस्तुओं का प्रतिबिम्ब रेटीना पर बनने लगता है। (ऊपर का चित्र देखें)।

निकटान्धता दोष (Hypermetropia) :—दूसरे दोष को निकटान्धता दोष (Hypermetropia) कहते हैं। इस दोष में दूर की वस्तुएं तो साफ दिखाई देती हैं, लेकिन पास की वस्तुएं नहीं दिखतीं। कम दूरी पर रखी हुई वस्तुओं का प्रतिबिम्ब रेटीना के पीछे बनता है। इस दोष को उत्तल लेन्स (Convex Lens) से बने चश्मों द्वारा दूर किया जाता है। जिससे वस्तुओं का प्रतिबिम्ब फिर रेटीना पर बनने लगता है (ऊपर का चित्र देखें)।

अबिन्दुकता (Astigmatism):—तीसरे दोष को अबिन्दुकता (Astigmatism) कहते हैं। इस दोष में वस्तु का प्रतिबिम्ब रेटीना में भिन्न-भिन्न दूरी पर बनता है। इसलिए वस्तु स्पष्ट नहीं दिखाई देती। इस दोष से छुटकारा पाने के लिए बेलनाकार लेन्सों (Cylindrical Lens) से बने चश्मों का प्रयोग किया जाता है।

इस प्रकार चश्मों के द्वारा मनुष्य स्पष्ट रूप से देख सकता है। कम दृष्टि वाले लोगों के लिए चश्मे एक वरदान सिद्ध हुए हैं। इसके अतिरिक्त आंखों को सूरज की तेज़ रोशनी से बचाने के लिए धूम के चश्मों का प्रयोग किया जाता है। इन चश्मों में रंगीन शीशे होते हैं, जो धूप में उपस्थित पराबैंगनी किरणों (Ultraviolet Rays) को आंखों में नहीं जाने देते हैं। पराबैंगनी किरणें आंखों के लिए काफी घातक होती हैं।

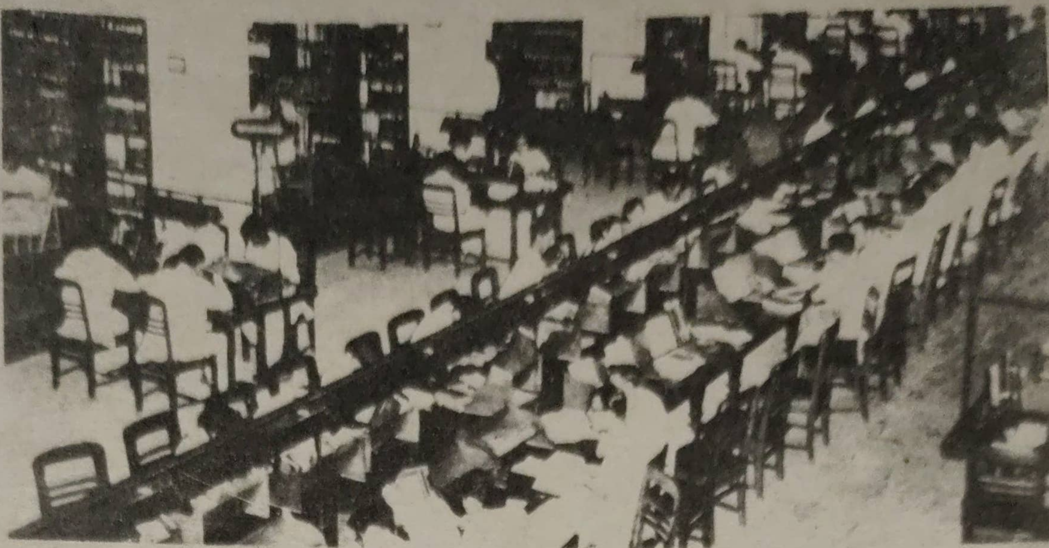


माउंट एवरेस्ट का नाम कैसे पड़ा?

माउंट एवरेस्ट हिमालय पर्वत की पूर्वी श्रृंखलाओं के बीच में स्थित है। यह विश्व की सबसे ऊंची चोटी है। इसकी ऊंचाई 8848 मीटर (29028 फुट) है। क्या तुम जानते हो कि नेपाल में स्थित इस पहाड़ी चोटी का नाम एवरेस्ट कैसे पड़ा?

एवरेस्ट के नामकरण की कहानी बड़ी रोचक है। शुरू-शुरू में नेपाल के लोग इसे 'सरगमाथा' कहते थे। सन् 1852 में भारत सरकार ने इस पर्वत के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए एक सर्वेक्षण दल नियुक्त किया। इस दल में जनरल सर जार्ज एवरेस्ट एक सरवेयर थे और राधानाथ सिकन्दर सर्वेक्षण विभाग के एक बंगाली क्लर्क थे। इनके अतिरिक्त दल में और भी लोग थे। राधानाथ सिकन्दर ने बड़ी मेहनत करके इस सरगमाथा के विषय में बहुत सी जानकारी इकट्ठी की। सिकन्दर ने ही इस चोटी की ऊंचाई और सही स्थिति का पता लगाया। यह सब जानकारी वह सर जार्ज एवरेस्ट को देते रहते थे। काफी समय बाद जब इस चोटी का नाम रखने का प्रश्न पैदा हुआ, तो सर जार्ज एवरेस्ट के नाम पर इस चोटी का नाम एवरेस्ट रखा गया। बेचारे राधानाथ सिकन्दर को कुछ न मिला।

शुरू में एवरेस्ट लोगों के लिए जिज्ञासा का केन्द्र था। 1921 में पहली बार इस पहाड़ी की चोटी पर चढ़ने के लिए इंग्लैंड से अनुसंधान दल आया। यह दल साधारण सी ही जानकारी प्राप्त कर सका। 1922 के बाद कई बार एवरेस्ट पर चढ़ने के प्रयास किए गए, लेकिन ये सभी प्रयास असफल रहे। मनुष्य ने इन असफलताओं के बावजूद हार नहीं मानी और आखिरकार 29 मई सन् 1953 की सुबह 11–30 बजे न्यूजीलैंड के एडमंड हिलेरी व भारत के शेरपा तेनजिंग एवरेस्ट की चोटी पर झंडा गाड़ने में सफल हो गए। तब तक एवरेस्ट 11 बहादुर पर्वतारोहियों की जान ले चुका था। 1953 से लेकर आज तक लगभग 45 पर्वतारोही अभियान दल एवरेस्ट की ओर जा चुके हैं, जिनमें से केवल 14 को ही सफलता मिल पायी है। एवरेस्ट की चोटी पर पहुंचना कोई आसान खेल नहीं है।



पुस्तकालय की शुरुआत कैसे हुई?

पुस्तकालय (Library) उस स्थान को कहते हैं, जहां विभिन्न विषयों की अनेक पुस्तकों को अध्ययन के लिए निश्चित क्रम में रखा जाता है। लायब्रेरी शब्द की उत्पति लैटिन भाषा के शब्द लाइबर (Liber) से हुई है, जिसका अर्थ 'किताब' है।

असीरिया और बेबीलोनिया में पुस्तकालय की शुरुआत ईसा से लगभग 2000 वर्ष पूर्व ही हो गई थी। ईसा से 600 वर्ष पूर्व, मैसोपोटामिया के लोग चिकनी मिट्टी के टुकड़ों पर नुकीली छड़ों से जो कुछ लिखा करते थे, उसे वे आग में पकाकर मंदिरों और महलों में पुस्तकालय के रूप में सुरक्षित रखा करते थे। यही मिट्टी के टुकड़े उन दिनों की लायब्रेरी में पुस्तकों का काम करते थे। पुराने समय की प्रसिद्ध लायब्रेरी अलेग्जेन्ड्रिया (ईजिप्ट) में ईसा से 300 वर्ष पूर्व बनाई गई थी। इस लायब्रेरी में पेपरस नामक कागज के सात लाख रोल थे। ये रोल 120 भागों में एक आधुनिक पुस्तकालय की भांति व्यवस्थित थे।

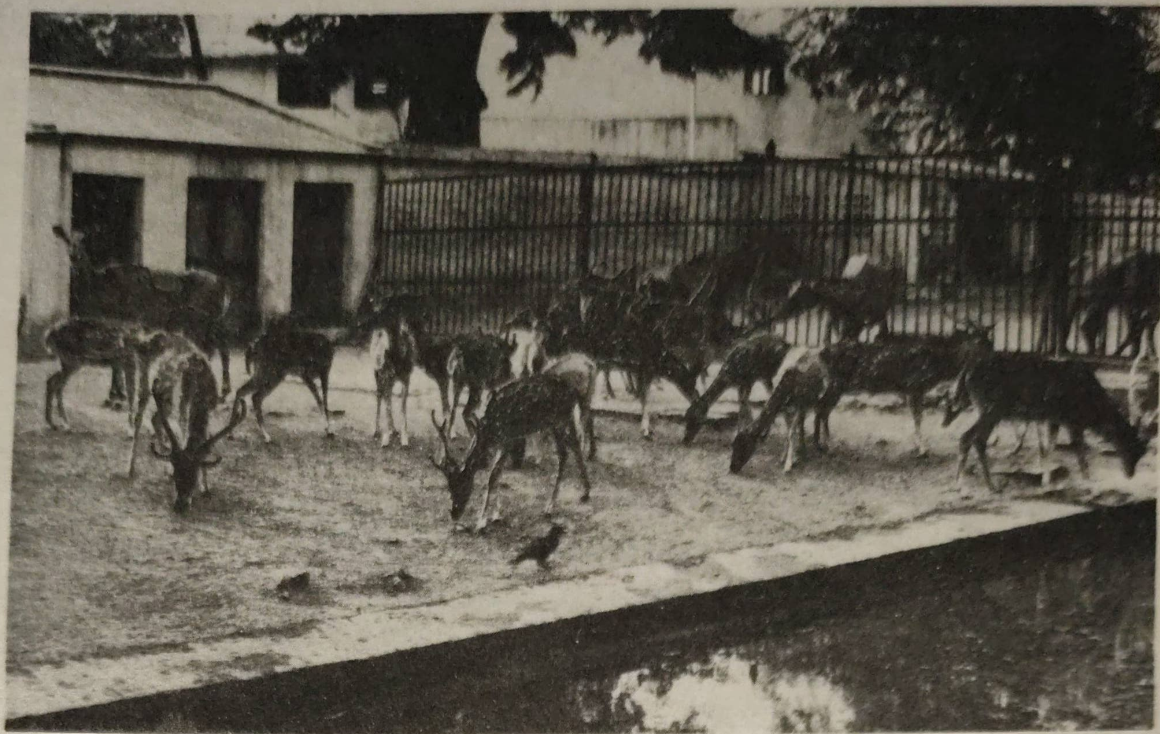
जनता के लिए पुस्तकालय बनाने का काम सबसे पहले रोम में जूलियस सीज़र ने शुरू किया। रोम के धनी लोगों ने इस प्रकार के पुस्तकालयों के निर्माण में बहुत बड़ा सहयोग दिया। चौथी शताब्दी में रोम में इस प्रकार के 28 पुस्तकालय थे।

ईसाई धर्म के शुरू होने के बाद हर चर्च में पुस्तकालय बनाए जाने लगे। इसके बाद विश्वविद्यालयों में भी पुस्तकालय बनाए गए। फ्रांस, इटली और जर्मनी के विश्वविद्यालय में तो महंगी किताबों को जंजीरों से बांध कर रखा जाता था। भारत में भी नालन्दा और तक्षशिला के विश्वविद्यालयों में विभिन्न पुस्तकों का बहुत बड़ा संग्रह था।

सन् 1400 के आसपास ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय ने अपना पुस्तकालय बनाना शुरू किया। इसका नाम बौडलियन है। आज विश्वविद्यालयों में यह विश्व का सबसे बड़ा पुस्तकालय है। इस प्रकार सारे संसार में पुस्तकालय विकसित करने का शौक दिन प्रतिदिन बढ़ता ही चला गया।

आज के आधुनिक संसार में अनेकों प्रकार के पुस्तकालय हैं। बड़े-बड़े शहरों में जनता के लिए पुस्तकालय बन गए हैं। हर विश्वविद्यालय, कॉलिज और स्कूल की अपनी लाइब्रेरी है। यहां तक कि लोग अपने निजी पुस्तकालय बनाने लगे हैं।

आज विश्व में दो महान पुस्तकालय हैं। एक है रोम का वेटिकन पुस्तकालय और दूसरा है वाशिंगटन का लायब्रेरी आफ़ कांग्रेस । वाशिंगटन का यह पुस्तकालय 24 अप्रैल 1800 को शुरू हुआ था। इस लाइब्रेरी में साढ़े तीन करोड़ पुस्तकें, पाण्डुलिपियां और चित्र हैं, जिनमें से एक करोड़ से अधिक पुस्तकें हैं। जिन आलमारियों में पुस्तकें रखी जाती हैं यदि उन सबको एक पंक्ति में रख दिया जाये, तो उनकी लम्बाई 327 मील बैठेगी। मास्को की लेनिन लाइब्रेरी में भी दो करोड़ पुस्तकें बताई जाती हैं।



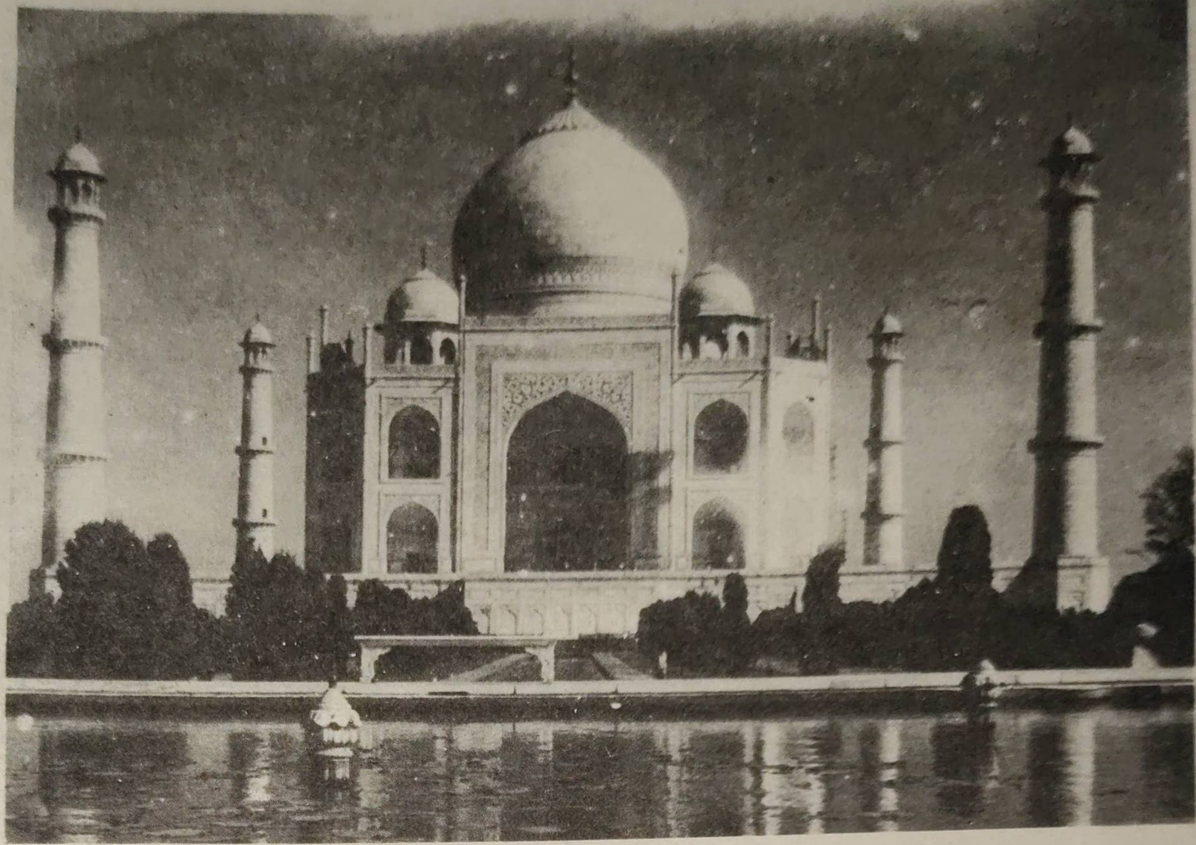
चिड़ियाघर कब और क्यों बने?

चिड़ियाघर को अंग्रेज़ी में 'ज़ूलोजीकल गार्डन' कहते हैं। आम भाषा में लोग इसे 'ज़ू' भी कहते हैं। चिड़ियाघर उस स्थान को कहते हैं, जहां भांति-भांति के पक्षी और जानवर प्रदर्शन के लिए संग्रहीत किए जाते हैं। चिड़ियाघरों का अपना विशेष महत्त्व है। चिड़ियाघर देखने से कम समय में बहुत से पशु-पक्षियों के विषय में ज्ञान प्राप्त हो जाता है। इन जीते-जागते पशु-पक्षियों पर वैज्ञानिक लोगों को बहुत से परीक्षण करने की सुविधा प्राप्त हो जाती है और इनमें दुर्लभ जीव-जन्तुओं को संरक्षित (Conserve) किया जा सकता है।

क्या तुम जानते हो कि संसार का प्रथम चिड़ियाघर कब और कहां बनाया गया? दुनिया का सबसे पहला चिड़ियाघर ईसा से 1150 वर्ष पहले चीन के एक राजा ने बनवाया था। इसमें अनेक प्रकार के हिरण, मछलियां और पक्षी थे। उसे जनता के लोग नहीं देख सकते थे, केवल राजा और शाही दरबार के लोग ही उसे देख सकते थे। काफी समय तक बहुत से देशों में सिर्फ राजा महाराजा अपने शौक के लिए चिड़ियाघर बनवाते रहे। एक ऐसा ही चिड़ियाघर विएना (आस्ट्रिया) में आज भी मौजूद है। उसे वहां के सम्राट फ्रैंज जोसेफ़ ने अपनी पत्नी मारिया थेरेसा के लिए 1752 में बनवाया था।

आम जनता के लिए संसार का सबसे पहला चिड़ियाघर 1793 में पेरिस में बनाया गया। इसमें चिड़ियाघर के साथ-साथ एक संग्रहालय व वनस्पति उद्यान भी था। इसके बाद लन्दन, बर्लिन आदि में चिड़ियाघर बनाए गए। इस समय तो संसार में 500 से भी अधिक चिड़ियाघर हैं, जिन्हें 33 करोड़ से भी ज्यादा लोग देखते हैं। एक ही चिड़ियाघर में अनेकों प्रकार के सबसे अधिक जानवर और पक्षियों का संग्रह पश्चिमी बर्लिन में है। यहां लगभग 2400 प्रकार के तेरह हज़ार से अधिक पक्षी, मछलियां व अन्य जानवर हैं।

भारत का सबसे बड़ा चिड़ियाघर कलकत्ता में है। इसका विस्तार 45 एकड़ भूमि में है। इस चिड़ियाघर में दुनिया भर के अनेक पशु-पक्षियों की किस्में संग्रहीत है, जिन्हें देखकर कोई भी आगन्तुक आनन्द-मिश्रित विस्मय से अभिभूत हो उठता है। बम्बई नगर में 'विक्टोरिया उद्यान' है, जहां यहां की प्रसिद्ध जन्तुशाला (चिड़ियाघर) है। हैदराबाद, मैसूर, त्रिवेंद्रम आदि नगरों में भी बड़े प्रसिद्ध चिड़ियाघर हैं।



संगमरमर क्या है?

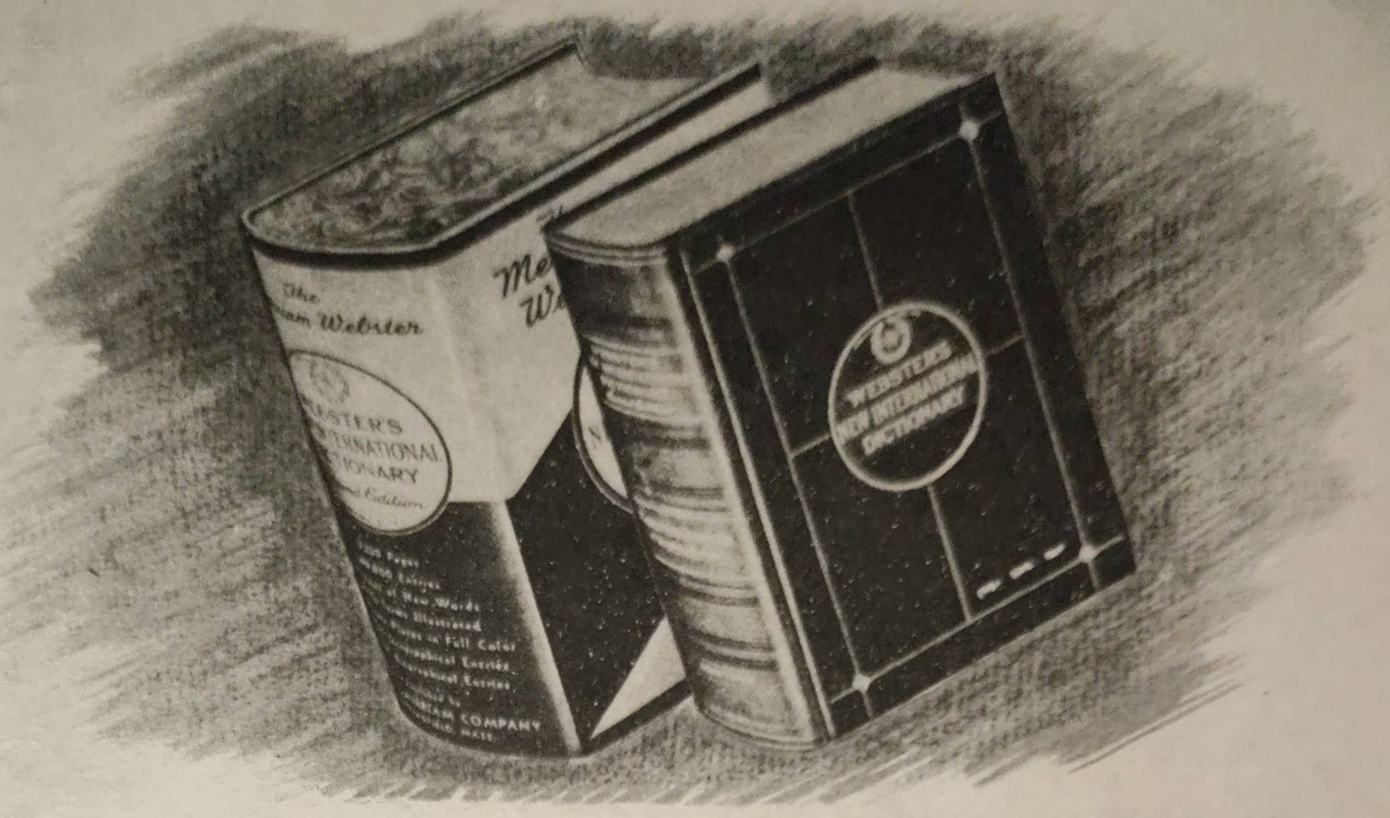
संगमरमर (Marble) एक प्रकार का पत्थर है, जो कई रंगों में मिलता है। सफेद रंग के संगमरमर का प्रयोग प्राचीन काल से इमारतों के निर्माण कार्य में होता रहा है। ग्रीक (Greek) और ईजिप्ट (Egypt) के लोग इस पत्थर को मन्दिरों के निर्माण में प्रयोग करते थे। आगरे का ताजमहल भी सफेद संगमरमर का बना हुआ है। संगमरमर पर सर्दी, गर्मी, वर्षा का कोई असर नहीं पड़ता। यह देखने में बहुत सुन्दर लगता है। इसे किसी भी शकल में काटने में अधिक परेशानी नहीं होती। यह गुलाबी, लाल और पीले रंगों में मिलता है। इन्हीं सब गुणों के कारण संगमरमर का इमारतों और मूर्तियों के निर्माण में प्रयोग किया जाता है।

संगमरमर की चट्टानें होती हैं। क्या तुम जानते हो कि इन चट्टानों का निर्माण कैसे होता है? इन चट्टानों का जन्म चूना पत्थर से होता है। धरती के गर्भ में विशाल गर्मी और दबाव के कारण चूना पत्थर (Lime Stone) ही संगमरमर की चट्टानों के रूप में परिवर्तित हो जाता है। यदि संगमरमर के टुकड़े का रासायनिक विश्लेषण किया जाए तो इसमें कैल्सियम कार्बोनेट ही अधिक मात्रा में मिलेगा। कई प्रकार के संगमरमरों में तो 99 प्रतिशत तक कैल्सियम कार्बोनेट होता है। रंगीन संगमरमर में एल्युमिनियम और मैग्नीशियम (Aluminium & Magnesium) के यौगिक भी होते हैं, जिनके कारण यह रंगीन हो जाता है।

संगमरमर को इसकी चट्टानों से मशीनों द्वारा काटकर निकाला जाता है। इसके बड़े-बड़े टुकड़ों को वर्कशाप में लाया जाता है। वहां पर इसे अनेक प्रकार के टुकड़ों में काट लिया जाता है। चट्टानों से प्राप्त संगमरमर खुरदरा होता है। विशेष मशीन द्वारा इन टुकड़ों को चिकना करने के लिए इन टुकड़ों पर पालिश की जाती है। इसके बाद संगमरमर प्रयोग में लाने के योग्य हो जाता है।

संसार में सबसे अधिक संगमरमर इटली में मिलता है। आजकल लगभग 100,000 टन संगमरमर हर वर्ष इटली में निकाला जाता है। पहले तो इटली में इससे भी अधिक संगमरमर का उत्पादन होता था।

जबलपुर (भारत) में भेड़ाघाट एक स्थान है, जहां संगमरमर की ऊंची चट्टानें हैं।



पहला शब्दकोश कब लिखा गया?

अंग्रेज़ी में शब्दकोश को डिक्शनरी (Dictionary) कहते हैं। डिक्शनरी शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के डिक्सनैरियस शब्द से हुई, जिसका अर्थ है शब्दों का समूह। शब्दकोश या डिक्शनरी वास्तव में किसी भी भाषा की एक पुस्तक होती है, जिसमें उस भाषा के शब्द वर्णमाला क्रम में अर्थ सहित दिए होते हैं। आज जिस रूप में हम शब्दकोशों का प्रयोग करते हैं, उस रूप तक आने में इसे बहुत समय लगा है।

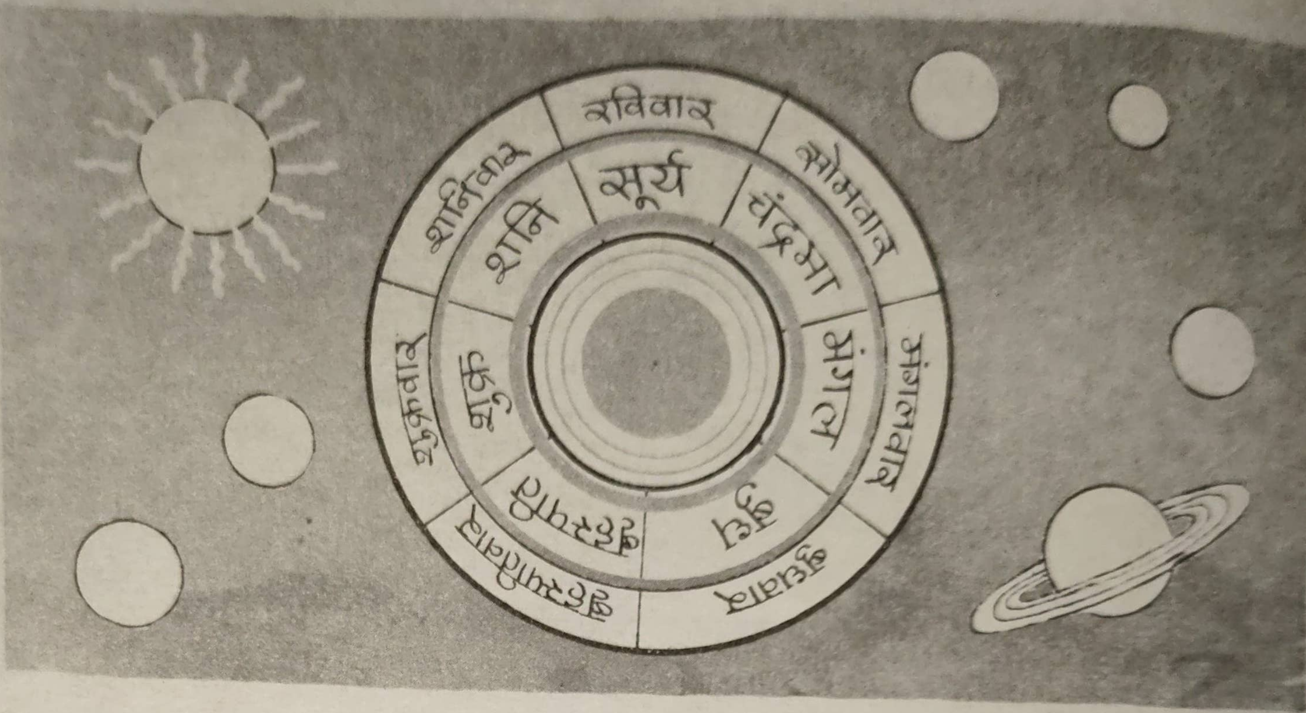
सबसे पहला शब्दकोश लैटिन भाषा का था, जो सन् 1225 में एक अंग्रेज़ विद्वान जान गारलैण्ड ने लिखा था। अंग्रेज़ी का प्रथम शब्दकोश रिचार्ड हूलोट नामक व्यक्ति ने 1552 में तैयार किया था। इस शब्दकोश का नाम था—'एबसेडेरियम एंगलिको लैटिनम प्रो टायरनकुलिस'। इस शब्दकोश में पहले अंग्रेज़ी का शब्द था। उसके साथ ही उसका अंग्रेज़ी में अर्थ दिया हुआ था। इसमें 26000 शब्द थे। यह काफी लोकप्रिय हुआ, लेकिन महंगा होने के कारण इसे हर व्यक्ति नहीं खरीद सकता था। इसके पश्चात ऐसे शब्दकोश लिखे जाने लगे, जिनका मूल्य अधिक नहीं था।

विश्व के सबसे बड़े शब्दकोश 'दि आक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी' के 12 भाग हैं। इसमें 15487 पृष्ठ हैं। 1884 से 1933 तक यह शब्दकोश सामान्य रहा, लेकिन 1933 में इसमें 963 अतिरिक्त पृष्ठ लगाए गए। 1974 में इसमें दो भाग और जोड़े गए।

आजकल अनेक प्रकार के शब्दकोश प्रचलित हो चुके हैं। जैसे शिक्षा शब्दकोश (Dictionary of Education), कानूनी शब्दकोश (Dictionary of Legal Words), वंशावली शब्दकोश (Dictionary of Heredity), प्लास्टिक शब्दकोश (Dictionary of Plastics) आदि। इस प्रकार के शब्दकोशों में वर्णमाला क्रम से तत्सम्बन्धी विषय के शब्द व उनके अर्थ दिए होते हैं।

आज तो अनेक भाषाओं के शब्दकोश बाजार में मिलते हैं। शब्दकोश विद्यार्थी वर्ग के लिए इतना आवश्यक हो गया है कि उसका इसके बिना काम नहीं चलता। संसार की किसी भी भाषा के शब्दकोश उस भाषा और अंग्रेज़ी अनुवाद में आज आसानी से उपलब्ध हैं।

सप्ताह के दिनों के नाम कैसे पड़े?



आज एक सप्ताह में सात दिन होते हैं। लेकिन कई हज़ार वर्ष पहले लोगों को सप्ताह का ज्ञान नहीं था। उस समय मनुष्य केवल महीने के विषय में जानता था और महीने के अलग-अलग दिनों के नाम अलग-अलग हुआ करते थे। जैसे-जैसे समय बीतता गया और मनुष्य ने शहरों का निर्माण करना शुरू किया, तो उसे इस बात की आवश्यकता हुई कि बाजार, व्यापार और धार्मिक कामों के लिए दिन निश्चित किए जाएं। शुरू-शुरू में कुछ स्थानों पर हर दस दिन को इस तरह के कामों के लिए तय किया गया। कुछ दूसरे स्थानों पर सात दिन बाद या पांच दिन बाद इन कामों के लिए विशेष दिन तय किए गए। बेबीलोनिया में हर सातवें दिन को एक विशेष दिन माना जाता था। यहूदी भी हर सातवें दिन केवल धार्मिक पूजा पाठ किया करते थे। मिस्र के लोगों ने भी सात दिनों की पद्धति ही अपनाई।

मिस्र के लोगों ने सात दिनों के नाम पांच ग्रहों, सूर्य और चन्द्रमा के नाम पर रखे। ये इस प्रकार थे। रविबार Sunday, चन्द्रवार Monday, मंगलवार Tuesday, बुधवार Wednesday, बृहस्पतिवार Thursday, शुक्रवार Friday शनिवार Saturday। इसे रोम के लोगों ने भी अपनाया।। आजकल सप्ताह के दिनों का नाम जो इस्तेमाल किया जाता है, उसे ऐंग्लोसैक्सन (Anglosaxon) पद्धति से लिया गया है। इन दिनों के नाम देवताओं के नाम पर रखे गए हैं। सूर्य वाले दिन को सुनानदेग Sunandaeg या सनडे (रविबार) कहते हैं। चन्द्रमा के दिन को मोननदेग Monandaeg या मनडे (सोमवार) कहते हैं। इसी प्रकार मंगल ग्रह के दिन को टिवैसदेग Tiwesdaegs या ट्यूजडे (मंगलवार), बुध के दिन को वौडेन Woden या वैन्सडे (बुधवार), बृहस्पति के दिन को थौर Thor या थर्सडे (बृहस्पतिवार), शुक्र के दिन को फ्रिग Frigg या फ्राइडे (शुक्रवार) और शनि के दिन को सैटर्नसदेग Saterndaeg या सैटरडे (शनिवार) कहते हैं। इस प्रकार सप्ताह के सात दिनों के नाम पड़े, जो सारे संसार में आज प्रचलित हैं।

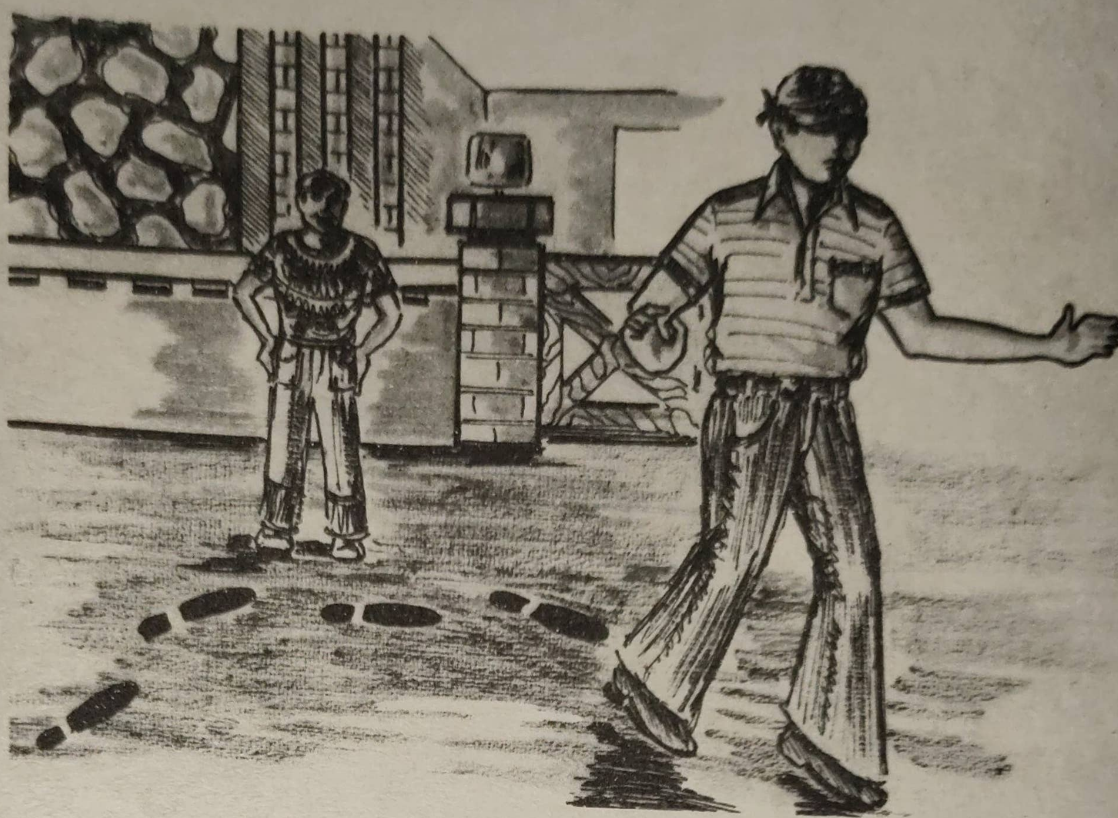


विश्व का सबसे छोटा देश कौन सा है ?

देश शब्द का अर्थ है एक ऐसा राज्य, जिसकी अपनी सरकार हो और उसकी अपनी सीमाएं हों। प्रत्येक देश का अपना झंडा होता है तथा अपनी अलग-अलग प्रबन्ध व्यवस्था होती है। इस परिभाषा के अनुसार वेटिकन सिटी (Vatican City) संसार का सबसे छोटा देश है।

वेटिकन सिटी कैथोलिक ईसाइयों के धर्मगुरू पोप का देश है। यह इटली की राजधानी रोम के मध्य में स्थित है। यह पूरी तरह पोप के नियंत्रण में है। वेटिकन सिटी का अपना झंडा है। इस देश की अपनी डाक-व्यवस्था, रेलवे स्टेशन, टेलीफोन व रेडियो प्रसारण व्यवस्थाएं हैं। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि इस देश का कुल क्षेत्रफल 17 वर्गमील है। इस देश की आय का अपना कोई अलग साधन नहीं है, लेकिन दुनियाभर में फैले कैथोलिक ईसाइयों द्वारा दिए गए धन से इस देश का काम बहुत अच्छे ढंग से चलता है। इस देश में पोप के रहने के लिए एक शानदार महल है, जिसमें सुन्दर-सुन्दर बगीचे, पुस्तकालय और म्यूज़ियम हैं। वेटिकन सिटी के दूसरे देशों से अपने कूटनीतिक सम्बन्ध हैं।

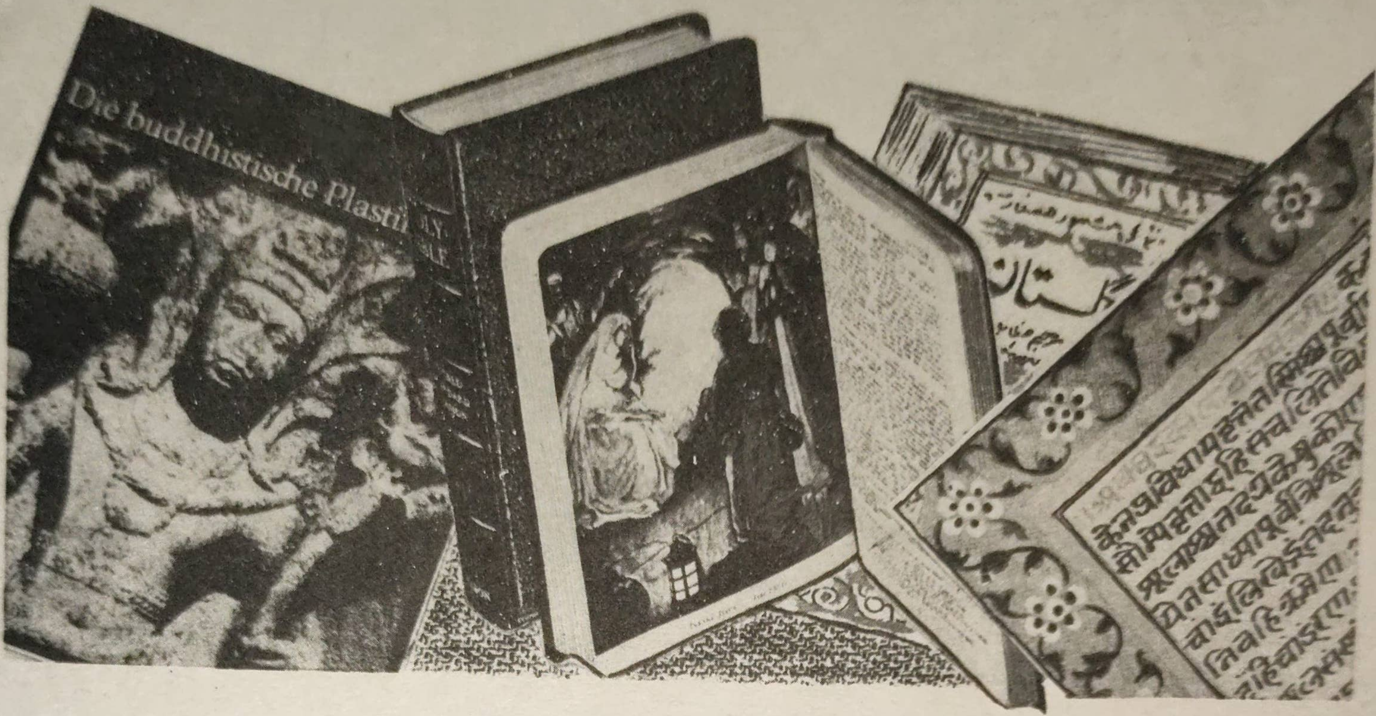
वेटिकन सिटी बनने की कहानी बड़ी दिलचस्प है। पिछले सैकड़ों वर्षों से इटली कैथोलिक ईसाइयों की गतिविधियों का केन्द्र रहा है। काफी समय तक मध्य इटली के एक बहुत बड़े भाग पर पोप का राजनैतिक नियंत्रण चला करता था। 1859 में इस हिस्से को पोप राज्य कहा जाने लगा था और तब इसका क्षेत्रफल चालीस हज़ार नौ सौ साठ वर्ग कि० मी० (सोलह हजार वर्ग मील) था। 1870 में रोम को इटली की राजधानी घोषित कर दिया गया और पोप की इच्छा के बिना ही पोप राज्य को इटली के साम्राज्य में शामिल कर लिया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि राजा और पोप के बीच मतभेद पैदा हो गया। इन मतभेदों का 1929 में अंत हुआ और इटली की सरकार और पोप के बीच समझौता हुआ, जिसके फलस्वरूप वेटिकन सिटी नामक देश का जन्म हुआ। वेटिकन सिटी के वर्तमान पोप हैं—पोलैण्ड के जॉन पोप पाल द्वितीय।



आंखें बंद करके हम सीधे क्यों नहीं चल पाते?

यदि तुम किसी व्यक्ति की आंखों पर पट्टी बांध दो और खुले मैदान में उसे ले जाकर उसे सीधी दिशा में चलने के लिए कहो, तो तुम्हें यह देखकर आश्चर्य होगा कि बहुत प्रयत्न करने के बावजूद भी वह व्यक्ति सीधी दिशा में नहीं चल पाता, बल्कि थोड़ी देर में एक गोल चक्कर काट कर उसी जगह आ जाता है, जहां से वह चला था। बहुत से लोग जो गहरी धुंध, कोहरे या अंधकार में खो जाते हैं और रास्ता न दिखाई देने पर केवल कल्पना के सहारे सीधी दिशा में चलने की कोशिश करते हैं, वे थोड़ी ही देर में वहां आ जाते हैं, जहां से वे चले थे। क्या तुम इस आश्चर्यजनक सत्य का रहस्य जानते हो?

इस बात को, कि आंखों पर पट्टी बांधकर हम सीधे क्यों नहीं चल पाते, निम्न प्रकार से समझा जा सकता है। हमारे शरीर की रचना कुछ असमान व विषम (Asymmetrical) ढंग से हुई है। इसका अर्थ यह है कि हमारे शरीर के दाएं और बाएं हिस्से पूर्णरूप से संतुलित नहीं हैं। जैसे हमारा हृदय बायीं ओर स्थित है, जबकि यकृत दायीं ओर स्थित है। हमारे शरीर की हड्डियों का ढांचा भी दायीं और बायीं ओर समरूप नहीं है। हमारे शरीर में दायीं ओर के हाथ-पैर और दूसरे हिस्से, बायीं ओर के हाथ-पैर और दूसरे हिस्सों की तुलना में थोड़े से अधिक भारी हैं। शरीर के दोनों पक्षों की असमानता के कारण ही हम आंखें बंद करके सीधी दिशा में नहीं चल पाते। आंखें बंद होने पर हमारे चलने का ढंग हमारी मांसपेशियों और शरीर की बनावट पर निर्भर करता है। चूंकि शरीर के एक ओर के हिस्से भारी हैं, अतः उस ओर लगने वाला बल हमें उसी दिशा में घूमने के लिए दबाव डालता रहता है। जिसके परिणामस्वरूप हम एक गोल घेरे में चलने लगते हैं। आंखें खुली होने पर हमारे शरीर पर असमान बल का प्रभाव हमारी आंखें नहीं होने देती हैं। कुछ ऐसे प्रयोग भी करके देखे गए हैं, जिनमें आदमी की आंखों पर पट्टी बांधकर सीधी दिशा में कार चलाने को कहा गया है। लेकिन इन परीक्षणों में पाया गया कि 20 सेकण्ड में ही कार अपने रास्ते से विचलित हो जाती है।



किताबों की शुरुआत कब और कैसे हुई?

आज भांति भांति की किताबें हमें पढ़ने को मिलती हैं। कुछ किताबें तो इतने सुन्दर ढंग से बनाई गई होती हैं कि वे बरबस ही हमारा मन मोह लेती हैं। किताबों को आज के सुन्दर रूप को प्राप्त करने में हज़ारों वर्षों से भी अधिक समय लगा है।

मध्ययुग तक किताबें नहीं थीं। इससे पहले लोग पेपिरस (Papyrus) पर लिखते थे और उन्हें आपस में चिपका कर रोल बना लेते थे। रोम के लोग इन रोलों को वोल्यूमन (Volumen) कहते थे। इसी शब्द से वोल्यूम शब्द की उत्त्पति हुई है। पांचवीं शताब्दी के मध्य तक लोग पार्चमेन्ट (Parchment) और वैलम (Vellam) पर लिखने लगे। पार्चमेन्ट भेड़ और बकरी की खाल से बना होता था और वैलम गाय के बछड़े की खाल से बना होता था। खाल की चद्दरों को समान आकार में काटकर किताब की तरह सिलाई कर ली जाती थी। लोग इनकी एक सतह पर लिखते थे। वास्तव में यह पुस्तकों की शुरुआत थी। मध्ययुग में किताबें बनने लगी थीं। उन दिनों अधिकतर किताबें लैटिन भाषा में लिखी जाती थीं। कागज और मुद्रण कला का विकास होने के बाद किताबों ने सुन्दर रूप धारण करना शुरू किया। आज तो अनेक प्रकार की किताबें बनने लगी हैं।

विश्व की सबसे बड़ी पुस्तक 'दि लिटिल रैड एल्फ' को विलियम पी० वुड ने लिखा व प्रकाशित किया था। 7 फुट 2 इंच ऊंची इस किताब को खोलने पर लम्बाई 10 फुट हो जाती है। 1967 से 1971 के बीच आइरिश विश्वविद्यालय की प्रेस ने ब्रिटिश संसद के 1800 से 1900 तक के कागजात को 1200 भागों में छापा। किसी एक विषय पर छपा यह विश्व का सबसे बड़ा सेट है, इसका कुल वज़न 3.64 टन है और कीमत लगभग पांच लाख रुपए है। यदि इसे दस घंटे रोजाना पढ़ा जाए, तो पूरी पुस्तक को पढ़ने में 6 साल लग जाएंगे।



राष्ट्रीय गीत कब शुरू हुए ?

संसार के सभी देशों में विशेष अवसरों पर वहां के राष्ट्रीय गीत गाये जाते हैं। राष्ट्रीय गीत देशभक्ति का गीत होता है, जिसे राष्ट्र के सम्मान में राष्ट्रीय पर्वों और उत्सवों पर गाया जाता है। लोगों को एकता के सूत्र में बांधने और देशभक्ति की भावना पैदा करने में राष्ट्रीय गीतों का विशेष महत्त्व रहा है।

राष्ट्रीय गीतों की शुरुआत कब और कैसे हुई, इस विषय में कुछ निश्चित परिणाम नहीं हैं। यह माना जाता है कि नौवीं शताब्दी में जापान में गाया जाने वाला 'किमिगायो' गीत विश्व का पहला राष्ट्रीय गीत था। अंग्रेजों का पहला राष्ट्रीय गीत 'गॉड सेव द क्वीन (किंग)' पहली बार 1619 में गाया गया। इसको जॉन बुल ने लिखा था। लेकिन इस गीत का पहला सार्वजनिक प्रदर्शन 28 सितम्बर 1745 को किया गया था।

अमरीका का राष्ट्रीय गीत 1812 की लड़ाई के दौरान लिखा गया था। अमेरिका के एक वकील फ्रांसिस स्काट के (Francis Scott Key) इंगलैंड के एक जहाज़ पर नज़रबंद कर लिए गए थे। इस जहाज़ ने अमेरिका के मैक हेनरी फोर्ट, बाल्दीमोर पर बमवर्षा की थी। के महोदय सारी रात हमले को देखते रहे। उन्होंने एक लिफाफे पर एक पंक्ति लिखी जो बाद में अमेरिका के राष्ट्रीय गीत का हिस्सा बनी। विश्व के सबसे छोटे राष्ट्रीय गीत जापान व जोर्डन के हैं, जो केवल चार-चार पंक्तियों के हैं।

हमारा राष्ट्रीय गीत गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा लिखा गया है। इसे सबसे पहले दिसम्बर 1911 के अखिल भारतीय कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में गाया गया था। 24 जनवरी 1950 को 'जनगणमन अधिनायक' को राष्ट्रीय गीत के रूप में स्वीकार किया गया। 'बन्देमातरम' जो भारत मां की वंदना के लिए गाया जाता है, श्री बंकिमचन्द्र चटर्जी द्वारा लिखा गया था। इसे भी राष्ट्रीय गीत जैसा ही सम्मान प्राप्त है। इसी प्रकार दूसरे देशों में भी अपने-अपने राष्ट्रीय गीत हैं।

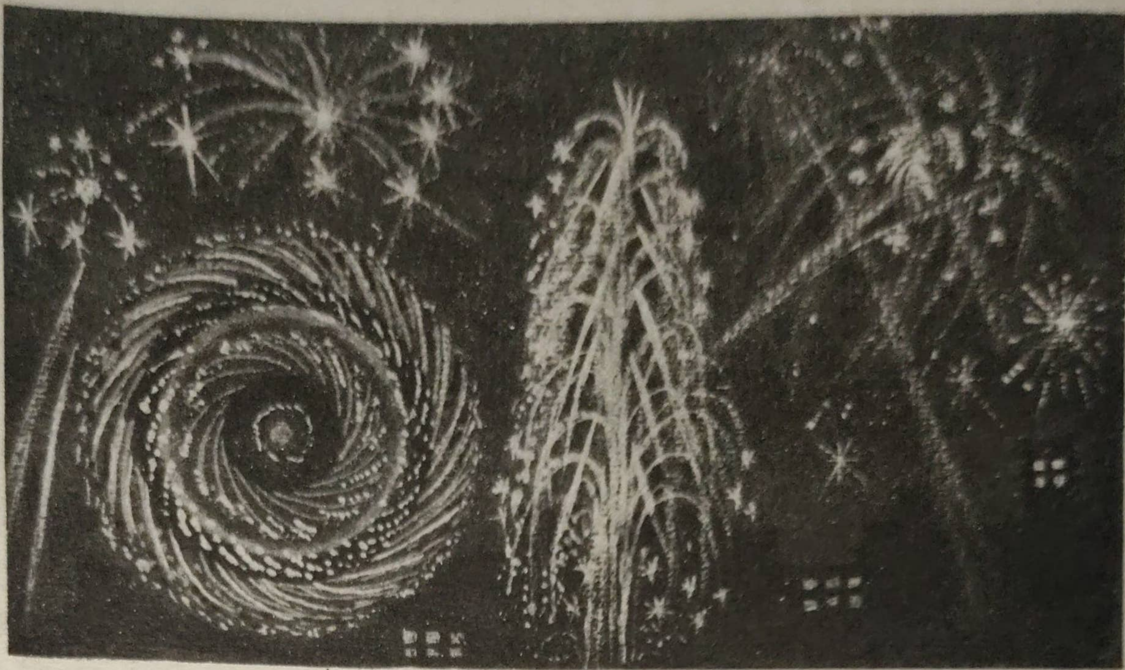
 

बैंकों की शुरुआत कैसे हुई?

बैंक शब्द की उत्पत्ति इटालियन भाषा से हुई है। मध्ययुग में इटली के लोग बेन्चों पर बैठकर व्यापार करते थे। इटालियन में बेन्चों को बैंको (Banco) कहते हैं, यह शब्द बदलते-बदलते बैंक बन गया। आज संसार के सभी देशों में बैंक व्यवस्था है। मुख्य रूप से बैंक के दो काम होते हैं। पहला,लोगों द्वारा दिए गए पैसों को जमा करना और दूसरा जरूरतमंद लोगों को ब्याज पर कर्ज देना। इसके अतिरिक्त तरह-तरह के व्यापारों में मदद करना भी बैंकों का एक काम है। क्या तुम जानते हो कि बैंकों की शुरुआत कैसे हुई?

आज जैसी बैंक व्यवस्था सबसे पहले वेनिस (Venice) में सन् 1587 में शुरू हुई। इसी वर्ष बैंको डी रियाल्टो (Banco di Rialto) की स्थापना हुई। इसमें लोग पैसा जमा कर सकते थे और जरूरत पड़ने पर निकाल भी सकते थे। 1619 में बैंको डी गिरो ने इस बैंक का अधिकार अपने हाथ में ले लिया। इसमें लोग सोना, चांदी जमा कर सकते थे, जिसके बदले बैंक रसीद देता था। इन रसीदों का प्रयोग रुपए के रूप में होता था। अमेरिका में पहला बैंक 1825 में खुला। इसी प्रकार भारत में पहला बैंक 1804 में प्रेसीडैन्सी बैंक आफ बोम्बे के नाम से स्थापित किया गया। पहला पूर्ण भारतीय बैंक पंजाब नेशनल बैंक था, जिसकी शुरुआत 1894 में हुई। सरकार द्वारा भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना अप्रैल 1935 को की गई। देश में सभी प्रकार की मुद्रा यही बैंक जारी करता है। इस प्रकार विश्व के सभी देशों में बैंकों की स्थापना होती चली गई।

आज हमें बैंकों से अनेक सुविधाएं उपलब्ध हैं। अपने पैसे को जमा करने के अतिरिक्त हम अपने बहुमूल्य जेवर भी बैंकों में जमा कर सकते हैं और चोरी के डर से बच सकते हैं। बैंक किसानों और उद्योगपतियों की मदद करते हैं। इतना ही नहीं, यदि किसी देश को अपनी योजनाओं के लिए धन की आवश्यकता होती है, तो वह देश विश्व बैंक से कर्जा ले सकता है। इस प्रकार बैंक हमारे लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं।



आतिशबाजी रंगीन क्यों दिखाई देती है?

आतिशबाजी का प्रयोग पिछले सैकड़ों वर्षों से दुनिया के कोने-कोने में हो रहा है। इसका इस्तेमाल विश्व के लगभग सभी देशों के राष्ट्रीय, धार्मिक व सामाजिक उत्सवों पर किया जाता है। अनुमान है कि पूरे साल में विश्व में लगभग 300 किस्म की, 5000 करोड़ रुपए की आतिशबाजी फूंक दी जाती है। आतिशबाजी जब जलाई जाती है, तो इसमें से कई प्रकार की रंगीन व सफेद चमकीली रोशनी निकलती है। क्या तुम जानते हो कि आतिशबाजी रंगीन क्यों दिखाई देती है?

आतिशबाजी आमतौर पर पोटाशियम नाइट्रेट (Potasium Nitrate), गंधक (Sulphur), कोयला (Charcoal), आदि के मिश्रण से बनाई जाती है। आतिशबाजी को रंगीन बनाने के लिए उसमें दो धातुओं, स्ट्रौन्शियम (Strontium) और बेरियम (Barium) के लवण प्रयोग में लाये जाते हैं। इन लवणों को पोटाशियम क्लोरेट (Potasium Chlorate) के साथ मिलाया जाता है। बेरियम के लवणों से हरा रंग पैदा होता है। स्ट्रौन्शियम सल्फेट से हल्के आसमानी रंग की रोशनी निकलती है। स्ट्रौन्शियम कार्बोनेट से पीला रंग पैदा होता है। स्ट्रौन्शियम नाइट्रेट से लाल रंग का प्रकाश पैदा होता है। इन धातुओं के लवणों का मिश्रण जब आतिशबाजी के साथ जलता है, तो कई रंग पैदा हो जाते हैं और आतिशबाजी सुन्दर रंगों में दिखाई देने लगती है।

आतिशबाजी की शुरुआत सबसे पहले चीन में हुई थी। इसके सैंकड़ों वर्ष बाद यूरोप, अरब और यूनान के देशों को इसकी जानकारी हो गई। इस समय भारत में सबसे अधिक आतिशबाजी शिवकाशी नामक छोटे से शहर में बनाई जाती हैं। कुछ समय पहले जापान में एक ऐसी रंगीन आतिशबाजी बनाई गई जो 915 मीटर (3000 फुट) की ऊंचाई पर जाकर 610 मीटर (2000 फुट) के व्यास में बिखर गई थी। आतिशबाजी कभी-कभी खतरनाक भी सिद्ध हो सकती है। 16 जून सन् 1770 को पैरिस में एक शादी के दौरान आतिशबाजी के कारण 800 से अधिक व्यक्तियों की मृत्यु हो गई थी।

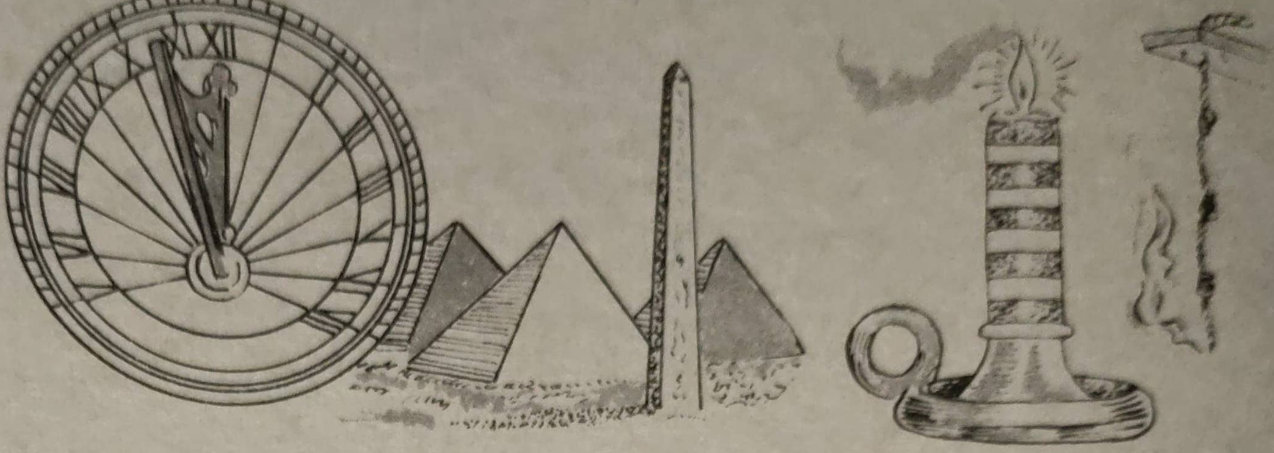


विश्व के मशहूर कालीन कौन से हैं?

फर्शों की शोभा बढ़ाने के लिए मनुष्य बहुत पुराने समय से कालीन या गलीचों का इस्तेमाल करता आ रहा है। सबसे पुराना कालीन, जो आज भी मौजूद है, ईसा से 300 वर्ष पूर्व पेजिरिक (Pazyryk) (रूस) में बनाया गया था। यह कालीन लेनिनग्राद में रखा हुआ है। इसकी लम्बाई 2 मीटर (6½ फीट) और चौड़ाई 1.8 मीटर (6 फीट) है। पुराने व महंगे कालीनों में बगदाद के खलीफा (Caliph of Baghdad) का सोने या रेशम से बना कालीन अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। यह 743 ई० में बना था। इसकी लम्बाई 300 फुट और चौड़ाई 180 फुट थी। विश्व का सबसे बड़ा कालीन न्यूयार्क के कोलम्बस सर्किल के प्रदर्शनी कक्ष में बिछाया गया था। 28 अप्रैल सन् 1956 को इस कक्ष में मोटरकारों की एक बड़ी प्रदर्शनी का आयोजन हुआ था। उस समय इस कालीन को पहली बार इस्तेमाल में लाया गया था। इसका क्षेत्रफल 8800 वर्गफीट है।

ईराक में सैसीफोन (Ctesiphone) के ससानियन महल (Sasanid Palace) में स्प्रिंग कारपेट (Spring Carpet) नाम का कालीन बिछाया गया था, जो संसार का सबसे कीमती कालीन माना जाता है। 7000 वर्ग फुट क्षेत्रफल के इस कालीन को सोने व रेशम से बनाया गया था और इसमें बहुत से कीमती रत्न जड़े हुए थे। इसका निर्माण छठी शताब्दी में हुआ था। कहा जाता है कि इसका एक टुकड़ा फारसी सेना ने 635 ई० में काट लिया था, जिसकी कीमत इस समय करीब ढाई अरब रुपए है। 17वीं शताब्दी में भारत के मुगल-सम्राटों द्वारा प्रार्थना करने के लिए एक कालीन बनाया गया था, जिसके प्रत्येक वर्ग इंच में 2490 गांठें (Knots) थीं। इतना महीन कालीन आज तक नहीं बुना गया है। यह कालीन इस समय न्यूयार्क के एक संग्रहालय में रखा हुआ है। ऊन और रेशम से ईरान में एक ऐसा कालीन बनाया गया, जिसके बीच में सोने से बना एक फूल है। यह कालीन लन्दन के म्यूज़ियम में रखा हुआ है। इसकी लम्बाई 11.51 मीटर और चौड़ाई 5.33 मीटर है।

भारत भी प्राचीन काल से ही अपने कालीनों के लिए संसार में प्रसिद्ध रहा है। आज भी मिर्जापुर व कश्मीर के गलीचे अपने सुंदर डिजाइनों के लिए संसार भर में प्रसिद्ध हैं।



प्राचीन काल में समय का पता कैसे लगाया जाता था ?

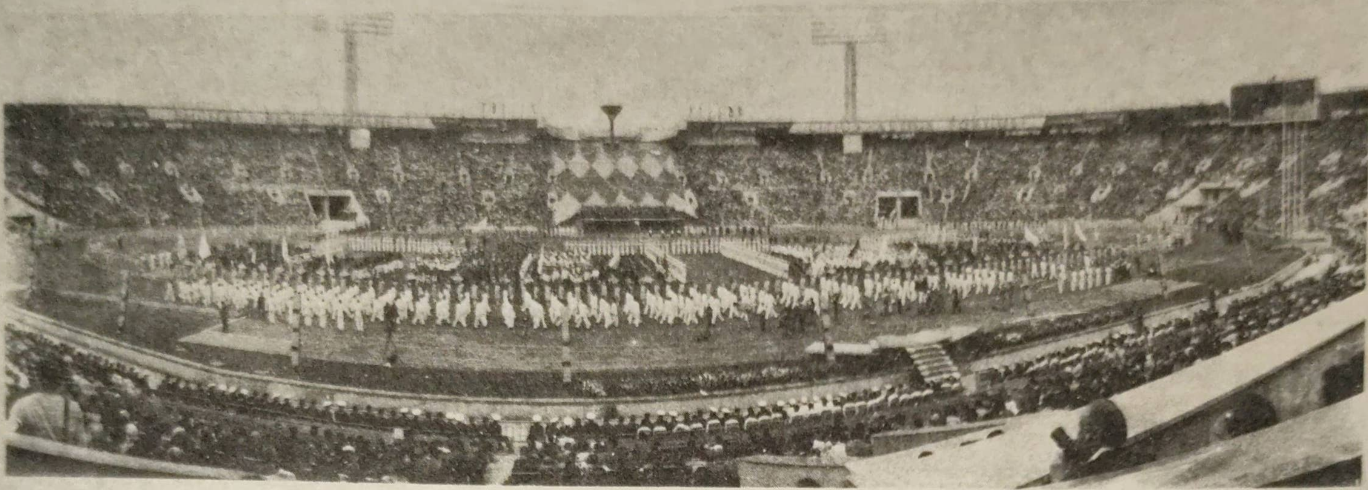
शुरू-शुरू में मनुष्य समय का पता लगाने के लिए धूप घड़ी का इस्तेमाल करता था। सबसे पुरानी धूप घड़ी मिस्र (Egypt) में लगभग 3500 वर्ष पूर्व बनाई गई थी। आमतौर पर सभी धूप घड़ियों में जमीन में एक डंडा गाड़ दिया जाता था और डंडे के चारों ओर एक गोल चक्कर सा डायल(Dial) बना दिया जाता था, जिस पर घंटों के निशान बने होते थे। जैसे-जैसे सूरज की ऊंचाई बदलती थी, वैसे ही वैसे डायल पर बनने वाली डंडे की परछाईं भी बदलती थी। इसी परछाईं की लम्बाई को बारह घंटों में विभाजित कर रखा था। आज भी बगीचों में ऐसी धूप घड़ियां देखने को मिल जाती हैं। इन घड़ियों के साथ सबसे बड़ी कठिनाई थी कि इनसे रात में समय नहीं मापा जा सकता था।

धूप घड़ी के बाद जल घड़ी का निर्माण किया गया। जल घड़ी में एक बर्तन में बारीक सा छेद करके उसे पानी के बर्तन में तैरा दिया जाता था। छेद में धीरे-धीरे पानी भरता रहता था और एक निश्चित समय में छेदवाला बर्तन पानी में डूब जाता था। इन घड़ियों में केवल दिन में ही नहीं रात में भी समय का पता चल जाता था।

इसके बाद बालू घड़ियों (Sand Clock) का विकास हुआ। इन घड़ियों में एक बर्तन को रेत से भरकर उसके तले में छेद कर दिया जाता था। ऊपर के बर्तन से नीचे के बर्तन तक रेत के आने में जो समय लगता था, उससे समय का ज्ञान हो जाता था। इन घड़ियों का प्रचलन अधिक नहीं हो पाया।

चीन के लोगों ने समय मापने का एक बड़ा ही विचित्र तरीका अपनाया। वे लोग एक रस्सी को गीली करके और समान दूरी पर गांठें बांधकर आग लगा देते थे। जब आग सुलगती हुई गांठों पर से गुजरती थी, तो उन्हें समय मापने की इकाइयां (Links) मान लिया जाता था। सन् 870 में इंग्लैंड के राजा एल्फ्रेड दि ग्रेट (Alfred the Great) ने मोमबत्ती को घड़ी के रूप में इस्तेमाल किया। एक बड़ी सी मोमबत्ती लेकर और उस पर निशान लगाकर जला दिया जाता था। मोमबत्ती की जलने की दर से समय का ज्ञान हो जाता था।

कलपुर्जों वाली घड़ियां प्राचीन चीन में प्रचलित थीं, लेकिन योरुप में इसकी शुरुआत तेरहवीं शताब्दी में हुई। सन् 1657-58 में हाइगून (Huygen) घड़ियों में पेन्डुलम का सिद्धांत अपनाया गया। इसके पश्चात हेयर स्प्रिंग (Hair Spring) और संतुलन पहिए (Balance Wheel) को प्रयोग में लाकर एक जगह से दूसरी जगह ले जाई जाने वाली घड़ियां बनीं। यही घड़ियां आजकल भी प्रचलित हैं। अठारहवीं शताब्दी में घड़ियों में माणिकों (Jewels) का प्रयोग होने लगा। अब तो विद्युत घड़ियां और परमाणु घड़ियां बन चुकी हैं। परमाणु घड़ियों में तीन लाख वर्ष तक एक सैकण्ड की गड़बड़ी नहीं हो सकती।



ओलम्पिक खेल क्या हैं?

जैसा कि तुम जानते हो, ओलम्पिक खेल हर चार साल में एक बार होते हैं और इनमें संसार के लगभग सभी देश भाग लेते हैं। क्या तुम जानते हो कि ओलम्पिक खेल कब और कैसे शुरू हुए? ओलम्पिक खेलों का इतिहास बहुत पुराना है। पुराने ओलम्पिक खेलों के विषय में अधिक जानकारी नहीं है, लेकिन यह निश्चित है कि पहला ओलम्पिक खेल ईसा से 776 वर्ष पूर्व दक्षिण यूनान (ग्रीस) के ओलम्पिया नामक स्थान में खेला गया था। इसी स्थान के नाम पर इन खेलों का नाम भी ओलम्पिक खेल पड़ गया। पहला ओलम्पिक खेल पांच दिन तक खेला गया, जिसे यूनान के बहुत सारे लोगों ने देखा।

शुरू में ओलम्पिक खेलों में केवल यूनान के खिलाड़ी ही हिस्सा लेते थे। तब इन खेलों को धार्मिक समारोहों के रूप में मनाया जाता था। ये खेल यूनान के मुख्य देवता जियस के सम्मान में खेले जाते थे। हर खिलाड़ी प्रतियोगिता से हिस्सा लेने से पहले जियस के मन्दिर में पूजा करता था। विजेता खिलाड़ी को जैतून के उस पेड़ की टहनी दी जाती थी, जो मंदिर के आंगन में होता था। उन दिनों महिलाएं खेलों में हिस्सा नहीं ले सकती थीं। यहां तक कि वे दर्शक के रूप में खेलों को देख भी नहीं सकती थीं। महिलाओं के प्रवेश को रोकने के लिए हर खिलाड़ी को लगभग नग्न स्थिति में खेलों में हिस्सा लेना पड़ता था। बाद में कुंआरी लड़कियों को ओलम्पिक देखने की अनुमति मिल गई।

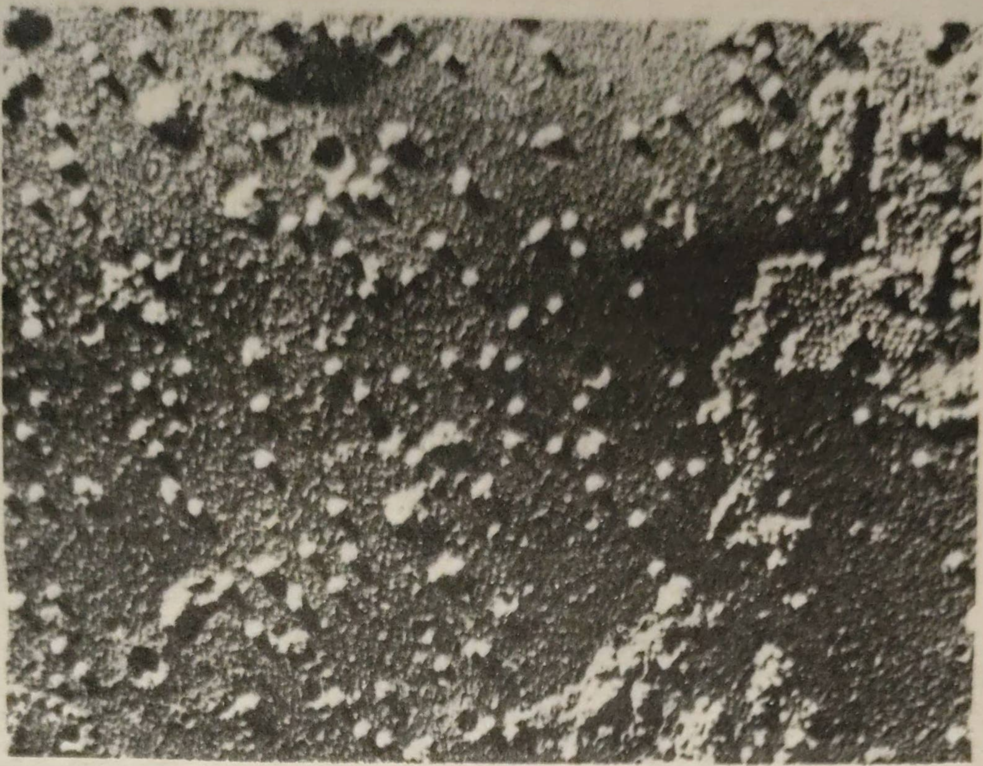
पहले खेल के बाद लगभग 1000 वर्ष तक ओलम्पिक खेलों का सिलसिला चलता रहा, लेकिन 394 ई० में रोम के राजा थियोडोसियस ने यूनान पर कब्जा करने के बाद ओलम्पिक खेलों पर प्रतिबन्ध लगा दिया। यह प्रतिबन्ध लगभग डेढ़ हज़ार साल तक रहा। इसके बाद 1859 में यूनान के जापास ने 1859, 1870, 1875 व 1889 में चार ओलम्पिक खेलों का आयोजन किया। जापास की मृत्यु के बाद यह सिलसिला फिर टूट गया।

फ्रांस के एक शिक्षक बैरन पियरे द कौबर्टीन ने पुराने ओलम्पिक खेलों को 1896 में फिर शुरू कराया। ये खेल यूनान की राजधानी एथेंस में हुए। इनमें 13 देशों के 311 खिलाड़ियों ने हिस्सा लिया। अकेले यूनान के ही 230 खिलाड़ी इन खेलों में शामिल हुए।

1896 के बाद खेलों का सिलसिला चलता आ रहा है। इसके बाद ये खेल 1900 में पेरिस में, 1904 में सेन्ट लुई में, 1908 में लन्दन में, 1912 में स्टाकहोम में, 1920 में एंटवर्प में, 1924 में पेरिस में, 1928 में एम्सटर्डम में, 1932 में लॉस एंजेल्स में, 1936 में बर्लिन में, 1948 में लन्दन में, 1952 में हैलसिकी में, 1956 में मैलबोर्न में, 1960 में रोम में, 1964 में टोकियो में, 1968 में मैक्सिको में, 1972 में म्यूनिख में, 1976 में मांट्रियल में और 1980 में मास्को में हुए। 1916 में पहले विश्व-युद्ध के कारण ये खेल नहीं हो सके।

1984 के ओलम्पिक खेल लॉस एंजेल्स (अमेरिका) में होंगे। क्या तुम जानते हो कि ओलम्पिक खेलों में कौन-कौन से खेल खेंले जाते हैं। इसमें बहुत से खेलों का आयोजन होता है, जिन में मुख्य रूप से फुटबाल, तैराकी, दौड़, कुश्ती, हाकी, बास्केट बाल, साइकिल दौड़, निशानेबाजी आदि खेल हैं। भारत हाकी में कई बार सर्वश्रेष्ठ घोषित हो चुका है।

ओलम्पिक खेल कहां होंगे? इसका फैसला अंतर्राष्ट्रीय ओलम्पिक समिति करती है। इस समिति के 146 देश सदस्य हैं। ओलम्पिक खेलों में पहले दिन उद्घाटन समारोह होता है, जिसमें आयोजक देश का राष्ट्रप्रमुख ओलम्पिक शुरू होने की घोषणा करता है। पिछले ओलम्पिक खेलों का आयोजन करने वाले का प्रतिनिधि पांच छल्लों वाला ओलम्पिक झंडा नए आयोजकों को सौंपता है। ओलम्पिक के जियस मंदिर से मशाल जला कर मुख्य स्टेडियम में लाई जाती है और यह तब तक जलती रहती है जब तक कि खेल होते हैं। खेलों में हिस्सा लेने वाले देश मार्चपास्ट में हिस्सा लेते हैं। पहले यूनान की टीम होती है और अंत में उस देश की टीम जहां ओलम्पिक हो रहे होते हैं। बीच में अंग्रेज़ी वर्णक्रम के हिसाब से सभी देश बारी बारी से मार्चपास्ट करते हैं। इसके बाद खिलाड़ियों को शपथ दिलाई जाती है। फिर शांति के प्रतीक सफेद कबूतर और गुब्बारे उड़ाये जाते हैं। अन्तिम दिन समापन समारोह होता है। जिसमें मशाल बुझा दी जाती है।



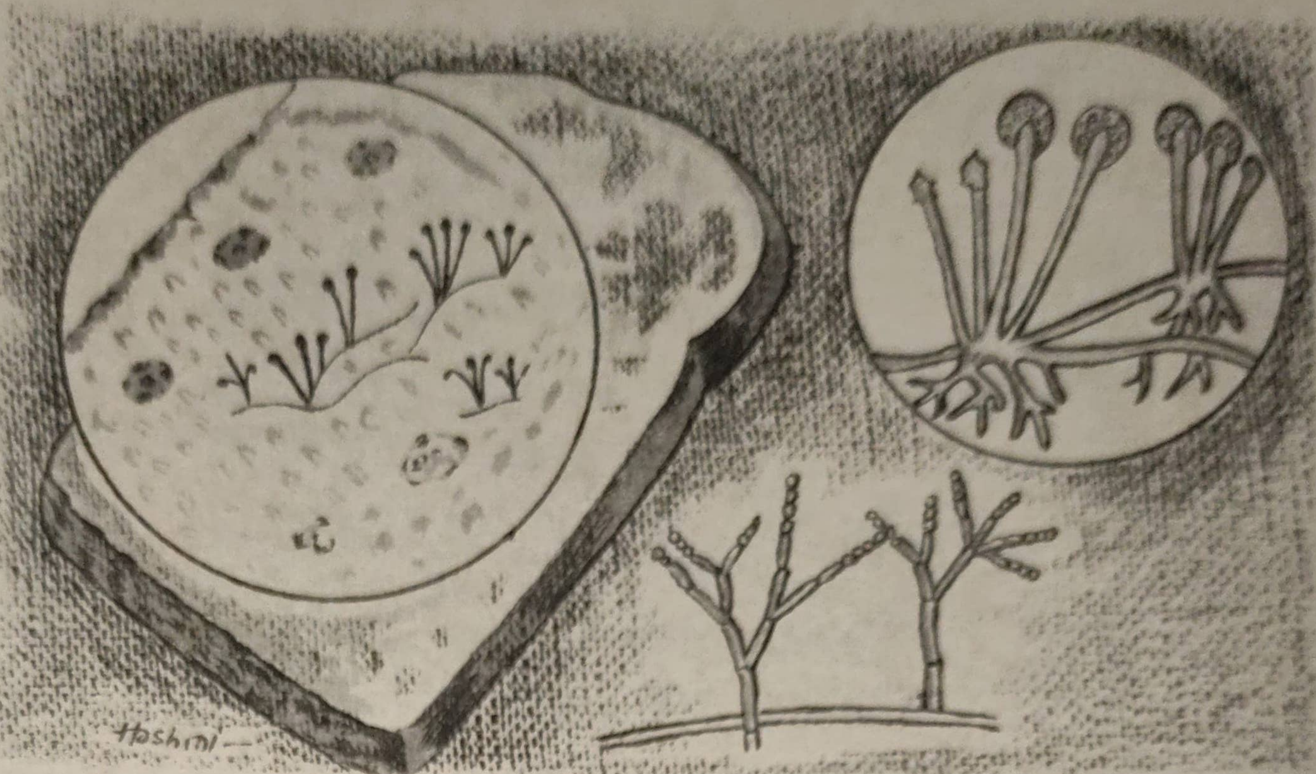
विषाणु (Virus) क्या हैं ?

विषाणु ऐसी सूक्ष्म संरचनाएं हैं, जो साधारण सूक्ष्मदर्शी (Microscope) से भी दिखाई नहीं देते। इन्हें देखने के लिए इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी (Electron Microscope) की आवश्यकता होती है। विषाणु को सजीव व निर्जीव दोनों ही श्रेणियों में रखा जाता है। ये जीवित प्राणियों की कोशिकाओं के अंदर ही पलते और बढ़ते हैं। इसलिए इन्हें सजीवों की श्रेणी में रखते हैं। ये बाहरी दुनिया की चीज़ों पर पैदा नहीं होते। इन्हें बोतलों में चीनी और नमक की भांति रखा जा सकता है। इसलिए इन्हें निर्जीवों की श्रेणी में भी रखते हैं।

विषाणु का पता सबसे पहले सन् 1888 में मेयर (Meyer) ने तम्बाकू की पत्तियों से लगाया था। विषाणु कई प्रकार के होते हैं। कुछ गेंद की शक्ल के होते हैं, तो कुछ छड़ों की तरह लम्बे। कुछ विषाणु षट्भुजाकार भी होते हैं। सबसे छोटे विषाणु का आकार तो लगभग एक इंच के दस लाखवें भाग के बराबर होता है। ये पौधों, जानवरों तथा मनुष्यों की कोशिकाओं में पाए जाते हैं। इन्हीं कोशिकाओं में ये पैदा होते हैं, वहीं बढ़ते और वहीं से ये रोग पैदा करते हैं।

विषाणु मनुष्य, जानवरों और पेड़-पौधों में अनेकों बीमारियां फैलाते हैं। अलग-अलग किस्म के विषाणु अलग-अलग प्रकार की बीमारियां फैलाते हैं। चेचक, पोलियो, खसरा, पीलिया, आंखों के रोहे आदि ऐसी बीमारियां हैं, जो विषाणु द्वारा ही फैलती हैं। कुछ विषाणु मस्तिष्क पर हमला करके बीमारियां फैलाते हैं। लकवा, मस्तिष्क ज्वर व रैबीज़ नाम की बीमारियां मनुष्य के शरीर में विषाणुओं के घुस जाने के कारण होती हैं। टमाटर, केला, गन्ना, नींबू और कपास के पौधों में भी कई बीमारियां विषाणु पैदा करते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि विषाणु जीव-जगत के सबसे बड़े दुश्मन हैं। विषाणु जानवरों और मनुष्यों को ही प्रभावित नहीं करते, बल्कि हर प्रकार के प्राणी जैसे कीड़े, मछली, मेंढ़क, फूल वाले पौधे, यहां तक कि बैक्टीरिया (Bacteria) तक को प्रभावित करते हैं। विषाणुओं से कुछ औषधियां भी बनाई जाती हैं।

अधिकांश विषाणु अधिक गर्मी और ठंड से नष्ट हो जाते हैं। फिर भी कुछ विषाणुओं को नष्ट करने में क्लोरीन और नमक का अम्ल (Hydrochloric Acid) भी काम आता है। आजकल विषाणुओं जनित रोगों की रोकथाम के लिए गंधक से बनी दवाइयां (Sulphur Drugs) और, ऐन्टीबायोटिक्स का प्रयोग किया जाता है।



फफूंदी (Fungus) क्या होती है?

बरसात के दिनों में अक्सर बासी रोटी, अचार, मुरब्बे, चमड़े आदि पर छोटे-छोटे सफेद रेशे पैदा हो जाते हैं। इसे फफूंद लगना कहते हैं और इन छोटे-छोटे सफेद रेशों को फफूंदी कहते हैं। ये रेशे काले, पीले और नीले रंग के भी हो सकते हैं। इन्हें सूक्ष्मदर्शी यंत्र से देखने से पता चलता है कि इसमें धागे की तरह की संरचनाएं हैं। इन धागों के दो हिस्से होते हैं। एक हिस्सा माइसीलियम (Mycellium) जड़ों की तरह फैलकर खाद्य पदार्थ से भोजन लेता है और दूसरा हिस्सा गोल-गोल गेंदनुमा होता है। इस गोल हिस्से में फफूंदी पैदा करने वाले बीजाणु (Spores) होते हैं। हवा में फैले इन बीजाणुओं को जब गर्म और नमी वाले स्थान में रोटी, फल आदि खाने की वस्तुएं मिलती हैं, तो ये उन पर जमा हो जाते हैं और बढ़कर नई फफूंदी को जन्म देते हैं। जैसे ही किसी वस्तु पर फफूंदी जमती है, वह वस्तु खराब हो जाती है।

फफूंदी एक प्रकार से परजीवी पौधे होते हैं। इनके अंगों में हरित पदार्थ (Chlorophyll) नहीं होता, जिससे पौधे स्वयं अपना भोजन तैयार करते हैं। इसलिए भोजन के लिए इन्हें दूसरी चीज़ों पर निर्भर रहना पड़ता है। फफूंदियां कई प्रकार की होती हैं। जैसे कुकरमुत्ता (Mushroom), म्यूकर (Mucar), खमीर (Yeast) पेनिसीलियम (Penicellium) आदि।

फफूंदी हमारे लिए लाभदायक भी है और हानिकारक भी। इसका पहला लाभ तो यह है कि फफूंदी बेकार पड़ी कार्बनिक वस्तुओं को सड़ाकर समाप्त कर देती है। ये वस्तुएं आक्सीजन, नाइट्रोजन, कार्बन, फॉसफोरस आदि में टूटकर वायुमण्डल में फैल जाती है। ब्रेड बनाने, बीयर, (Beer) शराब निकालने और पनीर तैयार करने में फफूंदी को प्रयोग में लाया जाता है। कार्बनिक तेजाब (Organic Acids), पाचक रस (Enzymes), विटामिन (Vitamins) और ऐन्टीबायोटिक्स (Antibiotics) बनाने में भी फफूंदी का प्रयोग होता है। एक हरे नीले रंग की फफूंदी पेनसीलियम से पेनसीलीन बनाई जाती है, जो बहुत सी बीमारियों के इलाज के लिए काम आती है। कुछ फफूंदियों को भोजन की तरह खाया भी जाता है, जैसे कुकरमुत्ता, गोरल्स, ट्रफिल्स आदि।

फफूंदी से होने वाली हानियों में अनेकों बीमारियां आती हैं। दाद, एक प्रकार की फफूंदी से ही होता है। कुछ फफूंदी हमारी फसलों को भी नष्ट कर जाती हैं। फफूंदी पेड़-पौधों में भी बहुत से रोग फैलाती है।



विटामिन हमारे लिए क्यों जरूरी हैं?

जिस प्रकार भोजन में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, चिकनाई, जल, लवण और खनिज जरूरी हैं, उसी प्रकार हमारे शरीर को सामान्य रूप से चलाने के लिए इसमें विटामिन का होना भी जरूरी है। विटामिनों की कमी से बहुत सी बीमारियां हो जाती हैं। पाचन-शक्ति का कम हो जाना, रात में दिखाई न देना, कमजोरी, थकान, त्वचा का खुश्क होना, मसूढ़ों का सूजना, हड्डियों का कमजोर हो जाना आदि ऐसे रोग हैं, जो विटामिनों की कमी से पैदा हो जाते हैं।

विटामिन क्या हैं? विटामिन शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के विटा शब्द से सन् 1912 में हुई, जिसका अर्थ है 'जीवन'। वास्तव में विटामिन एक कार्बनिक पदार्थ है, जो बहुत से भोज्य पदार्थों में मिलते हैं और शरीर को सामान्य रूप से चलाने के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। विटामिन कई प्रकार के होते हैं और उनकी कमी से हमारे शरीर में अलग-अलग प्रभाव पड़ते हैं। वैसे तो अब तक लगभग बीस प्रकार के विटामिन खोजे जा चुके हैं, लेकिन छः विटामिन मुख्य हैं। ये विटामिन A, B, C, D, E और K (P) हैं।

विटामिन 'A' : यह मुख्य रूप से मक्खन, क्रीम, दूध, पनीर, अंडा, मछली का तेल, बंदगोभी आदि में होता है। शरीर के विकास के लिए यह अत्यन्त जरूरी है। इसकी कमी से रात में दिखाई न देने की बीमारी हो जाती है। यह शरीर की त्वचा को छूत की बीमारियों से और आंखों के कई रोगों से बचाता है।

विटामिन 'B' : इसमें इसी नाम से कई विटामिन शामिल हैं। इन्हें इनके रासायनिक नाम से जाना जाता है। इनकी संरचना और काम भी अलग-अलग हैं। ये इस प्रकार हैं:—

(i) विटामिन 'B^1' (Thiamine): यह खमीर (Yeast), गेहूं के अंकुर और सुअर के मांस में मिलता है। इसकी कमी से बेरी-बेरी (Beri-beri) नाम का रोग हो जाता है। इसकी कमी से थकान, कमजोरी, सांस लेने में कठिनाई और अपच आदि व्याधियां उत्पन्न हो जाती हैं। यदि खाने के सोडे के साथ भोजन पकाया जाय तो यह नष्ट हो जाता है।

(ii) विटामिन 'B_2'(Riboflavin): यह मुख्य रूप से दूध, अंडा और जिगर में मिलता है। इसकी कमी से सारे शरीर में कमजोरी, चर्मरोग,जीभ में घाव, होठों पर दरारें आदि हो जाते हैं। आंख की रोशनी पर भी बुरा प्रभाव पड़ने लगता है। उनमें धुन्ध, लाली व जलन हो सकती है।

(iii) विटामिन 'B_6'(Nicotinic Acid or Niacin): यह खमीर,अनाज के छिलकों, अंडे, मांस, गुर्दे, और जिगर में अधिक मात्रा में मिलता है। यह मैदा, पालिश किया हुआ चावल, फल, हरी तरकारियां तथा दूध में भी अपेक्षाकृत कम मात्रा में पाया जाता है। इसकी कमी से पेलेग्रा (Pellagra) नामक रोग पैदा हो जाता है। मानसिक दबाव रहता है। जीभ,आंतों की झिल्ली, तालू और मसूड़ों पर सूजन आ जाती है। भूख कम लगती है और शरीर निर्बल हो जाता है।

(iv) विटामिन 'B_7': यह अंडा, मांस, दूध पनीर, फल तथा हरी शाक-सब्जियों से प्राप्त होता है। यह मुख की सतह, जीभ तथा मसूढ़ों को स्वस्थ रखता है। इसकी कमी के कारण आमाशय और आंतों की सबसे अंदर की परत खराब हो जाती है, जिसके कारण पाचन-क्रिया में दोष उत्पन्न हो जाते हैं।

(v) विटामिन 'B_{12}': यह दूध, मांस, जिगर आदि में पाया जाता है। संतुलित आहार के द्वारा यह पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हो सकता है। इसकी कमी से रक्तहीनता (Anaemia), पीड़ा, भुजाओं में कड़ापन तथा आंशिक पक्षाघात (Paralysis) भी हो सकता है। लाल रक्त कोशिकाओं के निर्माण के लिए विटामिन B^{12}, फोलिक अम्ल (Folic Acid) और विटामिन C का होना जरूरी है। अत्यधिक रक्तहीनता की दशा में यह विटामिन इंजेक्शन द्वारा दिया जाता है।

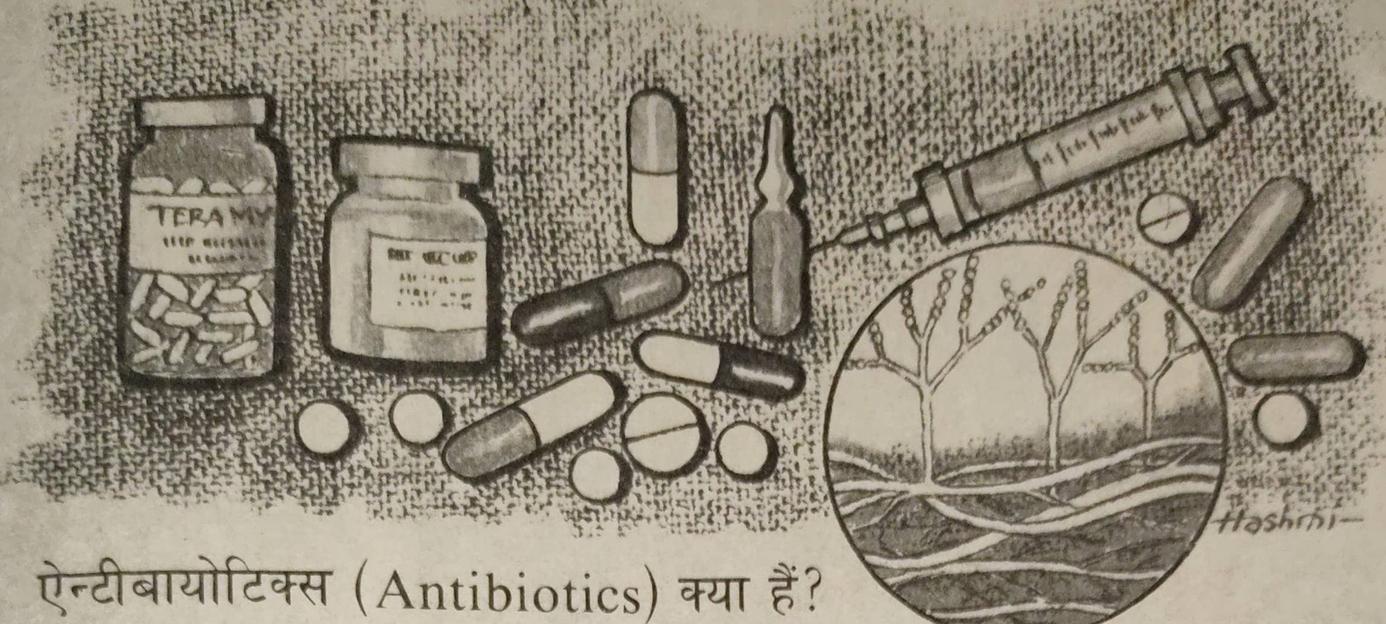
विटामिन 'C': (Ascorbic Acid): यह संतरा, नींबू, अंगूर, टमाटर, अन्नानास, आंवला, अंकुरित दालों और हरी सब्जियों में अधिक मिलता है। यह नाशपाती, बेर, केला आदि में भी मिलता है। इसकी कमी से निर्बलता जोड़ों में दर्द तथा स्कर्वी रोग हो जाता है। मसूढ़ों का फूलना, मस्तिष्क दुर्बल होना, आलस्य, कमजोरी, थकान का होना, पैरों में पीड़ा होना, आंखों की चमक का खत्म होना, शरीर पर नीले दाग पड़ना और त्वचा का उखड़ना आदि व्याधियां भी इसकी कमी से उत्पन्न हो जाती हैं।

विटामिन 'D' : यह दूध, मक्खन, मछली के तेल, अंडे की जरदी आदि में होता है। सूरज की धूप शरीर पर पड़ने से त्वचा के अंदर विटामिन डी बनता है। इसकी कमी से रिकैट नामक बीमारी हो जाती है।

विटामिन 'E' : यह अनाज के दानों और तेल में होता है। प्याज में विटामिन E काफी मात्रा में पाया जाता है।

विटामिन 'K' : यह हरी पत्तीदार सब्जियों में होता है। आमतौर पर अंतड़ियों में मौजूद जीवाणु इसे बना लेते हैं। कट जाने से खून का बहना इसी विटामिन द्वारा बंद होता है।

यदि हम संतुलित भोजन लें तो ये सभी विटामिन हमें मिल जाते हैं। आजकल सभी विटामिन औषधि के रूप में भी बाजार में मिलते हैं।



ऐन्टीबायोटिक्स (Antibiotics) क्या हैं?

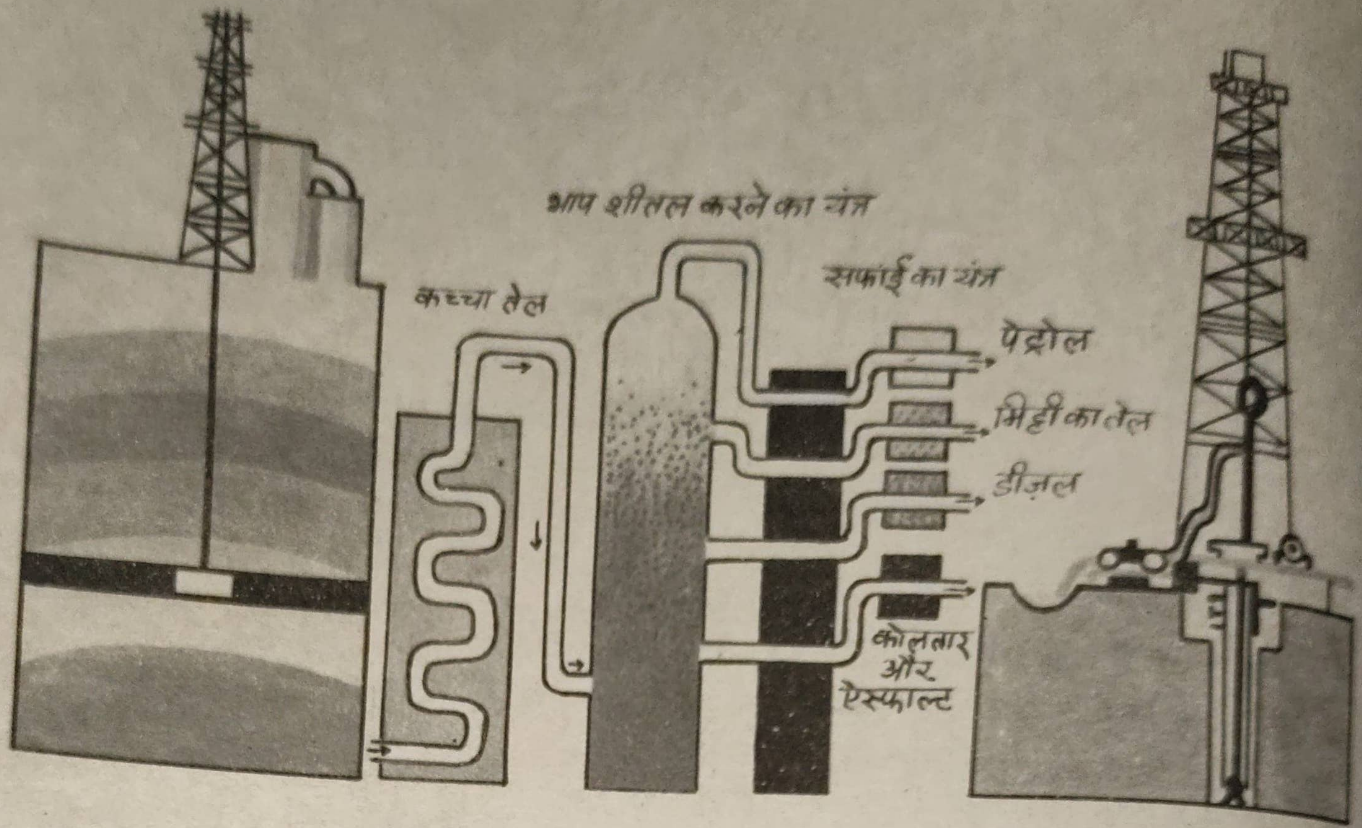
ऐन्टीबायोटिक्स विशेष प्रकार की औषधियां हैं, जो हमारे शरीर में रोग पैदा करने वाले कीटाणुओं का विनाश करती हैं। ये रोग से लड़ने में हमारे शरीर की मदद करती हैं। आजकल अनेक बीमारियों का इलाज करने के लिए इन औषधियों को प्रयोग में लाया जाता है।

ऐन्टीबायोटिक्स शब्द ऐन्टीबायोसिस से बना है। 1880 में इसका प्रयोग एक जीवित प्राणी द्वारा दूसरे जीवित प्राणी को नष्ट करने के अर्थ में किया जाता था। आजकल ऐन्टीबायोटिक्स का अर्थ सूक्ष्म जीवाणुओं के शरीर से प्राप्त रासायनिक पदार्थों (Chemical Substances) से है, जो दूसरे सूक्ष्म जीवाणुओं को नष्ट कर दे सकते हैं। सर्वप्रथम ऐन्टीबायोटिक्स शब्द का प्रयोग सन् 1942 में किया गया था। सबसे पहले ऐन्टीबायोटिक्स औषधि पेनिसिलीन थी, जो निमोनिया, खांसी, गले की सूजन, फोड़े फुन्सियों का इलाज करने में बहुत ही प्रभावशाली सिद्ध हुई। स्ट्रैप्टोमाइसीन एक दूसरी ऐन्टीबायोटिक औषधि है, जो तपैदिक के इलाज के लिए प्रयुक्त होती है। इसके अलावा ऐम्पिसिलीन, टेट्रासाइकिलीन, क्लोरोमाइसेटीन आदि अनेक ऐन्टीबायोटिक औषधियां हैं, जो बहुत सी बीमारियों को समाप्त करने के लिए प्रयोग में लाई जाती हैं। जब शरीर में ऐन्टीबायोटिक को इन्जैक्शन द्वारा या कैपसूल द्वारा प्रवेश कराया जाता है, तो ये रोग फैलाने वाले अनेक सूक्ष्म जीवाणुओं को नष्ट कर देते हैं।

क्या तुम जानते हो कि ऐन्टीबायोटिक्स किससे बनाई जाती है? अधिकतर ऐन्टीबायोटिक्स जीवाणुओं और फफूंदियों से बनाई जाती ... अभी तक पूरी तरह से वैज्ञानिकों को यह पता नहीं है कि ऐन्टीबायोटिक्स किस प्रकार से रोगों के कीटाणुओं को समाप्त करती है। कुछ वैज्ञानिकों का विचार है कि ऐन्टीबायोटिक शरीर में पहुंच कर रोग के कीटाणुओं तक आक्सीजन नहीं पहुंचने देती और आक्सीजन की अनुपस्थिति में रोग के कीटाणु मर जाते हैं। कुछ वैज्ञानिकों की धारणा है कि ऐन्टीबायोटिक्स रोग के कीटाणुओं को शरीर से भोजन नहीं लेने देती हैं। ऐन्टीबायोटिक्स का काम करने का तरीका चाहे कुछ भी हो, लेकिन यह एक सत्य है कि ये औषधियां मानब जाति के लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुई हैं। इनके प्रयोग से संसार में हर वर्ष लाखों बीमार लोगों को जीवन प्राप्त होता है।

आजकल ऐन्टीबायोटिक्स का महत्त्व बहुत बढ़ गया है। 1930 में अमेरिका में निमोनिया से मरने वालों की संख्या 20% से 85% तक थी। 1960 में यही संख्या 5% रह गई। इसी तरह टाइफाइड से मरने वालों की संख्या 10% से कम होकर 2% रह गई है। इनके द्वारा छूत की बीमारियों को भी रोका जा सकता है। गले क' रोग, गठिया-बुखार (Rheumatic Fever), यौन रोग (Venereal diseases) आदि को भी रोका जा सकता है।

ऐन्टीबायोटिक्स का शरीर पर कुप्रभाव भी हो सकता है। अधिक संवेदनशीलता के कारण त्वचा के ऊपर दाग उभर सकते हैं। कभी-कभी रोग के जीवाणुओं पर इनका असर भी नहीं होता।



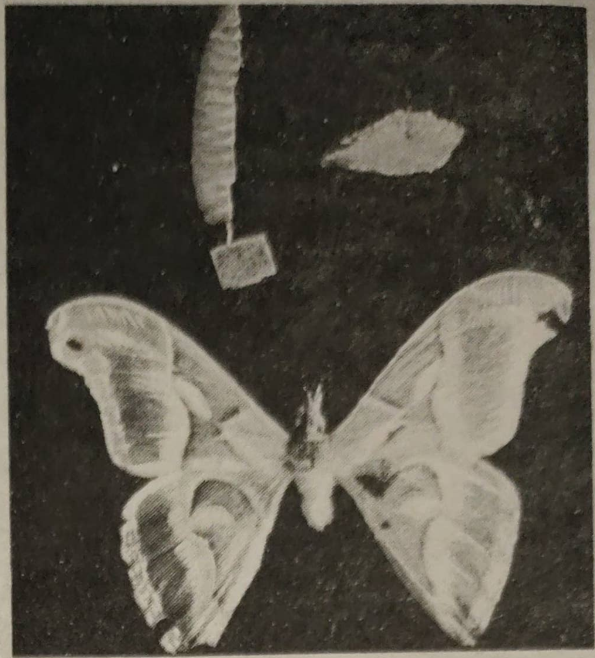
पेट्रोल कैसे प्राप्त होता है?

पेट्रोल आज मानव जाति की सबसे अधिक सेवा कर रहा है। इसके प्रयोग से बस, कार, स्कूटर, ट्रैक्टर, हवाई जहाज, पानी के जहाज आदि चलते हैं। इससे हमें ऊर्जा प्राप्त होती है। मानव जीवन के लिए पेट्रोल बहुत ही आवश्यक वस्तु बना हुआ है। क्या तुम जानते हो कि पेट्रोल हमें कैसे प्राप्त होता है?

पेट्रोल हमें एक काले और गाढ़े तरल पदार्थ से मिलता है, जिसे पेट्रोलियम कहते हैं। पेट्रोलियम लैटिन भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है चट्टानों से निकलने वाला तेल। पेट्रोलियम जमीन के अंदर से निकाला जाता है। क्या तुम जानते हो कि यह तेल जमीन के अंदर कैसे बनता है? यह एक बड़ा दिलचस्प विषय है। हज़ारों लाखों साल पहले पौधे और जानवर जमीन के अंदर पृथ्वी की उथल-पुथल के कारण दब गए होंगे। अत्यंत दबाव और गर्मी के कारण यही मृत पौधे और जानवर पेट्रोलियम में बदल गए। मनुष्य ने समुद्र के अंदर पेट्रोलियम के ऐसे भंडार का पता लगाया और समुद्र की चट्टानों से इस काले तरल पदार्थ को निकालना शुरू कर दिया।

पेट्रोलियम के कुएं होते हैं, जिनमें से कच्चा तेल निकाला जाता है। इस तेल में पेट्रोल, नैपथा, कैरोसिन, डीज़ल, मोम, पिच आदि चीज़ें होती हैं। कच्चे तेल को साफ करने के लिए कारखानों में लाया जाता है। इन कारखानों को पेट्रोल रिफाइनरीज़ (Petrol Refineries) कहते हैं। कच्चे तेल को बड़े-बड़े बेलनाकार बर्तनों में डालकर गर्म किया जाता है। अलग-अलग तापमान पर कच्चे तेल में उपस्थित चीज़ें अलग-अलग पाइपों द्वारा निकाल ली जाती हैं (ऊपर का चित्र देखें)। इस प्रकार पेट्रोलियम का एक हिस्सा पेट्रोल के रूप में प्राप्त हो जाता है।

वैज्ञानिकों ने पेट्रोल बनाने के कुछ कृत्रिम तरीके भी विकसित कर लिए हैं। इन तरीकों से बनाया गया पेट्रोल महंगा पड़ता है। पेट्रोल संसार के बहुत से देशों में मिलता है। पेट्रोल का सबसे अधिक उत्पादन अरब देशों, अमेरिका और रूस में होता है।



रेशम कैसे बनाया जाता है ?

रेशम के नाम से हम सब भली-भांति परिचित हैं। इससे बने मुलायम और पतले कपड़ों को पहन कर मन प्रसन्न हो जाता है। रेशम से इतना अधिक पतला कपड़ा बनाया जा सकता है कि इसका एक थान एक छोटी सी अंगूठी में से निकाला जा सकता है। क्या तुम जानते हो कि रेशम किस प्रकार बनाया जाता है?

तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि रेशम के धागे को एक छोटा सा कीड़ा तैयार करता है, जिसे रेशम का कीड़ा (Silk worm) कहते हैं। यह कीड़ा अपने रहने के लिए अपने ही शरीर पर गोले के आकार का घर बनाना शुरू करता है। जब गोला बड़ा हो जाता है, तो उससे रेशम प्राप्त करने के लिए उसे गर्म पानी में डाल दिया जाता है, जिसमें कीड़ा तो मर जाता है और उसके गोले से रेशम बनाया जाता है। यदि इस कीड़े को और भी बढ़ने दिया जाए तो यही कीड़ा तितली के रूप में बदल जाता है।

लगभग चार हज़ार साल पहले रेशम बनाने की कला चीन के लोगों को पता थी। इसके विषय में एक दिलचस्प कहानी प्रचलित है। कहा जाता है कि चीन की रानी 'सी लिंग शी' ने एक बार गलती से रेशम के एक कीड़े को हाथ धोने वाले बर्तन में डाल दिया। अगले दिन उसने देखा कि बर्तन में से रेशम के रेशे निकल रहे हैं। इससे प्रभावित होकर उसने रेशम के कीड़ों को पालना आरम्भ कर दिया और उनके द्वारा तैयार रेशम को बुनाई के काम में लाना शुरू कर दिया। कई साल तक चीन के लोगों ने रेशम के कीड़ों का रहस्य छुपाए रखा। दुनिया भर के व्यापारियों को रेशम खरीदने के लिए चीन जाना पड़ता था। रेशम के कीड़ों का रहस्य सबसे पहले तीसरी शताब्दी में जापानी लोगों को पता लगा। 550 ई० के आसपास बायजैन्टियम के राजा जुस्टीनियन ने अपने दो जासूसों को चीन भेजा। ये जासूस लौटते समय एक बांस की नली में रेशम के कीड़ों के अंडे छुपाकर ले आए। इसके बाद रेशम के कीड़े पालने और उनसे रेशम प्राप्त करने की कला सारे संसार में धीरे-धीरे फैल गई।

आज चीन, जापान, भारत, फ्रांस, स्पेन और इटली जैसे देशों में रेशम के कीड़े पाले जाते हैं और उनसे रेशम प्राप्त किया जाता है। गर्मी की शुरुआत में मादा शहतूत के पत्तों पर पांच सौ के लगभग अंडे देती है, जो पत्तियों से चिपक जाते हैं। दस दिन के अंदर इन अंडों से लार्वा निकल आता है। इनकी सावधानी से जांच की जाती है और रोगी कीड़ों को अलग करके नष्ट कर दिया जाता है। स्वस्थ कीड़ों को शहतूत की पत्तियों पर पाला जाता है। इनके मुंह के एक छोटे से छिद्र द्वारा एक रस निकलता है, जिससे रेशम का धाग बनाता है। 25 दिन के अंदर-अंदर ये कीड़े रेशम का गोला दे देते हैं। इनके वज़न का पांचवां हिस्सा रेशम होता है। इन कीड़ों को गर्म पानी में डालकर मार दिया जाता है और गोले से रेशम कात लिया जाता है। एक गोले में रेशम का एक लम्बा धागा होता है। जिसकी लम्बाई 500 से 1300 मीटर तक होती है।

आज सारे संसार में खूबसूरती व बारीकी के लिए इटली का रेशम सर्वश्रेष्ठ माना जाता है।



जेल की शुरुआत कैसे हुई ?

आधुनिक विचारधारा के अनुसार जेल उस स्थान को कहते हैं, जहां कानूनी व्यवस्था को भंग करने वाले स्त्री और पुरुषों को सींखचों में बंद करके रखा जाता है। जेल की यह परिभाषा 19वीं शताब्दी में ही बनी। इससे पहले तो विद्वान और महत्त्वपूर्ण लोगों को बदले की भावना से अधिकारी वर्ग जेलों में डाल दिया करते थे। केवल 19वीं शताब्दी में ही जेलों का प्रयोग कानून तोड़ने वाले लोगों को सजा देने के लिए शुरू हुआ।

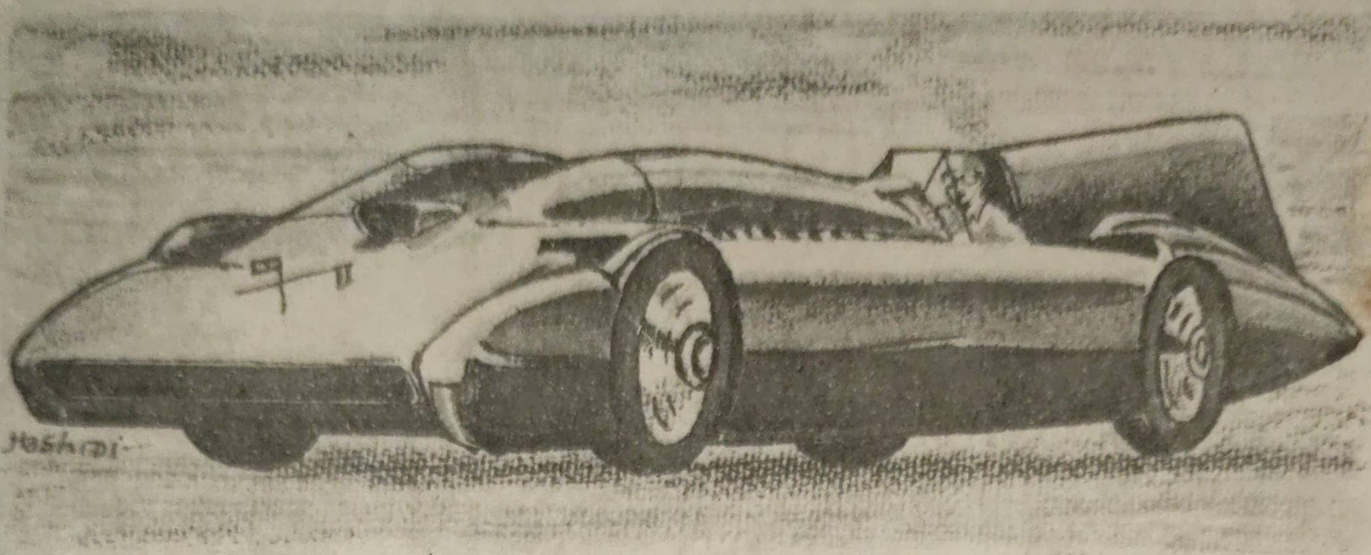
सबसे पहले जेल 1403 में इंग्लैंड में बनाई गई, जो वहां के राजा के नियंत्रण में रहती थी।

शुरू में कानून तथा व्यवस्था को भंग करने वाले लोगों को सजा इसलिए दी जाती थी, ताकि वे सुधर सकें और इस प्रकार जेल जाने के भय से अपराधों को कम किया जा सके। जेलों में अपराधियों के साथ बड़ा ही यातनापूर्ण व्यवहार किया जाता था। धीरे-धीरे अधिकारी वर्ग ने यह देखा कि जेल के यातनापूर्ण व्यवहार से अपराधों में कोई कमी नहीं होती। इसके बाद परिणाम यह हुआ कि कुछ बड़े अपराधों के लिए जेल के बदले मौत की सजा देने की व्यवस्था कर दी गई।

इंगलैंड और यूरोप के कुछ अन्य देशों में 1550 के बाद ऐसी जेलें बनाई गईं, जहां भिखारियों, आवारा लोगों, कर्जदारों, घर को बर्बाद करने वाले लोगों और अपराधियों को रखा जाता था। बड़े अपराध करने वालों के लिए अलग जेलें बनाई गई थीं। इनमें से अधिकतर जेलें गंदी, अंधेरी व सीलन भरी होती थीं। यहां खाना अच्छा नहीं होता था। यहां कैदियों के साथ बुरा व्यवहार तो किया ही जाता था, उन्हें छोटे-छोटे कमरों में बुरी तरह ठूंस कर भर दिया जाता था। 18वीं शताब्दी के अन्त में कैदियों के लिए अच्छी जेलों और अच्छे व्यवहार की मांग की जाने लगी। समय के साथ-साथ जेलों का स्वरूप बदला और आज तो जेलों में काफी सुख सुविधा दी जाती है। वहां अपराधियों से नाना प्रकार के काम लिए जाते हैं। उन्हें आलसी बनाने के बजाए उनसे काम कराया जाता है। उन्हें सुधारने व सही रास्ते पर लाने के प्रयास किए जाते हैं। उनके लिए अलग-अलग काम सिखाने के लिए जेलों में प्रशिक्षण व्यवस्थाएं हैं। उनकी अच्छी डाक्टरों द्वारा देख-रेख की जाती है और उनको मनोरंजन की सुविधाएं भी दी जाती हैं।

भारत में जेलों की व्यवस्था पिछले हज़ारों सालों से है, लेकिन इन जेलों ने आधुनिक रूप कब लिया, इस विषय में कोई निश्चित जानकारी नहीं है। आजकल जेलों की व्यवस्था राज्य सरकारों के हाथ में है।

संसार की सबसे बड़ी जेल रूस की खारखोव जेल है। जहां एक साथ 40,000 कैदियों को रखा जा सकता है। सबसे छोटी जेल सार्क द्वीप में है, जिसमें केवल दो कैदियों को रखने की व्यवस्था है।



मोटर दौड़ की शुरुआत कैसे हुई?

दौड़ने की प्रतियोगिताओं का शौक मनुष्य को शुरू से ही रहा है। मध्ययुग में वह जानवरों पर बैठकर दौड़ प्रतियोगिताएं करता था और जब पहिए का आविष्कार हो गया, तो उसे साइकिल दौड़ का एक शानदार माध्यम मिल गया। कार के आविष्कार के बाद तो इस तरह की प्रतियोगिताओं में जबर्दस्त गति और रोमांच पैदा हो गया।

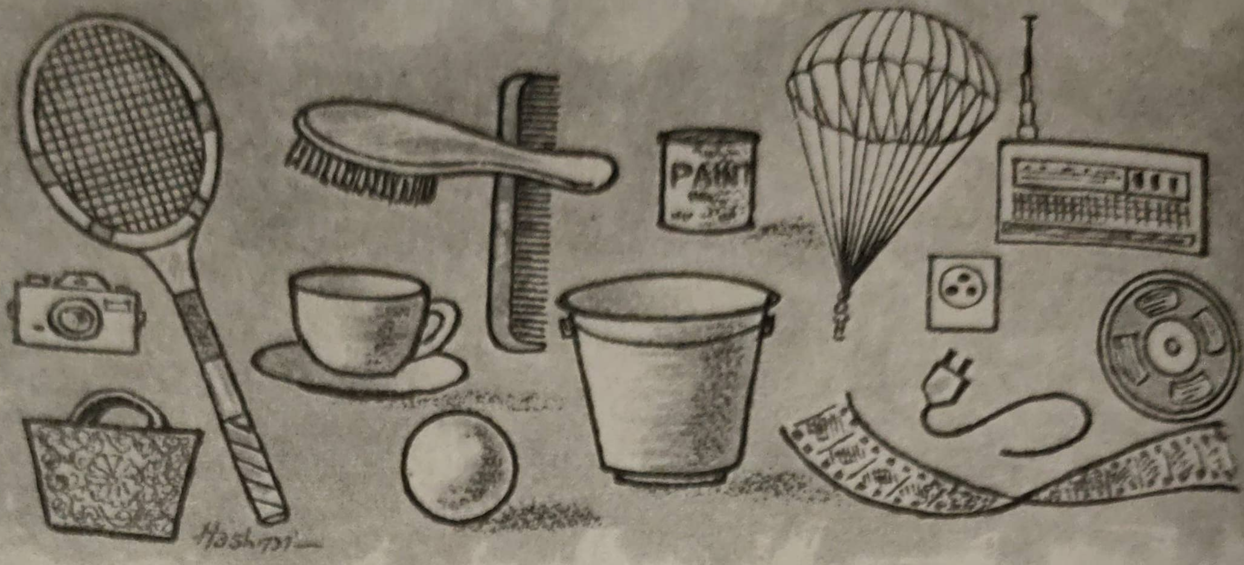
पहली मोटर दौड़ 22 जुलाई 1894 को 8 बजे शुरू हुई थी। इस दौड़ में 21 कारों ने हिस्सा लिया। यह दौड़ पेरिस से रोइन तक हुई। वास्तव में यह एक नुमाइशी दौड़ थी। वास्तविक मोटर दौड़ 11 जून 1895 में हुई, जो पेरिस से बोर्दे (Bordeaux) तक थी। यह 1178 कि० मी० (732 मील) लम्बी दौड़ थी। इसके बाद अधिकतर कार दौड़ें गोल चक्करों में होने लगीं।

विश्व की सबसे पुरानी मोटर रेस, जो आज भी जारी है, 14 सितम्बर 1905 को शुरू हुई थी। यह रेस आई० ए० सी० टूरिस्ट ट्राफी के लिए आज भी हर साल होती है। एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप की सबसे पुरानी रेस 9 मई 1906 को सिसली में हुई थी, लेकिन 26 व 27 जून 1906 से शुरू हुई फ्रांसीसी ग्रांड प्री (Grand Prix) प्रतियोगिता ही आज तक जीवित रह सकी है।

दुनिया की पहली सबसे तेज़ मोटर रेस 8 फरवरी 1964 को अमेरिका में हुई, जहां उत्तरी कैरोलिना के 'रिचार्ड पैरी' (Richard Peri) ने 80 किलोमीटर की दूरी को 275 किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार से 17 मिनट 27 सेकण्ड में पूरा किया। फ्रांस के फ्रांकोइस लेकट (Francois Lecket) ने तो एक अनूठा कीर्तिमान ही कायम किया। 22 जुलाई 1935 से 26 जुलाई 1936 के बीच के 370 दिनों में से 363 दिनों तक उसने कार चलाई और इस दौरान उसने 4 लाख किलोमीटर की दूरी तय की। फ्रांस के ही आठ लोगों ने मार्च से जुलाई 1933 के बीच लगभग 93 किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार से 133 दिन 17 घंटे 37 मिनट व 38.6 सेकण्ड में 29,6566.4 किलोमीटर (185353 मील 1741 गज) की दूरी तक कार चलाई।

24 जून 1911 में अर्जेंटीना में जन्मे जुआन मैनुअल फैंगिओ (Juan Manuel Fangio) को विश्व का सबसे ज्यादा सफल कार चालक माना जाता है। 1858 में कार रेस में अवकाश लेने के समय तक वह 24 मुकाबले जीत चुका था।

कार दौड़ के कई लाभ हैं। कार दौड़ में जीतने वाले लोग जगह-जगह प्रसिद्ध हो जाते हैं। उन्हें जीत के परिणामस्वरूप इनाम के रूप में धन की भी प्राप्ति होती है। सबसे बड़ा फायदा कार बनाने वाली उस कम्पनी को होता है, जिसकी बनाई हुई कार दौड़ में प्रथम आती है। उस कम्पनी का कारों का विज्ञापन मुफ्त में ही हो जाता है।

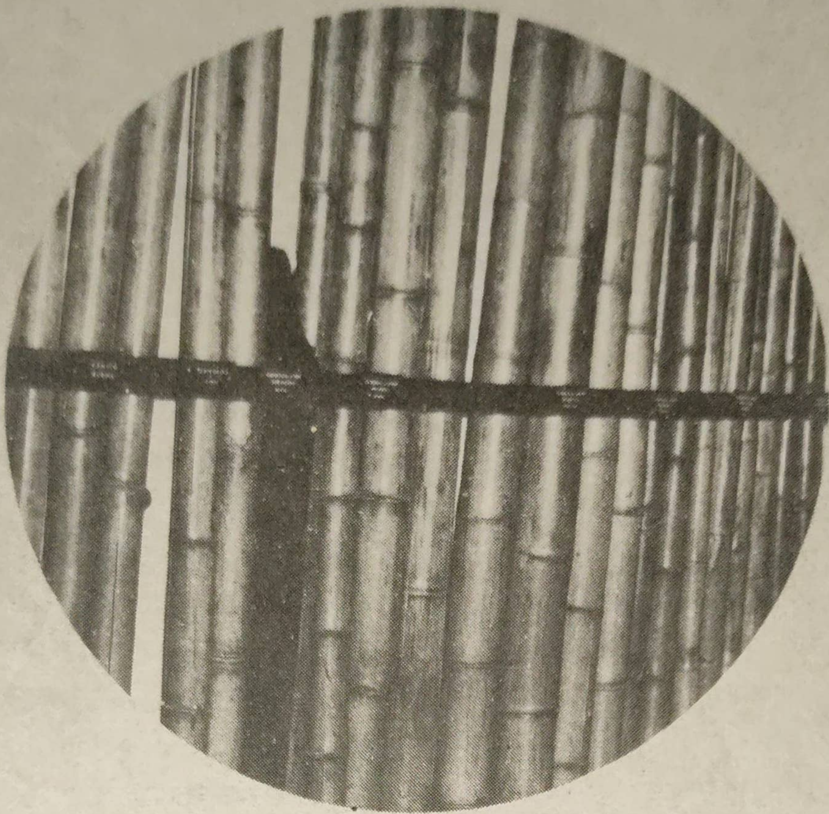


प्लास्टिक का आविष्कार कैसे हुआ?

प्लास्टिक शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के प्लास्टिकोज़ (Plastikos) शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है बनाना। प्लास्टिक ऐसा कृत्रिम पदार्थ है, जिसे आसानी से मोड़ा जा सकता है और गर्म करके किसी भी रूप में ढाला जा सकता है। यह सरल कार्बनिक और रासायनिक पदार्थों के मिलाने से बनता है। प्लास्टिक कई प्रकार का होता है। आजकल पारदर्शी से लेकर लगभग सभी रंगों के प्लास्टिक का निर्माण होने लगा है। प्लास्टिक का आविष्कार सन् 1862 में इंगलैंड के अलेक्जैन्डर पार्केस (Alexander Parkes) ने किया था। उन्हीं के नाम पर उन दिनों प्लास्टिक का नाम पार्केजाइन (Perkesine) था। वास्तव में यह प्लास्टिक नाइट्रोसेल्यूलोस (Nitrocellulose) से बनाया था, जिसको तेल और कपूर मिलाकर मुलायम बना दिया गया था।

सबसे पहले व्यावसायिक पैमाने पर प्लास्टिक का निर्माण 1910 में लियो हेन्ड्रिक बैकलैंड (Leo Hendrick Backeland) ने किया था। इन्होंने फीनोल (Phenol) और फार्मलडीहाइड (Formaldehyde) से प्लास्टिक बनाया था। इसके बाद प्लास्टिक के उत्पादन के नये-नये तरीकों का विकास किया गया। आज ऐसे बहुत से पदार्थ ढूंढे गए हैं, जिनसे भांति-भांति के प्लास्टिक बनाए जाते हैं।

प्लास्टिक हमारे लिए इतना उपयोगी सिद्ध हुआ है कि आज वह हमारे जीवन का एक अंग बन गया है। इसके उपयोगों का जितना वर्णन किया जाए उतना ही थोड़ा है। पारदर्शी प्लास्टिक से लेंस और वायुयानों की खिड़कियां बनाई जाती हैं। पौलीथिन बैग जिसका इस्तेमाल हर क्षेत्र में किया जाता है, प्लास्टिक का ही एक रूप है। घर में काम आने वाली वस्तुएं जैसे बाल्टी, प्याले, ब्रुश, कंघा, टोकरी, रेडियो और ट्रांजिस्टर के कैबिनेट, चाय छानने की छलनी, आदि सभी चीज़ें प्लास्टिक से बनने लगी हैं। प्लास्टिक से बने खिलौने और खेलों का समान आजकल सभी जगह मिलते हैं। टैरेलीन के कपड़ों का धागा प्लास्टिक से ही बनाया जाता है। आज वैज्ञानिकों ने ऊष्मा अवरोधक (Heat Insulator) प्लास्टिकों का निर्माण कर लिया है। फोम से बने गद्दे, रेल, मोटरगाड़ियों और हवाई जहाज़ों की सीटें भी प्लास्टिक द्वारा बनने लगी हैं। अब तो शल्य चिकित्सा में भी प्लास्टिक का प्रयोग होने लगा है। आज जीवन का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है, जिसमें प्लास्टिक प्रयोग में न लाया जा रहा हो।



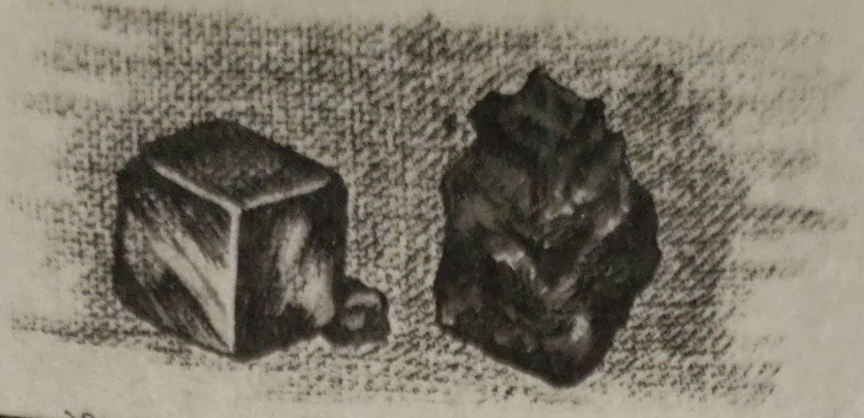
बांस वृक्ष है या घास?

अधिकांश लोग यह सोचते हैं कि ब्रांस झाड़ी या पेड़ों के वर्ग में आता है, लेकिन वास्तव में बांस एक किस्म की घास है। यह एक बड़ी ही दिलचस्प् बनस्पति है। यदि इसे बिना रुके बढ़ने दिया जाए तो इसकी ऊंचाई 120 फुट तक पहुंच सकती है। इसका मुख्य तना जमीन के भीतर रहता है। इसी से हवा में रहने वाली बांस की शाखाएं निकलती हैं।

बांस की बहुत सी किस्में होती हैं। अबतक लगभग इसकी 500 किस्मों का अध्ययन किया जा चुका है। सभी किस्म के बांस के तने चिकने और जोड़दार होते हैं। इससे ये तने सख्त और मजबूत हो जाते हैं। सभी बांसों की बढ़ने की गति बहुत तेज होती है। अधिकांश बांस हर साल फलते हैं, लेकिन कुछ ऐसे भी बांस होते हैं, जो सौ साल में तीन चार बार ही फलते हैं। बांस हमारे लिए बहुत ही उपयोगी है। इसके उपयोगों की गिनती करना लगभग असम्भव है। बांस का प्रयोग मकानों की छतों, झोंपड़ियों और दीवारों के निर्माण में होता है। इससे चटाइयां और टोकरियां बनाई जाती हैं। जापान में माली बांसों की गांठों को हटाकर पानी के पाइप के रूप में प्रयोग करते हैं। बांस से कागज़ बनाया जाता है। कई देशों में तो लोग हरे बांस को सब्जी के रूप में प्रयोग करते हैं। इसे मछली पकड़ने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। दुश्मनों से रक्षा करने के लिए बांस की लाठी बनाई जाती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि बांस जो एक प्रकार की घास है, हमारे जीवन के लिए बहुत ही उपयोगी है।

बांस सबसे अधिक मात्रा में दक्षिण पूर्व एशिया, भारतीय महाद्वीप और प्रशांत महासागर के द्वीपों पर पाए जाते हैं।

कुछ जाति के बांसों की कच्ची कोंपलों में एक विष होता है, जो शीघ्र ही गैस में परिवर्तित हो जाता है। इसी प्रकार कुछ बांसों की शाखाओं में सिलका होता है। इन शाखाओं के टुकड़े काटकर दवाइयां बनाने के काम में लाते हैं।



यूरेनियम धातु क्या है?

यूरेनियम एक आश्चर्यजनक गुणों वाली धातु है, जो मानव जाति के लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुई है। इससे एक प्रकार की किरणें निकलती रहती हैं, जो मानव जाति के लिए बहुत ही उपयोगी हैं। इन किरणों को रेडियो किरणें (Radio-active rays) कहते हैं। यही एक ऐसी धातु है, जिसको प्रयोग में लाकर मनुष्य ने परमाणु बम (Bomb) का निर्माण किया है।

यूरेनियम धातु की खोज सन 1789 में मार्टिन हैनरिक क्लाप्रौथ (Martin Heinrich Klaproth) नामक वैज्ञानिक ने पिच ब्लैन्डे (Pitch Blende) नामक खनिज से की थी। उन्होंने इसका नाम यूरेनिट (Uranit) रखा, लेकिन एक वर्ष बाद क्लाप्रौथ महोदय ने इसका नाम बदल कर यूरेनस (Uranus) ग्रह के नाम पर यूरेनियम (Uranium) रख दिया। 18वीं सदी के अंत तक इस तत्त्व के कई यौगिक वैज्ञानिक लोग बना चुके थे। 1896 में हैनरी बैकरल (Henry Bacqerel) ने यूरेनियम से रेडियो एक्टीविटी (Radio-activity) का पता लगाया।

यूरेनियम एक सफेद चमकदार रंग की धातु है। लेकिन वायुमण्डल के सम्पर्क में आने से इसका रंग काला पड़ जाता है। यह प्रकृति में मिलने वाली सबसे भारी धातु है। इसके एक क्यूबिक फुट (Cubic foot) टुकड़े का भार लगभग आधा टन होता है। शुरू-शुरू में यूरेनियम का प्रयोग रेशम और पोर्सलीन (Porcelain) के बर्तनों पर रंगाई करने के लिए होता था।

यूरेनियम के दो अद्भुत गुणों के कारण इसकी उपयोगिता आज संसार में बहुत बढ़ गई है। यूरेनियम की नाभिकों से निकलने वाली रेडियो किरणें हमारे लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुई हैं। इन किरणों को कृषि, उद्योग, जीवविज्ञान और चिकित्सा में प्रयोग किया जाता है। यूरेनियम का दूसरा उपयोग परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में हुआ है। सन 1938 में यूरेनियम के परमाणुओं पर न्यूट्रान (Neutrons) की बौछार करके नाभिकीय विखण्डन (Nuclear fission) की खोज की गई। नाभिकीय विखण्डन वह प्रक्रिया है, जिसमें यूरेनियम-235 के नाभिक पर न्यूट्रोनों की बौछार करके दो हिस्सों में तोड़ा जाता है। इसके फलस्वरूप बहुत अधिक ऊर्जा पैदा होती है। नाभिकीय विखण्डन की प्रक्रिया को प्रयोग में लाकर सन् 1945 में यूरेनियम से परमाणु बम बनाया गया। इस परमाणु बम जापान के हीरोशिमा नगर पर डाला गया। सदियों से बसने वाला शहर पलभर में तहस-नहस हो गया।

आज नाभिकीय विखण्डन की प्रक्रिया को ऊर्जा उत्पादन के लिए लगभग सभी देश प्रयोग में ला रहे हैं। आप को यह जानकर आश्चर्य होगा कि यूरेनियम के एक पौंड से इतनी ऊर्जा पैदा हो सकती है, जितनी कि 30 लाख पौंड कोयले को जलाकर पैदा होती है। इसलिए यूरेनियम के 235 द्रव्यमान संख्या वाले आइसोटोप (Isotope) को ऊर्जा उत्पादन के लिए परमाणु भट्टियों में प्रयोग करते हैं। परमाणु भट्टियों से पैदा हुई ऊष्मा से पानी को गर्म करके भाप बनाई जाती है। इस भाप से टरबाइन चलती है, जिसके फलस्वरूप बिजली पैदा की जाती है। यूरेनियम का उपयोग X-किरणों (X-rays) और गामा किरणों (v-rays) को अवशोषित करने में भी किया जाता है।

यूरेनियम पृथ्वी की पपड़ी में संयुक्त अवस्था में मिलता है। धरती की पपड़ी के 10 लाख भागों में चार यूरेनियम के होते हैं। चट्टानों में भी यूरेनियम यौगिक के रूप में मिलता है। पिच ब्लैन्ड यूरेनियम का ऐसा अयस्क (Ore) है, जिसमें दूसरे अयस्कों की तुलना में अधिक यूरेनियम होता है। अफ्रीका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, चैकोस्लोवाकिया, अमेरिका, पूर्वी अफ्रीका, इंगलैंड तथा भारत में यूरेनियम धातु के अयस्क मिलते हैं, जिनसे यूरेनियम प्राप्त की जाती है।



इंटरपोल (Interpol) क्या है ?

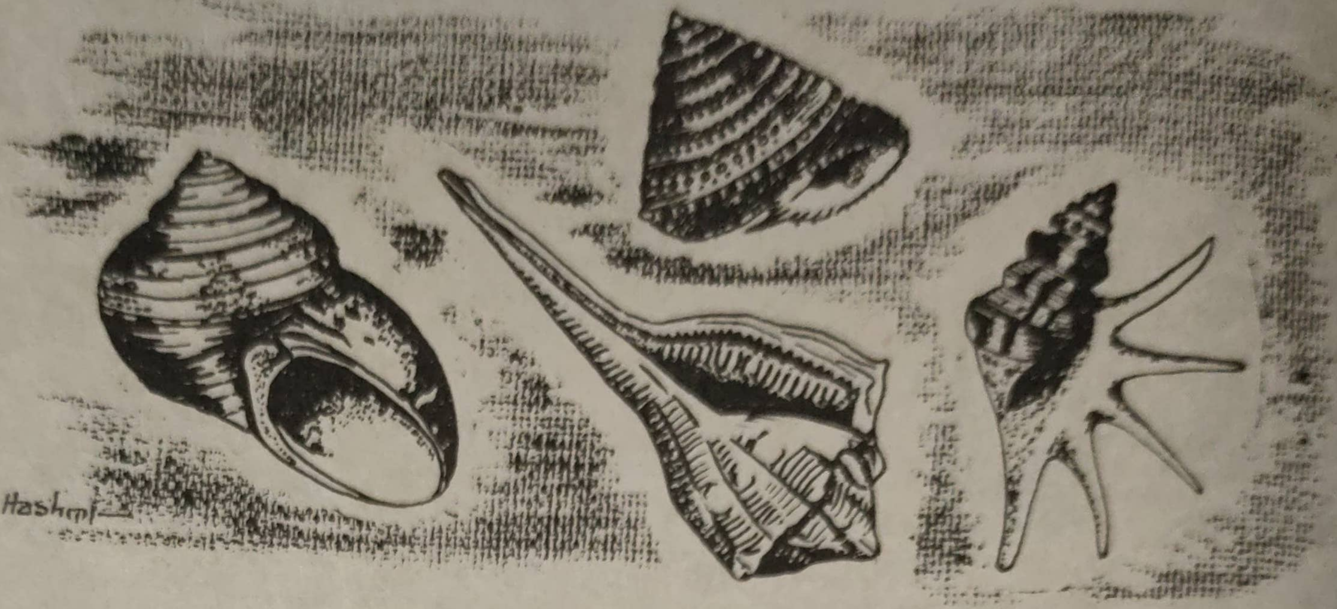
अन्तर्राष्ट्रीय आपराधिक पुलिस संगठन (International Criminal Police Organisation) को संक्षिप्त रूप में 'इंटरपोल' कहते हैं। वास्तव में यह विश्व के सौ से अधिक देशों की पुलिस का एक मिला जुला संगठन (Organisation) है, जो किसी भी राजनीति, धर्म और जातिपांति से अलग है। इसका मुख्य कार्यालय व सचिवालय फ्रांस की राजधानी पेरिस (Paris) में है। यूगोस्लाविया को छोड़कर और कोई दूसरा कम्यूनिस्ट देश, जैसे रूस आदि, इस संगठन का सदस्य नहीं है।

जब एक देश का अपराधी भागकर दूसरे देश में छिप जाता है, तो अंतर्राष्ट्रीय नियम के अनुसार पहले देश की पुलिस दूसरे देश में जाकर उसे नहीं पकड़ सकती। 'इटरपोल' ही ऐसे खतरनाक अपराधियों का पता लगाती है। हर देश में इंटरपोल के कुछ कर्मचारी होते हैं। विश्व की अलग-अलग देशों की राजधानियों में हर वर्ष इंटरपोल के प्रमुख अधिकारियों की बैठक होती है।

इंटरपोल की शुरुआत 1923 में यूरोप में हुई। पहले विश्व-युद्ध के बाद यूरोप में अपराधियों की संख्या काफी बढ़ गई। कुछ अपराधी आस्ट्रिया में मनमानी करते और पुलिस द्वारा पीछा किए जाने पर पड़ोसी देश में भागकर छिप जाते थे। अंतर्राष्ट्रीय नियम के अनुसार आस्ट्रिया की पुलिस दूसरे देश की सीमा में नहीं जा सकती थी। ऐसे अपराधियों को पकड़ने के लिए सन् 1923 में आस्ट्रिया की राजधानी वियना में पुलिस अध्यक्ष जोहान्न स्कोबर ने अपनी सरकार की अनुमति से कई देशों के पुलिस अधिकारियों की बैठक बुलाई। अपराधों की रोकथाम में सहयोग करने के लिए 20 देशों ने मिलकर इंटरपोल की स्थापना की थी। जिसका पहला मुख्य कार्यालय वियना में बनाया गया और स्कोबर को इसका अध्यक्ष बनाया गया था।

1938 में जर्मनी ने आस्ट्रिया पर हमला किया और इसी के साथ इंटरपोल का भी खात्मा हो गया। दूसरे विश्व युद्ध के दौरान इंटरपोल एक तरह से ठप्प रहा। इस विश्व युद्ध के बाद बेल्जियम पुलिस के इंस्पेक्टर जनरल 'क्लोरेन्ट लुवागे' ने इंटरपोल को फिर से जीवित किया। बेल्जियम में सुविधाओं की कमी के कारण इसका मुख्य कार्यालय नहीं बन पाया। इसका मुख्य कार्यालय पेरिस में बनाया गया। 1955 में लगभग 55 देश इंटरपोल के सदस्य बन चुके थे। 1956 में इंटरपोल का नया संविधान बनाया गया।

अपराधियों को पकड़ने के लिए इंटरपोल हर प्रकार के आधुनिक व वैज्ञानिक तरीकों को प्रयोग में लाता है। इस संगठन का काम केवल अपराधियों को पकड़ना है। किसी राजनैतिक, सैनिक अथवा धार्मिक गतिविधि में इसको काम में नहीं लाया जा सकता। भारत 1938 से इसका सदस्य है।



शंख कैसे बनते हैं?

मन्दिरों में आरती करते समय बजने वाले शंख की ध्वनि तुम सबने सुनी ही होगी। समुद्र और नदी के किनारे पर सम्भवतः तुमने छोटे-बड़े शंख देखे होंगे। कुछ शंख तो इतने छोटे होते हैं कि उन्हें देखने के लिए आवर्धक लेन्स की आवश्यकता होती है, जबकि कुछ इतने बड़े होते हैं कि इनकी लम्बाई चार फुट के लगभग होती है।

क्या तुम जानते हो कि ये शंख क्या हैं और कैसे बनते हैं? वास्तव में शंख एक प्रकार के बिना रीढ़ की हड्डी वाले समुद्री जीवों के शरीर के कड़े खोल हैं। इन जीवों को मौलस्क (Mollusc) कहते हैं। मौलस्क की 60,000 से अधिक किस्मों का अध्ययन अब तक किया जा चुका है। ये शंख मौलस्क के शरीर के खोल होते हैं। जैसे-जैसे मौलस्क का आकार बढ़ता है, वैसे ही वैसे यह खोल भी मजबूत और बड़ा होता जाता है। इन शंखों का निर्माण चूने से होता है। मौलस्क जीव समुद्र के पानी से चूना प्राप्त करके शंख के रूप में जमा करते जाते हैं। जब मौलस्क की मृत्यु हो जाती है, तो शंख तैरते हुए पानी की सतह पर आ जाते हैं। शंख के अलावा मौलस्क के खोल और भी कई प्रकार के होते हैं, जैसे सीपी, कौड़ी आदि भी कई प्रकार के मौलस्क के खोल हैं।

मौलस्क के खोल या शंख में मुख्य रूप से तीन परतें होती हैं। बाहर की परत सीप जैसे चिकने पदार्थ की बनी होती है। जिसमें चूना बिल्कुल नहीं होता। इसके नीचे की दूसरी परत चूने की बनी होती है। सबसे निचली तीसरी सतह हल्की-हल्की कई परतों का समूह होती है, जो सीप जैसे पदार्थ व चूने की बनी होती है। शंख कई रंगों के होते हैं। इन पर बहुत से धब्बे, रंग और धारियां मौलस्क ग्रंथियों में मौजूद कुछ रंग बिरंगे पदार्थों के कारण बन जाती हैं। इन रंगों और धारियों से शंखों की सुन्दरता और भी बढ़ जाती है।

शंख या खोल मौलस्क जीवों की तो रक्षा करते हैं, साथ ही ये हमारे लिए भी बहुत उपयोगी हैं। प्राचीन काल में तो लोग शंखों और कौडियों को मुद्रा के रूप में भी प्रयोग करते थे। छोटे-छोटे शंखों से गले के हार भी बनाए जाते हैं। शंखों से घर की सजावट की चीज़ें भी बनाई जाती हैं। छोटी-छोटी सीपों से बटन भी बनाये जाते हैं। खोल वाले ये समुद्री जीव लाखों-करोड़ों वर्षों से रहते आए हैं। उनके मरने के बाद उनके ये खोल समुद्र की तलहटी में जमा होते रहते हैं, जिनसे चूने की ठोस चट्टानें बनी हैं।

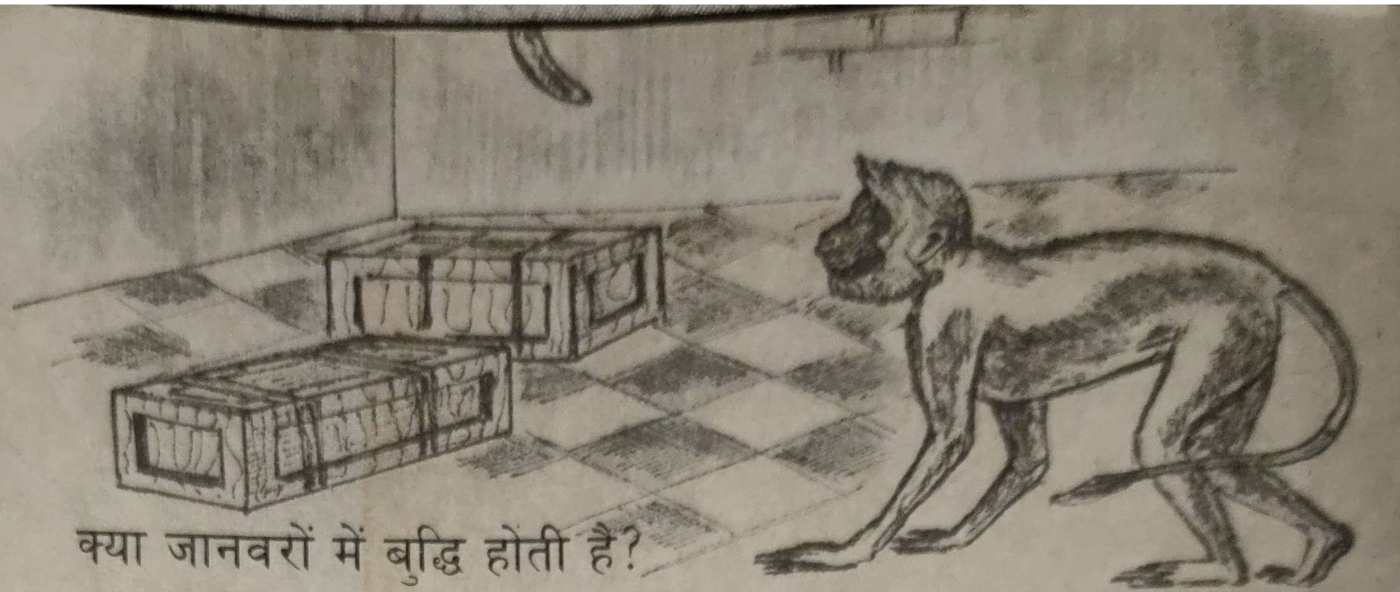


प्रवासी पक्षी रास्ता कैसे ढूंढते हैं?

प्रवासी पक्षी (Migrating Birds) उन पक्षियों को कहते हैं, जो प्रतिकूल मौसम आने पर एक देश छोड़कर दूसरे देश में चले जाते हैं। कई बार तो पक्षी एक महाद्वीप से उड़कर दूसरे महाद्वीप में जा बसते हैं। कुछ पक्षी सर्दी के मौसम में उन स्थानों की ओर उड़ जाते हैं, जहां पर मौसम थोड़ा गर्म होता है। इसका कारण यह है कि सर्दी वाले स्थानों पर पक्षियों का जीवित रहना मुश्किल हो जाता है। पक्षी आमतौर पर कीड़े-मकोड़े खाते हैं और जाड़ों की ऋतु में आमतौर पर कीड़े-मकोड़े जमीन के अंदर चले जाते हैं। अतः जाड़ों में पक्षियों को भोजन मिलना मुश्किल हो जाता है। इसलिए वे ठंडे स्थानों को छोड़कर गर्म स्थानों में चले जाते हैं। वसंत ऋतु आने पर ये पक्षी वापस लौट जाते हैं। ऐसा भी देखा गया है कि कुछ पक्षियों का समूह जमीन की निचली सतहों से जमीन की ऊंची सतहों की ओर चले जाते हैं। कभी-कभी पक्षी घनी आबादी वाले क्षेत्रों से समुद्र के किनारे चले जाते हैं। आखिर पक्षियों को कैसे पता चलता है कि मौसम बदल रहा है और आने वाली ऋतु उनके अनकूल नहीं है? पक्षियों को मौसम बदलने का पता दिन के छोटे या बड़े होने से लगता है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि पक्षी यह बता सकते हैं कि कब दिन छोटे होंगे और कब बड़े। कुछ पक्षियों में एक ग्रन्थि (Gland) होती है, जो उन्हें मौसम बदलने का ज्ञान कराती है।

अब प्रश्न यह है कि एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाने में और वापस आने में पक्षी अपना रास्ता कैसे ढूंढते हैं? इस प्रश्न का उत्तर पाने के लिए बहुत से प्रयोग किए गए हैं। स्टार्क (Stork) नामक चिड़ियों के एक समूह पर प्रयोग किया गया। इन चिड़ियों को उन के घोंसलों से पकड़कर प्रव्रजन (Migration) के समय से पहले दूसरे स्थान पर ले जाकर छोड़ दिया गया। प्रव्रजन का समय आने पर देखा गया कि ये पक्षी अपने इस नये स्थान से अनुकूल स्थान पर जाने में सफल हो गए। जब उस स्थान पर प्रतिकूल मौसम आया तो ये पक्षी उसी स्थान पर वापिस पहुंच गए, जहां से इन्हें लाया गया था। इन प्रयोगों से यह परिणाम निकला कि प्रवासी पक्षियों में एक जन्मजात शक्ति होती है, जिसके आधार पर वह अपने रास्तों और ठिकानों का पता लगा लेते हैं।

एक प्रयोग में पक्षियों को उनके घोंसले से हवाई जहाज द्वारा ले जा कर लगभग 650 किलोमीटर की दूरी पर छोड़ दिया गया। आश्चर्य की बात कि ये पक्षी लौट कर अपने घर आ गए। इस रहस्य का पता, कि पक्षी अपना रास्ता कैसे पता लगा लेते हैं, अभी तक मालूम नहीं हो पाया है। कुछ वैज्ञानिकों का विचार है कि पक्षी पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र (Magnetic Fields) के प्रति विशेष संवेदन रखते हैं और उसके आधार पर वे पता लगा लेते हैं कि वे धरती के किस हिस्से से आए हैं। यह सिद्धांत अभी तक सिद्ध नहीं हो पाया है। वास्तविकता तो यह है कि वैज्ञानिकों के पास इस तथ्य की कोई ठोस जानकारी नहीं है कि प्रवासी पक्षी अपना रास्ता कैसे ढूंढते हैं।



क्या जानवरों में बुद्धि होती है?

जानवरों के विषय में यह माना जाता है कि उनमें बुद्धि नहीं होती, लेकिन यह बात पूरी तरह सही नहीं है। जानवरों में बुद्धि होती है, लेकिन मनुष्य की तुलना में बहुत कम। कुछ जानवर ऐसे हैं, जिनमें विवेक कुछ दूसरे जानवरों से अधिक होता है। अधिकांश जानवरों के सामने यदि कोई ऐसी समस्या आ जाए, जो उनके सामने पहले कभी न आई हो, तो वे उसका अपनी तर्क-शक्ति (Power of Logic) द्वारा समाधान नहीं कर सकते। इससे स्पष्ट होता है कि जानवरों के पास जो थोड़ी बहुत बुद्धि है, वे उसका सही इस्तेमाल करना नहीं जानते।

कुछ परीक्षणों से सिद्ध हुआ है कि बंदर और वनमानुष में दूसरे जानवरों की अपेक्षा अधिक बुद्धि होती है। वे किसी विशेष परिस्थिति या संकट के समय अपनी बुद्धि का इस्तेमाल कर सकते हैं। बंदरों पर उनकी बुद्धि-परीक्षण के लिए एक प्रयोग करके देखा गया। इस प्रयोग में एक कमरे में लकड़ी के दो बक्से रख दिए गए और केले के एक गुच्छे को इतनी ऊंचाई पर लटका दिया गया, जो बंदर की पहुंच से बाहर था (ऊपर का चित्र देखें)। कमरे में जब बंदर को छोड़ा गया, तो कुछ देर तक तो वह गुच्छे को देखता रहा, फिर उसने बक्सों की तरफ देखा। उसने एक बक्से को दूसरे बक्से के ऊपर रख दिया और उस पर चढ़कर केले के गुच्छे को तोड़कर अपने कब्जे में कर लिया। इससे यह सिद्ध हुआ कि बंदर की बुद्धि में यह बात आ गई कि बक्से के ऊपर बक्सा रख कर वह केलों तक पहुंच सकता है। इस प्रकार बंदर ने अपनी बुद्धि का इस्तेमाल किया। बंदर एक ऐसा जानवर है, जिसे रंगों का भी ज्ञान होता है। सीखने पर वह बहुत सी बातें सीख लेता है।

वैज्ञानिकों का विश्वास है कि कुत्ता, बिल्ली और कुछ दूसरे जानवर कुछ सीमा तक अपनी बुद्धि का इस्तेमाल कर सकते हैं। उदाहरण के लिए पालतू कुत्तों को जब बहुत सी बातें सिखाई जाती हैं, तो वे सीख लेते हैं। रीछ का खेल दिखाने वाले बाजीगर रीछ से भी कुछ करने को कहते हैं, वह वैसा ही करता है, क्योंकि उसे जो कुछ भी सिखाया गया है, वह उसे अपनी याददाश्त के सहारे करता रहता है। चील और कौए जब कोई खाने की वस्तु देखते हैं, तो वे इस बात की कोशिश में रहते हैं कि उस वस्तु को किसी प्रकार प्राप्त किया जाए। वे अपनी बुद्धि का सहारा लेकर खाने की उस वस्तु को किसी न किसी प्रकार प्राप्त कर ही लेते हैं। छिपकली अपने शिकार को देखकर इस प्रकार धीरे-धीरे आती है कि उसके शिकार को पता ही न चले और उसके पास पहुंचकर वह उसे चट कर जाती है। इससे सिद्ध होता है कि छिपकली भी शिकार को पकड़ने के लिए अपनी बुद्धि का इस्तेमाल करती है। चिड़ियों के घोंसलों को देखकर यह मानना पड़ता है कि वे बिना बुद्धि के इतने जटिल घोंसलों का निर्माण नहीं कर सकतीं। इन घोंसलों में ताप और रोशनी के नियंत्रण के लिए विशेष रचनाएं रहती हैं। इन घोंसलों का निर्माण अंडे देने और छोटे-छोटे बच्चों को सुरक्षित रखने के लिए किया जाता है।

आये दिन हम अपने जीवन में देखते हैं कि हमारे पालतू जानवर सिखाने पर बहुत सी बातें सीख लेते हैं। हल जोतते हुए बैल मुड़ने के समय खेत में अपने आप ही मुड़ जाते हैं। भेड़ों का तितर-बितर समूह भेड़ियों को देखकर अपनी जान बचाने के लिए एक जगह एकत्रित हो जाता है। इस प्रकार के हजार उदाहरण हमें जीवन में देखने को मिलते हैं।इन सबसे यही सिद्ध होता है कि जानवरों में बुद्धि तो होती है, लेकिन कम होती है।



पौधे भोजन कैसे लेते हैं?

यह तो सभी जानते हैं कि पेड़-पौधे भी जीवधारियों की श्रेणी में आते हैं। पौधों को भी हमारी तरह भोजन, पानी और वायु की आवश्यकता होती है। यदि पौधों को भोजन न मिले तो वे अधिक दिन जीवित नहीं रह सकते। क्या तुम जानते हो कि लगभग सभी पौधे अपना भोजन स्वयं बनाते हैं। प्रश्न यह है कि पौधे भोजन कैसे बनाते हैं?

पौधे अपना भोजन जमीन और वायु दोनों से ही लेते हैं। यदि आप किसी पौधे की जड़ों को ध्यानपूर्वक देखें तो पाएंगे कि इनकी जड़ों के सिरे पतले-पतले रेशों की भांति हैं। इन्हें हम 'रूट हेयर' (Root hair) कहते हैं। पौधों के ये रेशे जमीन से पानी और धुले हुए खनिज पदार्थों को अवशोषित (Absorb) करके तने और टहनियों के रास्ते पत्तियों तक पहुंचा देते हैं। पत्तियां भोजन बनाने का कार्य करती हैं। पत्तियों में हरे रंग का क्लोरोफिल (Chlorophyll) नामक पदार्थ होता है, जो भोजन बनाने में मशीन की तरह कार्य करता है। क्लोरोफिल सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में वायु से ली गई कार्बनडाइआक्साइड गैस और जमीन से लिए गए पानी को शर्करा में बदल देता है। इस रासायनिक क्रिया को प्रकाश संश्लेषण (Photo Synthesis) की क्रिया कहते हैं। वास्तव में क्लोरोफिल सूर्य के प्रकाश से ऊर्जा (Energy) लेकर, पानी की हाइड्रोजन और कार्बनडाइआक्साइड के कार्बन को शर्करा में बदल देता है। इस क्रिया के फलस्वरूप आक्सीजन और पानी भी बनते हैं, जो पत्तियों द्वारा निकाल दिए जाते हैं। शर्करा, स्टार्च में बदल कर पेड़ में जमा होती रहती है, खनिज पदार्थ रासायनिक क्रिया द्वारा प्रोटीन, रस, तेल और दूसरे खाद्य पदार्थों में बदल जाते हैं। इन पदार्थों को पेड़ भोजन के रूप में अपनी वृद्धि के लिए प्रयोग करते हैं। यही भोजन पौधे के सभी भागों में चला जाता है। जब बीज का निर्माण होता है, तो इसी भोजन का कुछ भाग बीच में जमा हो जाता है, जो आगे चलकर बीज के अंकुरण में काम आता है।



आदमी बूढ़ा क्यों होता है?

संसार में हर आदमी अधिक से अधिक समय तक जीवित रहना चाहता है, साथ ही साथ वह यह भी चाहता है कि वह बूढ़ा न हो, पर उसकी यह इच्छा पूरी नहीं हो पाती। मानव शरीर में होने वाली जैविक प्रक्रियाओं (Biological Processes) का मंद पड़ जाना ही वृद्धावस्था कहलाता है।

जब बच्चा पैदा होता है तो उसके शरीर में सभी अंग नए होते हैं। सभी जैविक प्रक्रियाएं (Biological Actions) तेज़ी के साथ चलती होती हैं। जैसे-जैसे उम्र बढ़ती है, मनुष्य में जीव-वैज्ञानिक परिवर्तन (Biological Changes) होते जाते हैं। इन परिवर्तनों को रोका नहीं जा सकता। इन्हीं जीव-वैज्ञानिक परिवर्तनों के कारण उम्र के बढ़ने पर बहुत सी शारीरिक क्रियाएं धीमी पड़ जाती हैं, जिनके फलस्वरूप हमें बुढ़ापा आ जाता है। तुम जानते हो कि बुढ़ापे में क्या-क्या परिवर्तन आते हैं?

प्रौढ़ावस्था (Adult age) में उम्र के अनुसार शरीर के सभी कार्य व क्रियाएं धीमी होने लगती हैं, जिनके कारण मनुष्य की शक्ति (Vitality) व संवेदनशीलता (Sensitivity) कम हो जाती है। शारीरिक क्रियाओं के मंद होने के कारण मनुष्य का भार भी घटने लगता है। दृष्टि भी कमजोर होने लगती है और उसके बाल सफेद होने लगते हैं। ये सब परिवर्तन बुढ़ापे के लक्षण हैं।

बुढ़ापे में शरीर की सभी कोशिकाओं (Cells) और ऊतकों में परिवर्तन आना शुरू हो जाता है। गुर्दे (Kidney), यकृत (Liver), प्लीहा (Spleen) और अंताशय (Intestine) की कोशिकाएं कमजोर हो जाती हैं। शरीर की रक्त-शिराएं पुरानी और कठोर पड़ जाती हैं, जो खून और अन्य पोषक तत्त्वों को शरीर के सभी हिस्सों में तेज़ी से नहीं पहुंचा पातीं। इन सबका परिणाम यह होता है कि बुढ़ापा बढ़ता ही जाता है। ज्यों-ज्यों और उम्र बढ़ती है त्यों-त्यों आंख, कान, त्वचा, दांत आदि में कमजोरी बढ़ती जाती है। पाचन-शक्ति धीमी हो जाती है। रक्त-प्रवाह अनियमित हो जाता है। अन्त में नतीजा यह होता है कि बुढ़ापे से गुजरता हुआ मनुष्य मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

अलग-अलग आदमियों के बूढ़े होने की शुरुआत अलग-अलग आयु में हो सकती है, लेकिन बुढ़ापा आता सभी को है। यह एक निश्चित, जैविक परिवर्तन है, जिसे रोका नहीं जा सकता। हां, इतना अवश्य है कि पौष्टिक भोजन, शुद्ध वातावरण और उचित व्यायाम के द्वारा बुढ़ापे को जल्दी आने से रोका जा सकता है।

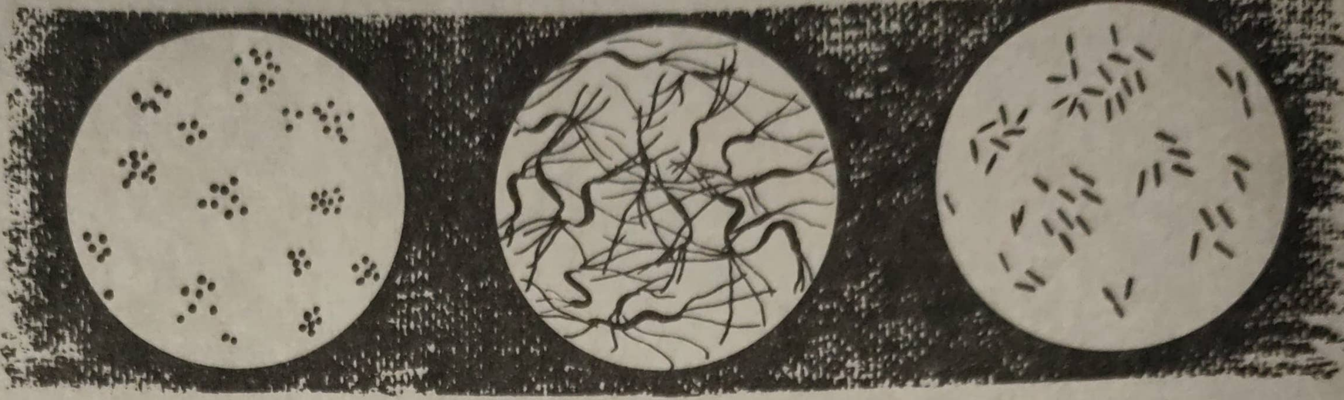


बुखार कैसे होता है?

बुखार एक आम बीमारी है। यह लगातार, रुक-रुककर या अन्तर देकर आ सकता है। स्वस्थ आदमी के शरीर का तापमान 98.4 डिग्री फारेनहाइट (37 डिग्री सेंटीग्रेड) होता है। शरीर में होने वाली रासायनिक क्रियाओं के फलस्वरूप पैदा होने वाली ऊष्मा ऊर्जा (Heat energy) का नियंत्रण मस्तिष्क और त्वचा द्वारा होता है। जब तक आदमी के शरीर में कोई रोग या विकार पैदा नहीं होते, तब तक उसका तापमान 98.4 डिग्री फारेनहाइट ही रहता है। लेकिन शरीर पर कुछ विशेष प्रकार के कीटाणु आक्रमण कर देते हैं, तो शरीर की कोशिकाओं में पायरोजन (Pyrogens) पैदा हो जाते हैं। इनके कारण शरीर के तापमान का नियंत्रण करने वाले केन्द्रों का निश्चित क्रम बदल जाता है और नतीजा यह होता है कि शरीर का तापमान बढ़ने लगता है। तापमान के इस बढ़ने को ही बुखार कहा जाता है।

बुखार वास्तव में एक ऐसी शारीरिक क्रिया है, जो बीमारी के कीटाणुओं को समाप्त करने में हमारी सहायता करती हैं। बुखार के समय हमारे शरीर की कुछ मुख्य प्रक्रियाएं और अंग तेज़ी के साथ काम करने लगते हैं। बुखार में शरीर के अन्दर हारमोन, इन्जाइम और रक्त कोशिकाएं पैदा होने की दर बहुत अधिक हो जाती है। ये हारमोन, इन्जाइम और रक्त कोशिकाएं बुखार पैदा करने वाले कीटाणुओं का विनाश करने में जुट जाते हैं। बुखार के दौरान रक्त का दौरा तेज़ हो जाता है तथा सांस भी तेज चलने लगती है। इन दोनों क्रियाओं द्वारा शरीर में उपस्थित जहरीले कीटाणुओं से छुटकारा पाने में मदद मिलती है।

बुखार कई प्रकार के होते हैं, जैसे मलेरिया, मियादी, डैंगू बुखार आदि। किसी भी बुखार का अधिक समय तक रहना अच्छी बात नहीं है। बुखार में शरीर के भीतरी हिस्सों के गर्म हो जाने के कारण पानी की कमी हो जाती है, जिससे खून और पेशाब नली की कोशिकाएं सिकुड़ जाती हैं। शरीर में संचरित प्रोटीन समाप्त होने लगता है। अधिक तापमान के कारण मस्तिष्क में विकार पैदा होने लगते हैं। अतः बुखार होने की अवस्था में उसकी उपेक्षा करना एक बहुत बड़ी भूल है। यद्यपि बुखार बीमारी के विरुद्ध लड़ने की एक शारीरिक क्रिया है फिर भी इसके होने पर फौरन ही डाक्टरी सहायता लेना अत्यंत आवश्यक है।

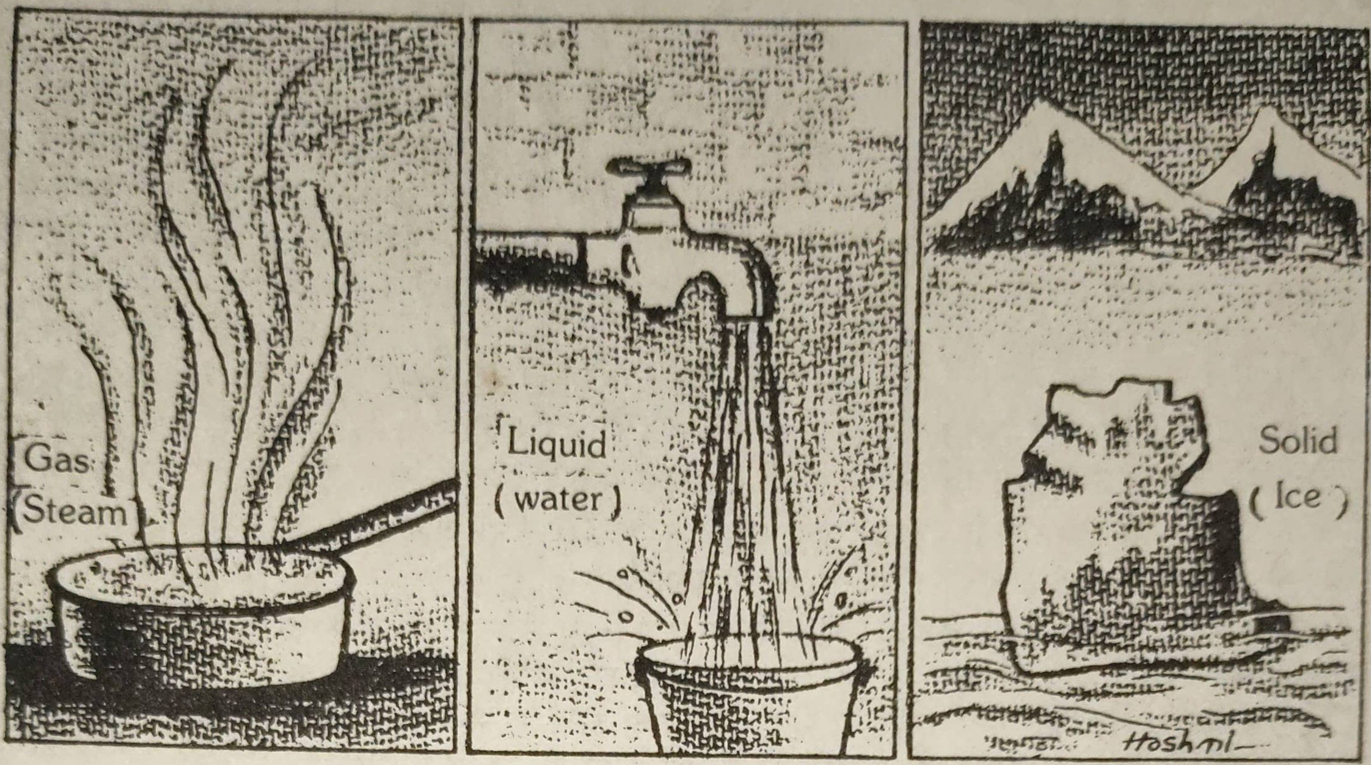


बैक्टीरिया क्या है?

बैक्टीरिया या जीवाणु वनस्पति जगत के निम्नतम श्रेणी के सदस्य माने जाते हैं। ये एक कोशिका वाले प्राणी हैं। ये आकार में बहुत सूक्ष्म होते हैं। इनका आकार एक इंच के 25000वें भाग के बराबर होता है। कुछ बैक्टीरिया इससे भी छोटे होते हैं, जिन्हें साधारण सूक्ष्मदर्शी से नहीं देखा जा सकता। बैक्टीरिया का प्रजनन कोशिका विभाजन द्वारा होता है अर्थात एक कोशिका की दो कोशिकाएं हो जाती हैं। अनुकूल परिस्थितियों में इनके जन्म की गति तेज़ हो जाती है। नई बैक्टीरिया कोशिका लगभग बीस मिनट में विभाजित होना शुरू कर देती हैं। 40 मिनट में एक बैक्टीरिया से चार बन जाते हैं और दो घंटे में 64। इस प्रकार 24 घंटों में 4,000,000,000 बैक्टीरिया पैदा हो जाते हैं। लेकिन भोजन और पानी के संघर्ष में इनमें से केवल एक प्रतिशत ही जीवित रह जाते हैं।

मोटे तौर पर बैक्टीरिया चार प्रकार के होते हैं। कुछ बैक्टीरिया गोल होते हैं, जिन्हें कोकस (Coccus) कहते हैं। दूसरे प्रकार के बैक्टीरिया लम्बी छड़ के आकार के होते हैं, जिन्हें 'बैसिलस' (Bacillus) कहते हैं। तीसरे प्रकार के बैक्टीरिया सर्पिल आकार के होते हैं, जिन्हें 'स्पाइरिलम' (Spirillum) कहते हैं। चौथे प्रकार के बैक्टीरिया कौमा के आकार के होते हैं, जिन्हें 'वाइब्रो' (Vibrio) कहते हैं।

बैक्टीरिया हमारे लिए हानिकारक भी हैं और लाभदायक भी। जहां तक हानियों का सम्बन्ध है, बैक्टीरिया मनुष्य, जानवरों, और पेड़-पौधों में बहुत सी बीमारियां फैलाते हैं। टाईफाइड, टिटनस, टी० बी०, निमोनिया, हैजा, डिफथीरिया, डिसैन्ट्री, कुकर खांसी आदि ऐसी बीमारियां हैं, जो बैक्टीरिया फैलाते हैं। ये जानवरों और पेड़-पौधों में भी बहुत सी बीमारियां फैलाते हैं। कुछ बैक्टीरिया मानव जाति के लिए बहुत ही लाभदायक होते हैं। दूध से दही बनाने की क्रिया बैक्टीरिया द्वारा ही संपन्न होती है। बैक्टीरिया मृत पौधों और पशुओं को सड़ाकर नष्ट कर देते हैं, जिससे धरती साफ हो जाती है। नाइट्रोजन और दूसरे तत्त्वों के साथ मिलकर बैक्टीरिया ऐसे यौगिक बनाते हैं, जो पौधों के लिए अत्यंत जरूरी हैं। सिरका का निर्माण भी बैक्टीरिया द्वारा होता है। डबल रोटी का खमीर भी बैक्टीरिया ही बनाते हैं। चमड़े को रंगने का कार्य भी बैक्टीरिया ही करते हैं। कुछ एंटीबायोटिक औषधियां भी बैक्टीरिया को प्रयोग में लाकर बनाई जाती हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि बैक्टीरिया हमारे लिए लाभदायक भी हैं और हानिकारक भी।



पानी (Water) क्या है?

जीवन के लिए वायु की तरह पानी भी अत्यंत आवश्यक है। यदि धरती पर पानी न होता तो आज जीवन सम्भव न होता। पानी के बिना हम कुछ घंटों से अधिक जीवित नहीं रह पाते। पेड़-पौधे, मनुष्य तथा जानवर सभी को पानी की आवश्यकता होती है। शायद इसीलिए पृथ्वी पर 70% पानी है और 30% जमीन।

क्या तुम जानते हो कि पानी क्या है? पानी हाइड्रोजन और आक्सीजन का एक यौगिक है, जिसमें आयतन के हिसाब से दो भाग हाइड्रोजन और एक भाग आक्सीजन होती है। इसके गुण इन दोनों गैसों से एकदम अलग होते हैं। शुद्ध अवस्था में पानी में न कोई रंग होता है, न कोई गंध और न कोई स्वाद। प्रकृति में जल के अनेक स्रोत हैं। हमें नदियों, झीलों, झरनों, कुओं, वर्षा, समुद्र आदि से जल प्राप्त होता है।

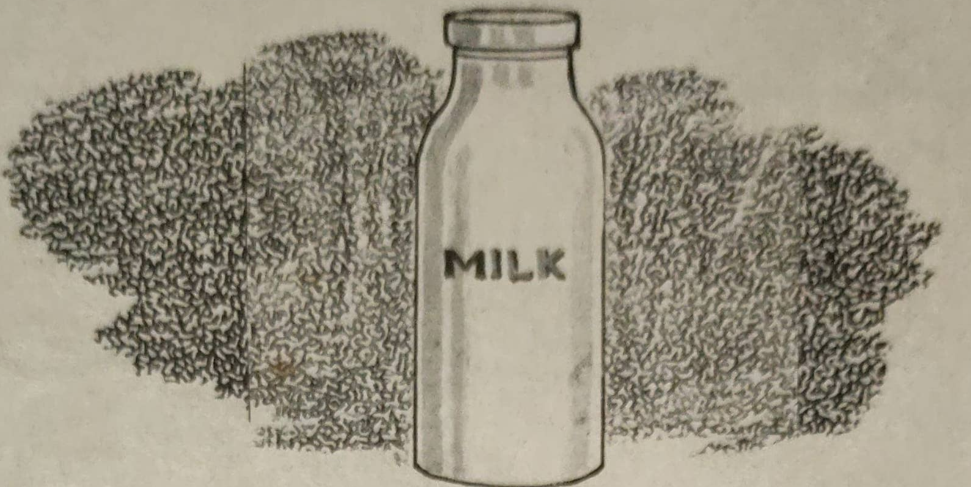
अन्य पदार्थों की तरह जल की भी तीन अवस्थाएं होती हैं—पानी, बर्फ और भाप। साधारण रूप में यह तरल अवस्था में मिलता है, लेकिन जब इसे 0 डिग्री सेंटीग्रेड तक ठंडा किया जाता है, तो यह जमकर बर्फ में यानी ठोस अवस्था में आ जाता है। इसी प्रकार जब इसे 100 डिग्री सेंटीग्रेड तक गर्म किया जाता है, तो यह उबलने लगता है और भाप अर्थात गैसीय अवस्था को प्राप्त कर लेता है। बर्फ का प्रयोग हम वस्तुओं को ठंडा करने में करते हैं। भाप से रेल का इंजन तथा टरबाइन चलती हैं।

प्रकृति से मिलने वाला पानी शुद्ध अवस्था में नहीं होता। इसमें बहुत से खनिज पदार्थ और गैसें घुली होती हैं। इन अशुद्धियों के कारण जल में कुछ स्वाद पैदा हो जाता है। कुछ अशुद्धियों के घुलने के कारण पानी भारी (खारा) हो जाता है। भारी पानी साबुन के साथ आसानी से झाग नहीं बनाता, जबकि हल्का पानी साबुन के साथ आसानी से झाग बनाता है। इस विधि से भारी पानी और हल्के पानी की पहचान भी कर सकते हैं। पानी का भारीपन दो प्रकार का होता है। एक अस्थाई भारीपन और दूसरा स्थायी भारीपन।अस्थाई भारीपन कैल्शियम और मैग्नीशियम के बाईकार्बोनेटों के साथ उपस्थिति के कारण होता है। पानी को उबालने से यह भारीपन दूर हो जाता है। स्थाई भारीपन कैल्शियम और मैग्नीशियम के क्लोराइडों और सल्फेटों के कारण होता है। इस भारीपन को सोडियम कार्बोनेट (कपड़े धोने का सोडा) डालकर दूर किया जाता है।

पानी एक ऐसा द्रव है, जिसके कई विलक्षण गुण हैं। उदाहरण के लिए जब यह ठोस अवस्था में होता है, तो यह द्रव अवस्था की अपेक्षा कुछ हल्का हो जाता है। यही कारण है कि बर्फ पानी में तैरती रहती है। इसी कारण बर्फ की बड़ी-बड़ी चट्टानें नदियों और समुद्र में तैरती रहती हैं। पानी का घनत्व 4 डिग्री सेंटीग्रेड पर अधिकतम होता है। इस गुण के कारण जाड़ों में झील और तालाबों के पानी के ऊपर की सतह तो बर्फ में परिवर्तित हो जाती है, लेकिन नीचे का पानी नहीं जमता। इस कारण ठंडे प्रदेशों में मछलियां आदि जीव बर्फ के नीचे आराम से जिन्दा रह लेते हैं। पानी की संरचना ऐसी है कि इसमें अधिकतर वस्तुएं घुल जाती हैं। इसलिए यह महान घोलक के रूप में प्रयोग किया जाता है। समुद्रों का पानी खारा है, क्योंकि उसमें बहुत सारे खनिज घुले रहते हैं। पानी में हवा घुल जाती है, जिसे पानी में रहने वाले जीव सांस द्वारा लेते रहते हैं। पानी एक ऐसा तरल है, जो आसानी से वाष्पित नहीं होता, इसलिए अधिक समय तक मिट्टी में इसकी नमी बनी रहती है, जो पेड़-पौधों के लिए बहुत ही उपयोगी है।

विभिन्न प्राणियों में पानी अलग-अलग मात्रा में रहता है। पेड़-पौधों में 60% से 80% तक, ताजे फलों में 85% से 95% तक और जलीय पौधों में 98% तक पानी रहता है।

एक सभ्य मनुष्य पीने, नहाने और कपड़े धोने में औसतन 35 गैलन पानी खर्च करता है। पीने के पानी के प्रति सावधानी बरतनी चाहिए। प्रायः पानी में टाइफाइड, कॉलरा, डायरिया, डायसेंट्री आदि भयंकर बीमारियों के कीटाणु होते हैं। इसीलिए पानी उबालकर पीना स्वास्थ्यकर होता है। पानी को छानकर, उबालकर, लाल दवाई या ब्लीचिंग पाउडर अथवा क्लोरीन मिलाकर कीटाणु रहित बनाया जा सकता है।



दूध में क्या होता है?

मनुष्य ने दूध और उससे बने पदार्थों का प्रयोग कब से शुरू किया, इस विषय में निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कहा जा सकता है, लेकिन सम्भवत: पांच हजार वर्ष पूर्व जब मनुष्य ने दूध देने वाले पशुओं को पालतू बनाया, तभी से उसने दूध का प्रयोग करना शुरू किया। संसार के अधिकतर देशों में केवल गाय का दूध प्रयोग में लाया जाता है। हां, भारत एक ऐसा देश अवश्य है, जहां आधे से अधिक भैंस का दूध इस्तेमाल होता है। दूध देने वाले पशुओं में अधिकतर गाय, भैंस, भेड़, बकरी आदि आते हैं। उत्तरी यूरोप में रेन्डीयर का दूध भी प्रयोग में लाया जाता है। मध्य पूर्व में बकरी का दूध अधिक इस्तेमाल होता है।

दूध को शुरू से ही सम्पूर्ण आहार माना जाता है। इसमें वे सभी पौष्टिक पदार्थ मौजूद होते हैं, जिनकी हमारे शरीर में आवश्यकता होती है; जैसे पानी, शक्कर, प्रोटीन, चिकनाई, विटामिन और खनिज लवण आदि। गाय के दूध में पानी 87.2%, चिकनाई 3.7%, प्रोटीन 3.5%, चीनी 4.9% और शेष खनिज तथा विटामिन होते हैं। अलग-अलग पशुओं के दूध में उपर्युक्त सभी पदार्थ मौजूद रहते हैं। पदार्थों की प्रतिशत मात्रा अलग-अलग होती हैं। ये सभी पदार्थ हमारे शरीर के लिए आवश्यक होते हैं।

दूध में पाई जाने वाली चिकनाई को ही हम मक्खन के रूप में निकालते हैं। चिकनाई से हमें अतिरिक्त ऊर्जा मिलती है। दूध में उपस्थित प्रोटीन मांसपेशियों को मज़बूत बनाने में काम आता है। दूध की चीनी शरीर द्वारा आसानी से अवशोषित हो जाती है, जो ईंधन का काम करती है। दूध में उपस्थित कैल्शियम और फास्फोरस जैसे खनिज पदार्थ हमारी हड्डियों के निर्माण के लिए काम में आते हैं। दूध में उपस्थित लोहा, तांबा, मैंगनीज़, सोडियम, क्लोरीन, आयोडीन, कौबाल्ट आदि खनिज पदार्थ भी हमारे शरीर के लिए बहुत उपयोगी हैं। दूध में उपस्थित विटामिन ए, बी, सी, डी शरीर में विटामिनों की कमी को पूरा करते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि दूध हमारे जीवन के लिए अत्यन्त उपयोगी वस्तु है।

दूध बहुत जल्दी खराब होने वाला पदार्थ है। इसलिए दूध निकालने के बाद दो घंटे के भीतर 10° सेंटीग्रेड तक ठंडा कर लेना चाहिये। अन्यत्र भेजने तक इसका यही तापक्रम रहना चाहिए। जल्दी खराब होने के कारण इसको कई रूपों में परिवर्तित कर लेते हैं, जैसे मक्खन (Butter), पनीर (Cheese), मलाई (Cream), गाढ़ा दूध (Condensed Milk), और सूखा दूध (Dried Milk)। इसे दही (Curd), प्रोटीनयुक्त दूध (Protein milk-casein) और दुग्ध शर्करा (Lactose) में भी बदल सकते हैं। दूध को उबालकर रखने से या दिन में कई बार उबालने से भी यह जल्दी खराब नहीं होता है।

दूध स्तनधारी मैमल्स की स्तनपायी ग्रन्थियों (Mammary Glands) से निकलता है। बच्चों को जन्म देने के तुरन्त बाद प्रोलेक्टिन (Prolectin) हारमोन से प्रेरित होकर मादा पशु के स्तनों से दूध निकलने लगता है।

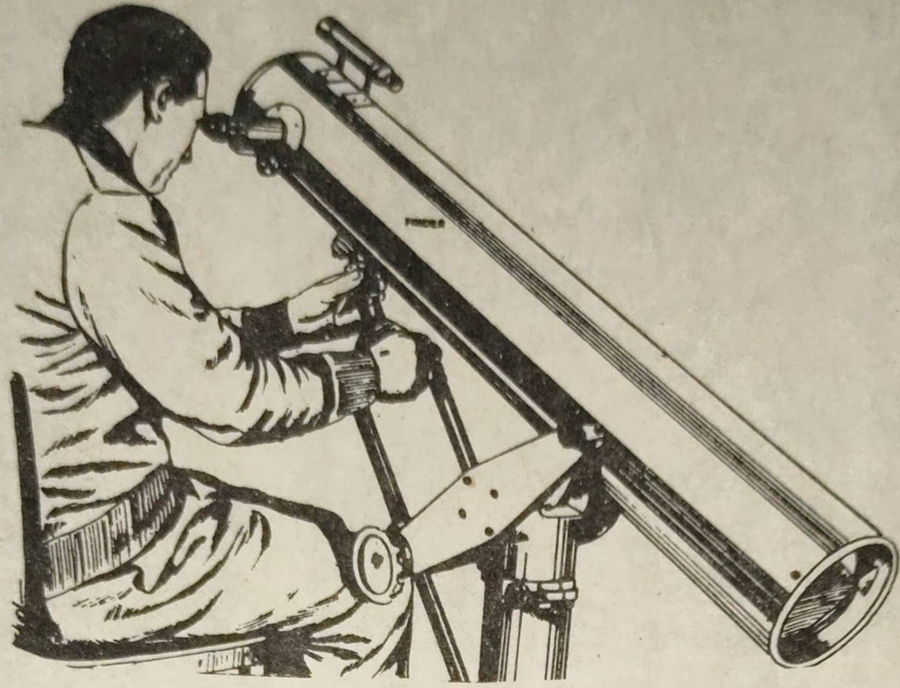


सूखी बर्फ क्या होती है?

आमतौर पर जब बर्फ की बात चलती है, तो हमारे दिमाग में दो प्रकार की बर्फ आती है—एक तो वह जो पानी को जमाकर सिल्लियों के रूप में बाजार में बिकती है और दूसरी वह जो जाड़ों के मौसम में पहाड़ों पर गिरती है। ये दोनों ही प्रकार की बर्फ पानी से बनती है। क्या तुम जानते हो कि तीसरे प्रकार की बर्फ और भी होती है, जिसे सूखी बर्फ (Dry Ice) कहते हैं? यह सूखी बर्फ पानी से नहीं बनाई जाती, बल्कि कार्बन डाईआक्साइड गैस से बनाई जाती है।

सूखी बर्फ को ठोस कार्बन डाईआक्साइड (Solid Carbon dioxide) कहते हैं। सामान्य रूप में कार्बन डाईआक्साइड गैस अवस्था में रहती है, लेकिन जब कार्बन डाईआक्साइड गैस को सामान्य दबाव की स्थिति में पांच गुने अधिक दबाव पर दबाया जाता है और तापमान को कम किया जाता है, तो यह गैस सिकुड़कर ठोस अवस्था को प्राप्त कर लेती है। यह पानी के बर्फ की तरह जम जाती है। कार्बन डाईआक्साइड की इस अवस्था को सूखी बर्फ का नाम दिया जाता है। यह काफी ठंडी होती है। इसका तापमान लगभग 78.5° फैरेनहाइट होता है। इस बर्फ की यह विशेषता होती है कि यह पिघलने पर तरल अवस्था में नहीं आती, बल्कि सीधे ही गैस बनकर उड़ जाती है। ठोस अवस्था में यह केक जैसे टुकड़ों के रूप में होती है और वायुमण्डल में आने पर गैस बन जाती है। इस बर्फ का वज़न काफी होता है। 1000 क्यूबिक इंच सूखी बर्फ के टुकड़े का भार लगभग 20 कि० ग्रा० होता है।

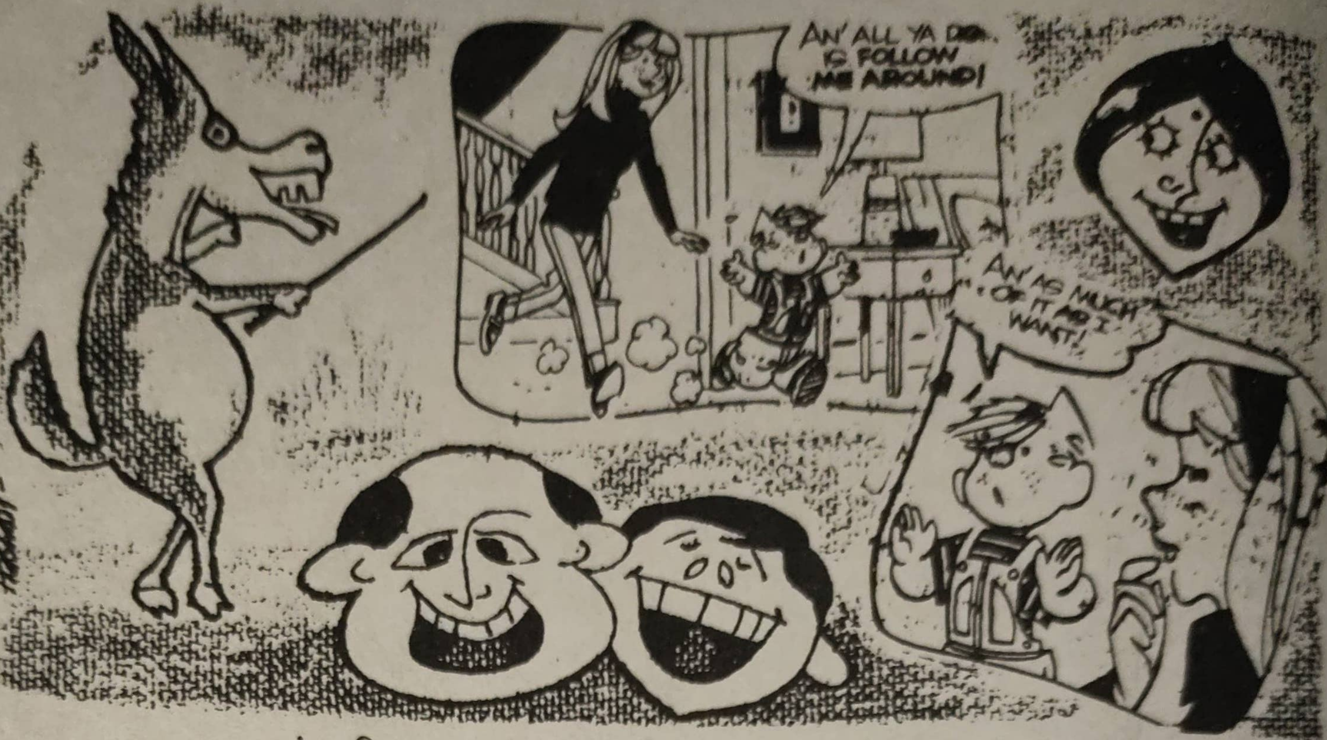
सूखी बर्फ का प्रयोग बहुत से कामों में होता है। निम्न तापमान (Low temperature) पैदा करने के लिए वैज्ञानिक इसे अनुसंधान कार्यों में प्रयोग में लाते हैं। मांस (Meat) और आइस्क्रीम जैसी वस्तुओं को खराब होने से बचाने के लिए सूखी बर्फ में रखकर पानी के जहाजों द्वारा दूर देशों तक भेजा जाता है। कमरों को ठंडा रखने के लिए भी इसका प्रयोग किया जाता है।



दूरदर्शी यंत्रों से सितारों को कैसे देखा जाता है?

आकाशीय पिण्डों का अध्ययन करने के लिए सबसे पहले सफल दूरबीन (Telescope) इटली के वैज्ञानिक गैलीलियो ने सन् 1609 में बनाई थी। तब से अब तक कई प्रकार के दूरदर्शी यंत्रों का विकास हो चुका है और तब से आकाशीय पिण्डों को देखने के लिए दूरदर्शी यंत्रों का प्रयोग होता आ रहा है। कुछ छोटे-छोटे दूरदर्शी यंत्र ग्रहों और तारों के अध्ययन के लिए ही बनाए गए हैं।

आज संसार में तीन प्रकार के दूरदर्शी यंत्रों का प्रयोग आकाशीय पिण्डों के अध्ययन के लिए किया जाता है। पहले दूरदर्शी यंत्रों को प्रकाशीय दूरदर्शी (Optical Telescope) कहते हैं और दूसरे को रेडियो दूरदर्शी यंत्र (Radio Telescope) कहते हैं। तथा तीसरे को परावर्तक दूरदर्शी यंत्र (Reflecting Telescope) कहते हैं। क्या तुम जानते हो कि आकाश के तारे इन यंत्रों से किस प्रकार स्पष्ट दिखाई दे जाते हैं? अपवर्तन दूरदर्शी यंत्रों में एक धातु के पाइप के एक सिरे पर उत्तल ताल (Convex Lens) लगा होता है, जिसे अभिदृश्यक लेंस (Objective lens) कहते हैं। सितारों से आने वाली प्रकाश की किरणें इसी लेन्स पर पड़ती हैं और यह सितारों का प्रतिबिम्ब अपने फोकस पर बना देते हैं, जो आंख के द्वारा दूसरे लेंस की सहायता से देख लिया जाता है। आंख के पास वाले लेंस को नेत्रिका लेंस कहते हैं। परावर्तक दूरदर्शी यंत्रों में प्रतिबिम्ब बनाने का काम एक अवतल दर्पण (Concave Mirror) द्वारा होता है। रेडियो दूरदर्शियों में तश्तरी के आकार का धातु का बहुत बड़ा परावर्तक होता है, जो खगोलीय पिण्डों से आने वाली रेडियो तरंगों को प्राप्त करके जटिल इलेक्ट्रानिक यंत्रों में भेज देता है। इस प्रकार प्रकाशीय दूरदर्शी यंत्रों में सितारों के विषय में उसके प्रतिबिम्ब से जानकारी प्राप्त की जाती है और रेडियो दूरदर्शी यंत्रों से रेडियो तरंगों से जानकारी प्राप्त की जाती है। आज संसार में एक से एक अधिक शक्तिशाली दूरदर्शी यंत्र आकाश की दुनिया की जानकारी प्राप्त करने के लिए बनाए जा रहे हैं।



व्यंग-चित्र या कार्टून की शुरुआत कैसे हुई?

आज की दुनिया में कार्टून उन चित्रों को कहा जाता है, जिसमें किसी व्यक्ति या घटना को व्यंग के रूप में प्रस्तुत किया गया हो और जिसे देखकर हंसी आ जाए। लेकिन शुरू में कार्टून का अर्थ यह नहीं था। प्राचीन काल में ऐसे चित्र को जिसमें किसी चीज़ को बड़े और पूरे आकार में बनाया गया हो, कार्टून कहा जाता था। इन कार्टूनों में भित्तिचित्र, दीवार, दरी या खिड़की पर बनाए गए चित्र सम्मिलित थे।

समाचार-पत्र और पत्रिकाओं का प्रकाशन शुरू में हो जाने के बाद समाचारों और सम्पादक के विचारों को रोचक ढंग से प्रस्तुत करने के लिए ऐसे चित्र बनाए जाने लगे, जिनको देखकर लोगों को हंसी आती थी। इस प्रकार के चित्रों को भी कार्टून कहा गया। समाचार-पत्रों की शुरुआत से पहले ही होगार्थ, गोया, दामियर व रोलेंडसन नामक चित्रकारों ने एक ही विषय पर पूरी चित्र श्रृंखलाएं बनाईं। इन चित्रों में किसी बहादुर व्यक्ति के चित्रों को दिखाया गया था। कार्टून की प्रेरणा ऐसे ही चित्रों से ली गई थी।

उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में कुछ पत्रिकाएं केवल कार्टूनों के लिए ही शुरू की गई थीं। इनमें पेरिस की शरीवरी (Charivari), लंदन की पंच (Punch), अमेरिका की लाइफ़ (Life) और जज (Judge) पत्रिकाएं मुख्य हैं। लेकिन अब अधिकतर समाचार-पत्र व पत्रिकाओं ने कार्टूनों को छापना शुरू कर दिया है, तभी तो इन पत्रिकाओं का प्रभाव कम हो गया है।

हास्य की पहली चित्रकथा 1902 में रिचर्ड आउटकाल्ट ने बूस्टर ब्राउन (Booster Brown) के नाम से बनाई। यह सारे संसार में बहुत प्रसिद्ध हुई। एक दूसरी चित्रकथा 1952 में छपी जिसका नाम ब्रिंगिंग अप फादर (Bringing up Father) था। इसका अब तक 71 देशों में 27 भाषाओं में प्रकाशन हो चुका है।

विश्व का सबसे बड़ा कार्टून अमेरिका के न्यूयार्क शहर में स्थित संयुक्त राष्ट्र संघ के मुख्यालय के पीछे वाली इमारत पर बनाया गया। दो मंजिली, 35 फुट लम्बी और 30 फुट चौड़ी पूरी इमारत का कार्टून बनाया गया था। इसमें आठ पूर्वी यूरोपीय देशों के खिलाफ रूस के रुख का मज़ाक उड़ाया गया था। कार्टूनों की दुनिया में अमरीका के वाल्टर एलिस डिज़नी ने संसार में बहुत अधिक प्रसिद्धि प्राप्त की।



2

भूगोल

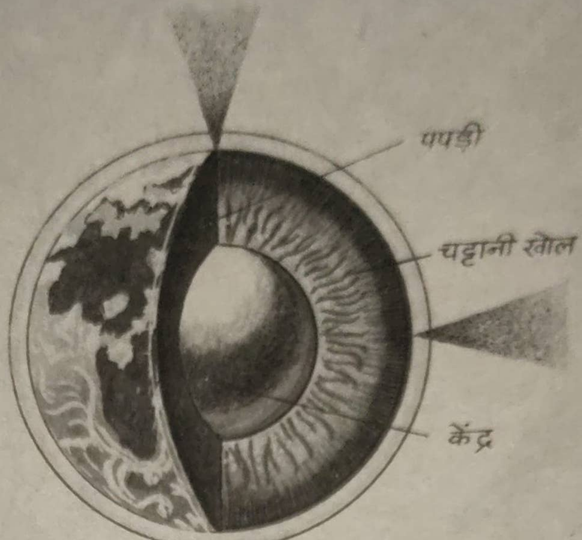


पृथ्वी कितनी पुरानी है?

मनुष्य प्राचीन काल से ही यह जानने के प्रयास करता रहा है कि पृथ्वी का जन्म कब हुआ? यह एक ऐसा प्रश्न है, जिसका शायद कभी सही उत्तर दिया न जा सके। लगभग 400 वर्ष पहले जब मनुष्य को यह पता चला कि पृथ्वी सौर परिवार (Solar System) का एक ग्रह (Planet) है और वह सूर्य का चक्कर लगाती है, तभी से उसने पृथ्वी की उम्र जानने के लिए वैज्ञानिक तकनीकों को प्रयोग में लाना शुरू किया।

आज के वैज्ञानिक कई तरीकों से पृथ्वी की उम्र की गणना करते हैं। इनमें सबसे सरल तरीका रेडियो एक्टीविटी (Radio Activity) का है। इस तरीके में पुरानी चट्टानों के नमूने लिए जाते हैं और उनमें यूरेनियम (Uranium) और सीसा (Lead) धातु की मात्रा ज्ञात की जाती है। यूरेनियम एक एक्टिव रेडियो पदार्थ है, जिसमें से कुछ रेडियो किरणें बाहर निकलती रहती हैं। रेडियो किरणों के निकलने के कारण यूरेनियम अंत में सीसा धातु में बदल जाता है। यूरेनियम -238 के आइसोटोप (Isotope)की आधी मात्रा 4 अरब 50 करोड़ वर्ष में सीसा-208 में बदल जाती है। इस समय को यूरेनियम की अर्धावस्था (Half-life) कहते हैं। पुरानी चट्टानों में यूरेनियम और सीसा की उपस्थिति मात्राओं के आधार पर वैज्ञानिकों ने पृथ्वी की उम्र की गणना की है। कुछ संशोधनों के बाद पृथ्वी की सही-सही उम्र 4 अरब 60 करोड़ वर्ष निकाली गई है। यह उम्र ब्रह्मांड (Universe) की उम्र से बहुत कम है।

वैज्ञानिकों ने यह भी पता लगा लिया है कि लगभग 57 करोड़ वर्ष पूर्व धरती पर जीवन शुरू हुआ था। पहले 34 करोड़ 50 लाख वर्षों में समद्री जीवों का विकास हआ, उसके बाद 16 करोड़ वर्षों में रेंगने वाले जीवों का विकास होता रहा और बाद के 6 करोड़ 50 लाख वर्षों में स्तनधारी जीवों का विकास हुआ। मनुष्य का विकास धरती पर पिछले दस लाख वर्षों से ही हुआ है। लेकिन मनुष्य के विषय में हमारी जानकारी केवल चार-पांच हज़ार वर्ष पुरानी ही है।



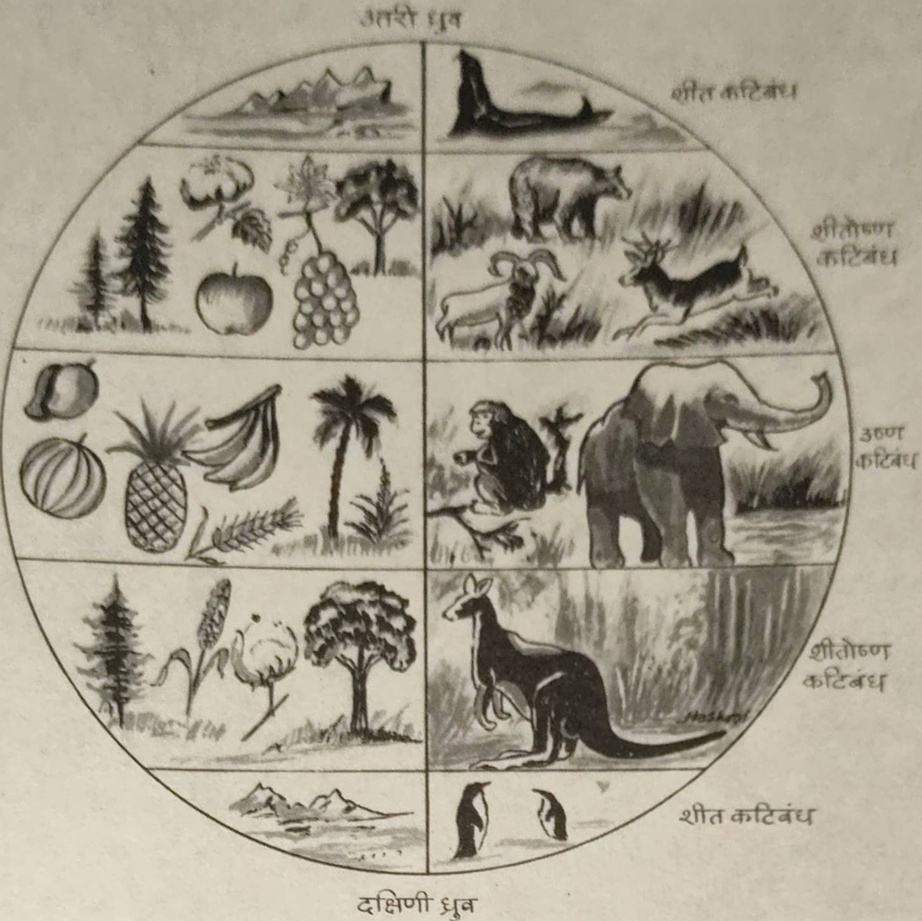
पृथ्वी के भीतर क्या है?

पृथ्वी की उत्पत्ति जान लेने के बाद मनुष्य के मन में धरती की आंतरिक बनावट जानने की इच्छा हुई। उसने पृथ्वी की खुदाई करके उसके अंदर की संरचना को जान लेने की कोशिश की, लेकिन यह तरीका सफल सिद्ध नहीं हुआ। उसने पृथ्वी की आंतरिक संरचना जानने के लिए बहुत से उपाय सोचे और अंत में एक तरीका ढूंढ निकाला। इस तरीके में भूकंप तरंगों (Seismic Waves) की सहायता से पृथ्वी की आंतरिक रचना के विषय में ज्ञान प्राप्त किया जाता है। अब तक के अध्ययनों से पता चला है कि हमारी पृथ्वी के अंदर केवल तीन सतहें हैं। ये हैं, ऊपरी पपड़ी (Earth crust), मैंटल (Mantle) और केंद्रीय क्रोड़ (Core)।

ऊपरी पपड़ी ठोस अवस्था में है, जिसे भूपृष्ठ (Earth Crust) भी कहते हैं। इसकी मोटाई 16 कि० मी० से लेकर 50 कि० मी० (30 मील) है। समुद्रों के नीचे इसकी मोटाई 5 कि० मी० (3 मील) तक है। यह परत मुख्य रूप से सिलिका से बनी है। इसका आयतन पृथ्वी के आयतन की तुलना में 1% है और इसका भार पृथ्वी के भार की तुलना में केवल 4% है। इस भूपृष्ठ की भी दो परतें हैं। ऊपरी हल्की परत को सीमा (Sima) और अधिक घनत्व वाली निचली परत को सियाल (Sial) कहते हैं।

भूपृष्ठ के नीचे की दूसरी परत मैंटल कहलाती है। इसकी गहराई 2880 कि० मी० तक है। मैंटल मुख्य रूप से लोहे और मैग्नीशियम से बना हुआ है। इसमें ठोस चट्टानें भी हैं। इसका कुल आयतन धरती के आयतन का 84% है। इसका भार पृथ्वी के भार का 67% है।

पृथ्वी के केन्द्र वाला भाग क्रोड़ (Core) कहलाता है, जो अधिक घनत्व वाले पदार्थों से मिलकर बना है। यह मुख्य रूप से लोहा और निकल हैं। इसकी संरचना भी ठोस है, लेकिन यह चारों ओर से तरल पदार्थों से घिरा हुआ है। इसका व्यास लगभग 2560 कि० मी० (1600 मील) है। इसका तापमान 8000 डिग्री सेंटीग्रेड है। इसका आयतन पृथ्वी के आयतन का 15% है और भार धरती के भार का 32% है। पृथ्वी की सतह से केन्द्र की दूरी लगभग 6336 कि० मी० (3960 मील) है।



जलवायु कितने प्रकार की होती है?

किसी एक निश्चित स्थान पर एक लम्बे समय तक मौसम की स्थितियों का सामान्य चित्रण ही उस स्थान की जलवायु (Climate) कहलाता है। किसी भी स्थान के लोगों का रहन-सहन वहां की सभ्यता, संस्कृति व आर्थिक उन्नति जलवायु से घनिष्ठ सम्बन्ध रखती है। किसी स्थान की जलवायु वहां के तापमान, वर्षा वायु का दबाव, पवनों की दिशा, पर्वत समुद्र से दूरी, अक्षांश आदि कई बातों पर निर्भर करती है। संसार के विभिन्न भागों में विभिन्न प्रकार की जलवायु पायी जाती है। जलवायु का अध्ययन करने के लिए बहुत से यंत्रों का प्रयोग किया जाता है, जिनकी सहायता से किसी स्थान का तापमान, दबाव, पवनों की दिशा, वर्षा, बादल, आर्द्रता आदि से सम्बन्धित अध्ययन किए जाते हैं।

संसार के विभिन्न स्थानों पर मुख्य रूप से पांच प्रकार की जलवायु होती है। ये हैं उष्ण जलवायु (Tropical climate), कम उष्ण जलवायु (Sub tropical climate), शीतल जलवायु व मध्य अक्षांश जलवायु (Mid latitude climate), अतिशीतल या उच्च अक्षांश जलवायु (Hight latitude climate) और उच्च पर्वतीय जलवायु (High altitude climate)।

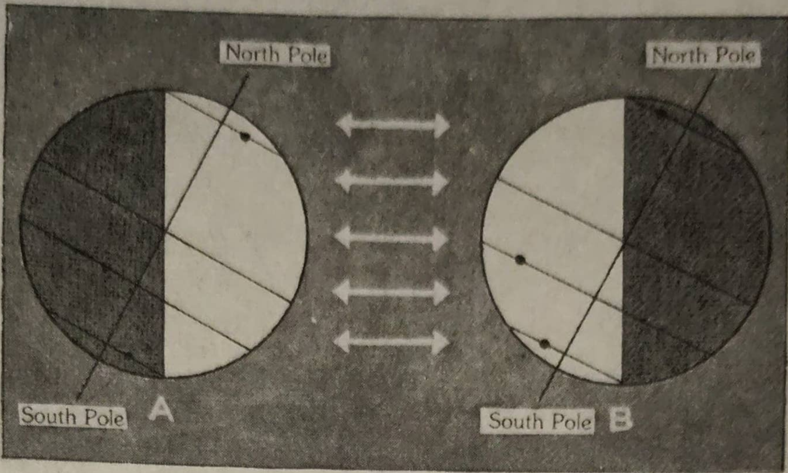
उष्ण जलवायु 30° उत्तर और 30° दक्षिण के बीच के क्षेत्रों में पायी जाती है। इसके केंद्र में भूमध्य रेखीय जलवायु है। इन स्थानों पर गर्मी बहुत पड़ती है। ऐसे जलवायु वाले स्थानों में वर्षा भी काफी होती है, लेकिन भूमध्य रेखा के पास वाले स्थानों में गर्मी के कारण रेगिस्तान भी बन गए हैं। अपना देश भारत भी भूमध्य रेखा के पास ही स्थित है। इसीलिए यहां की जलवायु भी उष्ण है।

कम उष्ण जलवायु 30° और 40° के बीच उत्तरी और दक्षिणी अक्षांशों में मिलती है। इन स्थानों में गर्मी अधिक होती है, लेकिन ठंड अधिक नहीं होती। सभी मौसमों में वर्षा अच्छी होती है, इसलिए जंगल भी काफी मात्रा में पाए जाते हैं। जिन स्थानों पर कम उष्ण जलवायु पायी जाती है, उनमें मुख्य रूप से दक्षिण पूर्वी अमेरिका, ब्राज़ील, आस्ट्रेलिया और दक्षिणी पूर्वी अफ्रीका आते हैं।

मध्य अक्षांश जलवायु के प्रदेश 40 डिग्री से 60 डिग्री उत्तरी व दक्षिणी अंक्षाशों के बीच पाए जाते हैं। इन क्षेत्रों में औसत वार्षिक तापमान 10 डिग्री सेंटीग्रेड से कम ही रहता है। ग्रीष्म ऋतु कम गर्म होती है, लेकिन जाड़े की ऋतु काफी ठण्डी होती है। इन प्रदेशों में पछुआ हवाएं चलती हैं। जिन प्रदेशों में ऐसी जलवायु पायी जाती है, उनमें मुख्य रूप से पूर्वी साइबेरिया, उत्तरी चीन, मंचूरिया, कोरिया तथ उत्तरी जापान आते हैं। ऐसी जलवायु वाले कुछ स्थानों में रेगिस्तान भी पाए जाते हैं। अलग-अलग स्थानों पर पेड़-पौधों और वर्षा का वितरण अलग-अलग है।

उच्च अक्षांश जलवायु 60 डिग्री उत्तरी और दक्षिणी अक्षांशों से लेकर ध्रुवों तक पायी जाती है। यहां जाड़ों में तापमान बहुत कम रहता है और गर्मियों में भी ठण्ड पड़ती है। ध्रुवीय प्रदेश बर्फ से ढके रहते हैं। ध्रुवीय प्रदेशों में मुख्य रूप से अन्टार्कटिका, ग्रीनलैंड, उत्तरी अमेरिका तथा यूरेशिया आते हैं। टैगा और टुन्ड्रा भी इन्हीं प्रदेशों में हैं। शीत ऋतु में बड़े लम्बे समय तक यहां अन्धकार रहता है और गर्मी की ऋतु में बहुत लम्बे समय तक प्रकाश रहता है।

उच्च पर्वतीय जलवायु आमतौर पर संसार के ऊंचे पर्वतों पर पायी जाती है। उच्च पर्वतीय प्रदेशों में ठण्ड काफी होती है और वर्षा बर्फ के रूप में होती है। इस प्रकार की जलवायु राकी, एन्डीज, हिमालय और दूसरी पर्वतमालाओं के अधिक ऊंचाई वाले भागों में पायी जाती है।



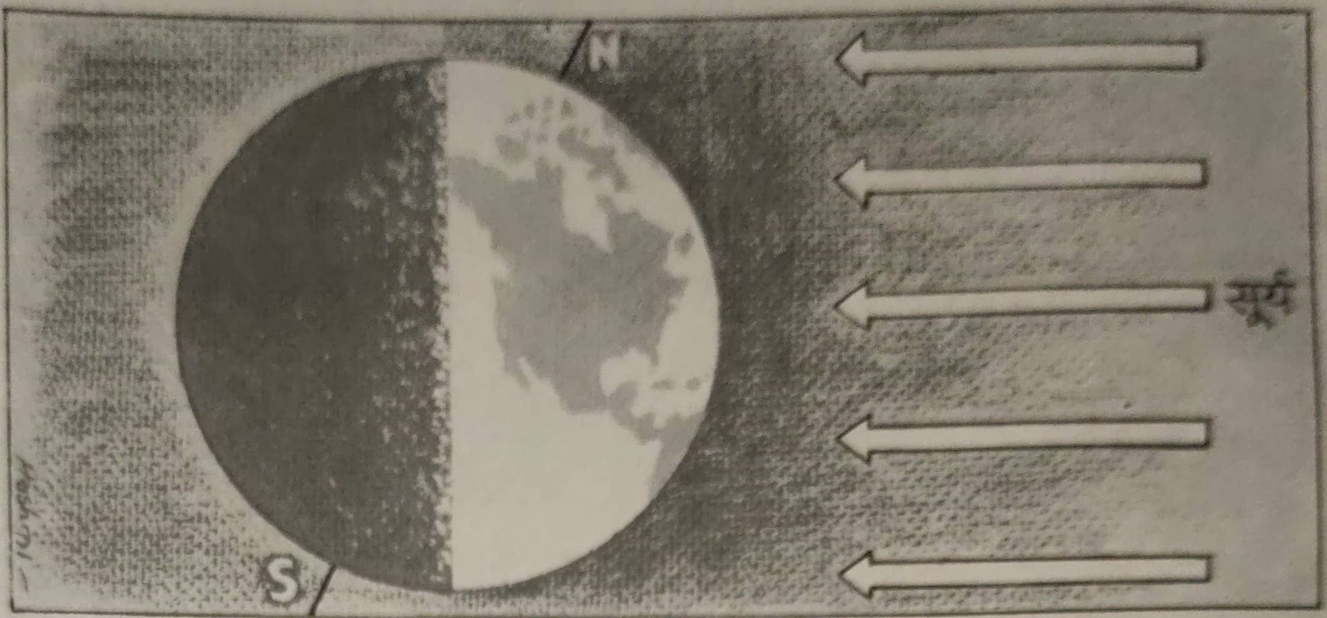
ऋतुएं कैसे बदलती हैं ?

प्राचीन काल से ही मनुष्य के मन में ऋतुपरिवर्तन को समझने की उत्सुकता रही है। उसके मन में यह प्रश्न उठता रहा है कि गर्मी और सर्दी क्यों होती हैं? गर्मियों में दिन लम्बे क्यों हो जाते हैं और रातें क्यों छोटी हो जाती हैं? इसी प्रकार सर्दियों में दिन क्यों छोटे हो जाते हैं और रातें लम्बी क्यों हो जाती हैं? इन बातों को निम्न प्रकार से समझा जा सकता है।

हम जानते हैं कि पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करने के साथ-साथ अपनी धुरी (Axis) पर भी घूमती है। धुरी पर घूमने के कारण रात और दिन होते हैं। पृथ्वी अपने अक्ष पर 23.50° झुकी हुई है। इसी झुकाव के कारण ऋतु परिवर्तन होते हैं। अपने अक्ष पर झुकी हुई पृथ्वी जब सूर्य की परिक्रमा करती है, तो एक ही स्थान पर अलग-अलग समय में सूर्य की किरणों का झुकाव अलग-अलग होता है। भिन्न-भिन्न झुकाव के कारण सूर्य की किरणों के ताप का वितरण बदलता रहता है। इसी वितरण के कारण समय के साथ उस स्थान पर गर्मी अथवा सर्दी की ऋतु बन जाती है।

यदि हम ऊपर के चित्र को ध्यानपूर्वक देखें तो (a) चित्र को देखने से पता चलता है कि पृथ्वी के उत्तरी गोलार्द्ध में सूर्य की किरणें सीधी पड़ रही हैं, इसलिए यहां इस समय गर्मी होगी और दक्षिणी गोलार्द्ध में इस समय सर्दी होगी। लगभग 6 महीने बाद स्थिति बिल्कुल उल्टी हो जाती है, अर्थात् उत्तरी गोलार्द्ध में सूर्य की किरणें तिरछी पड़ती हैं और सर्दी हो जाती है, जबकि दक्षिणी गोलार्द्ध में सूर्य की किरणें सीधी पड़ती हैं और गर्मी हो जाती है। इस प्रकार ऋतुएं बनती हैं।

21 मार्च और 23 सितम्बर को सूर्य भूमध्य रेखा (Equator) के ठीक ऊपर होता है। इन दिनों पृथ्वी के हर स्थान पर 12 घंटे के दिन और 12 घंटे की रात होती है। 21 मार्च से लेकर 21 जून तक सूर्य भूमध्य रेखा से कर्क रेखा की ओर बढ़ता है। इसका परिणाम यह होता है कि उत्तरी गोलार्द्ध में गर्मी पड़ती है और दक्षिणी गोलार्द्ध में सर्दी। इस अवधि में उत्तरी गोलार्द्ध में रात छोटी होती जाती हैं और दिन लम्बे होते जाते हैं। 21 जून से लेकर 22 दिसम्बर तक सूर्य कर्क रेखा में मकर रेखा की ओर बढ़ता है। 23 सितम्बर को सूर्य भूमध्य रेखा पर तथा 22 सितम्बर को मकर रेखा पर 23½° के कोण पर होता है। परिणाम यह होता है कि दक्षिणी गोलार्द्ध में दिन छोटे होते जाते हैं तथा रातें लम्बी। 22 सितम्बर के बाद सूर्य की गति फिर उत्तरायण होती है और 21 मार्च को पुनः भूमध्य रेखा के ऊपर पहुंच जाता है। इस दौरान रातें छोटी और दिन की लम्बाई बढ़नी शुरू हो जाती है। इस प्रकार ये यह निष्कर्ष निकलता है कि पृथ्वी का सूर्य के चारों ओर घूमना और अपने अक्ष पर झुके हुए होकर घूमना ही ऋतु परिवर्तन और रात-दिन बड़े, छोटे होने का कारण है।



भूमध्य रेखा पर सबसे अधिक गर्मी क्यों पड़ती है?

जब हम धरती पर किसी गर्म या ठण्डे स्थान होने की बात करते हैं, तो वास्तव में हमारा मतलब उस स्थान की जलवायु से होता है। किसी भी स्थान की जलवायु सूर्य की गर्मी पर निर्भर करती है। जैसा कि हम जानते हैं कि सूर्य ऊष्मा ऊर्जा (Heat Energy) का महान् स्रोत है। इसी के ताप से हमारी धरती, समुद्र और वायुमंडल को गर्मी मिलती है।

किसी भी स्थान की जलवायु उस स्थान पर सूरज से प्राप्त गर्मी के वितरण पर ही निर्भर करती है। अब प्रश्न उठता है कि धरती के अलग-अलग स्थानों पर सूर्य की गर्मी का वितरण अलग-अलग क्यों होता है, अर्थात् कुछ स्थानों पर अधिक गर्मी और कुछ पर अधिक ठंड क्यों पड़ती है?

हम जानते हैं कि हमारी धरती का आकार सन्तरे की भांति है, अर्थात् धरती की सतह गोलाई लिए हुए है। इस कारण धरती के अलग-अलग भागों पर सूरज की किरणें अलग-अलग झुकाव से पड़ती हैं। भूमध्य रेखा के उत्तर तथा दक्षिण के स्थानों में सूरज की किरणें तिरछी पड़ती हैं। ध्रुवों पर तो ये किरणें बहुत ही तिरछी पड़ती हैं। किन्तु भूमध्य रेखा पर सूर्य की किरणें सीधी पड़ती हैं। इस कारण भूमध्य रेखा वाले स्थानों पर सबसे अधिक गर्मी पड़ती है और भूमध्य रेखा के उत्तर और दक्षिण के स्थानों पर सूरज की किरणें तिरछी पड़ने से गर्मी कम पड़ती है। जैसे-जैसे हम भूमध्य रेखा से ध्रुवों की ओर जाते हैं, गर्मी कम होती जाती है और ठंड अधिक होती जाती है।

अब प्रश्न आता है कि सूरज की किरणें तिरछी पड़ने से ऊष्मीय प्रभाव कम क्यों होता है? इसका कारण यह है कि जब सूरज की किरणें तिरछी पड़ती हैं, तो इन्हें वायुमंडल में अधिक दूरी तय करनी पड़ती है। वायुमंडल में उपस्थित धूल, वाष्प और अन्य पदार्थों के कण, सूरज की किरणों में निहित ऊष्माा ऊर्जा का बहुत सा भाग अवशोषित कर लेते हैं। अतः किरणों को धरती तक पहुंचने में जितनी अधिक दूरी तय करनी पड़ेगी, उतनी ही अधिक ऊर्जा उसमें से वायुमंडल द्वारा अवशोषित हो जाती है। इसलिए तिरछी किरणें पड़ने वाले क्षेत्रों में कम गर्मी पहुंच पाती है।

इस प्रकार भूमध्य रेखा के या उसके पास के स्थान सूर्य की किरणें सीधी पड़ने के कारण गर्म होते हैं और इसके उत्तर और दक्षिण के स्थान, किरणें तिरछी पड़ने के कारण कम गर्म होते हैं। इसके अतिरिक्त किसी स्थान का गर्म या ठण्डा होना उस स्थान पर पानी के वितरण, जमीन की समुद्र तल से ऊंचाई और दूरी आदि पर भी निर्भर करता है।



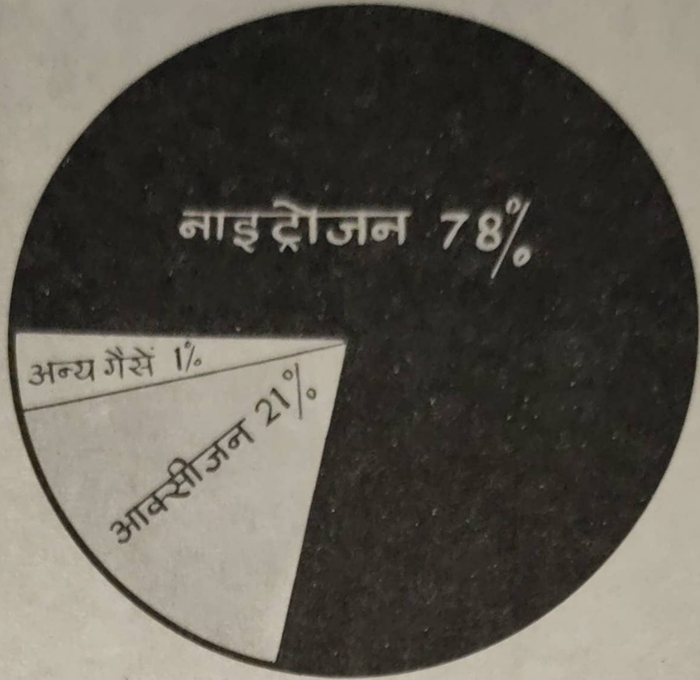
रेगिस्तान कैसे बनते हैं ?

रेगिस्तान एक ऐसा स्थान है जहां पानी नहीं होता, दूर-दूर तक रेत ही रेत होती है। रेगिस्तान में धल भरी आंधियां चलती रहती हैं। धरती की सतह का आठवां हिस्सा रेगिस्तान है। क्या तुम जानते हो कि रेगिस्तान कैसे बनते हैं?

रेगिस्तान बनने के अनेक कारण हैं। जब हवाएं एक दिशा में चलती हैं तो गर्मी उसकी नमी को सोख लेती है। यह सूखी हवा जहां-जहां से गुजरती है, वहां की नमी को सोखती हुई चलती है। परिणाम यह होता है कि धरती की वह सारी सतह एकदम सूख जाती है। नमी की कमी के कारण पेड़-पौधे भी सूख जाते हैं। पूरी धरती रेतीली हो जाती है और अपनी उर्वर-शक्ति खो देती है। इस तरह यह क्षेत्र एक रेगिस्तान में बदल जाता है।

गर्म और सूखे रेगिस्तान भूमध्यरेखा के आसपास पाये जाते हैं। भूमध्यरेखा के पास भयानक गर्मी होती है, इसलिए नमी नहीं होती और यह क्षेत्र रेगिस्तान की तरह रेतीला हो जाता है। रेगिस्तान भूमध्यरेखा से दूर भी बन सकते हैं। यदि एक क्षेत्र और समुद्र के बीच बहुत से पहाड़ हों और नम हवाएं समुद्र से उस क्षेत्र तक न पहुंच सकती हों और वर्षा पहाड़ों के केवल एक ओर होती हो, और दूसरी तरफ बिल्कुल सूखी रहती हो तो समय बीतने के साथ यह क्षेत्र रेगिस्तान बन जाता है।

उत्तरी अफ्रीका का सहारा रेगिस्तान दुनिया का सबसे बड़ा रेगिस्तान है। इसकी लम्बाई पूर्व से पश्चिम की ओर 5120 कि. मी. (3200 मील) है और उत्तर से दक्षिण की ओर 1280 कि. मी. से 2240 कि. मी. (800 से 1400 मील) तक है। इस रेगिस्तान का क्षेत्रफल 83,20,000 वर्ग कि. मी. (32,50,000 वर्ग मील) है। रेगिस्तान में कुछेक ही प्रकार के पौधे और पशु जिन्दा रह सकते हैं। ये वे किस्में होती हैं जिन्हें पानी की बहुत कम आवश्यकता होती है। कैक्टस और कुछेक प्रकार की झाड़ियां ही रेगिस्तान में हो पाती हैं। एक प्रकार की छिपकली भी रेगिस्तान में होती है। ऊंट के विषय में तो सभी जानते हैं कि ऊंट रेगिस्तान का जहाज़ कहलाता है।



हवा क्या है और इसके क्या उपयोग हैं?

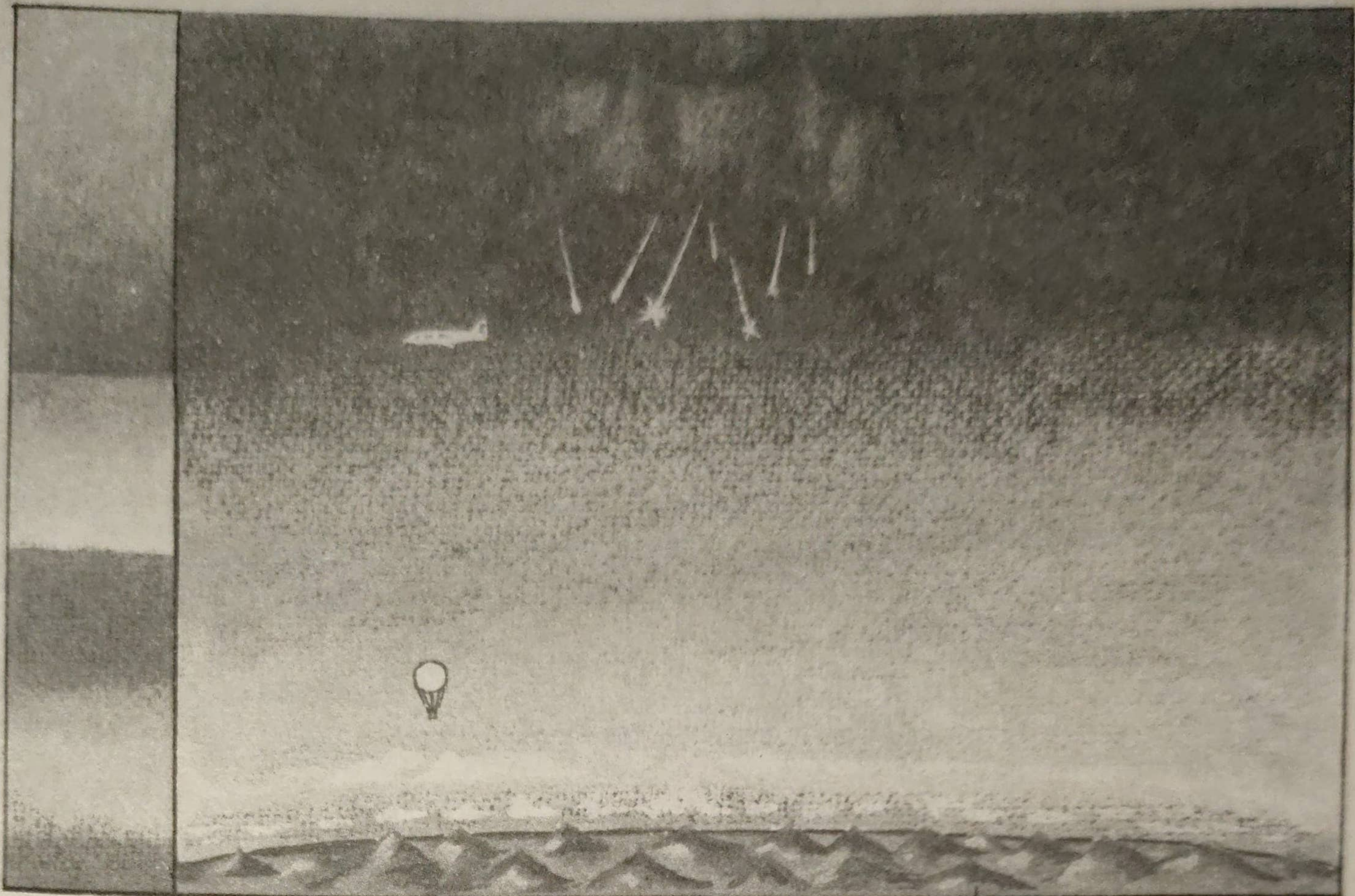
हम जिस धरती पर रहते हैं, उसके चारों ओर हवा का आवरण है। यह हवा हमें दिखाई नहीं देती है, लेकिन जब हम तेजी से दौड़ते हैं, तो कोई वस्तु हमारी गति का विरोध करती है। यह वस्तु ही हवा है। अतः हम हवा की उपस्थिति को महसूस कर सकते हैं। हवा जब तेजी से चलती है, तो बड़े-बड़े पेड़ों को उखाड़ कर फेंक देती है। हवा की इस तेज गति को हम आंधी कहते हैं।

जीवित रहने के लिए हवा अत्यंत आवश्यक है। बिना हवा के धरती पर जीवन संभव नहीं है। जिन ग्रहों पर वायु नहीं है, वहां पर कोई जीवन नहीं है। सभी जीवित प्राणी वायु को सांस लेने में प्रयोग करते हैं।

हवा क्या है? हवा कई गैसों का मिश्रण है। इसमें आक्सीजन व नाइट्रोजन व कार्बन डाइआक्साइड निष्क्रिय गैसें और जलवाष्प मिश्रित अवस्था में रहते हैं। हवा में 78 प्रतिशत नाइट्रोजन, 21 प्रतिशत आक्सीजन और 1 प्रतिशत अन्य गैसें होती हैं।

अब प्रश्न उठता है कि वायु में उपस्थित ये विभिन्न गैसें हमारे लिए किस प्रकार उपयोगी हैं। आक्सीजन तो सभी जीवित प्राणियों के सांस लेने में काम आती है। आक्सीजन वस्तुओं के जलने में सहायता करती है। यदि हवा में आक्सीजन न होती तो किसी भी ईंधन का जलना संभव नहीं हो पाता। यद्यपि नाइट्रोजन एक निष्क्रिय गैस है फिर भी है बड़े काम की। इसके यौगिक पेड़-पौधों के लिए बहुत उपयोगी हैं। कार्बन डाइआक्साइड पेड़-पौधों के सांस लेने में काम आती है। वायु में उपस्थित जलवाष्प से ही वर्षा होती है। रेगिस्तान की वायु शुष्क होती है, जबकि समुद्र के पास वाले स्थानों की हवा में जलवाष्प की मात्रा काफी अधिक होती है। यही कारण है कि समुद्र के पास वाले स्थानों में वर्षा काफी होती रहती है।

जैसे-जैसे हम धरती से ऊपर की ओर जाते हैं, वायु का दबाव कम होता जाता है। पहाड़ों पर हवा का दबाव कम होता है, क्योंकि वहां पर हवा के अणु एक दूसरे से अधिक दूरी पर होते हैं। यही कारण है कि पहाड़ों पर चढ़ने वालों को सांस लेने के लिए अलग से आक्सीजन की आवश्यकता होती है।



वायुमण्डल (Atmosphere) क्या है?

वायुमंडल वायु के उस खोल को कहते हैं, जो पृथ्वी को चारों ओर से घेरे हुए है। इसमें अनेकों गैसें और कई पदार्थों के कण हैं। इसमें नाइट्रोजन, आक्सीजन, कार्बन डाइआक्साइड और ऑरगान गैसें क्रमशः (78.1%), (21%), (0.03%) और (0.9%) सम्मिलित रहती हैं। इसके साथ ही आंशिक मात्रा में जलवाष्प, मीथेन, नाइट्रसआक्साइड, कार्बनमानोआक्साइड, हाइड्रोजन, ओजोन, हीलियम, नियॉन, क्रिपटॉन और जीनान गैसें भी पाई जाती हैं। इसके अलावा रेत के कण, धुआं नमक के कण, ज्वालामुखी की राख के कण, उल्कापात की धूल और फूलों के पराग के कण भी मौजूद रहते हैं।

वायुमंडल पृथ्वी के निकट अधिक घना होता है और जैसे-जैसे हम ऊपर जाते हैं, वायु हल्की और पतली होती जाती है। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि वायुमंडल की सीमा 1000 किलोमीटर की ऊंचाई तक होती है।

वायुमंडल कई परतों से बना हुआ है। ऊंचाई के साथ-साथ वायुमंडल के दबाव, घनत्व और तापमान में भी अंतर आता जाता है। छः कि० मी० की ऊंचाई पर वायु का दबाव आधा रह जाता है। इसी प्रकार 91 मीटर की ऊंचाई पर 10° तापमान कम हो जाता है।

वायुमंडल को भौतिक गुणों के आधार पर पांच स्तरों में बांटा गया है। आओ, इन स्तरों के विषय में भी जानकारी प्राप्त की जाए।

(1) व्योममंडल (Troposphere) यह पृथ्वी की सतह से 17 कि० मी० की ऊंचाई तक फैला हुआ है। इसमें वायुमंडल के संपूर्ण भार का 75% भार मौजूद है। लगभग सभी जीवित प्राणी इसी स्तर में रहते हैं। नीचे से ऊपर जाने में तापक्रम कम होने लगता है और 10 कि० मी० पर पहुंच कर न्यूनतम हो जाता है। वर्षा, बादल और बर्फ

आदि इसी मंडल में बनते हैं। तेज हवा और आंधियां इसी भाग में चलती रहती हैं। प्राणियों के जीवन के लिए यह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है।

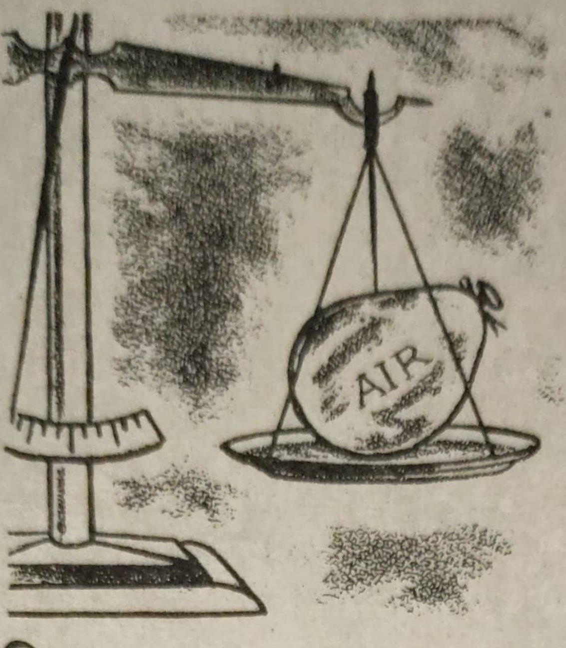
(2) समतापमंडल (Stratosphere): इसकी सीमा 50 कि० मी० ऊंचाई तक जाती है। इसके ऊपरी भाग में ओजॉन (Ozone) गैस मौजूद रहती है, जॉ सूर्य से आने वाली पराबैंगनी किरणों (Ultra Violet Rays) को अवशोषित कर लेती हैं। यह किरणें जीवन के लिए बहुत घातक हैं। इस क्षेत्र में न तो तेज हवाएं चलती हैं और न ही तापक्रम में अन्तर आता है।

(3) मध्यमंडल (Mesosphere): यह 50 कि० मी० की ऊंचाई के पश्चात् शुरू होता है। इस क्षेत्र में तापक्रम कम होने लगता है और 85 कि० मी० पर न्यूनतम हो जाता है।

(4) आयनमंडल (Ionosphere): मध्यमंडल के ऊपर लगभग 500 कि० मी० तक की सतह आयनमंडल कहलाती है। इस क्षेत्र में आवेशित कण (Charged ions) विभिन्न तहों में रहते हैं। ये कण ही रेडियो तरंगों को पृथ्वी की ओर परावर्तित करते हैं और पृथ्वी पर रेडियो संचार व्यवस्था को सम्भव बनाते है।

(5) बाह्यमंडल (Exosphere): यहां वायु का घनत्व बहुत कम हो जाता है। यहां हीलियम और हाइड्रोजन होती है। यहां का तापमान बहुत अधिक होता है।

वायुमंडल जीवन के लिए बहुत उपयोगी है। इसमें हम सांस लेते हैं। इसकी उपस्थिति हमें सूर्य की किरणों के घातक प्रभाव से बचाती है। आकाश से गिरने वाली उल्काएं भी वायुमंडल के घर्षण से जलकर ऊपर ही समाप्त हो जाती हैं।



क्या हवा में भार होता है?

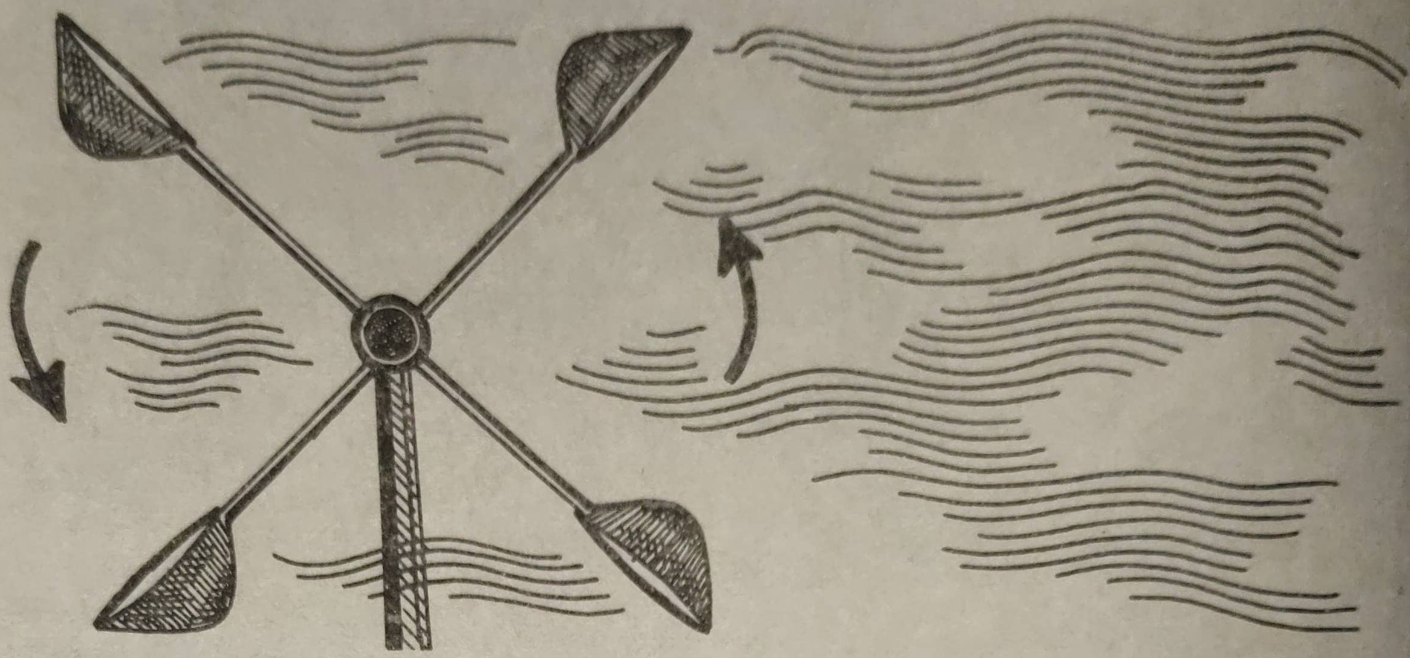
जिस धरती पर हम रहते हैं, उसे चारों ओर से सैकड़ों मील की ऊंचाई तक हवा घेरे हुए है। इसी हवा के वातावरण में हम रहते हैं, खाते हैं, पीते हैं, सांस लेते हैं और घूमते-फिरते हैं। साधारण रूप से हमें लगता है कि हवा का कोई भार नहीं है, लेकिन ऐसी बात नहीं है। यह एक वैज्ञानिक सत्य है कि हवा में भार होता है और वह हमारे शरीर पर पड़ता है।

हवा में भार क्यों होता है? इस बात को समझने के लिए हमें यह जानना होगा कि हवा क्या है? हवा नाइट्रोजन, आक्सीजन, कार्बन डाइआक्साइड, धूल के कण, जलवाष्प आदि का एक मिश्रण है। ये सभी गैसें अणुओं से मिलकर बनी हैं। इसका मतलब यह हुआ कि हवा भी कई प्रकार के अणुओं का मिश्रण है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि वायु पदार्थ की एक गैसीय अवस्था है। हम यह भली-भांति जानते हैं कि अणुओं का अपना भार होता है, इसलिए हवा जो अणुओं का मिश्रण है, उसमें भी भार होता है।

हवा में भार होता है! इस बात को एक साधारण से प्रयोग द्वारा सिद्ध किया जा सकता है। फुटबाल का एक खाली ब्लेडर लो। इसके बांधने के लिए एक छोटा सा धागा भी लो। ब्लेडर और धागे को एक तराजू में तोल लो। अब ब्लेडर में हवा भरो और उसके मुंह को धागे से बांध दो। अब इसे फिर तराजू में तोलो। तुम देखोगे कि इसका भार पहले से अधिक हो गया है। भार की यह वृद्धि ब्लेडर में भरी हवा के कारण ही हुई। इससे सिद्ध होता है कि हवा में भार होता है। हवा के एक लिटर आयतन में लगभग 1.3 ग्राम भार होता है।

हवा के भार के कारण वायुमंडल का प्रत्येक वस्तु पर दबाव पड़ता है। यह दबाव लगभग 7 किलो प्रति वर्ग इंच के करीब होता है। 7 किलो प्रति वर्ग इंच के हिसाब से हमारी 12 वर्ग इंच की हथेली पर लगभग 82 किलो का दबाव पड़ रहा है। यदि हम अपने शरीर पर पड़ने वाले भार की कल्पना करें, तो देखते हैं कि हमारे शरीर पर तीन हाथियों के वज़न से भी अधिक दबाव पड़ रहा है। हमें यह भार महसूस क्यों नहीं होता या हम इस से दब क्यों नहीं जाते! इसका कारण है कि हमारे शरीर के अंदर रक्त नलिकाएं (Blood Vessels) में रक्त प्रवाह का वेग इतना प्रबल होता है कि हवा के दबाव को रक्त का दबाव रोक लेता है और हमें बाहरी हवा का दबाव अनुभव करने का मौका नहीं मिलता।

जैसे-जैसे हम धरती से ऊपर की ओर जाते हैं, वैसे यह दबाव कम होता जाता है, परन्तु ऊंचाई पर शरीर में रक्त दबाव पहले जैसा ही रहता है। पहाड़ों की चोटी पर यह दबाव काफी कम हो जाता है। पृथ्वी से 62 मी० की ऊंचाई पर यह दबाव लगभग न के बराबर रह जाता है। रक्त दबाव जब वायुमंडल के दबाव की तुलना में बहुत अधिक हो जाता है, तो कभी-कभी रक्त नाक या कान की त्वचा को फाड़कर बाहर बहने लगता है।

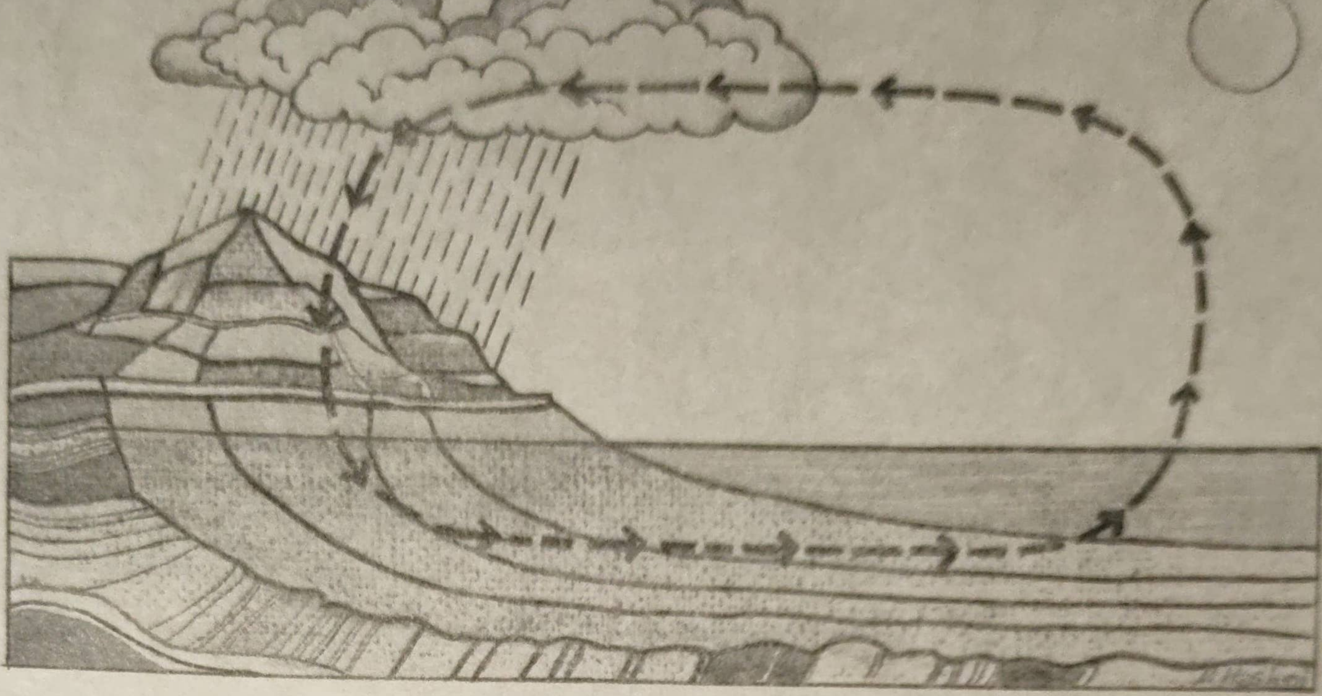


हवा का वेग कैसे मापा जाता है?

आमतौर पर लोगों को यह कहते सुना जाता है कि आज हवा बहुत तेज चल रही है या आज हवा धीरे-धीरे चल रही है। जब जोरों से आंधी आती है, तो समाचार-पत्रों में या रेडियो पर खबर आती है कि आंधी का वेग 20 से 25 कि० मी० प्रति घंटा था। क्या तुम जानते हो कि हवा का वेग कैसे मापा जाता है?

हवा के वेग मापने के यंत्र को पवनवेगमापी (Anemometer) कहते हैं। इस उपकरण का आविष्कार इंगलैंड के वैज्ञानिक रौबर्ट हुक (Robert Hook) ने सन् 1667 में किया था। वायुवेगमापी कई प्रकार के होते हैं। आजकल जिन वायुवेगमापियों का अधिकतर प्रयोग होता है, उनमें एल्यूमिनियम के कई छोटे-छोटे प्याले एक धुरी पर लगे होते हैं। ये प्याले हवा के टकराने से स्वतंत्रतापूर्वक घूम सकते हैं। हवा की गति जितनी तेज होती है, ये प्याले उतनी ही तेजी से चक्कर लगाने लगते हैं। (ऊपर का चित्र देखें)। निश्चित समय में प्यालों द्वारा लगाए गए चक्करों की संख्या से हवा का वेग मालूम कर लिया जाता है। इस यंत्र में एक ऐसा पैमाना लगा होता है, जिसमें एक निर्देशक प्यालों की गति को प्रदर्शित करता है। यह पैमाना सीधे ही (Directly) हवा का वेग बताता है।

प्रश्न कौंध रहा होगा तुम्हारे ज़ेहन में कि हवा का वेग मापने की हमें आवश्यकता कब और क्यों हुई? इसका सीधा सा उत्तर यह है कि जब मनुष्य ने वायुयान में बैठकर ऊपर उड़ना शुरू किया तो हवा के वेग को मापना उसके लिए बहुत आवश्यक हो गया। पहले वह आकाश में गुब्बारे भेज कर वायु का वेग पता लगाता था, लेकिन पवनवेगमापी यंत्र के आविष्कार के बाद उसकी यह समस्या हल हो गई। आजकल हर वायुयान में पवनवेगमापी लगा होता है। इसके अतिरिक्त मौसम विज्ञान के अध्ययन में वायु के वेग का ज्ञान बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुआ है। इसके आधार पर आने वाले मौसम के विषय में बहुत सी बातों की भविष्यवाणी की जा सकती है। आज के वैज्ञानिकों ने लगभग 4 या 5 इंच के आकार के वायुवेगमापी यंत्र विकसित कर लिए हैं।



वर्षा कैसे होती है?

इतना तो हम जानते ही हैं कि वर्षा बादलों से होती है। जब भी आकाश में बादल घिर आते हैं, तो हम कहते हैं कि बरसात आने वाली है। लेकिन वास्तव में वर्षा की बूंदों का बनना एक लम्बा और जटिल तरीका है। प्रकृति के इस तरीके को निम्न प्रकार से समझा जा सकता है।

गर्मी के मौसम में नदियों, झीलों और सागरों का पानी सूर्यताप से जलवाष्प में बदलता रहता है। पानी की यह वाष्प वायु में मिल जाती है। इस क्रिया को वाष्पीकरण कहते हैं। जलवाष्प हवा से हल्की होती है। इसलिए यह वातावरण में ऊपर की तरफ उठती चली जाती है और थोड़ा सा ही तापमान कम होने पर यह बादलों का रूप धारण कर लेती है। हम जानते हैं कि हवा में धूल के कण होते हैं। जब ये बादल अधिक ताप वाले क्षेत्र से कम ताप वाले क्षेत्र की ओर जाते हैं, तो तापमान में गिरावट के कारण जलवाष्प इन धूल कणों पर संघनित होना शुरू हो जाती है। इस प्रकार वर्षा की छोटी-छोटी बूंदें बन जाती हैं। जब सघनन के कारण इनका आकार थोड़ा बढ़ जाता है, तो भार के कारण ये बूंदें वर्षा के रूप में धरती पर गिरती हैं, इसी को हम वर्षा होना कहते हैं।

ठण्डे क्षेत्रों में वाष्प का संघनन केवल धूल के कणों पर ही नहीं होता, बल्कि बादलों में बने बर्फ के छोटे-छोटे कणों पर भी होता रहता है। इससे बर्फ के कणों पर बनी बूंदें बड़ी होकर वर्षा के रूप में धरती पर गिर जाती हैं।

वर्षा होने के लिए यह जरूरी है कि नमी युक्त गर्म हवा ठंडे स्थान की ओर गतिशील हो जाए, जिससे वाष्प का संघनन संभव हो सके। बिजली चमकने से वायु में जो आयन पैदा होते हैं, उन पर भी जल की बूंदे संघनित हो सकती हैं। क्या तुम जानते हो कि संसार में सबसे अधिक वर्षा भारत में चेरापूंजी नामक स्थान पर होती है। सन् 1861 में तो इस स्थान पर पूरे वर्ष में 905 इंच वर्षा हुई थी।

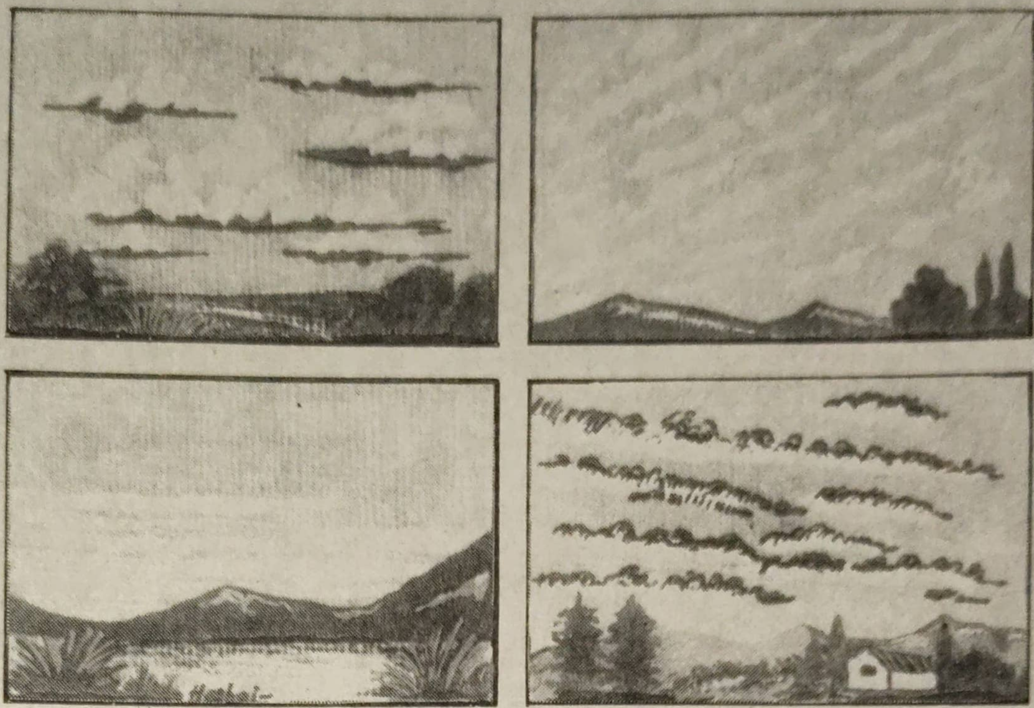


मानसून

मानसून शब्द का जन्म अरबी भाषा के मौसिन शब्द से हुआ है, जिसका अर्थ होता है, वर्ष के विभिन्न समयों में हवाओं की दिशाओं में एक निश्चित परिवर्तन। वास्तव में गर्मी में महासागर से जमीन की ओर बहने वाली हवाएं और सर्दी में जमीन से महासागर की ओर बहने वाली हवाएं मानसून हवाएं कहलाती हैं। गर्मी में महासागरों से धरती की ओर बहने वाली हवाएं वर्षा की संभावनाएं बताती हैं और जाड़ों में धरती से सागरों की ओर बहने वाली हवाएं खुश्की पैदा करने वाली होती हैं।

दक्षिण एशिया में हिन्द महासागर से तट की ओर बहने वाली हवाएं मानसूनी हवाएं कहलाती हैं। इन हवाओं से ही वर्षा की सम्भावनाओं का पता लगाया जाता है। मानसून दो प्रकार के होते हैं दक्षिण पश्चिम या ग्रीष्मकालीन मानसून और उत्तरी पूर्वी या शीतकालीन मानसून। भारत में 90% वर्षा ग्रीष्मकालीन मानसून से होती है। ये हवाएं मध्य जून में हिन्दमहासागर से तट की ओर बढ़ती हैं और हिमालय पर्वत श्रृंखला से टकराकर मैदानी भागों में वर्षा करती हैं। इसके विपरीत सर्दियों में मध्य एशिया तथा उत्तर भारत के क्षेत्रों से बहुत ठंडी, शुष्क तथा तीव्र हवाएं बाहर की ओर चलने लगती हैं। इन्हें शीतकालीन मानसून अथवा लौटते हुए मानसून कहा जाता है। भारत के तटीय क्षेत्रों पर ये हवाएं कुछ वर्षा करती हैं।

अब प्रश्न यह है कि मानसून हवाएं तट के मौसम में किस तरह परिवर्तन लाती हैं। यह एक वैज्ञानिक तथ्य है कि बड़े उपमहाद्वीप अपने आसपास के समुद्रों की तुलना में कहीं अधिक तेजी से गर्म व ठंडे हो जाते हैं। बसंत ऋतु में मध्य व दक्षिण एशिया के क्षेत्र तेज़ी से गर्म होने लगते हैं और ग्रीष्म ऋतु में दक्षिण हिन्द महासागर और पूर्व में प्रशांत महासागर की तुलना में ये क्षेत्र बहुत अधिक गर्म हो जाते हैं। अधिक तापमान के कारण वायुमंडल का दबाव कम हो जाता है और इसलिए समुद्र से तट की ओर हवाएं चलने लगती हैं। इसे गर्मी का मानसून कहा जाता है। शरदकाल की शुरुआत में पूरा एशिया ही तेज़ी से ठंडा होने लगता है और सर्दियों में तो इस क्षेत्र का तापमान आसपास के महासागरों से कम हो जाता है। इससे वायुमंडल का दबाव बढ़ जाता है और इसीलिए सर्दियों में मानसून की हवाएं सूखे तटीय क्षेत्रों से समुद्र की ओर जाने लगती हैं। दक्षिण व पूर्वी एशिया में मानसूनी जलवायु रहती है और इसका क्षेत्रफल काफी बड़ा है।



बादल कैसे बनते हैं और कितने प्रकार के होते हैं ?

बादल का बनना मनुष्य के लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण रहा है। सृष्टि के आरंभ से ही बादल वर्षा के रूप में मनुष्य को पानी देते रहे हैं और इसी पानी के कारण धरती पर जीव-जन्तु और पेड़-पौधे जीवित रहते हैं। क्या तुम जानते हो कि ये बादल कैसे बनते हैं और कितने प्रकार के होते हैं?

हम जानते हैं कि सूर्य की गर्मी से नदियों, तालाबों, झीलों और सागरों का पानी भाप बनकर हवा में उड़ता रहता है। वाष्प से युक्त गर्म हवा हल्की होने के कारण आकाश में ऊपर उठती रहती है। अधिक वाष्प वाली हवा जब एक जगह जमा हो जाती है, तो उसका रूप धुएं जैसा हो जाता है। जलवाष्पयुक्त हवा के इसी रूप को हम बादल कहते हैं। उपयुक्त अवस्थाओं में बादलों में उपस्थित जलवाष्प धूल, नमक और धुएं के कणों पर संघनित होकर बूंदों में बदल जाती है। यही बूंदें बड़ी होकर वर्षा के रूप में धरती पर गिरती हैं।

आकाश की ओर ध्यानपूर्वक देखने से पता चलता है कि सभी बादल एक जैसे नहीं होते हैं। बादलों को उनके आकार व स्वरूप के अनुसार मुख्य रूप से चार भागों में बांटा जा सकता है।

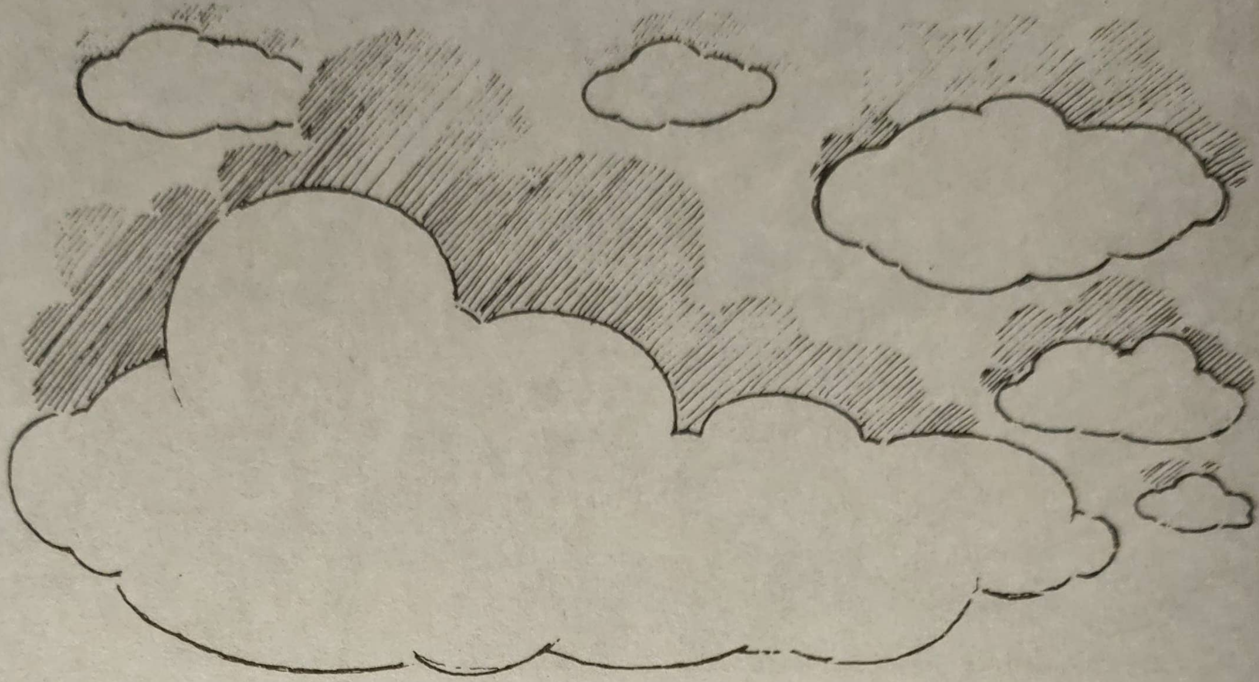
1– पक्षाभ मेघ (Cirrus): ये बादल बहुत ऊंचाई पर बनते हैं। इनका रंग सफेद होता है और ये चिड़िया के पंख की भांति दिखते हैं। इनकी ऊंचाई धरती से 8 से 11 कि० मी० (5 से 7 मील) तक होती है। ये बर्फ के छोटे-छोटे कणों से मिलकर बनते हैं।

2– स्तरीय मेघ (Stratus): ये बादल लगभग 2440 मीटर (8000 फुट) की ऊंचाई पर बनते हैं। ये कोहरे की परत जैसे लगते हैं। ये प्रायः खराब मौसम और बूंदा-बांदी की सूचना देते हैं।

3– कपासी मेघ (Cumulus): कपास की ढेर की शक्ल के ये बादल पृथ्वी से 4000 या 5000 फुट की ऊंचाई पर बनते हैं। ये ऊपर से गुम्बद के आकार के होते हैं और नीचे से चपटे होते हैं। ये आकाश में सफेद पहाड़ की तरह नजर आते हैं।

4– वर्षा मेघ (Nimbo stratus): ये सबसे कम ऊंचाई पर बनने वाले बादल हैं। ये गहरे भूरे या काले रंग के होते हैं। इन बादलों से ही वर्षा होती है।

इसके अतिरिक्त बादलों की और भी किस्में होती हैं, लेकिन मुख्य रूप से यही किस्में होती हैं।



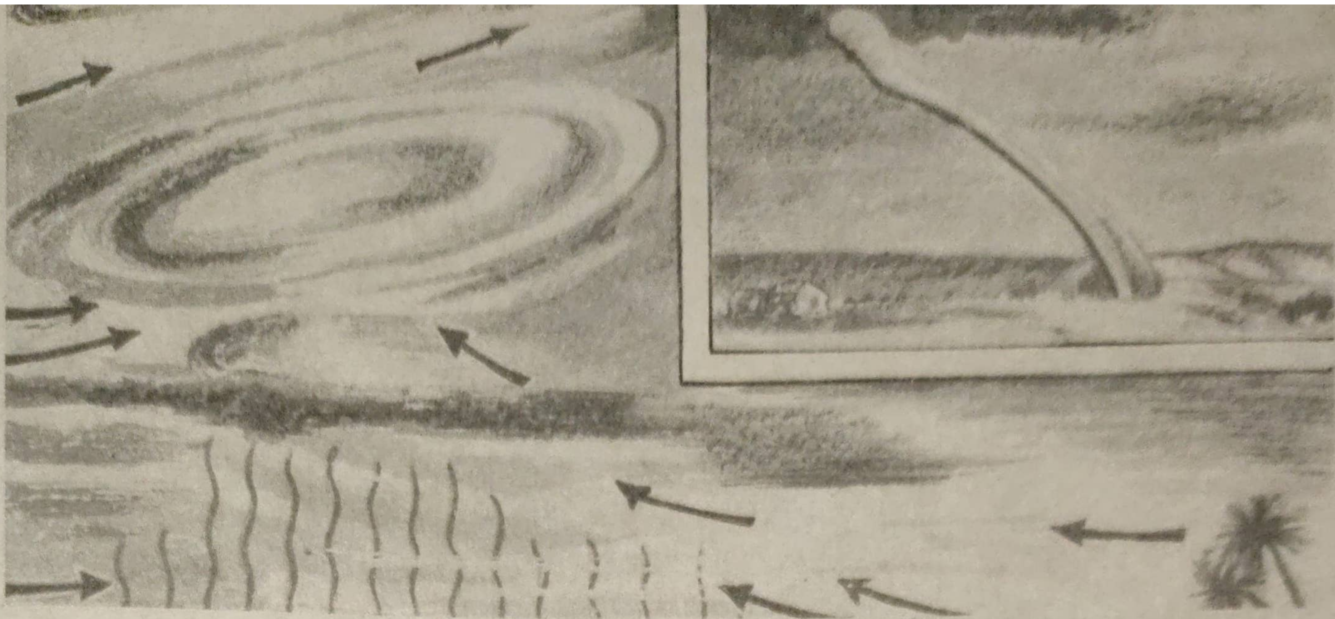
कुछ बादल बिन बरसे क्यों लौट जाते हैं?

बरसात के दिनों में अक्सर हम देखते हैं कि आकाश में बहुत से बादल इकट्ठे हो गए हैं। इन बादलों को देखकर ऐसा लगता है, मानो थोड़ी ही देर में बरसात आने वाली है, लेकिन इन बादलों से कभी तो बरसात हो जाती है और कभी थोड़ी देर में ये बादल गायब हो जाते हैं और वर्षा की बूंद भी नहीं आती। क्या तुम जानते हो कि सभी बादल बरसते क्यों नहीं हैं?

हम जानते हैं कि सूर्य की गरमी के कारण समुद्र का पानी भाप बनकर वायुमण्डल में जाता रहता है। गर्मी के दिनों में पानी से भाप बनने की क्रिया तीव्र हो जाती है। इससे वायुमंडल में जलवाष्प की मात्रा बढ़ जाती है। इस स्थिति में तापमान में थोड़ी सी गिरावट होने पर यह वाष्प संघनित होकर पानी के छोटे-छोटे कणों में बदल जाती है। इसी संघनित रूप को बादल कहते हैं, जिसमें पानी के असंख्य छोटे-छोटे कण होते हैं।

इस प्रकार बने हुए बादल के नीचे की हवा यदि ठंडी हो, तो बादलों में उपस्थित जलकणों का आकार बड़ा होता जाएगा और ये पानी की बड़ी बूंदों में बदल जाएंगे। यही बूंदें वर्षा के रूप में जमीन पर गिर जाती हैं।

इसी प्रकार यदि इन बादलों के नीचे की हवा गर्म हो, तो उसमें उपस्थित संघनित जलकण फिर से वाष्प में बदल जाएंगे। परिणाम यह होगा कि बादल बिन बरसे आंखों से ओझल हो जाएंगे।



आंधी और तूफान क्यों आते हैं?

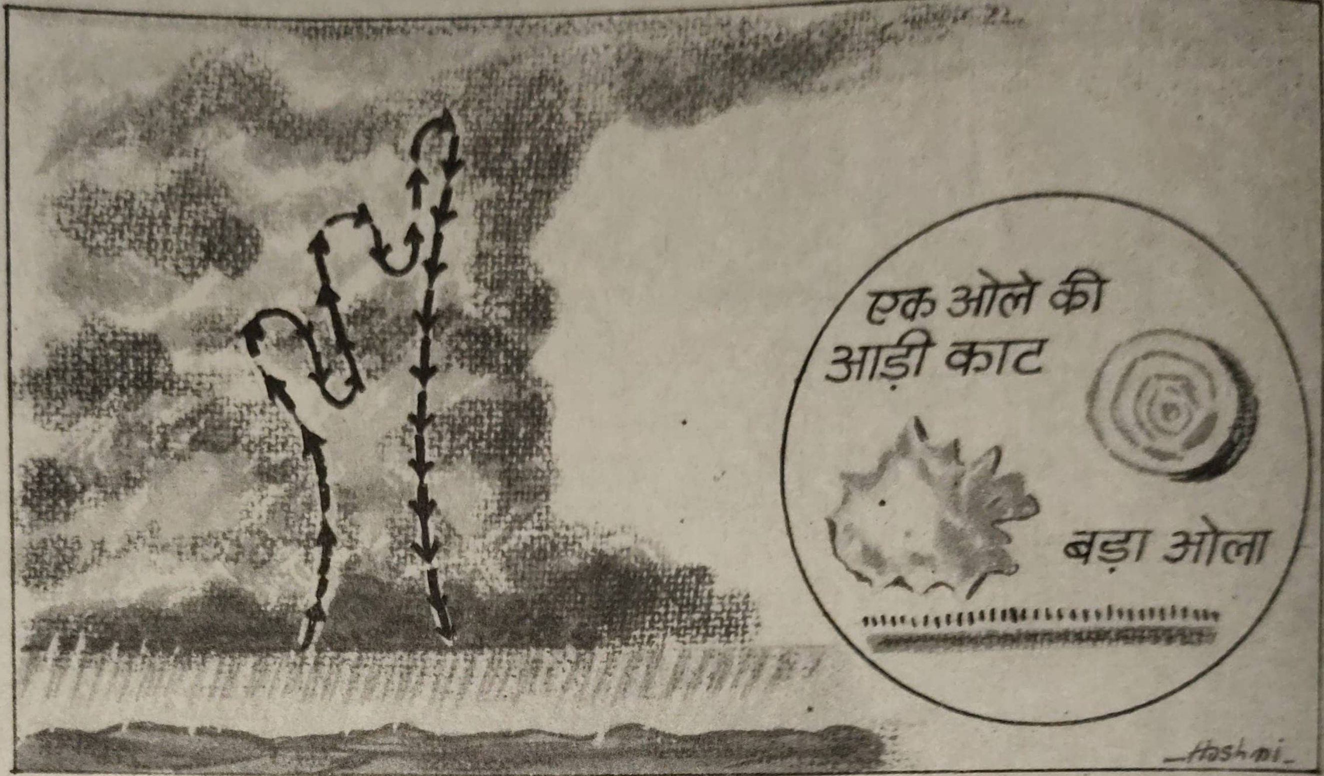
आंधी और तूफान वायुमंडल में होने वाले उन परिवर्तनों को कहते हैं, जिनमें हवा सामान्य वेग से न चलकर तेज़ गति से चलने लगती है। सभी आंधी और तूफान एक जैसे नहीं होते। उनमें कुछ न कुछ भिन्नता अवश्य होती है। कुछ तूफान ऐसे होते हैं, जिनसे धरती का थोड़ा सा ही क्षेत्र प्रभावित हो पाता है और कुछ इतने विशाल होते हैं, जो हज़ारों कि० मी० तक प्रभाव डालते हैं। जब हवा तेजी से चलती है, तो उसे आमतौर पर आंधी (Storm) कहा जाता है। यदि इस आंधी में धुल की मात्रा बहुत अधिक होती है,तो इसे धूल भरी आंधी कहते हैं।

गर्मियों में जो आंधियां आती हैं, मुख्य रूप से तापमान के बढ़ने के कारण वायु का दबाव कम होने से आती हैं। किसी क्षेत्र में जब गर्मी अधिक पड़ती है, तो तापमान बढ़ जाता है, जिससे वायु का दबाव कम हो जाता है। इस वायु के दबाव को संतुलित करने के लिए ठण्डे स्थानों से अधिक दबाव वाली हवा तेजी से गर्म क्षेत्र की ओर बढ़ने लगती है। इसके साथ धूल भी उड़ती है। यही तेजी से चलने वाली हवा धूल भरी आंधी का रूप ले लेती है।

सबसे भयंकर तूफान वे होते हैं, जिनमें हवा गोल घेरे में तेजी से घूमती है। इस प्रकार के तूफानों को बवंडर (Tornado), चक्रवात (Cyclone) तथा हरीकेन (Hurricane) कहते हैं। टोरनेडो द्वारा कम क्षेत्र प्रभावित होता है। इसमें वायु का वेग 200 कि० मी० प्रति घंटे तक हो जाता है। जब किसी थोड़े से क्षेत्र में तापमान बहुत बढ़ जाता है, तो वायु का दबाव एकदम से गिर जाता है। वायु के दबाव को संतुलित करने के लिए इस क्षेत्र के केन्द्र की ओर हवा तेज़ी से बढ़ती है। तेज़ गति के कारण उस क्षेत्र में हवा की गति चक्रदार (Whirling) हो जाती है। इस प्रकार गर्म हवा तेज़ी से ऊपर उठने लगती है, जिससे वह कीप (Funnel) के आकार के बादल जैसा रूप ले लेती है। इसे ही टोरनेडो कहते हैं। इसके अंदर वायु का दबाव इतना कम होता है कि जब किसी भी इमारत के पास से गुजरता है, तो वह इमारत अपने अंदर के वायु के दबाव के कारण नष्ट-भ्रष्ट हो जाती है।

हरीकेन आमतौर पर उष्णकटिबंधीय क्षेत्र में आते हैं। ये 160 से 640 कि० मी० (100 से 400 मील) व्यास के क्षेत्र को घेर लेती है और हवा 120 से 200 कि० मी० (75 से 125 मील)प्रति घंटे की रफ्तार से चलने लगती है। हरीकेन के बीच से 5 से 15 मील के हिस्से में बिल्कुल शांति रहती है। इस हिस्से को तूफान की आंख कहा जाता है। जब वह हिस्सा किसी क्षेत्र में पहुंचता है, तो वहां की हवा एकदम शांत हो जाती है। इससे कभी-कभी लोग समझने लगते हैं कि तूफान रुक गया है, लेकिन जैसे ही यह हिस्सा उस क्षेत्र से हटता है, हवा फौरन भीषण गति से बहना शुरू कर देती है। हरीकेन क्योंकि गोल चक्कर में घूमने वाला तूफान है, इसलिए इसमें हवा भी काफी रफ्तार से गोलाई में ही घूमती है। ईस्ट इण्डीज़ व चीन सागर के आसपास इनको टाइफून (Typhoon) कहा जाता है।

साइक्लोन भी एक भीषण किस्म का तूफान होता है। यह तूफान भी बहुत लंबे चौड़े क्षेत्र को अपनी चपेट में ले लेता है। इसमें हवा बहुत कम दबाव वाले क्षेत्र की तरफ दौड़ती है और इसी से विनाश होता है। 13 से 14 नवम्बर 1970 को पूर्वी पाकिस्तान में आए भीषण तूफान से 10 लाख से अधिक लोगों की मृत्यु हो गई थी।



ओले कैसे बनते हैं?

कभी-कभी तेज़ वर्षा के साथ बर्फ के गोल-गोल टुकड़े भी गिरने लगते हैं। आमतौर पर बर्फ के इन्हीं टुकड़ों को ओले (Hail) कहा जाता है। ओले अक्सर गर्मियों के मौसम में दोपहर के बाद गिरते हैं। सर्दियों में भी ओले गिरते देखे गए हैं। जब ओले गिरते हैं, तो बादलों में गड़गड़ाहट और बिजली की चमक बहुत अधिक होती है। ओले आकार में छोटे और बड़े दोनों ही हो सकते हैं। क्या तुम जानते हो कि ओले कैसे बनते हैं?

बादलों से वर्षा की बूंदें जब धरती की ओर गिरती हैं, तो उन्हें कभी-कभी ठण्डे क्षेत्र से गुजरना पड़ता है। कम तापमान के कारण वर्षा की ये बूंदें जमकर बर्फ यानी हिमकणों में बदल जाती हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि इन गिरते हुए हिमकणों को वायुमंडल में वायु की तेज़ी से ऊपर उठती हुई कोई धारा ऊपर उठा ले जाती है.ये जमी हुई बूंदें जब उस क्षेत्र में पहुंच जाती हैं, जहां वर्षा की बूंदें पहले से ही बननी शुरू हुई थीं, तो इन हिमकणों में पानी के कण चिपकने लगते हैं। जब ये फिर नीचे की ओर गिरती हैं, तो वायु के ठण्डे क्षेत्र से गुजरने पर जम जाती हैं। इस प्रकार ओले का आकार बढ़ने लगता है। जब इनका भार ऊपर उठाने वाली वायु के बल से अधिक हो जाता है, तो ये ओले के रूप में जमीन पर गिरने लगते हैं। यदि आप किसी ओले को काटकर ध्यानपूर्वक देखें, तो उसमें पारदर्शक और अर्धपारदर्शक बर्फ की कई सतहें दिखाई देंगीं। ये परतें पानी के बार-बार जमने से ही बनती हैं।

गिरते हुए ओलों का व्यास 1 सेंटीमीटर से लेकर 7-8 सेंटीमीटर तक होता है। इनका वज़न लगभग 500 ग्राम तक होता है। 6 जुलाई सन् 1928 को पॉटर नेबं (Potter Neb) नामक स्थान पर एक बहुत बड़ा ओला गिरा, जिसका वज़न 717 ग्राम था। इसका व्यास 14 सेंटीमीटर (5.5 इंच) था।

ओलों के गिरने से काफी नुकसान हो जाता है। यहां तक कि ओलों के गिरने से लगी चोट के कारण जानवर और आदमी भी मरते देखे गए हैं। ओलों का गिरना फसल के लिए हानिकारक होता है। इनसे खेतों में खड़ी फसल नष्ट हो जाती है। 30 अप्रैल 1888 को मुरादाबाद (उत्तर प्रदेश) में ओले गिरने से 246 व्यक्तियों की मृत्यु हो गई थी।



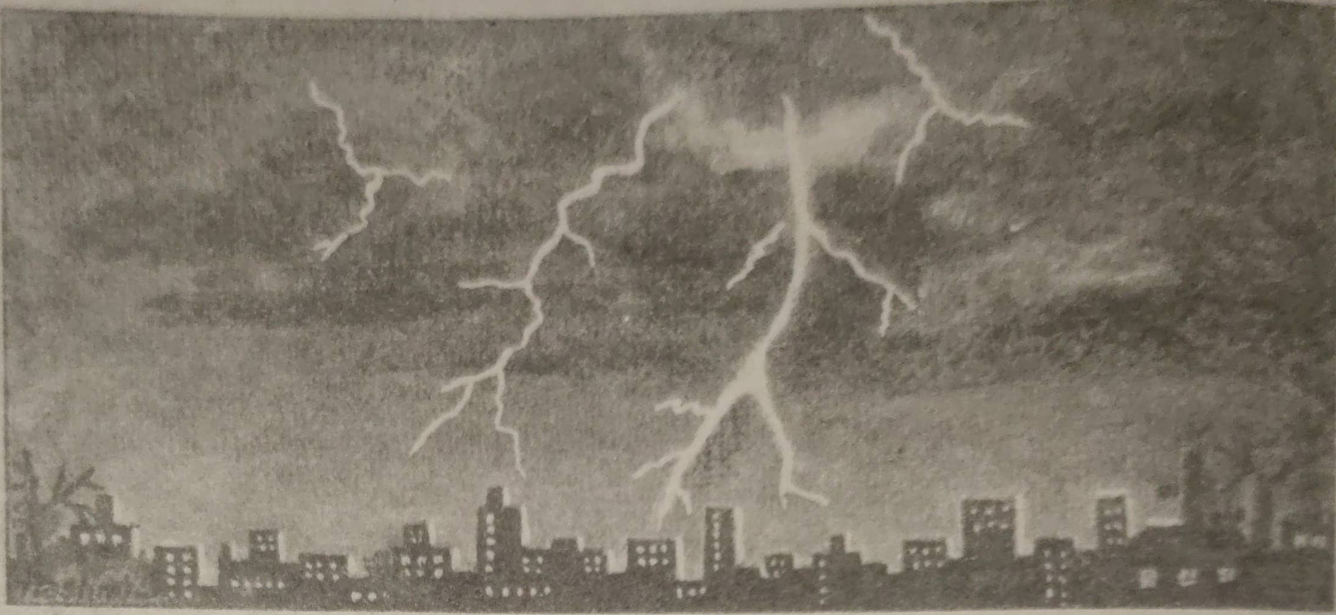
कोहरा कैसे बनता है?

सर्दी के मौसम में सुबह के समय कभी-कभी धरती के ऊपर एक धुएं जैसा आवरण छा जाता है, इसे कोहरा कहते हैं। यदि कोहरा घना होता है, तो कोई भी चीज़ दिखाई नहीं देती है। तुम्हारे ज़ेहन में यह प्रश्न कौंध रहा होगा कि कोहरा कैसे बनता है? आओ,इस प्रश्न का समाधान कर लिया जाए!

वास्तव में कोहरा एक प्रकार का बादल होता है, जो पृथ्वी के संपर्क में आ जाता है। कोहरा पृथ्वी की सतह के पास की वायु में उपस्थित पानी के वाष्प के संघनन (condensation) से बनता है। जब वायु में जलवाष्प की मात्रा इतनी हो जाती है कि किसी निश्चित तापमान पर अधिक जलवाष्प इसमें नहीं समा सकते, तो यह पानी या बर्फ के बहुत छोटे-छोटे कणों में बदल जाती है। जब जलवाष्प से संतृप्त वायु ठंडी हो जाती है, तो इसकी जलवाष्प वहन करने की क्षमता और भी कम हो जाती है। ऐसी स्थिति में अतिरिक्त जलवाष्प संघनित हो जाती है। जब जलवाष्प का संघनन पृथ्वी के निकट होता है, तो यह बादल जैसे रूप में आ जाता है। इसी को हम कोहरा बनना कहते हैं। कोहरे में उपस्थित पानी के छोटे-छोटे कण दृश्यता को बहुत ही कम कर देते हैं।जाड़ों के दिनों में सुबह के समय पृथ्वी की सतह ठंडी होती है, जिसके कारण वायु में उपस्थित जलवाष्प तेजी से संघनित होकर कोहरे में बदल जाती है।

सामान्य रूप से बड़े-बड़े शहरों में कोहरे की परतें, गांव व कस्बों में दिखने वाली कोहरे की परतों की अपेक्षा अधिक मोटी होती है। इसका कारण यह है कि शहरों की वायु में धूल और धूएं के कण अधिक होते हैं, जो कोहरे में उपस्थित पानी के कणों से मिलकर इसको गहरा बना देते हैं। इस प्रकार के कोहरे को धूम्र कोहरा (Smoky Fog) भी कहते हैं। जिन शहरों में बहुत से कारखाने होते हैं, जिसके कारण धुआं अधिक होता है, उन शहरों में घना कोहरा बनता है। बम्बई, कलकत्ता तथा लंदन जैसे बड़े औद्योगिक नगरों में इस प्रकार का घना कोहरा आमतौर पर देखने को मिलता है।

कोहरे की उपस्थिति के कारण यातायात में बड़ी असुविधा होती है। कभी-कभी कोहरे के कारण विमान और मोटर दुर्घटनाएं भी हो जाती हैं। सन् 1955 में कोहरे को समाप्त करने का एक रासायनिक तरीका ढूंढा गया। इस तरीके से कोहरे वाले स्थान पर सिलवर आयोडाइड या कैल्शियम क्लोराइड का छिड़काव किया गया, जिससे कोहरे में मौजूद पानी के कण वर्षा के रूप में जमीन पर गिर गए थे। वैसे कोहरा समाप्त करने में अभी तक कोई भी तरीका पूरी तरह सफलता प्राप्त नहीं कर पाया है।

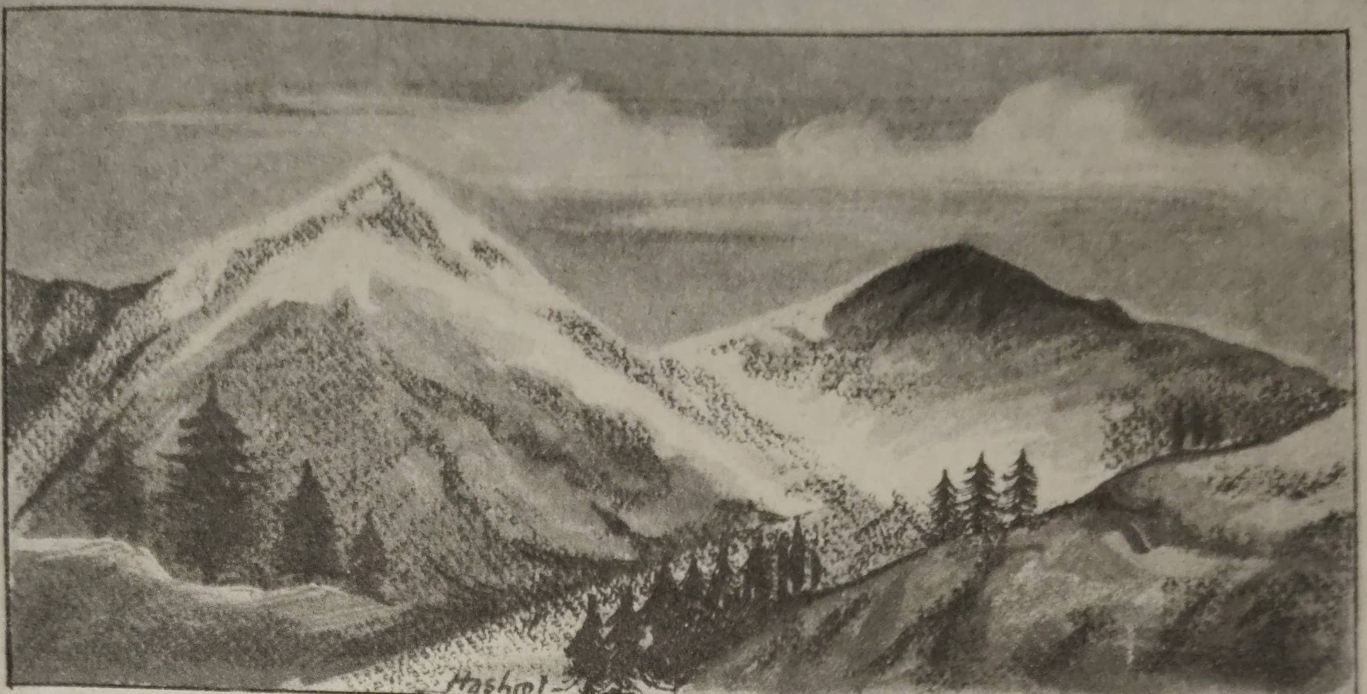


क्या बिजली की चमक और गड़गड़ाहट खतरनाक है?

बहुत से लोग ऐसे हैं, जो बादलों में बिजली की चमक और गड़गड़ाहट की आवाज़ से बहुत डरते हैं। वास्तव में इस गड़गड़ाहट से डरने की कोई बात नहीं, क्योंकि गड़गड़ाहट की यह आवाज़ जब तक हमारे कानों में पहुंचती है, उससे पहले ही बिजली चमक चुकी होती है। यद्यपि बादलों में बिजली का चमकना और आवाज़ का पैदा होना एक साथ ही होता है, लेकिन प्रकाश का वेग ध्वनि के वेग की अपेक्षा बहुत अधिक होने के कारण बिजली की चमक तो हमें फौरन दिखाई दे जाती है, लेकिन गड़गड़ाहट की आवाज़ की तरंगें हमारे कानों तक कुछ देर बाद पहुंचती हैं।

अब प्रश्न यह है कि क्या हमें बिजली के चमकने से डरना चाहिए? बिजली की चमक खतरनाक जरूर होती है, लेकिन बिजली जमीन पर बहुत कम गिरती है। बिजली के गिरने से लोगों की मृत्यु भी हो सकती है। बिजली के चमकने पर एक प्रकाश की चमकीली सी रेखा बादलों में खिंच जाती है। वास्तव में बिजली की चमक की यह रेखा दो बादलों के बीच मे हो सकती है। जब कोई आवेशित (Charged) बादल धरती की सतह के पास आता है, तो धरती की सतह पर विपरीत आवेश पैदा हो जाता है। जब इन दोनों के बीच में विभवांतर (Potential Difference) वायु की प्रतिरोधक शक्ति (Resistance Power) से अधिक हो जाता है, तो बिजली चमक जाती है तथा विद्युत वायु में से होकर पृथ्वी की ओर बहने लगती है। इसके फलस्वरूप ही बिजली चमकती है। यह चमक 50 कि० मी० तक लंबी हो सकती है।

धरती और बादलों के बीच जो बिजली की चमक पैदा होती है, वह ऊंची-ऊंची इमारतों के लिए खतरनाक हो सकती है। इन इमारतों को बिजली के इस प्रभाव को बचाने के लिए उनकी छतों पर धातु की नुकीली छड़ें लगा दी जाती हैं, जिन्हें इमारत की दीवारों के सहारे-सहारे ले जाकर जमीन के नीचे गाड़ दिया जाता है। इनको तड़ित चालक (Lightning Conductor) कहते हैं। जमीन पर गिरने वाली बिजली से इन तड़ित चालकों के कारण ऊंची इमारतों को कोई नुकसान नहीं होता है। वैज्ञानिकों का कहना है कि यदि आपको बिजली की चमक दिखाई दे जाती है, तो आप बिजली के चमकने से पूरी तरह सुरक्षित हैं। बिजली के चमकते समय डर कर घर के भीतर या पेड़ के नीचे नहीं जाना चाहिए। खुले मैदान में आ जाना अधिक सुरक्षित रहता है।



पहाड़ कैसे बनते हैं?

पहाड़ धरती का ऐसा क्षेत्र है, जो अपने चारों ओर की जमीन की अपेक्षा बहुत ऊंचा होता है। धरती पर पहाड़ों की अनेक श्रृंखलाएं हैं। क्या तुम जानते हो कि ये बड़े-बड़े पहाड़ों की श्रृंखलाएं (Ranges) कैसे बनी हैं।

भूवैज्ञानिकों ने पहाड़ों के बनने का बड़ा व्यापक अध्ययन किया है। इन अध्ययनों से वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि पहाड़ों का जन्म एक पहाड़ के रूप में नहीं होता, बल्कि इनका निर्माण श्रृंखला के रूप में होता है। पहाड़ों की श्रृंखला जमीन पर अनेकों छोटी-बड़ी पहाड़ियों के साथ बहुत दूर तक फैली रहती हैं। पहाड़ों की उत्पत्ति का सही ढंग से अध्ययन करने के लिए भूवैज्ञानिकों ने इनको चार श्रेणियों में बांटा है। अलग-अलग प्रकार के पहाड़ों का निर्माण अलग-अलग प्रकार से हुआ है, लेकिन सभी पहाड़ों की उत्पत्ति पृथ्वी की सतह में भीषण उत्थल-पुथल के कारण ही हुई है। पृथ्वी की सतह में ये महान परिवर्तन लाखों-करोड़ों वर्ष पहले हुए। चारों प्रकार के पहाड़ों के निर्माण को निम्न प्रकार से समझा जा सकता है।

पहले प्रकार के पहाड़ों को ज्वालामुखी पहाड़ (Volcanic mountains) कहते हैं, इन पहाड़ों का निर्माण लावा, राख व अंगारों से होता है। पृथ्वी की आंतरिक हलचलों से पृथ्वी की सतह काफी फट जाती है और धरती के अंदर के पदार्थ लावे के रूप में बाहर निकलने लगते हैं। ज्वालामुखी पहाड़ शंकु (cone) के आकार के होते हैं और उनके ऊपरी सिरे पर बहुत बड़ा गड्ढा या छेद होता है। इस प्रकार बने पर्वतों में इटली का वेसुवियस (Vesuvias), जापान का फ्यूजीआमा (Fujiyama), अमेरिका का हुड (Hood) और रैनियर (Ranier) ज्वालामुखी श्रृंखलाएं मुख्य हैं।

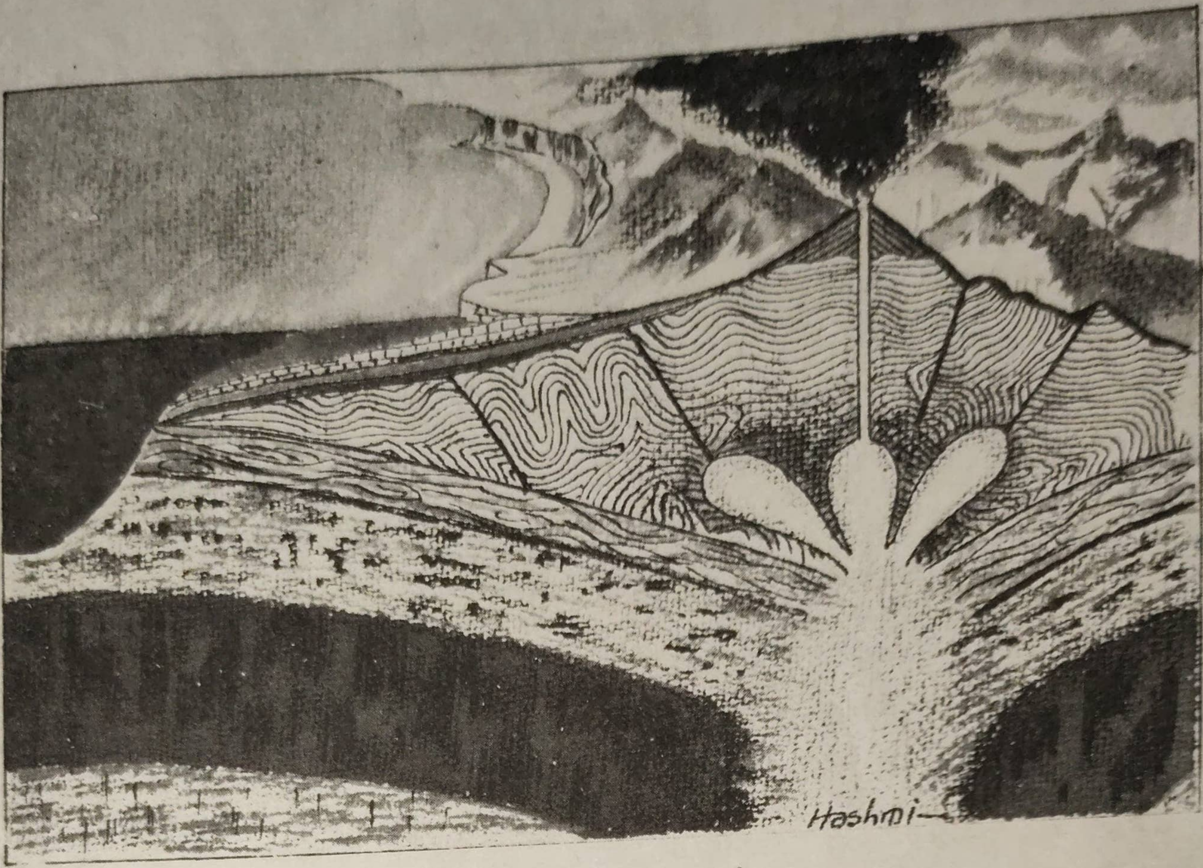
दूसरे प्रकार के पहाड़ों को परतदार पर्वत (Folded mountains) कहते हैं। ये पहाड़ चट्टानों की कई परतों से बने होते हैं। इन परतों का निर्माण पृथ्वी के अंदर भयानक सिकुड़न और दबाव के कारण होता है। पृथ्वी की सतह के नीचे कुछ क्षेत्र गतिशील होते हैं, जो अधिक बल और सिकुड़न के कारण ऊपर उठ जाते हैं और पहाड़ों का रूप ले लेते हैं। आल्प्स (Alps) पर्वत श्रृंखला इसी प्रकार बनी है।

तीसरे प्रकार के पहाड़ों का रूप गुम्बद जैसा होता है। इसलिए इन्हें गुम्बद पर्वत (Dome mountains) कहते हैं। जो पिघला हुआ लावा पृथ्वी के अंदर से बहुत अधिक दबाव से बाहर आता है, तो ठंडा होने पर यह गुम्बद के रूप में जमा होता जाता है और गुम्बद पर्वत का निर्माण होता रहता है। इस प्रकार के गुम्बद पर्वतों का उदाहरण दक्षिण डकोटा (Dakota) की ब्लैक हिल हैं।

चौथे प्रकार के पर्वतों को शिला पर्वत(Block mountains) कहते हैं। इन पर्वतों का निर्माण पृथ्वी की परतों में दोष आने के कारण होता है। कभी-कभी पृथ्वी के अंदर ऐसी भयानक हलचल होती है कि परिणामस्वरूप धरती के अंदर उपस्थित पूरे का पूरा शिलाखण्ड उलटकर पृथ्वी पर पर्वत के रूप में खड़ा हो जाता है तथा इससे ब्लाक पर्वत का निर्माण हो जाता है। कैलीफोर्निया में 'सिऐरा नेवाड़ा' पर्वत शृंखला (Sierra Nevada Range) एक ब्लाक पर्वत का उदाहरण है। जिसकी एक ही शिला 640 कि० मी० (400 मील) लम्बी व 128 कि० मी० (80 मील) चौड़ी है।

पहाड़ों के बनने में लाखों वर्ष लग जाते हैं। पहाड़ों की ऊपर उठने की दर प्रतिवर्ष कुछ मिलीमीटर होती है।

समय के साथ-साथ पहाड़ों का विनाश भी होता रहता है। वर्षा, तूफान, पिघली हुई बर्फ का बहता हुआ पानी, पर्वतों की मिट्टी और चट्टानों का थोड़ा-थोड़ा हिस्सा नष्ट करते रहते हैं। इस क्रिया के फलस्वरूप एक समय ऐसा आता है, जब बड़े-बड़े पहाड़ भी छोटी-छोटी पहाड़ियों या मैदानों में बदल जाते हैं।

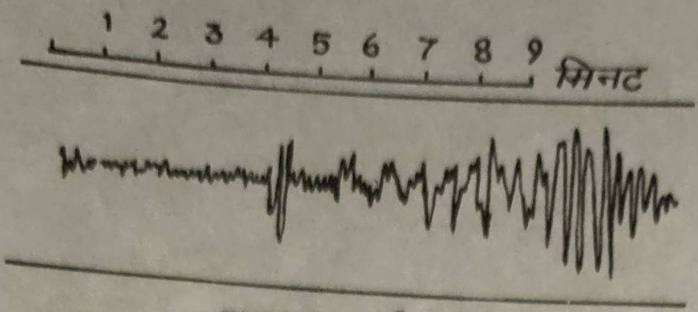


ज्वालामुखी कैसे बनते हैं?

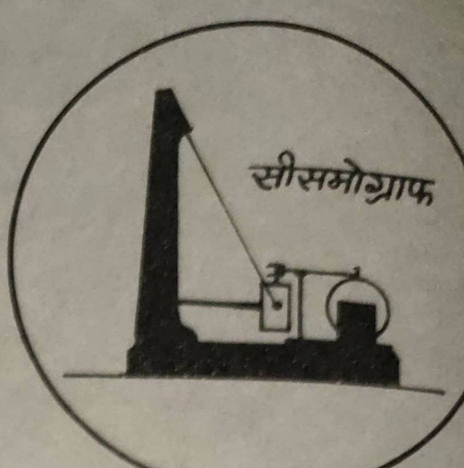
ज्वालामुखी पर्वत उन पर्वतों को कहते हैं, जिनके मुंह से आग, धुआं और राख निकलती रहती है। ये पर्वत पृथ्वी के अंदर की उथल-पुथल का ही परिणाम हैं। जब किसी स्थान पर ज्वालामुखी फटता है, तो इसमें से पिघली हुई लाल चट्टानें निकलती हैं, जिन्हें लावा कहते हैं। क्या तुम जानते हो कि ज्वालामुखी पर्वत कैसे बनते हैं?

ज्वालामुखियों का बनना इस प्रकार समझा जा सकता है। पृथ्वी की सतह से यदि हम नीचे की ओर जाएं तो तापमान बढ़ता जाता है। लगभग 3 कि० मी० की गहराई पर इतना तापमान होता है, जो चट्टानों को पिघला सकता है। पृथ्वी के अंदर की चट्टानें जब इस गर्मी के कारण पिघलती हैं, तो वे फैलने लगती हैं। इन पिघली हुई चट्टानों को मैग्मा (Magma) कहते हैं।पृथ्वी के कुछ भू-भागों में यह पपड़ी के भीतर की दरारों के सहारे ऊपर उठने लगता है। जब इस मैग्मा का दबाव काफी हो जाता है और किसी स्थान पर धरती की पपड़ी (Crust) कमजोर होती है, तो पपड़ी वहां पर फट जाती है और उसमें से पिघली हुई चट्टान की गर्म गैसें, तरल और ठोस पदार्थ तेज़ी से बाहर निकलने लगते हैं। इसको ज्वालामुखी का फटना कहते हैं। अंदर से निकलने वाले गर्म धुआं, राख व पत्थर के टुकड़ों को लावा कहते हैं। यह लावा धरती पर शंकु के आकार में जमता हुआ चला जाता है और ठंडा होने पर पर्वत का रूप ले लेता है।

ज्वालामुखियों के मुंह से आग और धुआं तब तक निकलता रहता है, जब तक अंदर का पिघला हुआ द्रव्य समाप्त न हो जाए। जब अंदर का पदार्थ समाप्त हो जाता है,तोआग व धुएं का निकलना बंद हो जाता है और ऐसे ज्वालामुखियों को मृत ज्वालामुखी (Dead Volcanoes) कहते हैं। इस समय दुनिया में 450 से अधिक ज्वालामुखी पर्वत हैं। इंडोनेशिया में ऐसे ज्वालामुखियों की संख्या काफी है। संसार का सबसे ऊंचा बुझा हुआ ज्वालामुखी पर्वत अर्जेन्टाइना में है, जो 6960 मीटर (22834 फुट) ऊंचा है।



भूकम्प चार्ट



भूकम्प क्यों आते हैं?

कभी-कभी रेडियो, टेलीविज़न और समाचार पत्रों से सूचना प्राप्त होती है कि अमुक स्थान पर भूकम्प का झटका महसूस हुआ। इन खबरों में आए हुए भूकम्प की अवधि तथा होने वाले नुकसान का ब्यौरा होता है।

भूकम्प आने पर धरती हिलने लगती है। धरती की यह कंपन कभी-कभी इतनी साधारण होती है कि हमें उसका पता तक नहीं चल पाता और कभी-कभी इतनी विकराल होती है कि इसके कारण ज़मीन फट जाती है, इमारतें गिर जाती हैं और बहुत से लोग मर जाते हैं। धरती के इस हिलने या कंपन को ही भूचाल या भूकम्प कहते हैं। क्या तुम जानते हो कि भूकम्प क्यों आते हैं?

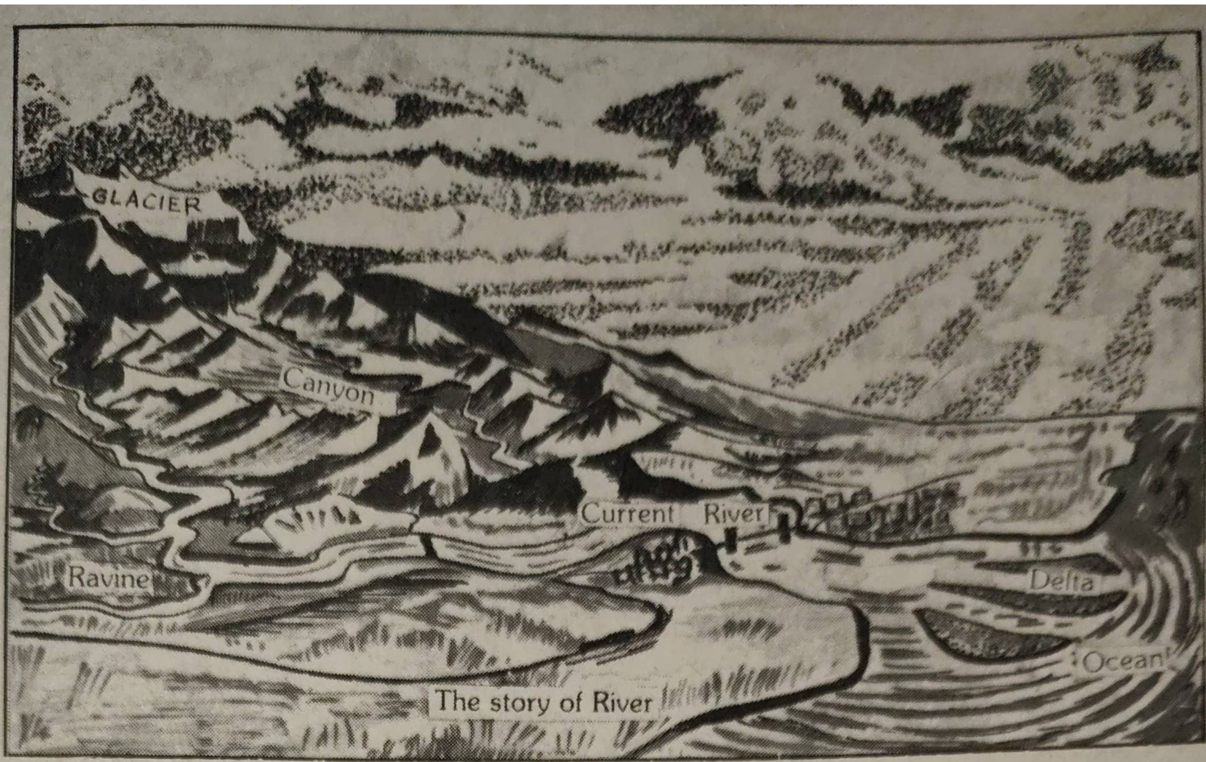
हम जानते हैं कि पृथ्वी की सतह विभिन्न प्रकार की ऊंची, नीची चट्टानों से बनी है। पृथ्वी की भीतरी उथल-पुथल के कारण या असमान दबाव के कारण इन चट्टानों में विकृति पैदा हो जाती है। अधिक दबाव के कारण चट्टानों की परतें अचानक टूट जाती हैं। टूटकर ये चट्टानें या तो धरती के अंदर धंस जाती हैं या ऊपर की ओर उठ जाती हैं। जिस स्थान पर ऐसा चट्टानी परिवर्तन होता है, उस स्थान पर पृथ्वी की पपड़ी को एक जोरदार धक्का लगता है। इसी धक्के के कारण पृथ्वी कांप उठती है। यही कंपन धरती की सतह में होती हुई आगे बढ़ती है। जिस स्थान तक इन कंपनों को महसूस किया जाता है, उस स्थान तक धरती का क्षेत्र भूकम्प ग्रस्त हो जाता है, जिसके फलस्वरूप इमारतें गिर जाती हैं और लोग मर जाते हैं। जिस स्थान पर भूकम्प की उत्पत्ति होती है, उस स्थान को भूकम्प केंद्र कहते हैं।

धरती की सतह के कुछ ऐसे स्थान हैं, जहां पर अक्सर भूकम्प आते रहते हैं। जापान में सबसे अधिक भूचाल आते हैं। यहां का भूपृष्ठ सब जगह एक सा नहीं है। इसीलिए यहां भूकम्प अधिक संख्या में आते हैं।

1906 में उत्तरी अमेरिका के सेन फ्रांसिसको में एक बहुत बड़ा भूकम्प आया था, जिसमें 700 लोग मारे गए थे और करोड़ों रुपए की सम्पत्ति का नुकसान हुआ था। फरवरी 1971 में ऐसा ही एक भूकम्प लौस ऐन्जेल्स (Los Angeles) में आया था, जिसमें करोड़ों रुपए का नुकसान हो गया था। 1775 में पुर्तगाल की राजधानी लिस्बन (Lisbon) में एक भूकम्प के कारण 6 मिनट में साठ हज़ार से अधिक मनुष्य इस भूकम्प की भेंट चढ़ गए। पर्वत श्रृंखलाओं के शिखर टूट टूटकर घाटियों में लुढ़क पड़े। भूकम्प के डर से अनेकों नर नारियों ने समुद्र तट पर संगमरमर के बने एक चौड़े घाट पर शरण ली। किन्तु क्षणभर में यह विशाल घाट पानी में इस प्रकार गायब हो गया कि एक भी शव तैरता हुआ दिखाई न दिया।

चीन के क्रान्सु प्रांत में 1920 में आए भूकम्प से 300 वर्ग मील क्षेत्र प्रभावित हुआ था और दो लाख लोगों की मृत्यु हो गई थी। 1923 में जापान में आए हुए एक भूकम्प में विध्वंस के साथ-साथ एक लाख से अधिक लोगों की मृत्यु हो गई थी।

भूकम्पों का अध्ययन करने के लिए वैज्ञानिकों ने एक यंत्र विकसित किया है, जिसे भूकम्प मापी (Seismograph) कहते हैं। इस यंत्र में भूकम्प तरंगों का लेखा-जोखा करने का प्रबन्ध होता है। भूकम्प का अध्ययन करने के लिए यंत्रों को संसार के विभिन्न भागों में लगा दिया गया है, जो लगातार भूकम्प कंपनों को रिकार्ड करते रहे हैं।



नदियां कैसे बनीं?

रिवर (River) शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के रिपा (Ripa) शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है—किनारा प्राचीन काल में पानी की उस धारा को, जिनके किनारे होते थे, रिवर कहा जाता था। लेकिन आधुनिक परिभाषा के अनुसार पानी की बहती विशाल धाराओं कों, जिनके किनारे बदलते रहते हैं, नदी कहा जाता है। पानी की छोटी-छोटी बहती धाराओं को नाला (Brook) कहा जाता है। क्या तुम जानते हो कि नदियों का जन्म कैसे हुआ?

सृष्टि (Creation) के आरम्भ काल में जब धरती पर पहाड़ों और समुद्रों का निर्माण हो चुका था, तब लगातार वर्षा होती रहती थी। वर्षा का यह पानी पहाड़ों पर से टेढ़े-मेढ़े रास्तों से गुजरता हुआ समुद्रों में जा मिलता था। लगातार बहते पानी के कारण ये रास्ते गहरे और चौड़े होते चले गए। पानी की धारा के कारण इनका रूप परिवर्तित होता गया। इन्हीं धाराओं को नदी का नाम दिया गया।

जैसे-जैसे समय बीतता गया, नदियों का रूप भी बदलता गया। संसार की अधिकतर नदियां पहाड़ों से ही निकलती हैं। इनमें बहने वाला पानी पहाड़ों की चोटियों पर जमी बर्फ के पिघलने के कारण होता है। नदियों में वर्षा का पानी भी मिलता रहता है।

कुछ नदियों का जन्म पहाड़ों पर जमी बर्फ के पिघलने के कारण होता है। नदियों में वर्षा का पानी भी मिलता जाता है। कुछ नदियों का जन्म पहाड़ों पर जमी बर्फ से बने ग्लेशियरों के खिसकने से भी हुआ है। ग्लेशियर जब गतिशील हो जाता है, तो अपने रास्ते में आने वाले ऊबड़-खाबड़ जमीन के हिस्सों को समतल करता जाता है। कुछ समय बाद बर्फ के पिघलने से नदियां इन्हीं घाटियों से होकर बहने लगती हैं। इसके अलावा कुछ नदियों के स्रोत (Sources) झरने और झीलें भी हो सकती हैं।

स्रोत के निकट नदी धीरे-धीरे बहती रहती है। जिन-जिन स्थानों पर नदी अपने द्वारा लाई गई मिट्टी छोड़ जाती है, वे स्थान बहुत उपजाऊ हो जाते हैं। अधिकांश उपजाऊ मैदान बड़ी-बड़ी नदियों द्वारा लाई गई मिट्टी से ही बने हैं।

प्राचीन काल में जब यातायात के साधन नहीं थे, तब नदियों द्वारा ही नावों की सहायता से सामान को एक स्थान से दूसरे स्थान तक भेजा जाता था। आज भी नदियों का महत्त्व कम नहीं हुआ है। नदियों में नावें और स्टीमर भी चलते हैं। बांध बना कर नदियों के पानी को इकट्ठा किया जाता है। बांध के पानी को ऊंचाई से गिराकर बिजली पैदा की जाती है। इसी पानी को खेतों की सिंचाई के लिए भी प्रयोग में लाया जाता है।

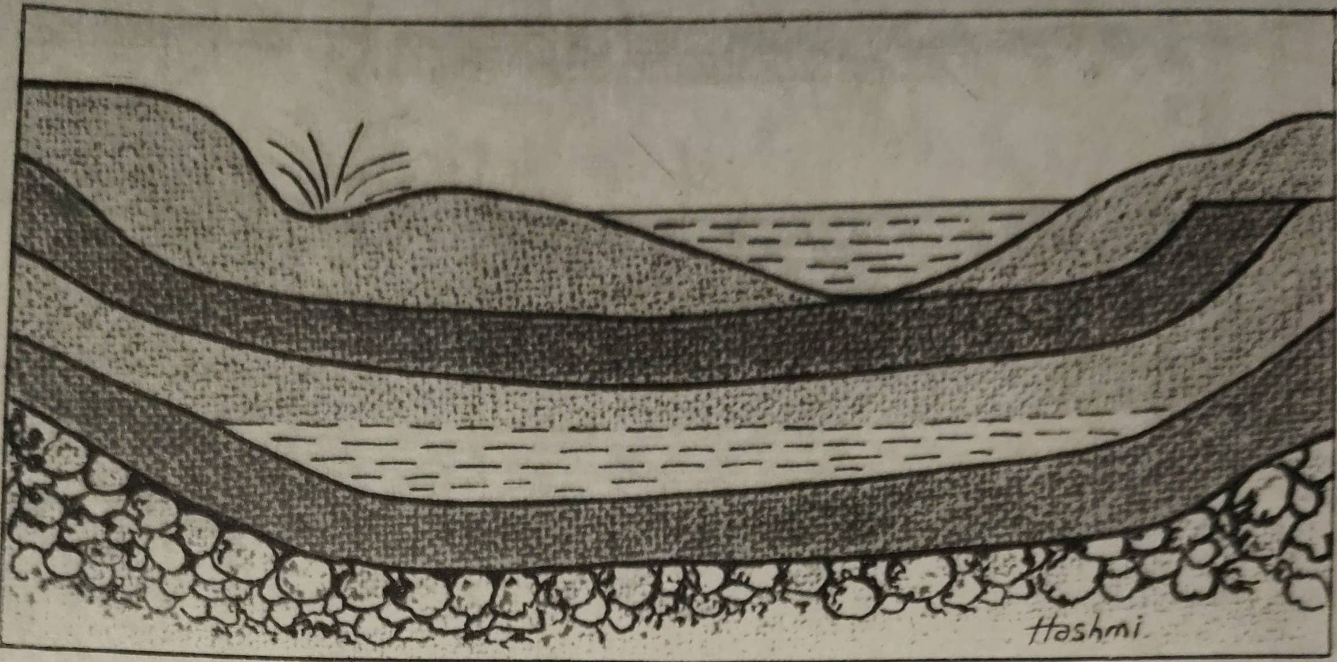


झीलें कैसे बनती हैं?

धरती की सतह के पानी से भरे लम्बे, चौड़े निचले स्थानों को झील कहा जाता है। जमीन की सतह से निचले क्षेत्रों में वर्षा या पिघली हुई बर्फ का पानी इकट्ठा होता रहता है। कभी-कभी इन निचले स्थानों में छोटे-छोटे नदी-नाले भी जाकर मिलते हैं, जिससे इनमें पानी इकट्ठा होता रहता है। क्या तुम जानते हो कि धरती के ये निचले स्थान झील का रूप लेने वाले इन बड़े-बड़े गड्ढों या निचले स्थानों का जन्म कैसे होता है?

झीलों का निर्माण कई प्रकार से होता है। कभी-कभी ज्वालामुखी पर्वत के ठंडे होने से झील बन जाती है। बुझे हुए ज्वालामुखी के गड्ढों में पानी जमा होता रहता है, जो झील का रूप धारण कर लेता है। दक्षिण अमेरिका में दक्षिण ओरेगन (Oregan) की क्रेटर (Crater) झील (Lake) इसी प्रकार बनी है। धरती की सतह में कुछ दोष उत्पन्न होने से भी गड्ढे बन जाते हैं, जो कालान्तर में वर्षा के पानी से भर जाने पर झील बन जाते हैं। उत्तरी अमेरिका की सुपीरियर झील (Superior Lake) भी इसी प्रकार बनी है। कभी-कभी उल्कापात के कारण जमीन में बहुत बड़े गड्ढे हो जाते हैं, जो पानी के भरने से झीलों का रूप धारण कर लेती हैं। क्यूबैक की उनगावा (Ungava) झील का निर्माण इसी प्रकार हुआ है। कहीं-कहीं ग्लेशियरों के कारण भी झीलों का निर्माण हो जाता है। ग्लेशियरों के खिसकने के कारण धरती की सतह पर बहुत बड़े-बड़े गड्ढे बन जाते हैं, जो पिघली हुई बर्फ और वर्षा के पानी से भरकर झीलों का रूप ले लेते हैं। कनाडा की विनीपेग (Winnipeg) झील ग्लेशियर द्वारा ही बनी हैं। झीलों के पानी का अध्ययन करने से पता चलता है कि कुछ का पानी खारा होता है, तो कुछ का पानी मीठा होता है। जिन झीलों से पानी निकल नहीं पाता, उनका पानी अक्सर खारा होता है, लेकिन जिन झीलों में नदियां गिरती भी हैं और निकलती भी हैं, उनका पानी नदियों की ही तरह ताजा और मीठा होता है। मीठे पानी की झील अमेरिका की प्रसिद्ध सुपीरियर झील (Superior Lake) है।

संसार में बहुत सी झीलें हैं। मध्य एशिया की बैकाल झील (Baikal Lake) सबसे गहरी है। इसमें 22000 क्यूबिक कि० मी० (5000 क्यूबिक मील) पानी है। अमेरिका की सुपीरियर झील में 12000 क्यूबिक कि० मी० (3000 क्यूबिक मील) पानी है। संसार की सबसे बड़ी झील कैस्पियन सागर दक्षिण रूस से लेकर ईरान तक फैली हुई है। इसकी लम्बाई 1216 कि० मी० (760 मील) है। ओजेरा बैकाल (Ojera Baikal) संसार की सबसे गहरी झील है, जो मध्य साइबेरिया में है, इसकी लम्बाई 620 कि० मी० और चौड़ाई 115 कि० मी० के लगभग है। इसकी गहराई 7940 फुट है। संसार की 70% झीलें उत्तरी अमेरिका, अफ्रीका और एशिया में हैं।



झरने कैसे बनते हैं?

कभी-कभी जमीन से अचानक पानी की धारा फव्वारे के रूप में फूट पड़ती है। इसे ही झरना कहते हैं। झरने आमतौर पर चट्टानों के बीच से निकलते हैं। कुछ झरनों का पानी बहुत ठंडा होता है, उनको शीत झरने कहते हैं। कुछ ऐसे भी झरने होते हैं जिनका पानी गर्म होता है, उनको गर्म झरने कहते हैं। कुछ झरनों के पानी में गंधक की गंध होती है, इन्हें सल्फ़र स्प्रिंग्स (Sulphur Springs) कहते हैं। क्या तुम जानते हो कि ये झरने कैसे बनते हैं?

जब वर्षा होती है तो, वर्षा का कुछ पानी जमीन के द्वारा सोख लिया जाता है और कुछ पानी भाप बनकर उड़ जाता है। जमीन की दरारों से गुरुत्व बल के कारण यह पानी नीचे की तरफ चलता जाता है। जमीन के अंदर जब कोई चट्टान मिल जाती है, तो वहां यह पानी इकट्ठा होने लगता है। जब कभी इस जमा हुए पानी को बाहर निकलने के लिए कोई सूराख मिल जाता है, तो यह झरने के रूप में फूट पड़ता है। आमतौर पर ऐसे झरने घाटियों या निचली सतहों वाली जमीन पर फूटते हैं। इस प्रकार झरनों का निर्माण हो जाता है।

कभी-कभी जमीन के अंदर एकत्रित हुए पानी को गंधक और चूने वाले स्थानों से गुजरना पड़ता है। यह गंधक और चूना पानी में घुल जाता है और जब यह पानी झरने के रूप में बाहर निकलता है, तो गंधक युक्त हो जाता है। इसलिए इसे सल्फर स्प्रिंग का नाम दे दिया जाता है। भारत में कश्मीर और हरियाणा में कई ऐसे झरने हैं। कभी-कभी पृथ्वी की सतह का पानी जब निचली चट्टानों की सीधी दरारों में से होता हुआ बहुत नीचे पहुंच जाता है, तो पृथ्वी की गर्मी के कारण उबलने लगता है। गर्म होने के कारण यह दरारों के माध्यम से तेजी से ऊपर उठने लगता है। यह किसी छेद द्वारा जमीन से किसी फव्वारे के रूप में ऊपर निकलता है, तो गर्म होता है। इस प्रकार के झरनों को गर्म झरने कहते हैं। अमेरिका और न्यूज़ीलैंड में इस प्रकार के बहुत से झरने हैं।



जलप्रपात (Water falls) कैसे बनते हैं?

पहाड़ों की चट्टानों से गिरने वाले नदी या नालों को जलप्रपात कहा जाता है। यदि गिरने वाला पानी एक बहुत बड़ी धारा के रूप में काफी ऊंचाई से गिरता है, तो उसे महाजलप्रपात (Catarc) कहते हैं। यदि गिरने वाले पानी की धारा पतली होती है तो उसे जलप्रपात (Cascade) कहा जाता है। कभी-कभी पानी की बहुत बड़ी धाराएं पहाड़ों के ढलानों से गुजरती हैं। ये भी एक तरह के जलप्रपात हैं। जलप्रपात बनने के लिए पानी का कठोर बड़ी चट्टानों के क्षेत्र पर बहना आवश्यक है। कठोर चट्टानों के बाद जमीन का ऐसा भाग होना चाहिए जिसे पानी आसानी से काट सके। कहीं-कहीं प्राकृतिक परिवर्तनों के कारण नदी का बहाव क्षेत्र ऊपर उठ जाता है और इस ऊंचे स्थल से पानी नीचे गिरने लगता है। यह भी हो सकता है कि भूस्खलन (Land slide) के कारण नदी का प्रवाह मार्ग पूरी तरह रुक जाता है। पानी इकट्ठा होकर प्रपात के रूप में निकलने लगता है।

विश्व के अनेक पर्वतों पर विभिन्न प्रकार के गिरते हुए जलप्रपात देखने को मिलते हैं। इनमें से कुछ अपनी ऊंचाइयों के लिए तथा कुछ अपनी चौड़ाई के लिए प्रसिद्ध हैं। कुछ जलप्रपात पानी की अधिक मात्रा के लिए भी प्रसिद्ध हैं।

संसार का सबसे ऊंचा जलप्रपात उत्तरी अमेरिका में वेनेजुएला (Venezuela) का एन्जल (Angel) जलप्रपात है। इसका पानी 3300 फुट की ऊंचाई से गिरता है। इस जलप्रपात का पता 1935 में अमेरिका के विमान चालक जिमी एन्जल (Jimmy Angel) ने लगाया था। उन्हीं के नाम पर इसका नाम एन्जल जलप्रपात पड़ा।

एशिया का सबसे लंबा जलप्रपात जर्सोपा (Gersoppa) प्रपात है जो भारत में है। नियागरा जलप्रपात भी कई दृष्टियों से विश्वविख्यात है। न्यूयार्क से 25 कि० मी० दूर उत्तर पश्चिम में स्थित नियागरा का यह जलप्रपात दो हिस्सों में बंटा है। इसका एक हिस्सा अमेरिका के पास है और दूसरा हिस्सा कनाडा के पास है। दोनों देशों के बीच अंतर्राष्ट्रीय सीमा रेखा का फैसला यहीं जलप्रपात करता है।

एक ही धारा में गिरने वाला संसार का सबसे ऊंचा जलप्रपात कैलीफोर्निया का रिबन (Ribbon) जलप्रपात है। इसकी पतली धारा (1612) फुट की ऊंचाई से नदी में गिरती है। विश्व का सबसे चौड़ा जलप्रपात खोनी (Khoni) प्रपात है, जिसकी ऊंचाई लगभग 11 कि० मी० है।

कुछ जलप्रपात हमारे लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। इनके गिरते हुए पानी की सहायता से बिजली पैदा की जाती है, जो हमारे अनेकों प्रकार से काम में आती है।

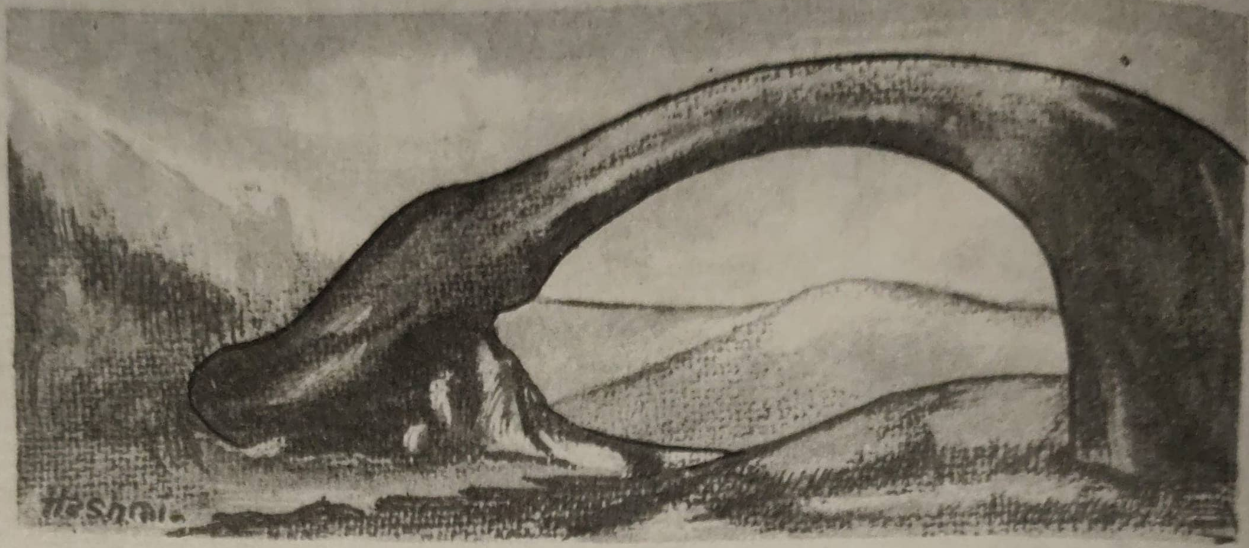


ग्लेशियर (Glaciers) क्या होते हैं?

बर्फ की बड़ी-बड़ी चट्टानों वाली नदी को आमतौर पर ग्लेशियर कहा जाता है। ग्लेशियर संसार की पर्वत शृंखलाओं में बनते रहते हैं। आल्प्स (Alps) पर्वत में ही 1200 से अधिक ग्लेशियर हैं। अलास्का (Alaska) के ऊंचे पहाड़ों में 25 से 50 मील लम्बे हज़ारों ग्लेशियर देखने को मिलते हैं।

ग्लेशियर मुख्य रूप से दो प्रकार के होते हैं। पहले प्रकार के ग्लेशियरों को घाटी ग्लेशियर (Valley Glaciers) कहते हैं। जब पहाड़ों पर बर्फ गिरती है, तो धीरे-धीरे यह बर्फ ढलानों से नीचे खिसकती रहती है। यह बर्फ पहाड़ों के बीच के रास्तों में जमा होती जाती है। जब ऐसी बर्फ का जमाव बहुत अधिक हो जाता है, तो यह धीरे-धीरे गतिशील हो जाती है। यह धीरे-धीरे चलने वाले बर्फ की नदी, घाटी ग्लेशियर कहलाती है। इसके रास्ते में पड़ने वाले बर्फ के बड़े-बड़े टुकड़े भी इसके साथ आगे बढ़ने लगते हैं। रास्ते में रगड़ के कारण ये टुकड़े टूट जाते हैं और इस तरह हिम शैल (Iceberg) का जन्म होता है।

संसार के अनेक देशों में ग्लेशियर मिलते हैं। आज दक्षिणी आस्ट्रेलिया का लैम्बर्ट (Lambert) ग्लेशियर संसार का सबसे बड़ा ग्लेशियर है। यह 400 कि० मी० (250 मील) लम्बा और 64 कि० मी० (40 मील) चौडा है। इसके अतिरिक्त स्विट्जरलैंड का जर्माट (Zermatt), नार्वे का लौम (Lom), फ्रांस का बोशन (Bosson) और अमेरिका का निशक्वैली (Nisqually) संसार के मुख्य ग्लेशियर हैं।



क्या प्रकृति भी पुल बनाती है?

मनुष्य प्राचीन काल से ही नदी, नाले और नहरों को पार करने के लिए पुल बनाता रहा है। संसार के कुछ हिस्सों में ऐसे भी पुल देखने को मिलते हैं, जो मंनुष्य ने नहीं बनाए, बल्कि प्रकृति ने बनाए हैं। ऐसे पुलों को प्राकृतिक पुल (Natural Bridge) कहा जाता है। क्या तुंम जानते हो कि प्रकृति पुलों का निर्माण कैसे करती है?

प्राकृतिक पुल आमतौर पर अर्द्धवृत्ताकार होते हैं। इनका निर्माण कई प्रकार से हो जाता है। जमीन के कुछ हिस्सों पर बालू-पत्थर या चूना-पत्थर की मात्रा बहुत अधिक होती है। यदि इन स्थानों पर पानी के कटाव से पत्थरों के नीचे की जगह खोखली हो जाए तो बहते हुए पानी के ऊपर पुल बन जाता है। कुछ प्राकृतिक पुलों का निर्माण गुफाओं के टूटने से भी होता है। किसी नदी के किसी बहाव के कारण गुफाओं के नीचे का भाग जो टूटता रहता है और शेष ऊपर का बचा भाग पुल का रूप धारण कर लेता है।

अमेरिका में ऊटा (Utah) एक ऐसा स्थान है, जहां पर तीन प्राकृतिक पुल हैं। ये पुल एल्क पर्वत (Elk ridge) के पश्चिमी ढलानों पर हैं। इनमें सिपापू (Sipapu) नाम का एक पुल नदी से 89 मीटर (286 फुट) ऊंचा है और यह 82 मीटर (269 फुट) लम्बा है। इसकी मोटाई 9½ मीटर से 16 मीटर (31 से 53 फुट) के बीच में है। काचिना (Kachina) औरओवाकोमो (Owachomo) दूसरे दो पुल हैं, जिनकी ऊंचाई क्रमशः 64 मीटर (210 फुट) और 32 मीटर (106 फुट) है। इन पुलों को देखने के लिए संसार के हज़ारों लोग प्रति वर्ष जाते हैं।

इसी प्रकार का एक प्राकृतिक पुल पश्चिमी वर्जीनिया (Western Virginia) में है, जो 66 मीटर (215 फुट) ऊंचा है और 30 मीटर (100 फुट) लम्बा है।

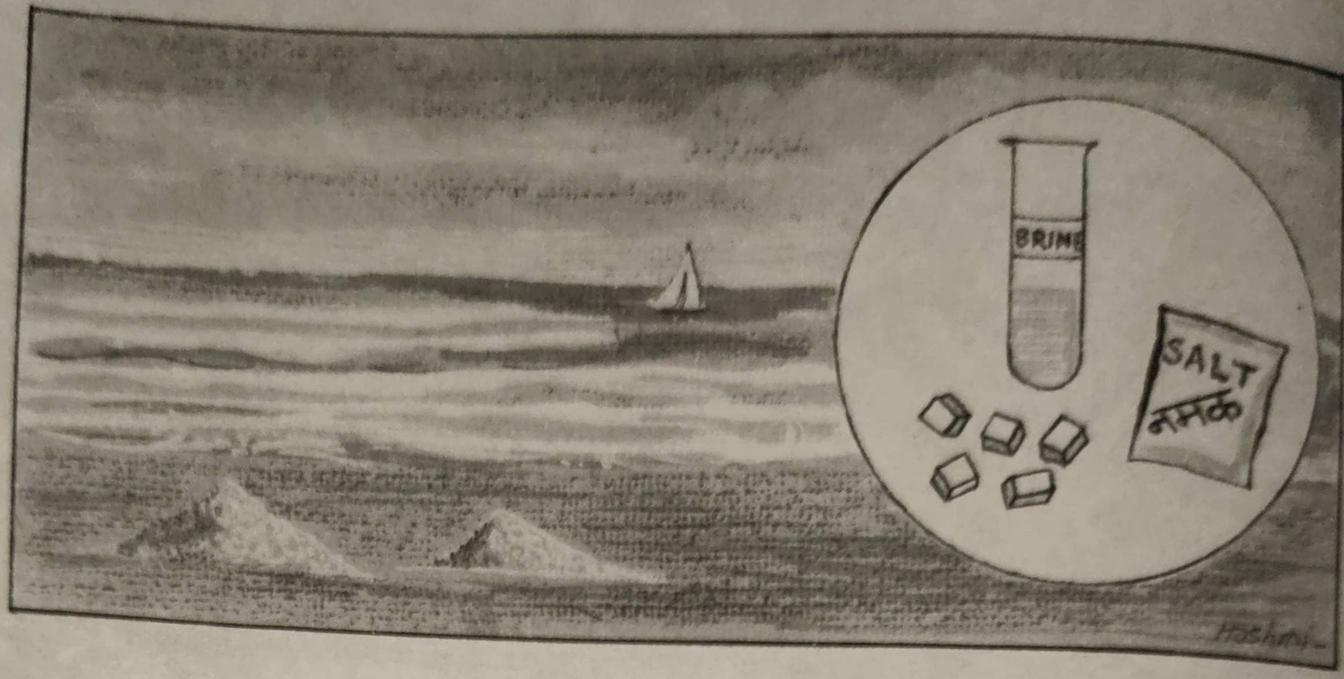


समुद्र (Oceans) कैसे बने?

पृथ्वी की कुल सतह का लगभग तीन चौथाई भाग पानी से भरा हुआ है और एक चौथाई भाग जमीन है। यदि समुद्रों के पानी से भरे धरती के क्षेत्रफल का अनुमान लगाया जाए तो यह लगभग 357555200 वर्ग कि० मी० (13 करोड़ 94 लाख 40 हज़ार वर्गमील) के लगभग है। अब प्रश्न आता है कि समुद्रों का जन्म कब और कैसे हुआ?

समुद्रों का जन्म कैसे हुआ? इस प्रश्न का उत्तर अभी तक पूरी तरह से ज्ञात नहीं हो सका है। हां, वैज्ञानिक खोजों के आधार पर यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि कि पृथ्वी के आरंभ काल में समुद्र नहीं थे। समुद्रों में उपस्थित खनिज पदार्थों के आधार पर समुद्रों की उम्र का अंदाज़ा लगाया गया है। अनुमान के अनुसार समुद्रों का जन्म आज से पचास करोड़ और 100 करोड़ वर्षों के बीच में हुआ होगा।

समुद्रों के जन्म की कहानी बड़ी मनोरंजक है। पृथ्वी अपने जन्म के समय आग का एक जलता हुआ विशाल गोला थी। इसकी सतह पिघली हुई चट्टानों से बनी हुई थी। पृथ्वी जब धीरे-धीरे ठण्डी होने लगी तो उसके चारों ओर गैस के बादल फैल गए। जब ये बादल ठण्डे हुए तो काफी भारी हो गए। उनसे लगातार मूसलाधार वर्षा होने लगी, किन्तु पृथ्वी की सतह अब भी इतनी गर्म थी कि इस पर जो पानी बरसता था, भाप बनकर उड़ जाता था और दोबारा वायुमंडल में मिल जाता था। यह बादलों के रूप में फिर बरसना शुरू हो जाता था। यह चक्र लाखों वर्ष तक चलता रहा। अब धीरे-धीरे पृथ्वी की पपड़ी ठंडी और कड़ी होती गई और इतनी ठंडी हो गई कि इस पर पड़ने वाला पानी उबल नहीं पाता था, लेकिन अभी भी मूसलाधार वर्षा हो रही थी। यह क्रम हज़ारों वर्ष तक चलता रहा। इस तीव्र बारिश का पानी पृथ्वी के निचले हिस्सों में भर चुका था। पानी से भरे धरती की सतह के ये विशाल गड्ढे ही समुद्र कहलाए। जैसे-जैसे समय बीतता गया, उन सागरों का रूप भी परिवर्तित होता गया। आज धरती की सतह पर कई महासागर और सागर हैं। इनके विषय में आधुनिक तरीकों को अपनाकर बहुत से अध्ययन किए जा रहे हैं।

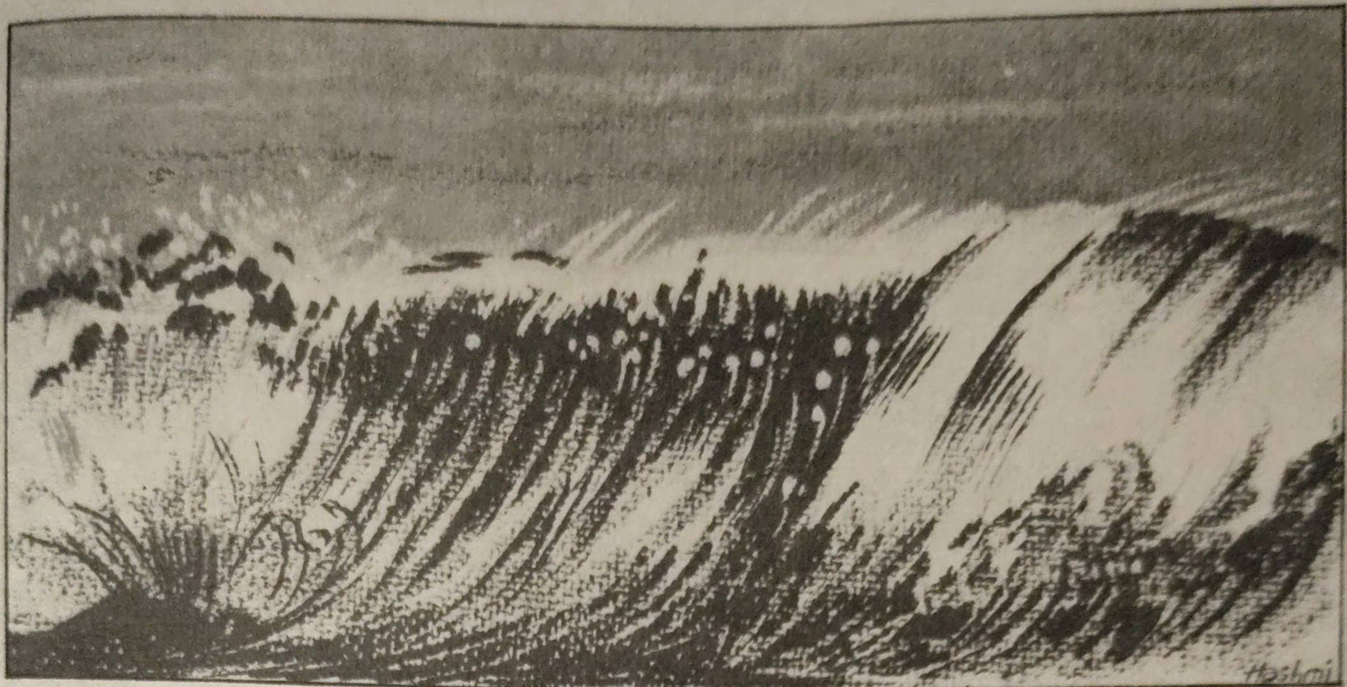


समुद्र का पानी खारा क्यों होता है?

सभी लोग जानते हैं कि समुद्र का पानी खारा होता है। इसका मतलब समुद्र के पानी में नमक होता है। समुद्र के एक गैलन पानी में लगभग एक सौ पन्द्रह ग्राम नमक होता है अर्थात् तीन से साढ़े तीन प्रतिशत तक नमक होता है। खुले समुद्रों की तुलना में भूमध्य सागर और लाल सागर जैसे बंद समुद्रों के पानी में नमक की मात्रा अधिक होती है। 340 वर्ग किलोमीटर में फैले मृत सागर में ग्यारह अरब साठ करोड़ टन नमक होने का अनुमान है। यदि धरती के सारे समुद्रों को सुखाकर उनसे प्राप्त नमक को जमा किया जाए, तो उससे 288 कि० मी० (180 मील) ऊंची और 106 कि० मी० (एक मील) चौड़ी ऐसी दीवार बनाई जा सकती है, जो भूमध्य रेखा पर पूरे गोलार्द्ध में पृथ्वी का एक घेरा बना सकती है। नमक की यह मात्रा पूरे योरुप महाद्वीप के भार की तुलना में 15 गुना अधिक होगी।

क्या तुम जानते हो कि यह नमक समुद्र के पानी में कहां से आता है? इस प्रश्न का उत्तर अभी तक वैज्ञानिकों को पूरी तरह से मालूम नहीं है। लेकिन इसकी उपस्थिति का ब्योरा इस प्रकार है। हम जानते हैं कि नमक पानी में घुलनशील है। धरती की सतह पर अन्य खनिजों के साथ नमक भी होता है। जब बरसात होती है, तो धरती की सतह का नमक पानी में घुलकर नदियों में चला जाता है। जब ये नदियां समुद्र में मिलती हैं तो यह नमक समुद्र में पहुंच जाता है। सूरज की गर्मी से समुद्र का पानी भाप बनकर वायुमंडल में जाता रहता है, लेकिन नमक समुद्र में ही रह जाता है। यह भाप वर्षा के रूप में धरती पर गिरती है और फिर धरती के खनिजों को घोल के रूप में समुद्र तक ले जाती है। समुद्र से पानी का तो वाष्पीकरण होता रहता है, लेकिन नमक वहीं जमा होता चला जाता है और इस प्रकार नमक की मात्रा समुद्र के पानी में बढ़ती जाती है। इस प्रकार हज़ारों लाखों वर्षों से यही क्रिया लगातार हो रही है, जिसके फलस्वरूप समुद्र का पानी खारा हो गया है।

प्रतिदिन प्रयोग में आने वाला नमक समुद्रों से या खारी झील के पानी से भी बनाया जाता है, किन्तु एक प्रकार का नमक चट्टानों से भी प्राप्त किया जाता है। यदि समुद्र में नमक न होता, तो शायद हमें नमक जैसी महत्त्वपूर्ण चीज़ न मिल पाती।



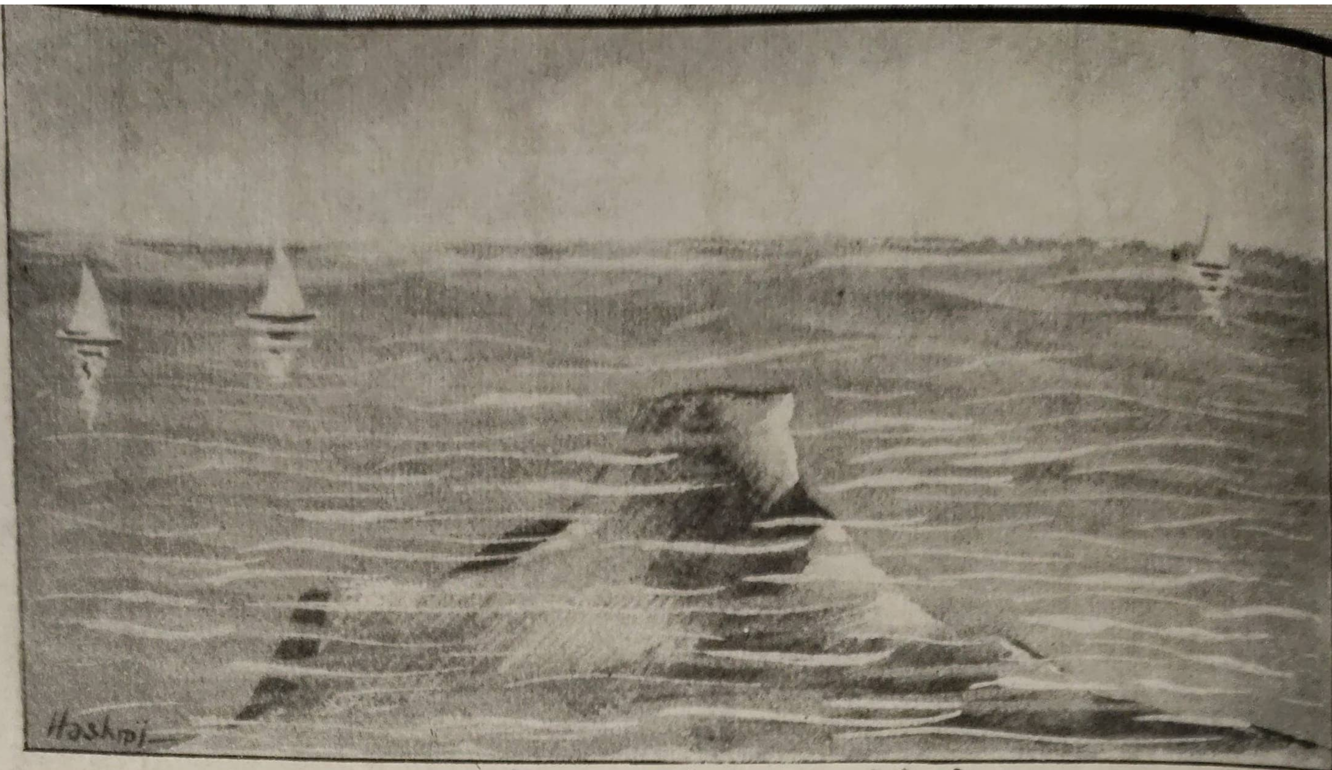
क्या समुद्र में भी भूकम्प और ज्वालामुखी विस्फोट होते हैं?

जिस प्रकार धरती की सतह पर भूकम्प आते हैं और ज्वालामुखी फटते हैं, उसी प्रकार समुद्र तल में भी भूकम्प आते हैं और ज्वालामुखी फटते हैं। जिस प्रकार पृथ्वी की सतह के अंदर की उथल-पुथल के कारण ज्वालामुखी फटते हैं और भूकम्प आते हैं, ठीक उसी प्रकार समुद्र की तलहटी के नीचे होने वाली उथल-पुथल से ज्वालामुखी फटते हैं और भूकम्प आते हैं। समुद्र तल में आने वाले भूकम्पों के कारण पानी में कंपन हो जाता है। इस कंपन के फलस्वरूप एक प्रकार की तरंगें उत्पन्न होकर ध्वनि के वेग से पानी में चलने लगती हैं। यदि कोई जहाज इन कंपन के क्षेत्र में आ जाए तो ऐसा लगता है कि मानो वह किसी चट्टान से टकरा गया हो। भूकम्प के कारण समुद्र की तलहटी फटकर खिसक जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि समुद्र के पानी की सतह पर ज्वारीय लहरें पैदा हो जाती हैं। इन लहरों में समुद्र की सतह का पानी कहीं बहुत ऊपर उठ जाता है तो कहीं बहुत नीचे गिर जाता है। ये ज्वारीय लहरें बड़े तेज वेग के साथ समुद्र के पानी पर चलती हैं। ये तरंगें सामान्य तरंगों से बिलकुल भिन्न होती हैं।

सन् 1946 में एल्यूशियन (Aleutian) द्वीप शृंखला के पास समुद्र तल में एक बहुत बड़ा भूकम्प आया था। इसकी बहुत बड़ी-बड़ी लहरें पांच घंटे में 3200 कि० मी० (२००० मील) की यात्रा पूरी करके हवाई द्वीप समूह (Hawaii Islands) तक जा पहुंचीं। वहां इन लहरों ने मकानों और लहरों को उखाड़ फेंका। इसमें लगभग 170 लोग मारे गए। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि भूकम्पों के फलस्वरूप पैदा हुई ज्वारीय (Tidal) लहरें कितनी खतरनाक और विध्वंसक होती हैं।

इसी प्रकार 27 अगस्त सन् 1883 को डच ईस्ट इंडीज। (Dutch East Indies) के क्रैकाटोआ (Krakatoa) द्वीप में एक बहुत बड़ा ज्वालामुखी फटा। इसके परिणाम स्वरूप इसकी सतह के पानी पर सौ फुट से भी अधिक ऊंचाई की ज्वारीय लहरें पैदा हो गईं। इन लहरों में सैकड़ों गांव बह गए। ये लहरें 1120 कि० मी० (700 मील) प्रति घंटे के वेग से आस्ट्रेलिया व अमेरिका के तटों पर जा पहुंचीं, जो वहां से हज़ारों मील दूर है।

इन सब घटनाओं से पता चलता है कि समुद्र तल में बड़े भयानक भूकम्प आते हैं और ज्वालामुखी फटते हैं। जिनके कारण समुद्र के पानी की सतह पर विनाशकारी ज्वारीय तरंगें पैदा हो जाती हैं।



क्या समुद्र के अंदर भी पहाड़ होते हैं ?

आमतौर पर समुद्री पहाड़ (Sea Mount) उन पहाड़ों को कहते हैं, जो समुद्र की तलहटी से कम से कम 2 कि. मी. ऊंचे होते हैं। अब तक लगभग ऐसे 2000 पहाड़ों का पता लगाया जा चुका है। आशा है कि आने वाले समय में और भी बहुत से पहाड़ों का पता लग जाएगा। क्या तुम जानते हो कि समुद्र के अंदर पहाड़ों का जन्म कैसे होता है?

जिस तरह पृथ्वी की भीतरी हलचल से पहाड़ों का जन्म होता है, वैसे ही समुद्र तल की हलचल से समुद्री पहाड़ों का जन्म हो जाता है। समुद्र तल में फटने वाले ज्वालामुखियों से भी पहाड़ बन जाते हैं। आमतौर पर इन पहाड़ों की ऊंचाई 1 से 3 कि० मी० तक होती है। इनमें से अधिकतर पहाड़ पानी के अंदर ही डूबे होते हैं, लेकिन उनमें से कुछ पानी के ऊपर भी आ गए हैं। समुद्र के पानी से ऊपर उठे हुए चपटे पहाड़ों को द्वीप (Island) कहा जाता है। हवाई द्वीप समूह का जन्म ऐसे ही हुआ।

सागर के अंदर बहुत से पहाड़ हैं। मध्य सागर के मध्य में स्थित पर्वत श्रृंखला संसार में सबसे बड़ी श्रृंखला है। इसकी लम्बाई लगभग 64000 कि० मी० (40 हज़ार मील) है। प्रशांत (Pacific Ocean) महासागर के उत्तरी-पूर्वी भाग में भी बहुत से पर्वत हैं। इनमें अधिकांश पर्वत तो पानी में डूबे हुए हैं, लेकिन हवाईन श्रृंखला (Hawaian Chain) के कुछ पहाड़ समुद्र की सतह के ऊपर आ गए हैं। इनको हवाई द्वीप समूह के नाम से पुकारा जाता है। यह द्वीप आजकल अमेरिका का एक हिस्सा है। हवाई श्रृंखला का सबसे ऊंचा पहाड़ 'मोना की' (Mauna Kea) है। समुद्र के पानी की सतह से इसकी ऊंचाई केवल 4200 मीटर (13,780 फुट) है, लेकिन समुद्र के तल से इसकी कुल ऊंचाई 9686 मीटर (31,780 फुट) है, अर्थात् इस पहाड़ का 5486 मीटर (18,000 फुट) हिस्सा समुद्र के पानी के अंदर है। यदि समुद्र के अंदर से इसकी ऊंचाई मापी जाए तो यह विश्व का सबसे ऊंचा पहाड़ है।

सन् 1840 तक समुद्र की तलहटी के विषय में मनुष्य को कोई विशेष जानकारी नहीं थी। इसी वर्ष सर जेम्स रौस (Sir James Ross) ने समुद्र की तलहटी का अध्ययन शुरू किया। 1920 में समुद्र की तलहटी में अध्ययन के लिए एक नये तरीके का विकास किया गया। इस तरीके से ध्वनि तरंगें समुद्र के पानी के अंदर भेजी जाती हैं और समुद्र के पानी के अंदर उपस्थित वस्तुओं द्वारा ये तरंगें परावर्तित हो जाती हैं। इन परावर्तित तरंगों का अध्ययन करके समुद्र तल की बहुत सी बातों का पता लगा लिया जाता है। 1945 के बाद समुद्रतल के अध्ययन के लिए कुछ और भी तरीके विकसित कर लिए गए हैं।

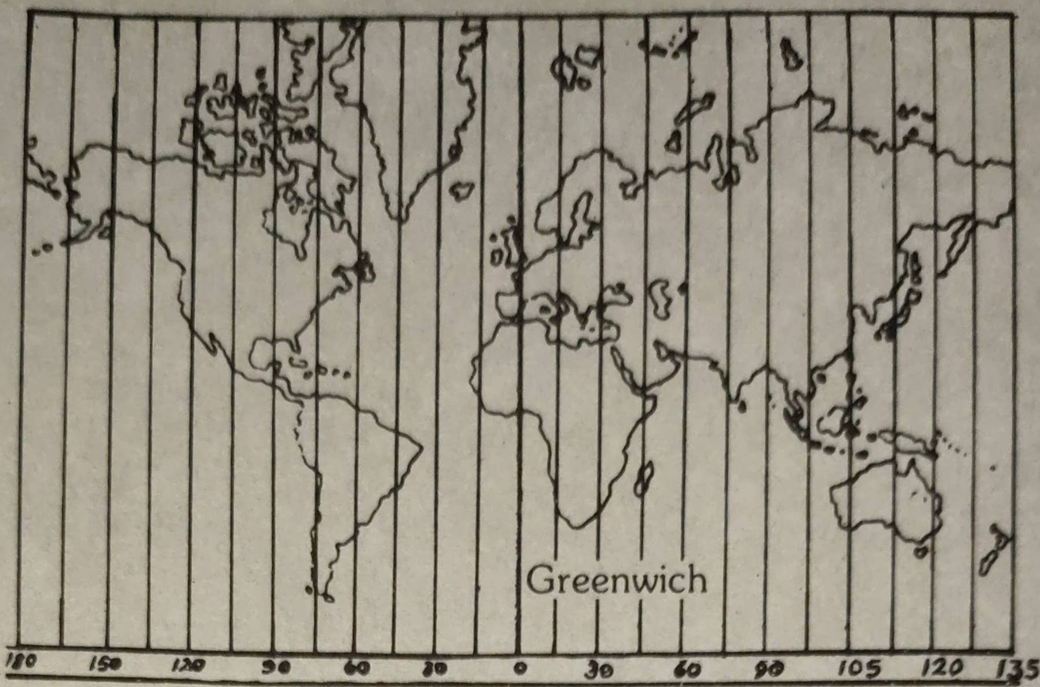


मृत सागर (Dead Sea) क्या हैं?

मृत सागर धरती पर एक आश्चर्यजनक पानी का भंवर है, जिसमें कोई भी जीव-जन्तु जीवित नहीं रह सकता। इसलिए इसे मृत सागर कहते हैं। वास्तव में मृत सागर एक खारी झील है, जो जोर्डन और इजराइल के बीच में स्थित है। यह 77 कि० मी० (48 मील) लम्बा है और इसकी चौड़ाई 5 से 18 कि० मी० (3 से 11 मील) के बीच में है। यह संसार में पानी का सबसे नीचा क्षेत्र है। आज इस सागर की सतह समुद्री सतह से 396 मी० नीचे है। आज से लाखों वर्ष पहले मृत सागर की सतह आज की सतह से लगभग 427 मी. ऊंची थी। उस समय इसमें समुद्री जीव-जन्तु जीवित रहते थे। अचानक ही एक सूखा पड़ा और इस सागर का पानी भाप बनकर उड़ गया। धीरे-धीरे इसमें पानी भरता गया और यह सागर आज की स्थिति में आ गया।

इस सागर से कोई भी नदी नहीं निकलती। जोर्डन नदी और कुछ छोटे-छोटे नाले इसमें आकर मिलते हैं। चूंकि इसमें से कोई नदी बाहर नहीं निकलती, इसलिए इसका पानी केवल भाप बनकर उड़ जाने से ही कम होता है। परिणाम यह होता है कि जोर्डन नदी व अन्य छोटे-छोटे नालों द्वारा लाए गए नमक और घुलनशील खनिजों की मात्रा इस सागर में बढ़ती ही जा रही है। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि मृत सागर में नमक की मात्रा संसार के सभी सागरों से अधिक है। आमतौर पर दूसरे समुद्रों के पानी में नमक की मात्रा 4% से 6% होती है, जबकि मृत सागर में नमक की मात्रा 23% से 25% तक है। यदि तुम इसके पानी को चखकर देखो, तो यह केवल खारा ही नहीं लगेगा, बल्कि तुम्हें बीमार भी कर देगा, क्योंकि इसमें जहरीले पदार्थ मैगनीशियम क्लोराइड की भी काफी मात्रा होती है। नमक और दूसरे जहरीले पदार्थों के मौजूद होने के कारण इस सागर में कोई भी जीव-जन्तु जीवित नहीं रह पाता। जोर्डन नदी की मछलियां और दूसरे समुद्री जीव इस पानी में प्रवेश करते ही मर जाते हैं। इस कारण इसे मृत सागर कहा जाता है।

मृत सागर में पोटेशियम कारबोनेट, मैगनीशियम क्लोराइड, ब्रोमीन व कैलशियम क्लोराइड जैसे कई उपयोगी पदार्थ भी मौजूद हैं। इस सागर में लगभग 20 टन पोटाश की मात्रा का अनुमान है। पोटाश से कृत्रिम खादें बनाई जाती हैं, जो हमारे लिए काफी उपयोगी है।



सभी देशों में समय एक सा क्यों नहीं होता?

विश्व के सभी देशों में समय अलग-अलग होता है। उदाहरण के लिए भारत में जब शाम के चार बजते हैं, तो विश्व के बाकी देशों में कोई और ही समय होता है। भारत में जब दिन होता है, उस समय विश्व के कई देशों में रात होती है। यहां तक भी देखा गया कि जिन दो पड़ोसी देशों में सुबह और शाम की स्थिति एक जैसी ही होती है, उनमें भी समय का फर्क होता है। भारत और पाकिस्तान के समय में ही आधे घंटे का फर्क होता है। क्या तुम जानते हो कि सभी देशों में समय एक सा क्यों नहीं होता? इस प्रश्न का उत्तर इस प्रकार से दिया जा सकता है।

हमारे पास दिन और वर्ष समय की दो इकाइयां हैं। पृथ्वी के अपने धुरी पर घूमने से दिन और रात होते हैं और सूर्य के चारों ओर पृथ्वी की एक परिक्रमा से वर्ष पूरा होता है। दिन और रात को 24 घंटों में बांट दिया गया है। इस प्रकार घंटे को साठ मिनट में और मिनट को 60 सेकण्ड में बांट दिया गया है। वास्तव में दिन कभी लंबा होता है और कभी छोटा। दिन और 24 घंटे का समय केवल औसत समय है। पृथ्वी के घूमने की इस गति के आधार पर यह कहा जा सकता है कि सारे संसार में एक जैसा समय तो लागू किया ही नहीं जा सकता। इसलिए विभिन्न भागों की स्थिति का सही-सही ज्ञात प्राप्त करने के लिए संसार को अलग-अलग भागों में बांट दिया गया है। इन भागों को मैरीडियन (Meridian) कहते हैं। जो भी देश किसी एक मैरीडियन पर आते हैं, उनमें एक सा समय होता है। प्रत्येक भाग के बीच की दूरी को एक घंटे के समय के बराबर मान लिया गया है। अतः जो स्थान मैरीडियन के पूर्व या पश्चिम में आता है, उस पर अलग-अलग समय होता है।

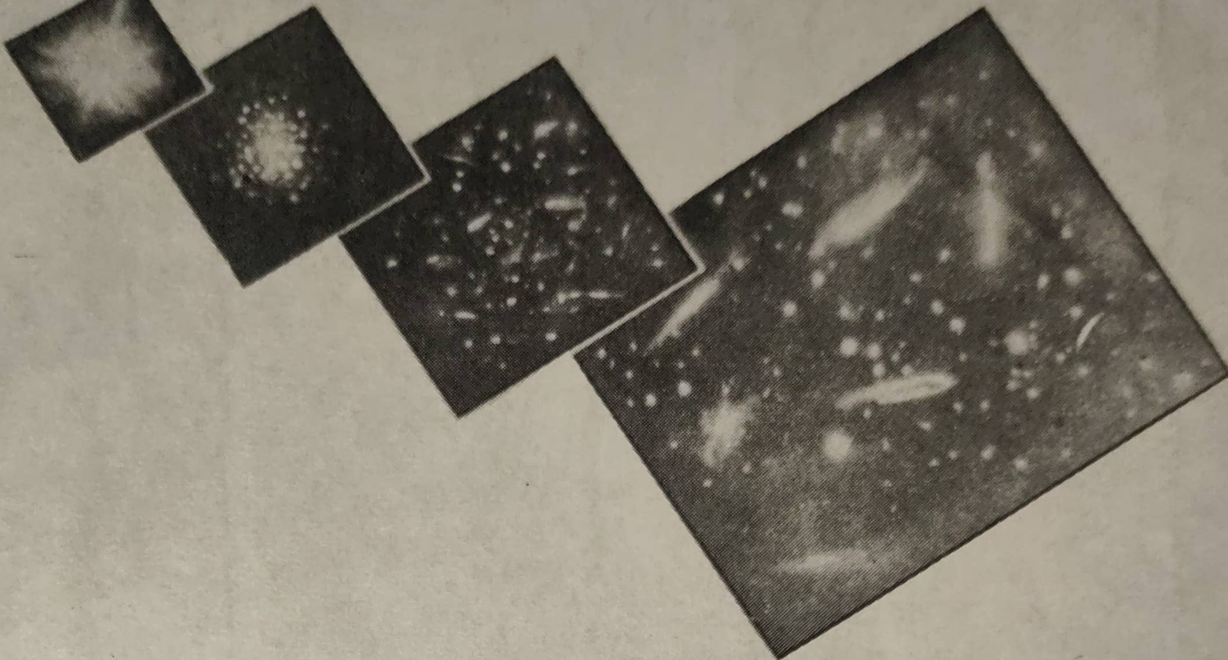
इंगलैंड में ग्रीनविच (Greenwich) नाम की जगह को पृथ्वी का विभाजन केन्द्र माना गया है। यहां के समय को शून्य मान लिया गया है। इसके दोनों ओर के हर भाग का समय ग्रीनविच के समय के अनुसार निर्धारित किया गया है (ऊपर का चित्र देखें), मान लीजिए ग्रीनविच से तीन हिस्सों के बाद कोई देश आता है, तो वहां के समय और ग्रीनविच के समय में 3 घंटे का अंतर होगा।

सभी देशों में विश्व के अन्य देशों के समयों का लेखा-जोखा रहता है। समय का अंतर होने के कारण ही जब एक देश का मनुष्य दूसरे देश में जाता है, तो उसे वहां के समय के अनुसार अपनी घड़ी मिलानी पड़ती है। संसार की अलग-अलग वेधशालाओं में ठीक समय का रिकार्ड विद्युत चालित घड़ियों द्वारा रखा जाता है।

3

ब्रह्मांड





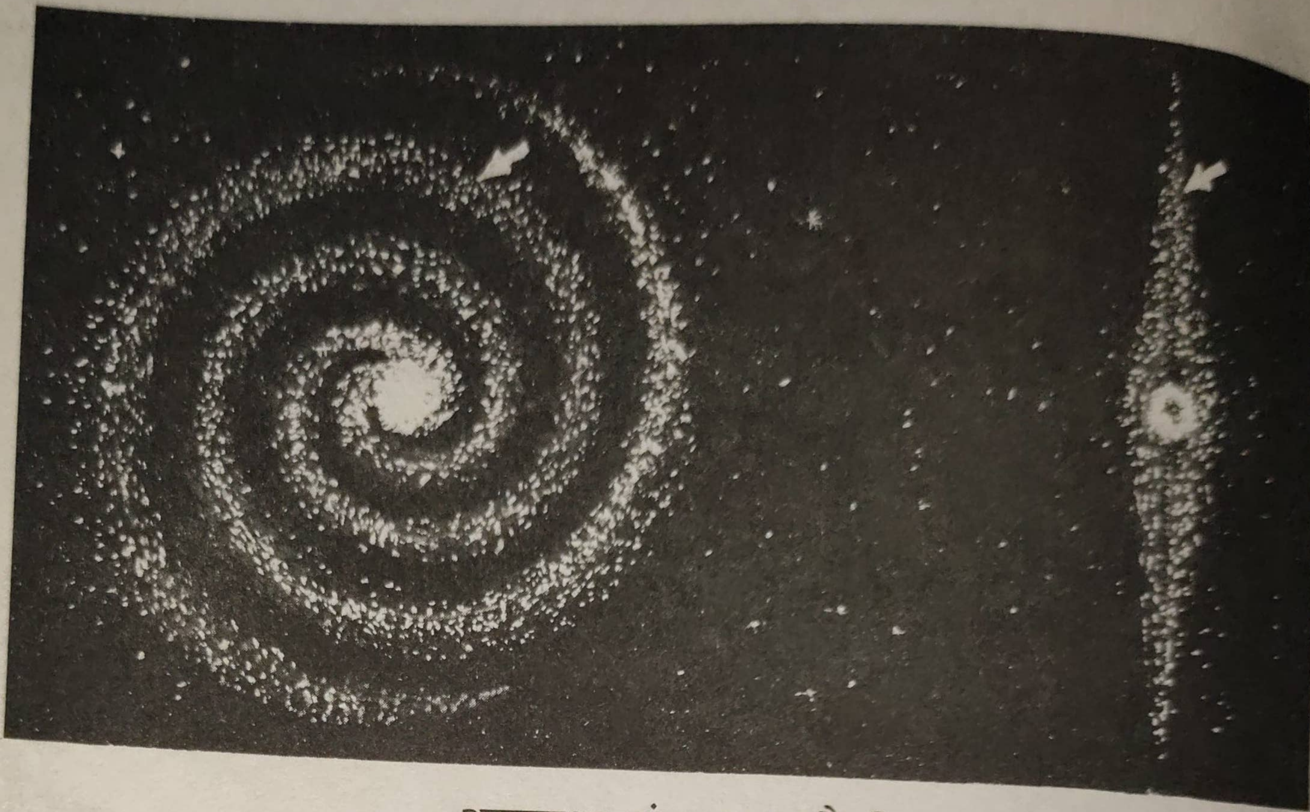
ब्रह्मांड कैसे अस्तित्त्व में आया ?

ब्रह्मांड का स्वरूप और विस्तार व्यक्ति में भय पैदा करता है। जितना हम उसकी विशालता के विषय में सोचते हैं उतना ही हमारा भ्रम बढ़ता जाता है। इसके स्वरूप को समझने के लिए हम ब्रह्मांड की तुलना पृथ्वी से करतें हैं। हमारी पृथ्वी भी काफी विशाल है, पर यह सौरमंडल का एक छोटा-सा भाग मात्र है।

सौरमंडल में अनेक ग्रह, उपग्रह और तारे इत्यादि हैं। इसके अतिरिक्त जो सौरमंडल बहुत बृहद दीखता है वह आकाश गंगा का मात्र एक हिस्सा है। आकाश गंगा में अनेक सौरमंडल हैं। तात्पर्य यह कि आकाश गंगा के विस्तार की कल्पना लगभग असम्भव है। पूरे ब्रह्मांड में इस तरह की अरबों आकाशगंगाएं हैं। इसी कारण ब्रह्मांड के स्वरूप और विस्तार की कल्पना करना नितान्त असम्भव है। हम केवल इतना कह सकते हैं कि आकाश में तारे और ग्रह-उपग्रह समुद्र के किनारे पड़ी रेत के कणों की तरह ही अनगिनत हैं।

अब प्रश्न उठता है कि यह ब्रह्मांड अस्तित्त्व में कैसे आया? इस विषय में अनेक मत हैं। एक मत के अनुसार पूरा ब्रह्मांड पहले एक विशाल आग के गोले की तरह था। एक समय एक भयानक विस्फोट हुआ और यह गोला टुकड़े-टुकड़े होकर इधर-उधर छिटक गया। ये टुकड़े ठंडे होते रहे और इस तरह अनेक आकाशगंगाओं का जन्म हुआ। इन का पदार्थ लगातार फैल रहा है। यह घटना लगभग 20 अरब साल पहले घटी थी। जाहिर है, यदि यह विस्तार बढ़ता रहा तो ब्रह्मांड एक दिन शून्य में परिवर्तित हो जायेगा।

दूसरे मत के अनुसार गुरुत्व बल के कारण तारों का फैलना रुक जायेगा और वे सिकुड़ना आरम्भ कर देंगे। यानी ब्रह्मांड का अस्तित्त्व बना रहेगा। एक और मत के अनुसार नई आकाशगंगाएं निरन्तर बन रही हैं और पुरानी का पदार्थ बिखर रहा है। यह मत एक संतुलित ब्रह्मांड की कल्पना देता है। यह कहना कठिन है कि इन तीनों मतों में कौन-सा अधिक प्रामाणिक है। प्रकट है कि इस विषय में प्रामाणिक होने के लिये अभी पर्याप्त वैज्ञानिक अनुसंधान की आवश्यकता है।



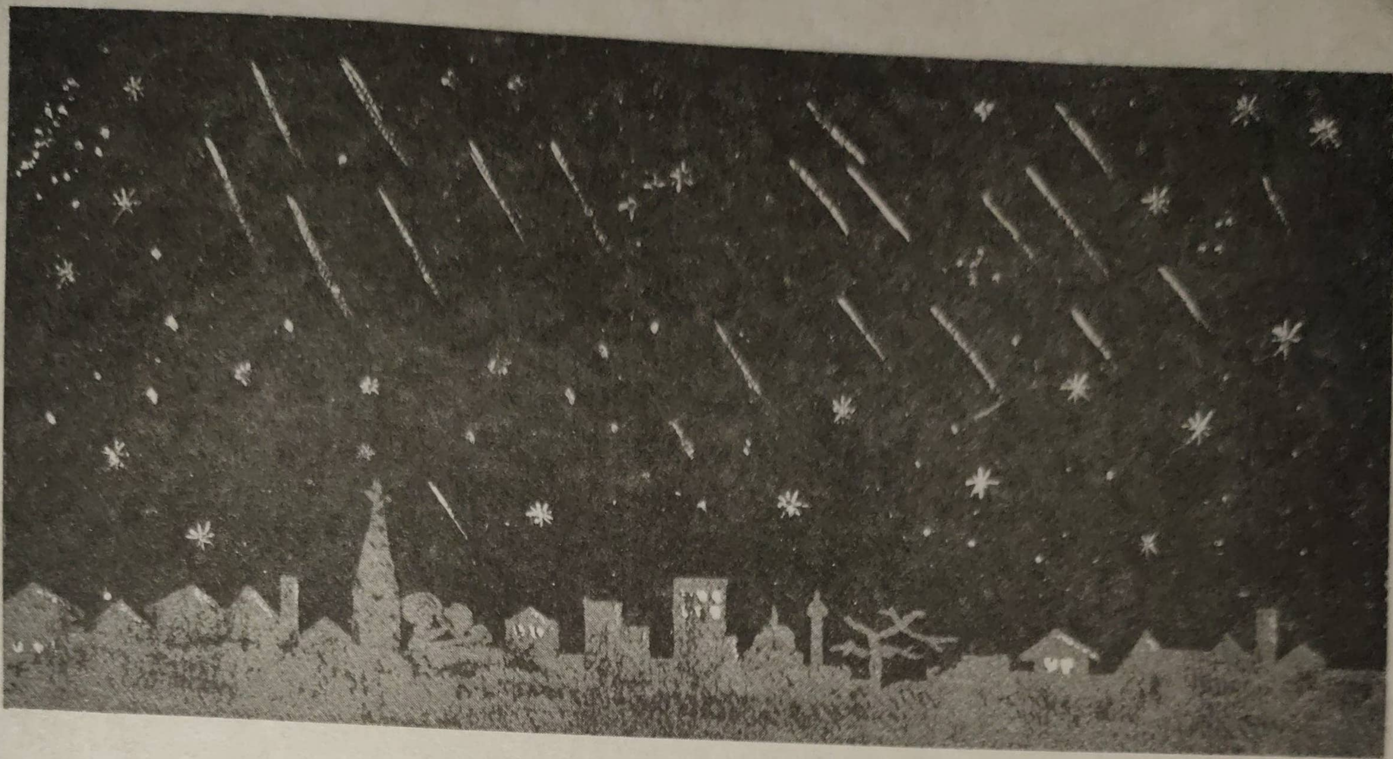
आकाश गंगा क्या है ?

जब हम रात को आकाश की ओर देखते हैं, तो दूर-दूर तक फैली एक दूधिया रंग की पट्टी हमें दीखती है। इसी को हम आकाश गंगा कहते हैं। बृहदाकार शक्तिशाली दूरदर्शी यंत्रों द्वारा देखा गया है कि आकाश गंगा में अनगिनत तारे, धूल और गैसों के गुब्बार हैं। इसका दूधिया रंग तारों के कारण है। हमारा सौरमंडल इस आकाश गंगा का एक हिस्सा है। ब्रह्मांड में अरबों आकाश गंगाएं हैं। सभी आकाशगंगाएं तारों, धूल और गैसों से बनती हैं।

वैज्ञानिकों ने आकाशगंगा के विस्तार और स्वरूप को शक्तिशाली दरूदर्शी यंत्रों से देखने की चेष्टा की है। यह एक ऐसे लैन्स की तरह का है जिसका केन्द्रीय भाग किनारों के अनुपात में बहुत मोटा है। हमारी आकाश गंगा इस लैन्स के एक किनारे पर स्थित है। जब हम आकाश की तरफ देख रहे होते हैं तो दरअसल हमें आकाश गंगा का मध्य भाग दीखता है। इसीलिये सितारे एक दूसरे के इतना पास दीखते हैं। अध्ययन से पता चला है कि आकाश गंगा सांप की कुंडली की आकार की है। इसमें लगभग 1,50,000,000,000 सितारे हैं।

क्या तुम्हें मालूम है कि आकाश गंगा का विस्तार कितना है? इसकी लम्बाई मीलों या किलोमीटरों में नहीं नापी जाती। इस तरह की लम्बाई नापने के लिए अलग इकाई है। इस इकाई को प्रकाश वर्ष कहते हैं, यानी प्रकाश एक वर्ष में इतनी दूरी तय करता है। हम जानते हैं कि प्रकाश 3,00,000(3×10^5) किलोमीटर (1,86,000 मील) प्रति सेकंड की रफ़्तार से यात्रा करता है। एक वर्ष में यह 9408000,000,000 कि. मी. (5880,000,000,000 मील) की यात्रा करेगा। यह दूरी एक प्रकाश वर्ष कहलाती है। हमारी आकाश गंगा का व्यास 1 लाख प्रकाश वर्ष है। सूर्य आकाश गंगा के केन्द्र-बिन्दु से 30,000 प्रकाश वर्ष दूर है। हमारा सूर्य इस आकाश गंगा के चारों ओर भी घूमता है। यह एक चक्र पूरा करने में 25 करोड़ साल लेता है।

अगर हम आकाश गंगा की ओर ध्यान से देखें तो हमें कुछ काले धब्बे दिखाई देंगे। इन स्थानों पर सितारे कम होते हैं और धूल अधिक।



उल्काएं (Meteorites) क्या हैं?

कई बार रात के समय आकाश की ओर देखने पर लगता है कि कोई तारा टूटकर एक चमकीली रेखा बनाता हुआ वायुमंडल में गायब हो गया। इसे आम भाषा में तारा टूटना कहते हैं। टूटकर गिरने वाले ये आकाशीय पिण्ड वास्तव में तारे नहीं होते, बल्कि उल्काएं (Meteorites) होती हैं।

उल्काएं वास्तव में छोटे-बड़े आकाशीय पिण्ड हैं, जो सौरमण्डल (Solar System) के सदस्य हैं और सूर्य की परिक्रमा करते रहते हैं। जब कभी कोई पिण्ड घूमते-घूमते पृथ्वी के पास आ जाता है, तो पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के कारण यह पिण्ड पृथ्वी की ओर खिंच जाता है। खिचाव से पिण्ड का वेग बहुत अधिक बढ़ जाता है और वायुमण्डल के घर्षण के कारण यह इतना गर्म हो जाता है कि इसमें से गैसें निकलने लगती हैं। ये गैसें जल उठती हैं और वायुमंडल प्रकाशित हो उठता है। हवा में रगड़ की आवाज़ दूर-दूर तक सुनाई देती है। गर्मी और घर्षण के कारण इनके बहुत छोटे-छोटे टुकड़े हो जाते हैं, जो वायुमंडल में ही बिखर जाते हैं, लेकिन कुछ पिण्ड इतने बड़े होते हैं कि वे पूरी तरह वायुमंडल में नष्ट नहीं हो पाते, इसलिए उनके कुछ हिस्से पृथ्वी पर गिर जाते हैं। हमें उल्काएं वायुमंडल में 112 कि० मी० दूरी पर दिखाई देने लगती हैं। अधिकांश उल्काएं वायुमंडल से पृथ्वी पर 80 कि० मी० दूर की ऊंचाई तक आते-आते नष्ट हो जाती हैं। इनका वेग प्रायः 160 कि० मी० से लेकर 200 कि० मी० प्रति सैकिण्ड तक होता है। उल्कापात दिन और रात दोनों में ही होता रहता है, लेकिन दिन के प्रकाश में यह हमें दिखाई नहीं देता।

उल्काएं वस्तुतः केतुओं (Comets) के ही टुकड़े हैं। जब कभी पृथ्वी किसी केतु के मार्ग के पास से होकर जाती है, तो कुछ टुकड़े पृथ्वी की ओर आकर्षित हो जाते हैं। ये टुकड़े बड़े या छोटे दोनों ही हो सकते हैं। अब तक प्राप्त सबसे बड़ा उल्का-पिण्ड लगभग 27 टन (1000 मन) का प्राप्त हुआ है।

उल्काएं तीन प्रकार की होती हैं। पहली तरह की उल्का को टूटता तारा (Shooting star) कहते हैं। यह

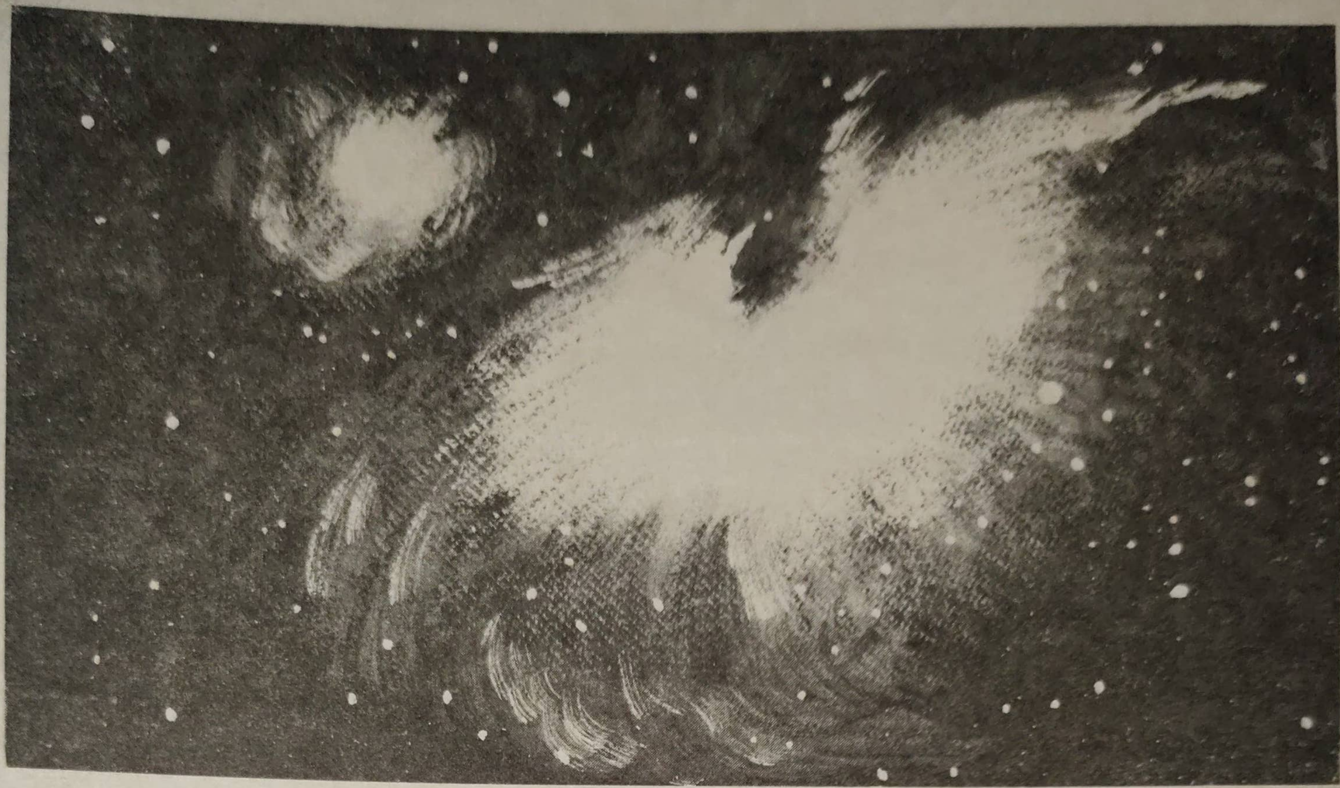
कम प्रकाश युक्त तारे की तरह जान पड़ती है। दूसरी तरह की उल्का, उल्का प्रस्तर (Meteorites) कहलाती है। यह इतनी बड़ी होती है कि इसका कुछ अंश पृथ्वी तक पहुंच जाता है। तीसरी तरह की उल्का अग्निपिण्ड (Fireballs)कहलाती है। ये बड़ी होने पर भी आकाश में ही चूर-चूर हो जाती हैं।

उल्काओं की बाहरी सतह तो गरम होती है, लेकिन भीतर की सतह ठण्डी होती है। ऊपरी सतह के पिघल जाने से इसके बाहर एक पतली चमकती हुई सतह जम जाती है। बहुत से उल्का पिण्डों में चेचक की तरह गड्ढे होते हैं। उल्का पिण्ड की रचना पृथ्वी के साधारण रवेदार पत्थरों की तरह होती है। रवेदार होने से पता चलता है कि ये पत्थर कभी पिघली हुई अवस्था में रहे होंगे। अक्सर उल्काएं पत्थर, लोहा, निकल और अन्य तत्त्वों से बनी होती हैं।

30 जून 1908 को साइबेरिया के येनीशाई नामक एक छोट्टे से प्रान्त में सात बजे सवेरे एक अत्यंत प्रचंड उल्का देखी गई। सूरज निकल चुका था फिर भी हज़ारों मनुष्यों ने इसकी चमक को देखा और इसकी भयंकर आवाज़ को सुना। इसके गिरने पर पृथ्वी कांप उठी। उसके गिरने से वहां का घना जंगल नष्ट हो गया, जमीन फट गई और गड्ढे बन गए। 50 मील तक के मकान गिर गए और बहुत से आदमी मर गए। उल्का के पत्थर जमीन में इतने अंदर घुस गए कि उनका आज तक भी पता नहीं चल पाया।

इसी प्रकार अरिजोना में 1.6 कि० मी० व्यास का एक गड्ढा है। इसकी भीतरी दीवार 600 मीटर ऊंची और बाहरी दीवार मिट्टी के बाहर आ जाने से लगभग 140 मीटर ऊंची है। 5 कि० मी० तक इस उल्का के छोटे-छोटे टुकड़े मिलते हैं। इस उल्का को गिरे हुए लगभग 1020 वर्ष हो चुके हैं।

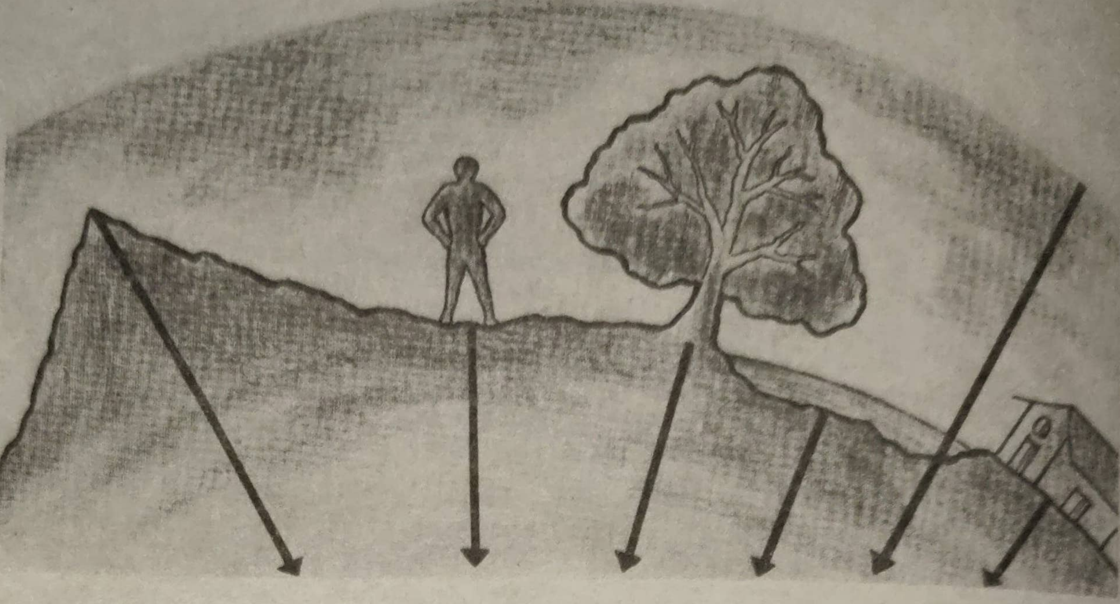
भारत में कई उल्का खण्ड (Meteorites) कलकत्ते के अंजायब घर (Museum) में सुरक्षित रखे हुए हैं। कोई बड़ा प्रस्तर अभी नहीं मिल सका है। अमेरिका में अब तक 672 उल्का पिण्डों के नमूने संग्रहालयों में एकत्रित किये जा चुके हैं।



तारे कैसे बनते हैं?

रात के समय हम आकाश में असंख्य तारों को रोज देखते हैं। इनमें कुछ बहुत चमकीले होते हैं, तो कुछ बहुत ही मंद प्रकाश देते हैं। कुछ आकार में छोटे दीखते हैं, तो कुछ बड़े। कुछ का तापमान बहुत अधिक होता है, तो कुछ का तापमान कम। तारों को देखकर हमारे मन में यह प्रश्न उठता है कि इनकी उत्पत्ति कैसे हुई?

वास्तव में ये तारे अंतरिक्ष में फैले हुए धूल के कण और गैस कणों के बादलों से बनते हैं। अंतरिक्ष में फैले हुए कणों और गैसों का कोई बादल जब अपने गुरुत्वबल (Gravity) के कारण सिकुड़ना शुरू करता है, तो एक गोले का रूप धारण कर लेता है। ऐसे बादलों का भार तारे के विकास के लिए सूरज़ के भार से कई हज़ार गुना अधिक होना जरूरी है। जब बादल का सिकुड़ना शुरू होता है, तो सिकुड़ने के दबाव के कारण ताप पैदा होता है। इस ताप का कुछ हिस्सा विकिरण द्वारा इधर-उधर बिखरता है, जो इस बादल को और सिकुड़ने में मदद करता है। एक ऐसी स्थिति भी आती है, जब यह बादल कई टुकड़ों में टूट जाता है और हर एक टुकड़ा सिकुड़ना जारी रखता है। जब ये टुकड़े बहुत ही गर्म हो जाते हैं, तो इनमें से प्रकाश निकलने लगता है और इस प्रकार हर चमकने वाला टुकड़ा एक स्वयं चमकने वाले तारे का रूप धारण कर लेता है। ये गोले और भी अधिक सिकुड़ते ही जाते हैं और ये तब तक सिकुड़ना जारी रखते हैं, जब तक कि इनके केंद्रों का तापमान लाखों डिग्री सेंटीग्रेट न हो जाए। इस तापमान पर ताप नाभिकीय क्रियायें आरंभ हो जाती हैं। ये क्रियायें ठीक वैसी ही होती हैं, जैसी एक हाइड्रोजन बम में होती हैं। इन ताप नाभिकीय क्रियाओं में हाइड्रोजन के चार नाभिक मिलकर हीलियम का नाभिक बनाते हैं। इन्हीं क्रियाओं के फलस्वरूप तारों से ऊर्जा निकलती रहती है। ये तारे तब तक जीवित रहते हैं, जब तक इनके अंदर की हाइड्रोजन दस प्रतिशत शेष न रह जाए। इनका जीवन काल अरबों वर्ष होता है। सूर्य भी एक तारा माना जाता है। उसमें भी इसी तरह ताप नाभिकीय क्रियाएं हो रही हैं, जिसके फलस्वरूप हमें सतत रूप से ऊर्जा मिल रही है। यह अनुमान किया जाता है कि हमारा सूर्य लगभग दस अरब वर्ष तक रहेगा। इसका आधा समय अब तक पूरा हो चुका है। इस प्रकार तारों की उत्पत्ति और अंत होता रहता है।

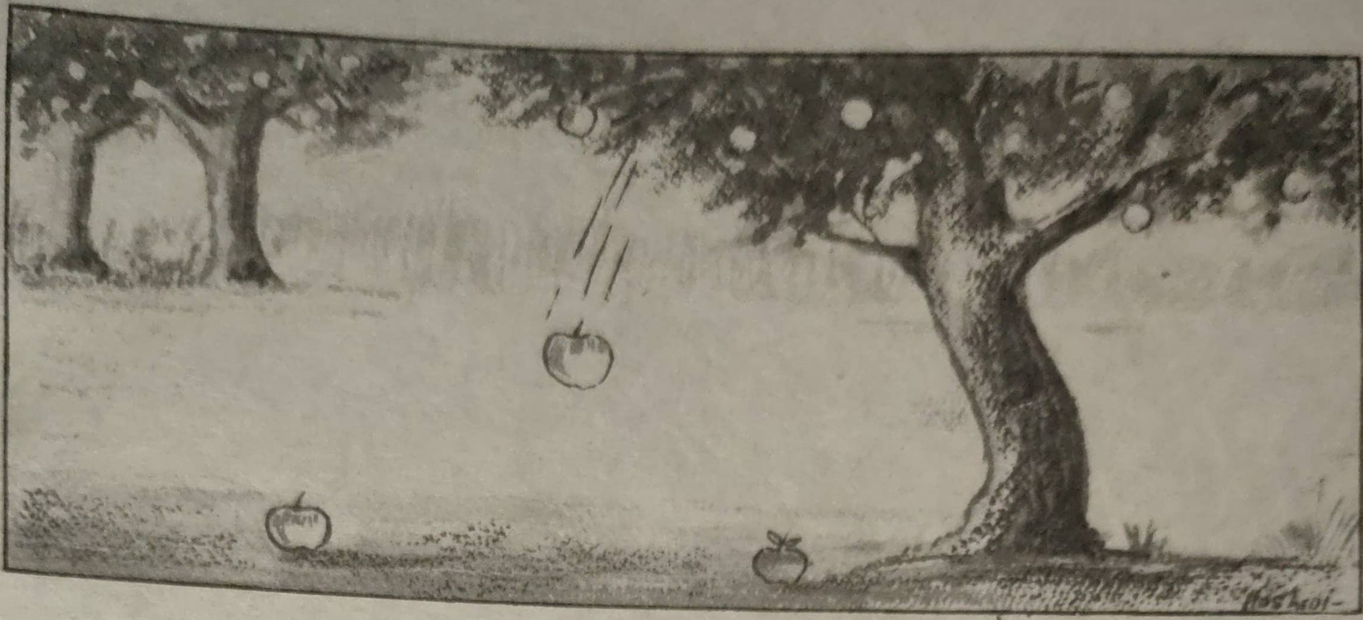


हमें पृथ्वी के घूमने का पता क्यों नहीं चलता?

सोलहवीं शताब्दी तक लोगों का विश्वास था कि पृथ्वी समस्त ब्रह्माण्ड का केन्द्र है और सूर्य, चन्द्रमा व तारे सभी धरती की परिक्रमा करते रहते हैं। इस धारणा का कारण था पृथ्वी का स्थिर रहना और दूसरे ग्रह नक्षत्रों का बदलना या घूमना। सन् 1545 में पोलैंड के खगोलशास्त्री (Astronomer) कोपरनिकस (Copernicus) ने पहली बार यह सिद्धांत प्रतिपादित किया कि पृथ्वी सूर्य के चक्कर लगाती है। आम लोगों को इस बात का विश्वास नहीं हुआ, क्योंकि उनका कहना था कि यदि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है, तो उस पर स्थित हम, पहाड़, समुद्र, जंगल आदि क्यों नहीं घूमते। लोगों की यह धारणा गलत सिद्ध हो चुकी है। आज सारे संसार में इस बात को माना जाता है कि पृथ्वी अपने जन्म से ही लगातार दो प्रकार की गतियां कर रही है। पहली गति यह सूर्य के चारों ओर करती है और दूसरी अपनी धुरी पर। पृथ्वी को सूर्य के चारों ओर एक चक्कर लगाने में 365.3422 दिन लगते हैं, जिसे हम एक वर्ष कहते हैं। पृथ्वी को अपनी धुरी पर चक्कर लगाने में चौबीस घंटे लगते हैं।

अब प्रश्न उठता है कि यदि पृथ्वी घूमती है, तो हमें पता क्यों नहीं चलता? उसका कारण यह है कि गुरुत्वाकर्षण के कारण हम तथा दूसरी वस्तुएं, यहां तक कि हवा भी पृथ्वी के साथ ही घूमती रहती है। इसे आप इस प्रकार समझ सकते हैं। यदि आप एक गेंद पर चींटी रखकर गेंद को घुमाएं तो चींटी को यह पता नहीं चलेगा कि गेंद घूम रही है। ठीक इसी प्रकार धरती की सतह पर हम भी विराजमान हैं और हमें धरती के घूमने का पता नहीं चलता। अब आप पूछेंगे कि पृथ्वी के घूमने की बात हम कैसे मान लें?

पृथ्वी के सूर्य के चारों ओर घूमने और अपनी धुरी पर घूमने के कई प्रमाण हैं। पृथ्वी के सूर्य के चारों ओर घूमने के कारण ही अलग-अलग मौसम होते हैं। पृथ्वी के अपनी धुरी पर घूमने के कारण रात और दिन होते हैं। पृथ्वी का जो हिस्सा सूरज के सामने आ जाता है, उस पर दिन हो जाता है और पीछे वाले हिस्से पर रात रहती है। यदि पृथ्वी अपनी धुरी पर न घूमती होती, तो एक ही हिस्से पर हमेशा दिन रहता और दूसरे हिस्से पर हमेशा रात। पृथ्वी अपनी धुरी पर ऊर्ध्वाधर (Vertical) से $23\frac{1}{2}°$ पर झुकी हुई है। इससे प्रत्येक ध्रुव छः महीने तक सूर्य के सामने रहता है और छः महीने तक सूर्य से दूर। इसलिए ध्रुवों पर छः महीने का दिन और छः महीने की रात होती है। इन सब प्रमाणों से सिद्ध होता है कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर और अपनी धुरी पर सतत रूप से घूमती रहती है।



पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण बल (Force of Gravity) क्या है?

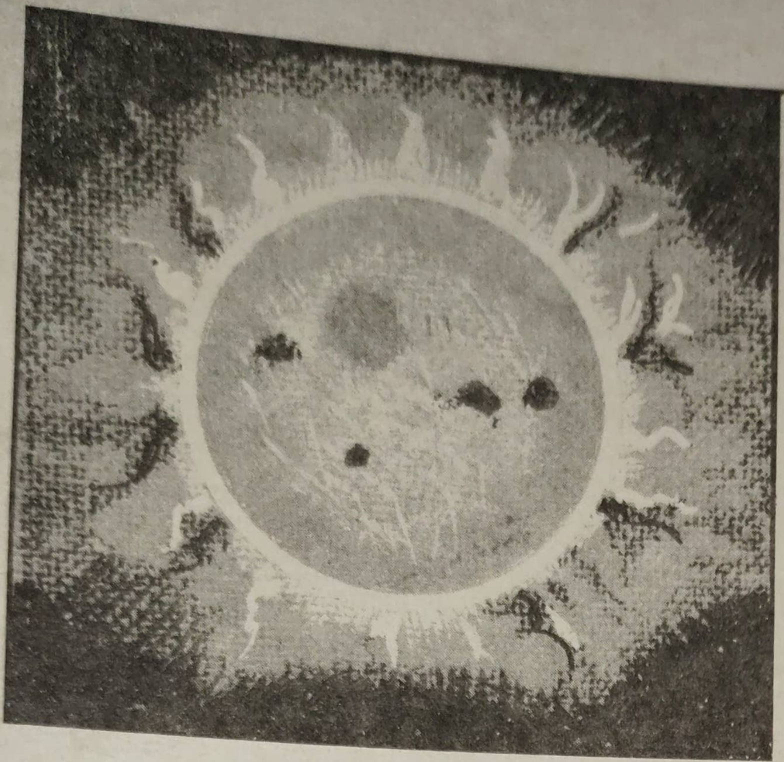
जब हम एक गेंद को धरती के ऊपर फेंकते हैं, तो थोड़ी ही देर में यह लौटकर जमीन पर आ जाती है। पेड़ों से टूटे हुए फल भी जमीन पर आकर ही गिरते हैं। ये सब चीज़ें आकाश की ओर क्यों नहीं चली जातीं? इस प्रकार के प्रश्न प्राचीन मानव के मन में भी आते थे, लेकिन वह यह नहीं जानता था कि ऐसा क्यों होता है? अब इस प्रकार का उत्तर ढूंढ निकाला गया है। अब यह माना जाता है— कि पृथ्वी प्रत्येक वस्तु को अपनी ओर खींचती है। इसलिए पेड़ों से टूटे फल और धरती से ऊपर फेंकी गई गेंद, पृथ्वी की ओर खिच जाती है। पृथ्वी के इस खिचाव या आकर्षण बल को गुरुत्वाकर्षण बल कहते हैं।पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण केन्द्र (Centre of Gravitation) पृथ्वी के अंदर मध्य में माना जाता है। कल्पना करो कि यदि पृथ्वी के केंद्र से गुजरता हुआ ऊपर से नीचे एक छेद कर दिया जाये और फिर इसमें एक गेंद डाली जाये, तो गेंद मध्य में गुरुत्वाकर्षण केंद्र पर रुक जायेगी, दूसरी ओर नहीं निकलेगी, जो वस्तु इस केंद्र के जितने ही निकट होती है, उसका भार उतना ही अधिक होता है, और जो वस्तु जितनी दूर होती है, उसका भार उतना ही कम होता है। यही कारण है कि जब किसी वस्तु को ध्रुवों पर तौलते हैं, तो उसका भार अधिक होता है। उसी वस्तु को जब विषुवत रेखा पर तौलते हैं तो भार कम होता है। इसका कारण यह है कि पृथ्वी ध्रुवों पर चपटी होती है और ध्रुवों की पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण केंद्र से दूरी कम है, इसलिए भार अधिक होता है। चूंकि विषुवत रेखा का स्थान पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण केंद्र से ध्रुवों की अपेक्षा अधिक दूर है। अतः यहां पर भार अपेक्षाकृत कम होता है। यह गुरुत्वाकर्षण बल केवल पृथ्वी में ही नहीं है, बल्कि अन्य ग्रहों में भी है। इतना ही नहीं,ब्रह्माण्ड के हर एक पिण्ड के बीच में एक गुरुत्वाकर्षण बल लगा हुआ है और इसी बल के कारण ग्रह और तारे आकाश में लटके हुए हैं। इसी आकर्षण के बल पर चन्द्रमा पृथ्वी के चारों तरफ घूम रहा है और पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूम रही है। चन्द्रमा भी पृथ्वी को अपनी ओर खींचता है। समुद्र में ज्वार भी चन्द्रमा के गुरुत्व बल के कारण ही आते हैं।

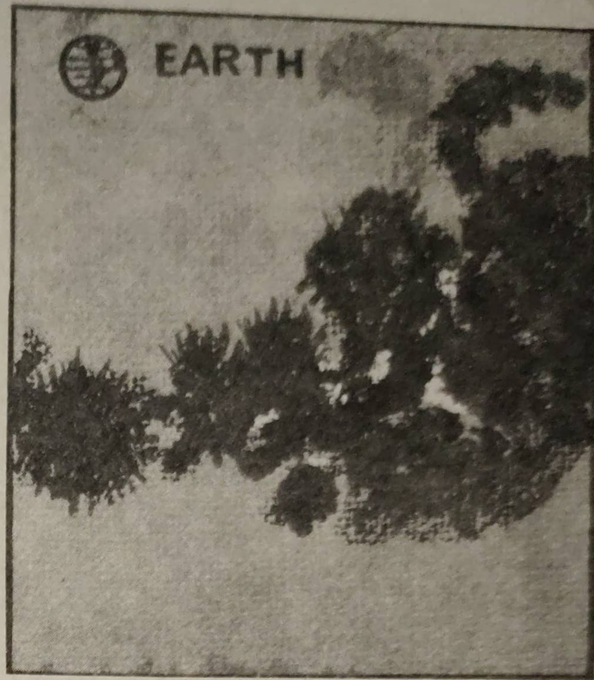
पन्द्रहवीं शताब्दी के अंत तक यह माना जाता रहा था कि यदि अलग-अलग भार की दो वस्तुओं को किसी ऊंचाई से जमीन पर गिराया जाये, तो भारी वस्तु हल्की वस्तु की अपेक्षा जमीन पर जल्दी आएगी। यह विचार निर्मूल था। गैलीलियो नामक वैज्ञानिक ने सर्वप्रथम 1590 में यह सिद्ध कर दिखाया कि भारी और हल्की वस्तु एक ही ऊंचाई से गिराने पर एक ही समय में पृथ्वी पर आ गिरेगी। गैलीलियो ने पीसा की झुकी हुई मीनार के ऊपर खड़े

होकर दो गोले जिनमें एक लगभग 45 कि० ग्रा० का था और दूसरा दो सौ पचीस ग्रा० का था, एक साथ गिराए और उपस्थित हज़ारों लोगों को यह दिखाया कि वे दोनों गोले जमीन पर एक साथ आकर गिरे।

इसके पश्चात न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण बल का एक सिद्धांत निकाला। उनके अनुसार ब्रह्माण्ड की प्रत्येक वस्तु एक दूसरे को एक ऐसे बल से खींचती है, जो उन वस्तुओं के द्रव्यमान तथा उनके बीच की दूरी पर निर्भर करता है। यह बल उन वस्तुओं के द्रव्यमान के गुणनफल के समानुपाती होता है और उनकी बीच की दूरी के वर्ग के व्युतक्रमानुपाती होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि दो वस्तुओं में से एक का द्रव्यमान दोगुना कर दिया जाये, तो आकर्षण बल भी दोगुना हो जायेगा और यदि उनके बीच की दूरी दोगुनी कर दी जाये, तो उनके बीच का आकर्षण बल घटकर एक चौथाई रह जायेगा।

पृथ्वी के अन्य पिण्डों में गुरुत्वाकर्षण का गुण क्यों होता है? इसका उत्तर अभी तक पूरी तरह वैज्ञानिक लोग नहीं जान पाये हैं। ऊंचाई से स्वतंत्रतापूर्वक गिरने वाली वस्तु का वेग 9.8 मीटर या 32 फुट प्रति सेकिण्ड के हिसाब से बढ़ता जाता है। इस वेग परिवर्तन की दर को गुरुत्वत्वरण कहते हैं। इसी प्रकार धरती से ऊपर फेंकी जाने वाली वस्तु का वेग 32 फुट प्रति सेकण्ड की दर से कम होता जाता है और अन्ततः यह वेग शून्य हो जाता है। उसके बाद वस्तु पृथ्वी की ओर लौटकर गिरना शुरू हो जाती है।



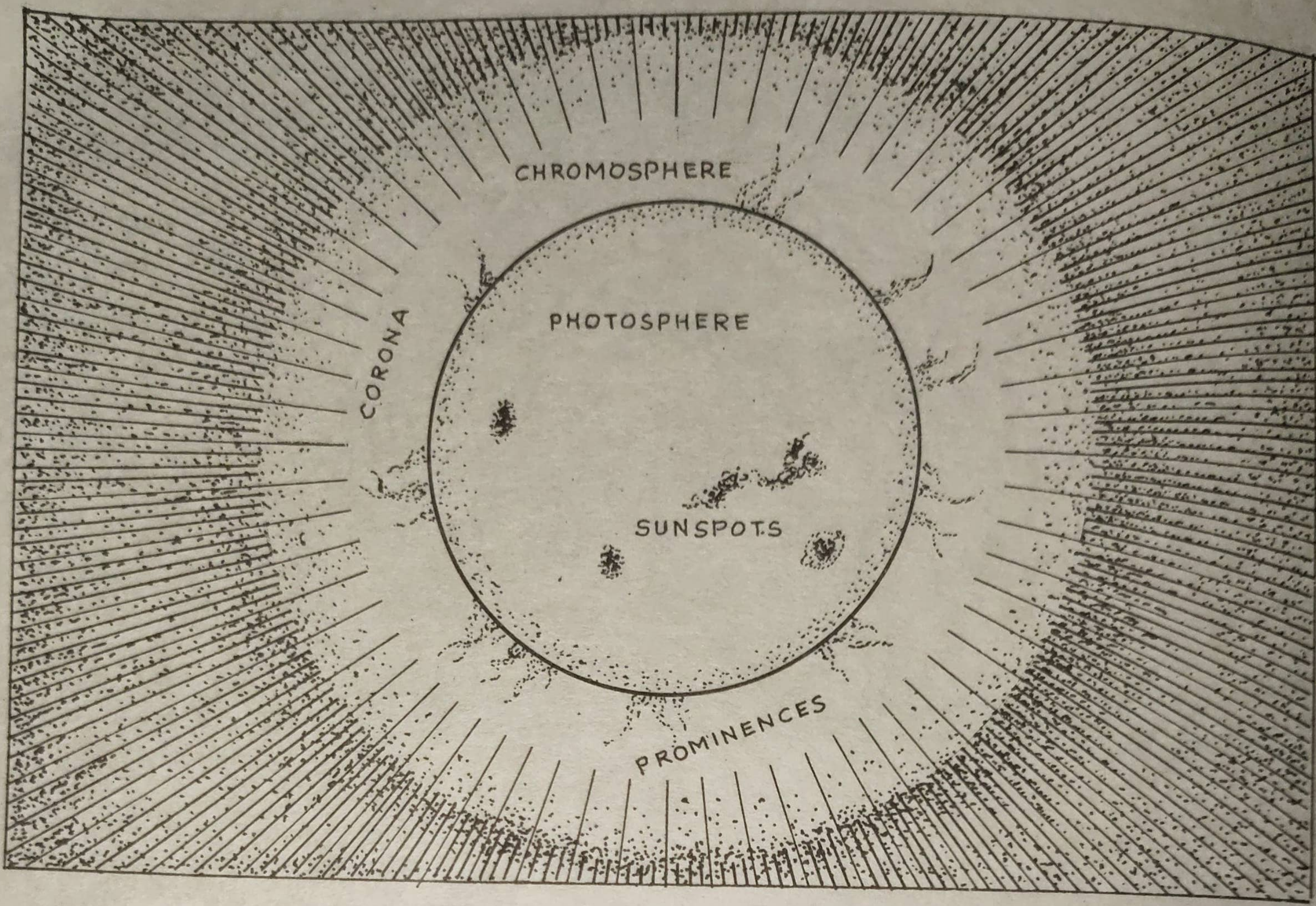


सूर्य के धब्बे क्या हैं ?

दूरदर्शी यंत्र द्वारा यदि सूर्य की सतह को ध्यान पूर्वक देखा जए तो उस पर काले-काले धब्बे नजर आएंगे। इन धब्बों का पता गैलिलियो ने अपने द्वारा बनाये गए दूरबीन से सन् 1610 में ही लगा लिया था। ये धब्बे सूर्य की चमकती सफेद सतह पर काले छेद जैसे लगते हैं। इन्हीं धब्बों को सूर्य के धब्बे (Sun spots) कहते हैं। पर दिखाई देते हैं, फोटोस्फीयर सूर्य के धरातल पर 125 से लेकर 190 कि० मी० मोटी गैसों की तह है। आधुनिक वैज्ञानिक सिद्धांतों के अनुसार ये धब्बे शक्तिशाली चुम्बकीय क्षेत्र पैदा करते है, उस स्थान का तापमान कम हो जाता है। फलत: कम ताप वाला भाग अधिक ताप के बीच में काले धब्बे के रूप में दिखाई देने लगता है। इन धब्बों का तापमान लगभग 40000 डिग्री सेंटीग्रेड होता है। ये स्थायी नहीं होते, बल्कि बनते बिगड़ते रहते हैं।

क्या तुम जानते हो कि इन धब्बों का आकार कितना बड़ा होता होगा? तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि कुछ धब्बे तो इतने बड़े होते हैं, जिनमें हमारी पृथ्वी जैसी सैकड़ों पृथ्वियां समा सकती हैं। एक छोटा सा धब्बा भी इतना बड़ा होता है कि वह सूर्य के धरातल पर दो हजारवें भाग तक फैल सकता है। ये धब्बे सूर्य के 50 करोड़ वर्ग मील के क्षेत्र में फैले हुए हैं। 4 जून 1946 को एक ऐसा धब्बा देखा गया, जिसकी लंबाई चार लाख अस्सी हज़ार कि० मी० या तीन लाख मील थी और चौड़ाई एक लाख बारह हज़ार कि० मी० या सत्तर हज़ार मील थी। सूर्य के अधिकतर धब्बे थोड़े ही दिनों तक रह पाते हैं। कुछ दो महीने या अधिक समय तक भी रहते हैं। धब्बों की स्थिति परिवर्तन से यह पता चलता है कि पृथ्वी की तरह सूर्य भी अपने अक्ष (Axis) पर घूम रहा है। ये धब्बे हमें पूर्व से पश्चिम की ओर चलते दिखाई पड़ते हैं, क्योंकि सूर्य पूर्व से पश्चिम की ओर घूम रहा है। इन धब्बों के स्थान, आकार और भ्रमण काल में परिवर्तन होता रहता है। इससे यह भी पता चलता है कि सूर्य ठोस नहीं है। ये धब्बे बीच में अधिक काले होते हैं और इनका बाहरी भाग कुछ कम काला होता है।

वैज्ञानिकों ने सूर्य के विषय में यह निष्कर्ष निकाला है कि चुम्बकीय सुई की दिशा में कभी-कभी अनियमित रूप से बदलने लगती है। ऐसी दशा को कहा जाता है कि 'चुम्बकीय आंधी' चल रही है। निस्संदेह चुम्बकीय आंधियों का सम्बन्ध सूर्य के धब्बों से है। चुम्बकीय आंधियां उस समय अधिक चलती हैं, जब सूर्य पर अनेक धब्बे बनते दिखाई देते हैं।

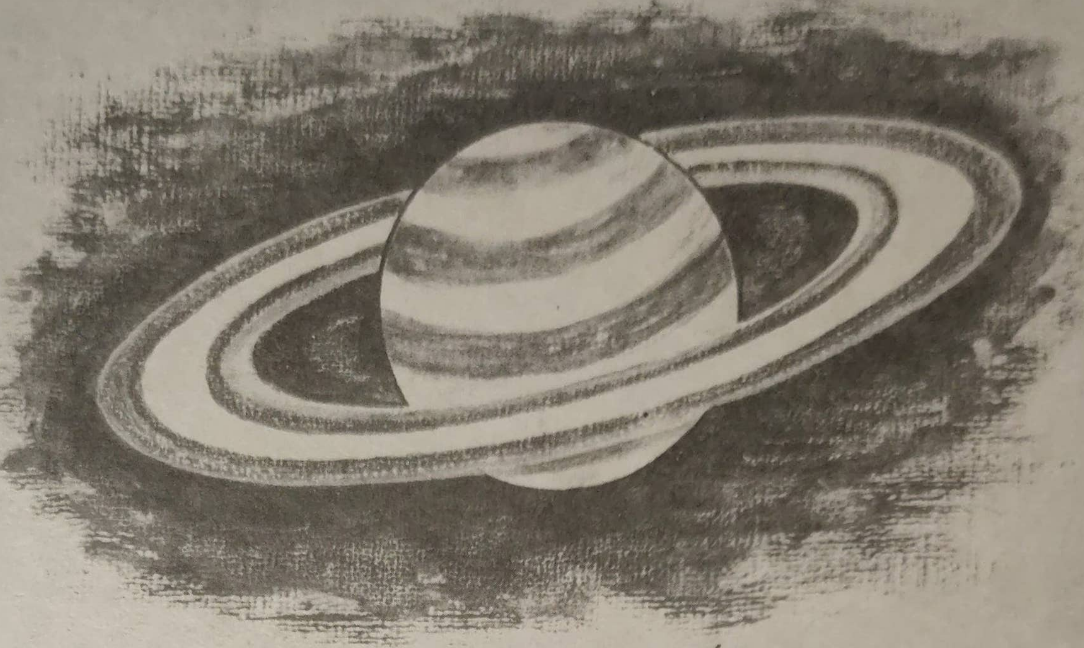


क्या सूर्य का कभी अंत होगा?

सूर्य के विषय में कभी-कभी मन में यह आशंका पैदा होती है कि यदि सूर्य का अंत हो गया तो हमारा क्या होगा? क्योंकि सूर्य हमारा जीवन-दाता है। वैज्ञानिकों के मन में यह प्रश्न आता है कि सूर्य एक तारा है और जैसे अन्य तारों में परिवर्तन होते रहते हैं, या कुछ का अंत हो जाता है, क्या उसी तरह सूर्य का भी अंत हो सकता है? क्या सूर्य की स्थिति में निरंतर होने वाले परिवर्तन हमारे लिए एक समस्या पैदा कर सकते हैं? इन सब प्रश्नों का उत्तर ढूंढ़ने के लिए वैज्ञानिकों ने सूर्य में होने वाली क्रियाओं का बड़ा गहन अध्ययन किया है और उनसे कुछ परिणाम निकाले हैं।

एक समय था कि जब यह विश्वास किया जाता था कि सूर्य धीरे-धीरे ठण्डा होता जा रहा है। यदि ऐसा होता तो सूर्य कुछ ही हज़ार वर्षों तक रह पाता। लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं है। आज वैज्ञानिकों ने इस बात का निश्चय पूर्वक पता लगा लिया है कि सूर्य से निकलने वाला प्रकाश और ऊर्जा ताप नाभिकीय क्रियाओं का परिणाम है। सूर्य के अन्दर उपस्थित हाइड्रोजन के परमाणु ताप नाभिकीय क्रियाओं के फलस्वरूप मिलकर हीलियम नाभिकों का निर्माण करते हैं। अब प्रश्न यह है कि सूर्य के अंदर उपस्थित हाइड्रोजन कब तक चलती रहेगी? ऐसा अनुमान किया जाता है कि सूर्य के अन्दर इतनी हाइड्रोजन है, जो निरंतर रूप से ताप नाभिकीय क्रियाओं को लगभग दस अरब वर्ष तक चलाती रहेगी। इसका अर्थ यह हुआ कि सूर्य का जीवन काल लगभग 10 अरब वर्ष है। इसमें से अब तक लगभग आधा समय बीत चुका है। अतः सूर्य अभी कम से कम 5 अरब वर्ष तक तो ऐसे ही प्रकाश और ऊर्जा देता रहेगा।

हाइड्रोजन के हीलियम में परावर्तित होने से ऊर्जा उत्पन्न होती है, यह परिवर्तन लगभग 2 करोड़ 70 लाख अंश फैरनहाइट पर होता है। यह ऊर्जा विकिरण द्वारा पृथ्वी तक आती है। इस ऊर्जा का केवल 1% पृथ्वी ग्रहण करती है।



शनि ग्रह के छल्ले क्या है ?

शनि सौर परिवार के नौ ग्रहों में से एक है। यह आकार की दृष्टि से सौर परिवार का दूसरा सबसे बड़ा ग्रह है एवं सूर्य से दूरी की दृष्टि से यह छठा ग्रह है। सूर्य से इसकी दूरी एक अरब बयालीस करोड़ सत्तर लाख कि. मी. (88 करोड़ 70 लाख मील) है। इसकी अधिक चमक इसके बड़े आकार के कारण है। यह सूर्य की परिक्रमा करता रहता है। इसे सूर्य की परिक्रमा करने में लगभग साढ़े उन्तीस वर्ष लगते हैं। शनि के दस उपग्रह हैं। दसवें उपग्रह की खोज सन् 1966 में हुई थी। ये उपग्रह शनि की परिक्रमा करते रहते हैं। शनि ग्रह देखने में पीले रंग का लगता है। यह भार में पृथ्वी से 95 गुना भारी है। इसका आयतन पृथ्वी से 743.7 गुना है। हिन्दू लोग शनि को एक अशुभ ग्रह मानते हैं।

शनि सभी ग्रहों में सबसे अधिक सुंदर है। इसकी सुंदरता इसके चारों ओर उपस्थित छल्लों के कारण है। ये छल्ले कोरी आंखों से दिखाई नहीं देते, लेकिन दूरबीन की सहायता से स्पष्ट दिखाई देते हैं। जुलाई सन् 1610 में गैलीलियो ने अपने टेलिस्कोप की सहायता से जब शनि ग्रह का अध्ययन किया, तो उसने देखा कि इस ग्रह के चारों ओर कोई अज्ञात चीज़ चिपकी हुई है। सन् 1655 में क्रिश्चियन हाइगन नामक वैज्ञानिक ने बेहतर टेलिस्कोप की सहायता से यह पता लगाया कि शनि ग्रह के चारों ओर एक गोल छल्ला है, जो उसके वास्तविक आकार को नहीं छूता है।

शक्तिशाली दूरबीनों से देखने पर पता चला है कि तीन छल्ले तो स्पष्ट दिखाई देते हैं। सन् 1969 में एक चौथे छल्ले का भी वैज्ञानिकों ने पता लगाया है। कुछ वैज्ञानिक एक पांचवें छल्ले के दिखने की बात भी करते हैं, लेकिन अभी यह पांचवां छल्ला विवादास्पद है। इन चार छल्लों को ए, बी, सी, डी, कहते हैं। इन छल्लों की समस्त चौड़ाई लगभग एक लाख सत्तर हज़ार (1,70,000) मील है, जो शनि के व्यास से दोगुनी है। इन छल्लों का निर्माण बर्फ और धूल के छोटे-छोटे कणों से हुआ होगा, ऐसा वैज्ञानिक मानते हैं। बाहरी छल्ला 'ए' कुछ चमकीला है। इसका बाहरी व्यास दो लाख चौदह हज़ार कि. मी. या एक लाख सत्तर हज़ार मील है और अंदर का व्यास दो लाख अड़तीस हज़ार चार सौ कि. मी. या एक लाख उन्चास हजार मील है। इस प्रकार चौड़ाई करीब सोलह हज़ार कि. मी. या दस हज़ार मील है।

'ए' से 'बी' तक की दूरी चार हज़ार कि. मी. या ढ़ाई हज़ार मील है। 'बी' वलय सबसे अधिक चमकीला है। इसका बाहरी व्यास दो लाख तीस हज़ार चार सौ कि. मी. या एक लाख चवालीस हज़ार मील है और अन्दर का व्यास एक लाख उन्नासी हज़ार दो सौ कि. मी. या एक लाख बारह हज़ार मील है। यह बाहर की ओर अधिक चमकीला है और अंदर की ओर कम। इसकी चौड़ाई करीब पच्चीस हज़ार छः सौ कि. मी. या सोलह हज़ार मील है। 'बी' और 'सी' के बीच की दूरी करीब नौ सौ साठ कि. मी. या छः सौ मील है। अंदर का छल्ला 'सी' बहुत ही कम चमकीला है। इसका बाहरी व्यास एक लाख सत्तर हज़ार छः सौ कि. मी. या एक लाख ग्यारह हज़ार मील है और अंदर का व्यास एक लाख तेंतालीस हज़ार नौ सौ बीस कि. मी. या नवासी हज़ार नौ सौ पचास मील है। चौथा छल्ला 'डी' है। यह बहुत ही धुंधला है,अतः इसकी सीमा का कुछ पता नहीं लगता। ये सभी छल्ले अंडाकार दिखाई देते हैं। ये छल्ले बर्फ और धूल के छोटे-छोटे कणों से मिलकर बने हैं। पृथ्वी से देखने पर ये छल्ले जुड़े हुए लगते हैं। हो सकता है, ये छल्ले किसी अन्य ग्रह का बचा हुआ मलवा हों, जो शनि के अत्यधिक निकट आने पर चारों तरफ बिखर गया हो।

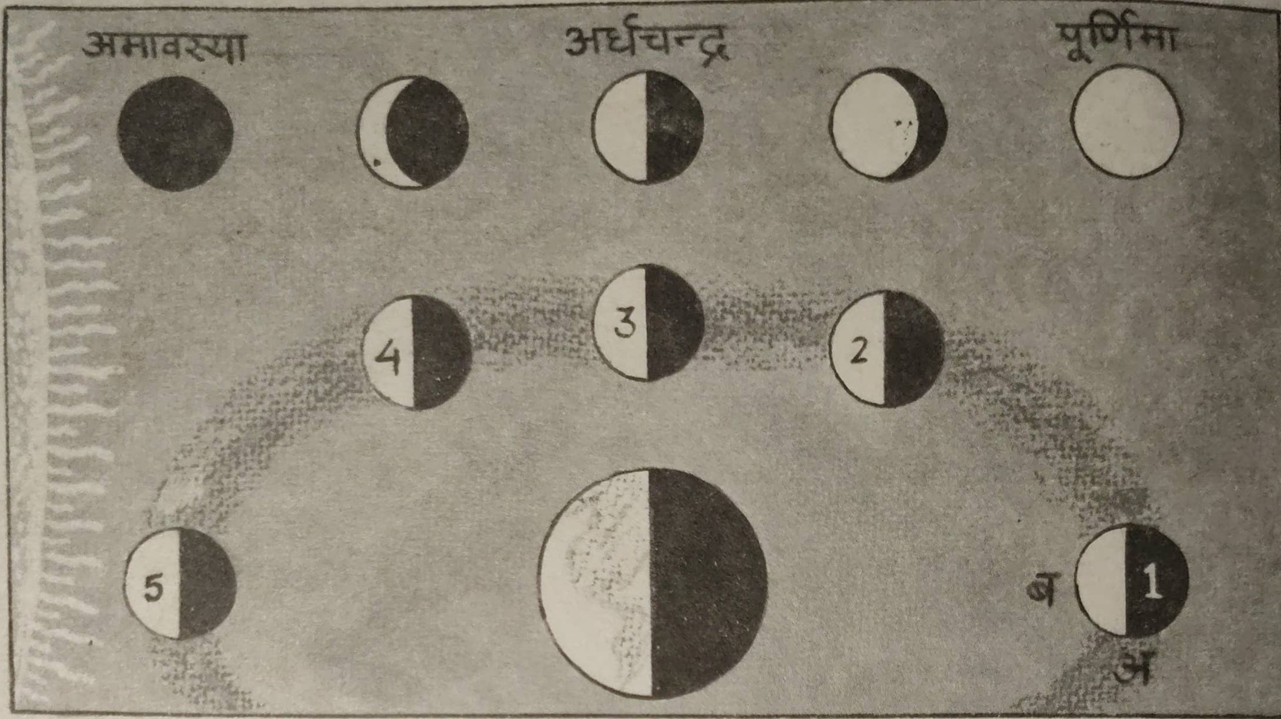


धरती का एकमात्र उपग्रह 'चन्द्रमा' क्या है ?

पहले लोग चन्द्रमा को देवता मानकर उसकी पूजा करते रहे हैं। कवि इसे सुंदरता का प्रतीक मानते रहे हैं। इस पर दिखने वाले काले धब्बों को तरह-तरह की कहानियों से जोड़ा जाता रहा है। लेकिन आज ये सब कल्पनाएं समाप्त हो गई हैं। चन्द्रमा एक आकाशीय पिण्ड है। यह हमारी पृथ्वी का एक मात्र उपग्रह है। यह सतत रूप से हमारी पृथ्वी की परिक्रमा करता रहता है। इसका अपना कोई प्रकाश नहीं है। यह सूर्य के प्रकाश से चमकता है। यह एकमात्र ऐसा उपग्रह है, जिसके ऊपर मानव के चरण पड़े हैं। 20 जुलाई 1969 को अपोलो-11 की उड़ान में नील आर्मस्ट्रांग नामक अमेरिकी वैज्ञानिक सर्वप्रथम चन्द्र के धरातल पर उतरने में सफल हुआ और इसके विषय में अनेकों अनजाने रहस्यों का पता लगाया। इसी उड़ान में चन्द्रमा की सतह पर एक रिट्रो परावर्तक (Retro Reflector) लगाया गया। पृथ्वी से लेसर (Laser) किरणें भेजी गईं, जो इस परावर्तक से परावर्तित हुईं और उन्हें धरती पर पुनः प्राप्त करके, चन्द्रमा की दूरी सही-सही मापी गई। इस दूरी में छः इंच से अधिक की त्रुटि नहीं है। यह दूरी 3,84,400 कि. मी. (2,38,860 मील) है।

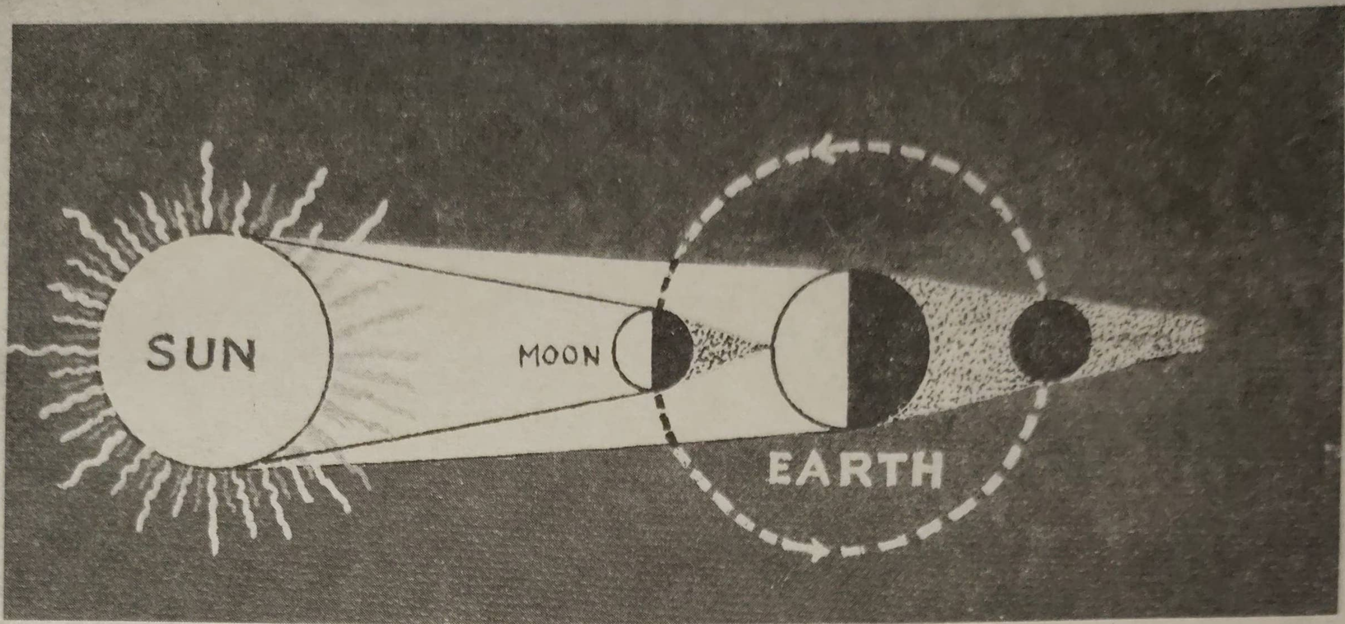
चन्द्रमा गेंद के आकार का एक ठोस गोल पिण्ड है। पृथ्वी के चारों ओर यह अपनी परिक्रमा अंडाकार पथ में 29 दिन 12 घंटे 43 मिनट में पूरी करता है। इस समय को हम एक चन्द्रमास कहते हैं। हमें हमेशा चन्द्रमा की एक ही सतह दिखाई पड़ती है, क्योंकि इसका अपनी धुरी पर घूमने का समय और पृथ्वी के चारों ओर परिक्रमा का समय लगभग बराबर है।

चन्द्रमा सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होता है। सूर्य से पड़ने वाले प्रकाश का 10% प्रकाश इसकी सतह से परावर्तित हो जाता है और शेष इसके द्वारा अवशोषित हो जाता है। दोपहर के समय इसकी सतह का तापमान लगभग 130° सें. होता है, जबकि रात को यह काफी ठंडी हो जाती है। जब पूरा चन्द्रमा चमकता है, तो इसकी चमक आधे चन्द्रमा से दस गुनी होती है। चन्द्रमा की सतह ऊबड़-खाबड़ है। यहां पहाड़, घाटियां और काले-काले सपाट भाग हैं। यह काले भाग ही चन्द्रमा के कलंक के रूप में दिखाई पड़ते हैं। इस पर पहाड़, चट्टानें और काफी बड़े-बड़े गड्ढे हैं। इसकी सतह पर राख के ढेर हैं, जो उल्कापातों के कारण हो गए हैं। सबसे बड़े गड्ढे का व्यास 232



कि. मी. (145 मील) है और यह 3657 मीटर (12000 फुट) गहरा है। चन्द्रमा की सतह से लिए गए चट्टानों के नमूनों के अध्ययन से पता चला है कि इनमें एल्यूमिनियम, लोहा, मैग्नीशियम आदि धातुएं हैं। इसकी सतह पर सिलीकेट भी है। चन्द्रमा पर वायु और पानी नहीं है, इसलिए वहां पर जीवन का कोई भी चिन्ह नहीं है।

पृथ्वी से चन्द्रमा की औसत दूरी 2,38,860 मील है। यह दूरी इसकी अंडाकार कक्षा के कारण थोड़ी सी बदलती रहती है। चन्द्रमा का व्यास 3476 कि. मी. (2160 मील) है। इसकी अपनी धुरी पर घूमने की गति 2287 मील प्रति घंटा है। इसे अपनी धुरी पर एक चक्कर लगाने में 27 $1/3$ दिन का समय लगता है। इसका भार पृथ्वी के भार का 1/81.3वां हिस्सा है। इसका आयतन पृथ्वी के आयतन का 1/49वां भाग है। चन्द्रमा का गुरूत्व बल (Gravitational force) पृथ्वी के गुरूत्व बल का लगभग छठा हिस्सा है। यही कारण है कि यदि धरती पर हम 1 मीटर ऊंचा कूद सकते हैं तो चन्द्रमा पर 6 मीटर ऊंचा कूद सकते हैं। इसी प्रकार यदि धरती पर हम 50 किलो वज़न उठा सकते हैं तो चन्द्रमा पर 300 किलो वज़न उठा लेंगे। चन्द्रमा के विषय में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए वैज्ञानिक सतत प्रयास कर रहे हैं।



चन्द्रग्रहण कैसे होता है ?

जब हम जमीन पर खड़े होते हैं और सूरज की रोशनी हमारे शरीर पर पड़ती है, तो जमीन पर हमें अपनी परछाईं दिखती है। ठीक इसी प्रकार चन्द्रमा और पृथ्वी पर सूर्य के प्रकाश के पड़ने पर इनकी परछाइयां आकाश में बनती हैं। चूंकि पृथ्वी और चन्द्रमा का आकार गोल है, इसलिए इनकी परछाइयां शंकु के आकार की होती हैं। ये परछाइयां बहुत लम्बी होती हैं। जो पिण्ड सूरज से जितनी अधिक दूरी पर होगा, परछाइयां भी उतनी ही अधिक लम्बी होंगी। ग्रहण का अर्थ है, किसी पिण्ड के हिस्से पर परछाईं पड़ने से कालापन (अंधेरा) हो जाना।

हम जानते हैं कि पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है और चन्द्रमा पृथ्वी की परिक्रमा करता है। ये दोनों ही हज़ारों मील लम्बी परछाइयां बनाते हैं। घूमते-घूमते जब सूर्य, पृथ्वी और चन्द्रमा एक ही सीधी रेखा में आ जाते हैं, तथा पृथ्वी, सूर्य और चन्द्रमा के बीच में होती है, तो पृथ्वी की परछाईं या छाया, जो सूर्य के विपरीत दिशा में होती है, चन्द्रमा पर पड़ती है। यह भी कह सकते हैं कि पृथ्वी के बीच में आ जाने से सूर्य का प्रकाश चन्द्रमा पर नहीं पहुंच पाता। जितने स्थान पर प्रकाश नहीं पहुंच पाता, उतना स्थान प्रकाश रहित (अन्धकार युक्त) हो जाता है। यही चन्द्रग्रहण कहलाता है। ऐसी स्थिति पूर्णिमा के दिन ही आ सकती है। इसलिए चन्द्रग्रहण जब भी होता है, केवल पूर्णिमा के दिन ही होता है। चन्द्रमा का जितना हिस्सा परछाईं से ढक जाता है, उतना ही चन्द्रग्रहण होता है। यदि पृथ्वी की छाया पूरे चन्द्रमा को ढक लेती है, तो पूर्ण चन्द्रग्रहण हो जाता है। आमतौर पर एक वर्ष में चन्द्रमा के तीन ग्रहण होते हैं, जिनमें एक पूर्ण चन्द्रग्रहण होता है।

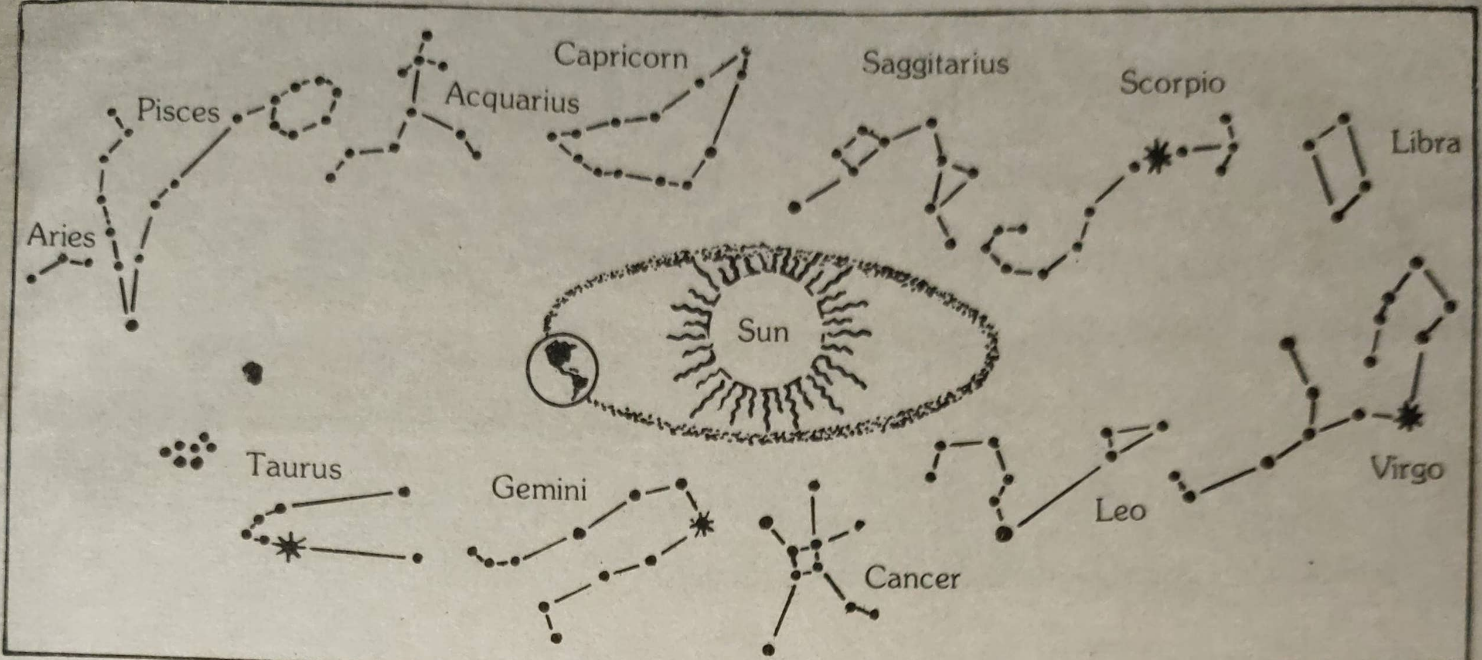
अब प्रश्न उठता है कि पूर्णिमा तो हर महीने होती है, लेकिन चन्द्रग्रहण तो हर मास नहीं होता। इसका कारण यह है कि चन्द्रमा के घूमने के रास्ते का तल पृथ्वी के भ्रमण-पथ के तल के साथ 5 डिग्री का कोण बनाता है। इस कारण चन्द्रमा पृथ्वी की छाया के स्तर से ऊपर अथवा नीचे घूमता है। कभी-कभी ही ये तीनों एक सीध में आते हैं। अतः चन्द्रग्रहण हर पूर्णिमा को नहीं पड़ता। गणित का प्रयोग करके खगोलविद् आसानी से यह बता देते हैं कि चन्द्रग्रहण कब पड़ेगा और वह कितने समय रहेगा।



जब हम चलते हैं तो चन्द्रमा हमारे साथ क्यों चलता है ?

चंद्रमा हमारी पृथ्वी से इतनी दूर है कि हम उसका वास्तविक रूप नहीं देख पाते। पृथ्वी की चन्द्रमा से दूरी लगभग 3,84,000 कि० मी० (2,38,860 मील) है। इसका व्यास लगभग 3476 कि० मी० (2160 मील) है। दूरबीन से देखने पर चंद्रमा काफी स्पष्ट दिखाई देता है। जब हम चलते हैं या किसी चलती गाड़ी में बैठे होते हैं, तो हमको लगता है कि चन्द्रमा भी हमारे साथ चल रहा है। साथ ही हम देखते हैं कि धरती की हर वस्तु हम से पीछे छूट रही है। पेड़-पौधे, इमारतें और अन्य दूसरी चीज़ें हमारी विपरीत दिशा में पीछे की ओर चलते हुए दिखते हैं। जब हम चांद को देखते हैं, तो सोचते हैं कि धरती की दूसरी वस्तुओं की भांति उसे भी पीछे चलना चाहिए था, लेकिन हम देखते हैं कि चांद पीछे छूटने के बजाए हमारे साथ ही साथ चलता रहता है।

ऐसा क्यों होता है? इसका कारण इसका पृथ्वी से दूर होना ही है। वास्तव में यह एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है। जब हम गाड़ी में चलते हैं, तो धरती पर स्थित वस्तुओं द्वारा हमारी आंख पर बनाया गया कोण तेजी के साथ बदलता है, इसीलिए वस्तुएं हमें पीछे की दिशा में चलती हुई महसूस होती हैं। यह कोण तेजी के साथ इसलिए बदलता है, क्योंकि ये वस्तुएं हमसे अधिक दूरी पर नहीं होतीं। चन्द्रमा हमारी पृथ्वी से बहुत दूर है, इसलिए जब हम आगे बढ़ते हैं, तो उसके द्वारा हमारी आंख पर बनाया गया कोण बहुत ही कम बदल पाता है। वास्तविकता तो यह है कि हमारे द्वारा मीलों तक की दूरी तय करने पर भी चन्द्रमा द्वारा हमारी आंख पर बनाया गया कोण बहुत ही कम बदलता है। यही कारण है कि चन्द्रमा हमें अपने साथ-साथ चलता हुआ प्रतीत होता है।

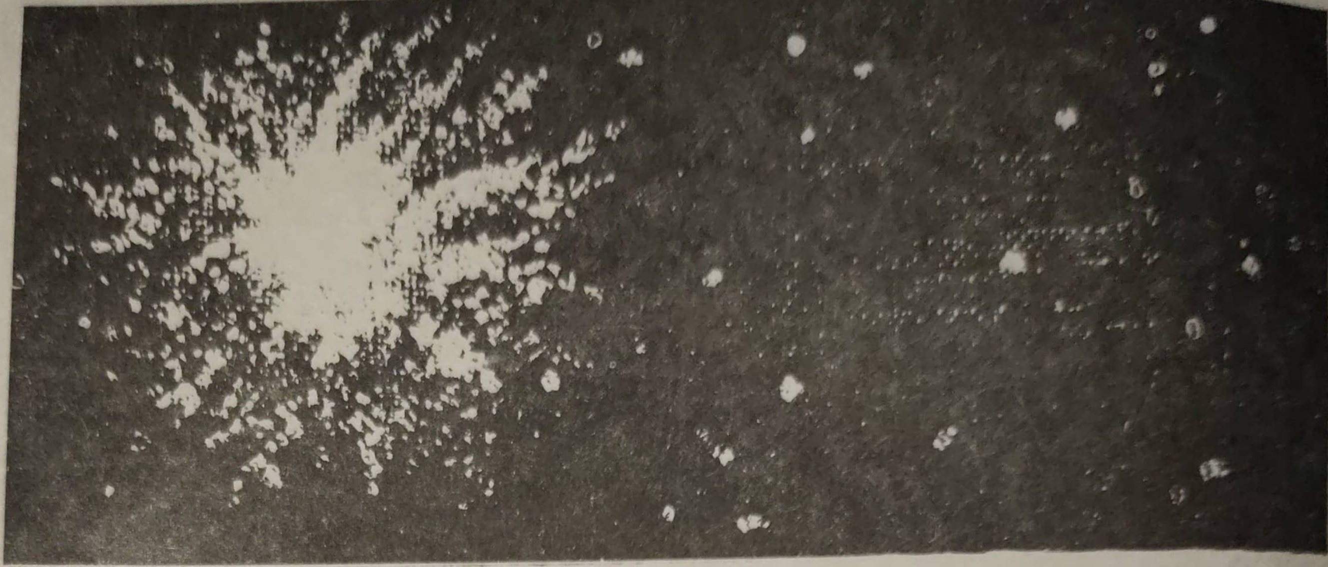


राशि चक्र क्या है ?

प्राचीन काल में लोगों ने रात्रि में अध्ययन करने पर यह देखा कि बहुत से चमकीले तारों के अलग-अलग समूह बने हुए हैं। इन समूहों को तारामण्डल कहा गया। इन तारामंडलों की गतिविधियों का अध्ययन करने के बाद यह पाया गया कि ये आकाश में एक निर्धारित दिशा में घूमते हैं। साल के साल विभिन्न समय पर दिखाई पड़ने वाले विशेष तारामंडलों की संख्या 12 पाई गई। सूर्य और चन्द्रमा हमेशा आकाश के उसी हिस्से में, जिसमें ये 12 तारामंडल थे, उदय और अस्त होते दिखते थे। इन्हीं 12 तारामंडलों का नाम राशि चक्र (Zodiac) रखा गया। इसलिए आकाश का वह कल्पित भाग, जिसमें से सूर्य, चंद्रमा और ग्रह गुजरते हुए प्रतीत होते हैं, राशि चक्र या राशिवृत्त कहा गया। इन 12 तारामंडलों को, जिनमें प्रत्येक 30° के अंतर पर था, राशि कहा गया। इस प्रकार 12 राशियां बनाई गईं, जिनमें प्रत्येक राशि एक तारामंडल से सम्बन्धित है तथा तारामंडल की आकृति धरती पर पाई जाने वाली किसी न किसी वस्तु से मिलती अवश्य है। इनसे हर महीने राशियों के नाम और सूर्य की स्थिति का पता लगाया जा सकता है। राशियों के नाम और सूर्य की स्थिति का समय निम्न प्रकार है।

(1) मेष (Aries-The Ram) : 21 मार्च से 19 अप्रैल तक; **(2) वृष (Taurus-The Bull)** : 20 अप्रैल से 20 मई तक; **(3) मिथुन (Gemini-The Twins)** : 21 मई से 21 जून तक; **(4) कर्क (Cancer-The Crab)** : 22 जून से 22 जुलाई तक; **(5) सिंह (Leo-The Lion)** : 23 जुलाई से 22 अगस्त तक; **(6) कन्या (Virgo-The Virgin)** : 23 अगस्त से 23 सितम्बर तक; **(7) तुला (Libra-The Balance)** : 23 सितम्बर से 23 अक्तूबर तक; **(8) वृश्चिक (Scorpio-The Scorpion)** : 24 अक्तूबर से 21 नवम्बर तक; **(9) धनु (Sagittarius-The Archer)** : 22 नवम्बर से 21 दिसम्बर तक; **(10) मकर (Capricorn-The Goat)** : 22 दिसम्बर से 19 जनवरी तक; **(11) कुम्भ (Aquarius-The Water Bearer)** : 20 जनवरी से 18 फरवरी तक; **(12) मीन (Pisces-The fish)** : 19 फरवरी से 20 मार्च तक।

इन्हीं बारह राशियों पर ज्योतिष विज्ञान आधारित है। ऊपर दी गई तारीखों को ज्योतिषी लोग आज भी प्रयोग में लाते हैं। इन बारह तारामंडलों के अतिरिक्त प्राचीन काल के लोगों को 36 दूसरे तारामंडलों के बारे में भी जानकारी थी। इस प्रकार प्राचीन समय में लोगों को 48 तारामंडलों का ज्ञान था। बाद में 40 अन्य तारामंडलों के विषय में खगोलशास्त्रियों ने जानकारी प्राप्त की। इस तरह आज कुल मिलाकर 88 तारामंडलों के विषय में जानकारी उपलब्ध है। इनमें हाइड्रा नामक तारा मंडल सबसे बड़ा है। इसमें कम से कम 78 ऐसे तारे हैं, जिन्हें बिना किसी यंत्र की सहायता से देखा जा सकता है।

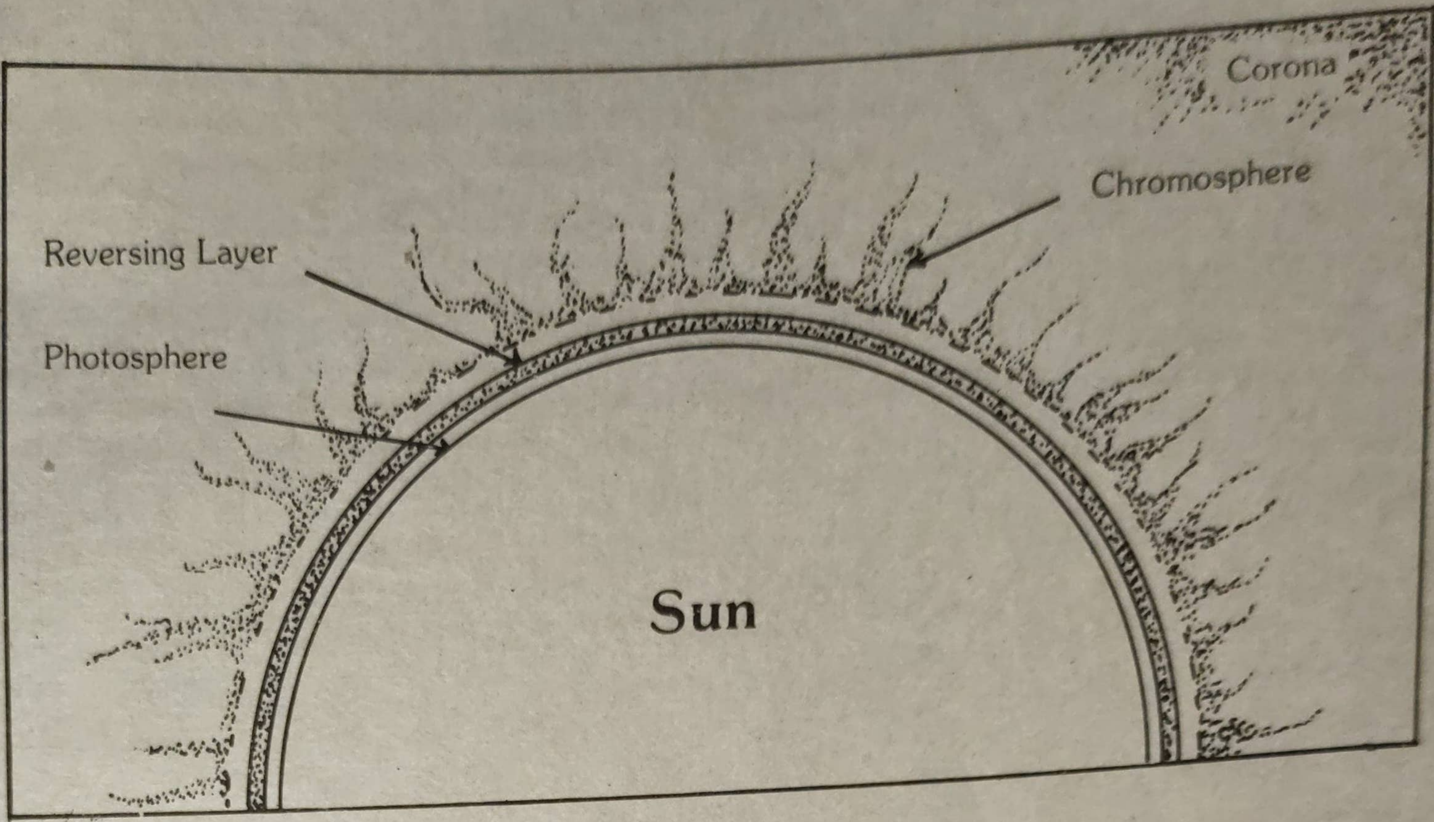


सौरमंडल का जन्म कैसे हुआ ?

सूर्य तथा उसके चारों ओर घूमने वाले आकाशीय पिण्डों के समूह को सौर-परिवार कहते हैं। सूरज के परिवार में पृथ्वी सहित नौ ग्रह हैं। इन ग्रहों में से छः के अपने उपग्रह हैं। इनके अतिरिक्त 1500 छोटे-छोटे ग्रह, पुच्छल तारे, उल्काएं आदि भी सौर-परिवार के सदस्य हैं। सूर्य अपने इस परिवार सहित अंतरिक्ष की परिक्रमा करता रहता है। ये सभी ग्रह सूर्य के गुरुत्वाकर्षण के कारण उसकी परिक्रमा करते रहते हैं। क्या तुम जानते हो कि सौर-परिवार का जन्म कैसे हुआ?

सौर-परिवार के सदस्यों का अध्ययन करने से पता चला है कि सभी पिण्ड सूरज के चारों ओर एक ही दिशा में गति करते रहते हैं। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि सौर-परिवार की उत्पत्ति एक ही प्रकार से हुई है। सौर-परिवार की उत्पत्ति के विषय में अब तक दो सिद्धांत प्रचलित हुए हैं। एक सिद्धांत के अनुसार अब से अरबों वर्ष पहले कोई तारा सूर्य के बहुत पास से गुजरा और उससे टकरा गया। इसके फलस्वरूप सूर्य का कुछ हिस्सा इससे टूटकर अलग हो गया और तेज़ी से सूर्य का चक्कर लगाने लगा। इस पदार्थ के कई टुकड़े हो गए, जिन्होंने बाद में नौ ग्रहों का रूप ले लिया।

दूसरे सिद्धांत के अनुसार सौर-परिवार का जन्म गैस व धूल के एक बहुत बड़े बादल से हुआ है। अरबों वर्ष पहले सौर-परिवार गैस व धूल के बादलों के रूप में था। गुरुत्वाकर्षण बल के अंतर्गत गैस व धूल के परमाणु लाखों वर्षों में पास-पास आने लगे। जैसे-जैसे समय बीतता गया, यह बादल एक तवे के रूप में परिवर्तित होता गया और अपनी धुरी का चक्कर लगाने लगा। कालांतर में इस तवे के कई भाग हो गए। कुल पदार्थ का 90% भाग इस चक्की के केन्द्र में इकट्ठा हो गया और शेष 10% छल्लों में बंटकर बीच वाले गोले का चक्कर काटने लगा। यही बीच वाला गोला आगे चलकर सूर्य बना और शेष छल्ले ग्रहों में बदल गए। गुरुत्वाकर्षण बल के अंतर्गत यह गोला सिकुड़ता गया और सिकुड़ने के कारण यह छोटा और गर्म होता गया। इसके फलस्वरूप इसमें ताप नाभिकीय क्रियाएं (Nuclear Fusion) शुरू हो गई। इन क्रियाओं के परिणामस्वरूप सूरज से गर्मी और प्रकाश निकलने लगा और सारा सौरमंडल इसकी रोशनी से चमक उठा। अब तक सूर्य पृथ्वी सहित इन ग्रहों को अपना प्रकाश दे रहा है। इस सिद्धांत को मूल रूप में सन् 1796 में फ्रांस के गणितज्ञ पियरे साइमन लेपलास (Pierre Simon Laplace) ने दिया था। इसके बाद इस सिद्धांत में कई संशोधन किए गए हैं। आज सौर-परिवार की उत्पत्ति के विषय में इसी सिद्धांत को मान्यता दी जाती है।

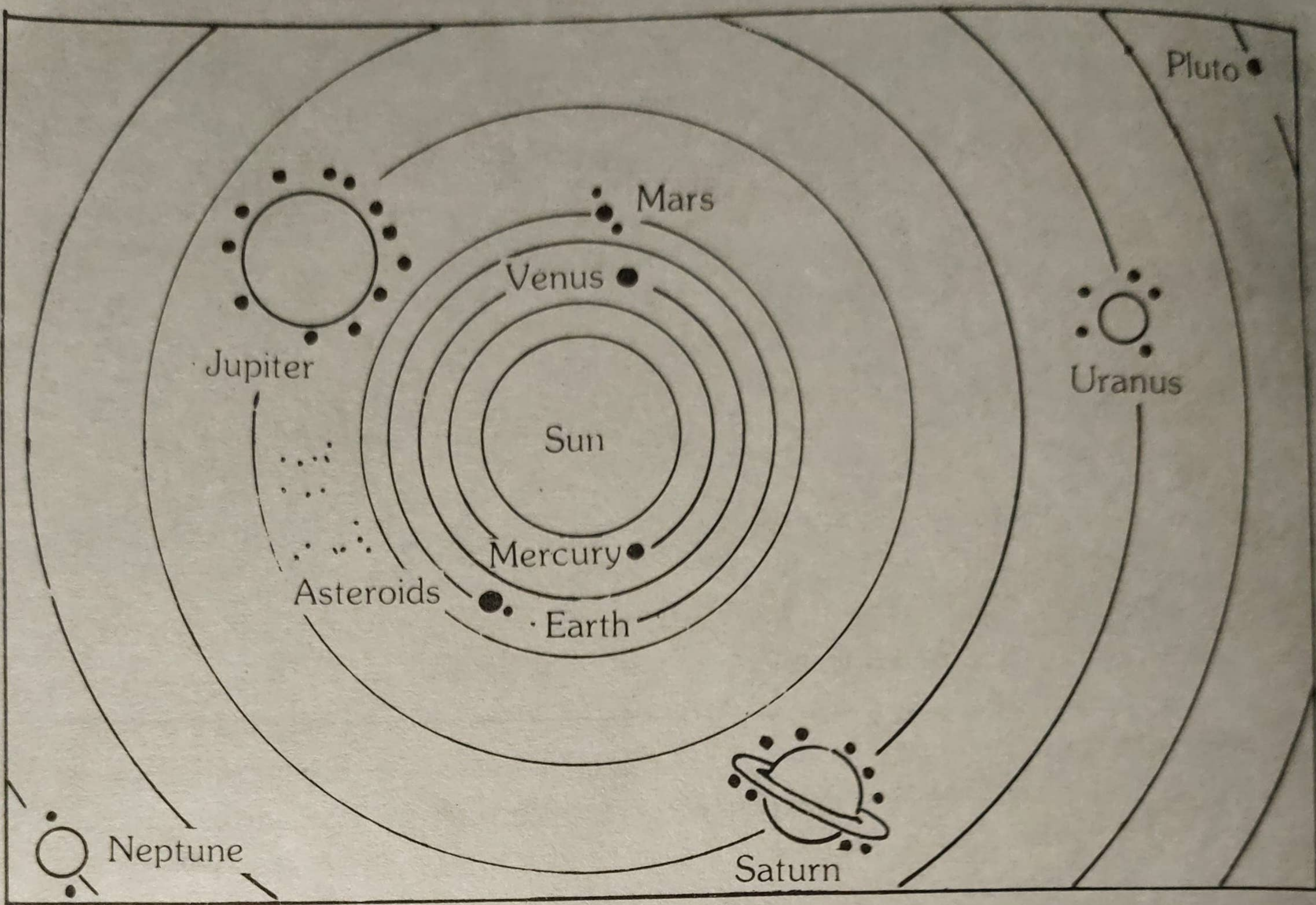


हमारा जीवनदाता सूर्य क्या है?

सूर्य आकाश के अरबों तारों में से एक मध्यम आकार का तारा है। यह हमारे सौर मण्डल का केन्द्र है। सौर मण्डल के सभी ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते हैं। सूर्य इतना प्रकाशमान और बड़ा इसलिए नज़र आता है, क्योंकि और तारों की तुलना में यह पृथ्वी के काफी नजदीक है। यह पृथ्वी से 150,000,000 कि० मी० (नौ करोड़ उन्तीस लाख साठ हज़ार मील) दूर है। इसका व्यास 13,92,000 कि० मी० (8,65,000 मील) है। जबकि पृथ्वी का व्यास (Diameter) 12756 कि० मी० (7927 मील) है। सूर्य का आयतन पृथ्वी के आयतन से लगभग तेरह लाख गुना है। अर्थात् सूर्य के अंदर पृथ्वी जैसे तेरह लाख पिण्ड समा सकते हैं। लेकिन सूर्य का भार पृथ्वी से लगभग तीन लाख तेंतीस हज़ार चार सौ गुना है। इसका कारण है कि सूर्य गर्म गैसों से मिलकर बना है। सूर्य के प्रकाश को पृथ्वी तक पहुंचने में 8 मिनट 20 सेकिण्ड लगते हैं।

ब्रह्माण्ड के अन्य पिण्डों की तरह सूर्य भी स्थिर नहीं है। यह भी अपने परिवार सहित आकाश गंगा की परिक्रमा करता है। इसको एक परिक्रमा पूरी करने में लगभग 24 करोड़ वर्ष का समय लगता है। सूर्य अपनी धुरी पर भी घूमता है। सूर्य के अंदर इतनी गर्मी है कि इसके पास कोई भी वनस्पति या जीव जिंदा नहीं रह सकता। यह आग का एक तपता हुआ गोला है। इसके केन्द्र का तापमान 1 करोड़ 50 लाख डिग्री सेंटीग्रेड के लगभग है। सूर्य की सतह चार गैसीय परतों से मिलकर बनी है। सबसे बाहर वाली परत को फोटोस्फीयर (Photosphere) कहते हैं, जिसका तापमान लगभग 6000 डिग्री सेंटीग्रेट है। सूर्य के धब्बे इसी सतह पर दिखाई देते हैं। इसके बाद की सतह को रिवर्सिंग लेयर (Reversing Layer) कहते हैं। तीसरी सतह को क्रोमोस्फीयर (Chromosphere) कहते हैं, जो लगभग नौ हज़ार मील मोटी है। यह हाइड्रोजन, हीलियम जैसी गैसों से बनी है। इसका तापमान लगभग 5000 डिग्री सेंटीग्रेड है। सूर्य की बाहरी सतह को कोरोना कहते हैं।

सूर्य से सारे संसार को प्रकाश ही नहीं, बल्कि जीवन भी मिलता है। सूर्य ऊष्मा, ऊर्जा का सबसे बड़ा स्रोत है। सूर्य के प्रकाश से वनस्पतियां अपना भोजन बनाती हैं। इस प्रकार सूर्य हमारा जीवनदाता है।



सौर परिवार क्या है?

सूर्य और उसके चारों ओर परिक्रमा करने वाले आकाशीय पिण्डों को ही सूर्य का परिवार या सौर मंडल कहते हैं। सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करने वाले आकाशीय पिण्डों में मुख्य रूप से नौ ग्रह आते हैं। सूर्य से दूरी के अनुसार बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, वृहस्पति, शनि, यूरेनस,नेपच्यून और प्लूटो तथा इन ग्रहों के उपग्रह भी सौरमडल के सदस्य हैं। इसके अतिरिक्त उल्काएं, (Meteors) पुच्छल तारे, क्षुद्र ग्रह (Astrodes) आदि भी सौर परिवार के सदस्य हैं। ये सभी आकाशीय पिण्ड सूर्य के चारों ओर अंडाकार कक्षाओं में सतत रूप से घूमते रहते हैं।

बुध (Mercury) : यह सौरमंडल का सबसे छोटा व सूर्य का निकटतम ग्रह है। सूर्य की परिक्रमा में इसे लगभग 88 दिन लगते हैं और इतना ही समय इसे अपनी धुरी पर घूमने में लगता है। सूर्य के काफी पास होने के कारणं इसे देख पाना काफी कठिन है। लेकिन फिर भी इसके विषय में जो अध्ययन किए गए हैं उनसे पता चलता है कि इसकी सतह पर बहुत-सी पहाड़ियां हैं। इस ग्रह पर पानी नहीं है। सूर्य से इसकी दूरी लगभग 3 करोड़ 6 लाख मील है।

शुक्र (Venus) : यह पृथ्वी का निकटतम ग्रह है। सूर्य से इसकी दूरी लगभग 6 करोड़ 71 लाख मील है। विस्तार और वज़न में यह लगभग पृथ्वी के बराबर ही है। सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करने में इसे 224 दिन लगते हैं। अपनी धुरी पर परिक्रमा करने में इसे 30 दिन लगते हैं। इस पर वायुमण्डल है। मनुष्य इस पर अपना राकेट भेज चुका है। यह राकेट रूस द्वारा भेजा गया था।

पृथ्वी (Earth) : पृथ्वी सौर परिवार का ऐसा ग्रह है, जिस पर जीवित प्राणी रहते हैं। सूर्य से इसकी दूरी नौ करोड़ 30 लाख मील है। सूर्य की परिक्रमा में इसे 365¼ दिन लगते हैं। अपनी धुरी पर एक परिक्रमा करने में इसे लगभग 24 घंटे का समय लगता है। चंद्रमा पृथ्वी का एक उपग्रह है जो पृथ्वी के चारों ओर चक्कर लगाता रहता है।

मंगल (Mars) : मंगल ग्रह देखने में लाल रंग का नजर आता है। पृथ्वी के बाद यही एक ऐसा ग्रह है जिस पर वनस्पति होने के चिन्ह मिले हैं। मंगल ग्रह का अध्ययन करने से पता चलता है कि इस पर बर्फ के टीले हैं। यह ग्रह सूर्य से 14 करोड़ 10 लाख मील दूर है। सूर्य की परिक्रमा में इसे लगभग 687 दिन का समय लगता है। अपनी धुरी पर यह 24 घंटे 37 मिनट में चक्र पूरा करता है। इस ग्रह के दो छोटे-छोटे उपग्रह हैं जिनका नाम फोगोस (Phogos) और डायमोस (Diamos) हैं।

बृहस्पति (Jupiter) : बृहस्पति सौर परिवार का सबसे बड़ा ग्रह है। इसकी सूर्य से दूरी 48 करोड़ 30 लाख मील है। इसे सूर्य की परिक्रमा में 11.9 वर्ष लगते है। इसे अपनी धुरी पर चक्र लगाने में 9 घंटे 50 मिनट लगते हैं। यह ग्रह पृथ्वी से 17 गुना भारी है। सूर्य से दूर होने के कारण यह अत्यंत ठंडा रहता है। इसके कुल 12 उपग्रह हैं।

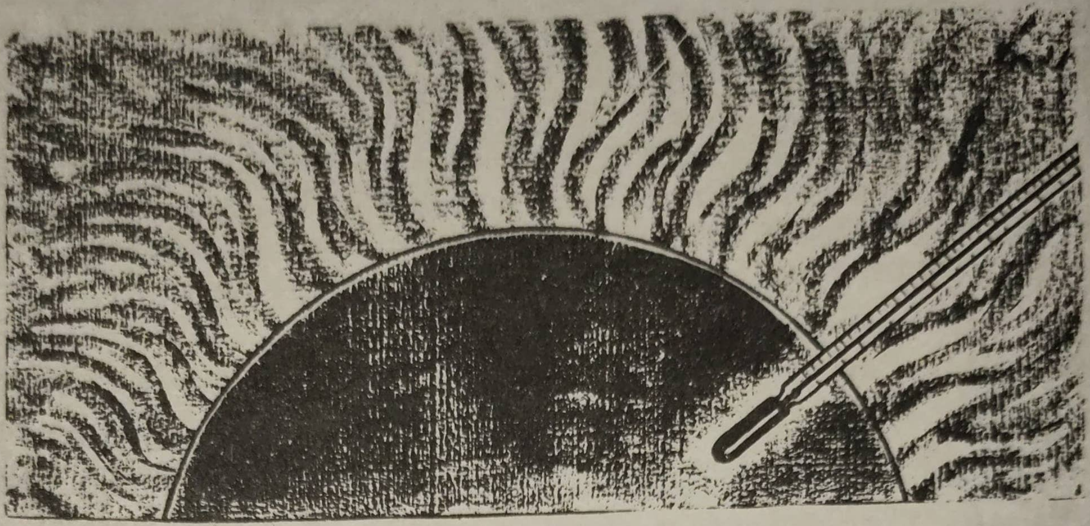
शनि (Saturn) : सौरमंडल का यह एक विचित्र ग्रह है। सूर्य से इसकी दूरी 88 करोड़ 60 लाख मील है। सूर्य की परिक्रमा में इसे 29½ वर्ष लगते हैं। अपनी धुरी पर घूमने में इसे 9 घंटे लगते हैं। इस ग्रह के कई छल्ले हैं। शनि के नौ उपग्रह हैं लेकिन अब तक केवल एक ही उपग्रह कोटीटोन के विषय में ठीक-ठीक अध्ययन हो पाया है।

यूरेनस (Uranus) : यूरेनस 84 वर्षों में सूर्य का एक चक्कर पूरा करता है। इसे अपनी धुरी पर घूमने में 12 घंटे लगते हैं। इसके चार उपग्रह हैं। इस ग्रह की सूर्य से दूरी 1 अरब 78 करोड़ 3 लाख मील है।

नेपच्यून (Neptune) : नेपच्यून को सूर्य की परिक्रमा करने में लगभग 165 वर्ष लगते हैं। लगभग 16 घंटे में यह अपनी धुरी पर एक चक्कर पूरा करता है। सूर्य से इस ग्रह की दूरी 2 अरब 79 करोड़ 40 लाख मील है। इसका 1 उपग्रह है।

प्लूटो (Pluto) : प्लूटो सूर्य से सबसे दूर का ग्रह है। सूर्य की एक परिक्रमा करने में इसे लगभग 247.7 वर्ष लगते हैं। अपनी धुरी पर एक चक्कर लगाने में इसे 153 घंटे लगते हैं। सूर्य से इसकी दूरी 3 अरब 67 करोड़ मील है।

इन ग्रहों के अतिरिक्त लगभग 1500 छोटे-छोटे उपग्रह भी सूर्य की परिक्रमा करते हैं। इन्हें एस्ट्रोइड कहते हैं। ये वास्तव में बड़े ग्रहों से टूटे हुए छोटे-छोटे टुकड़े हैं, जो सूर्य की परिक्रमा करने लगे हैं।

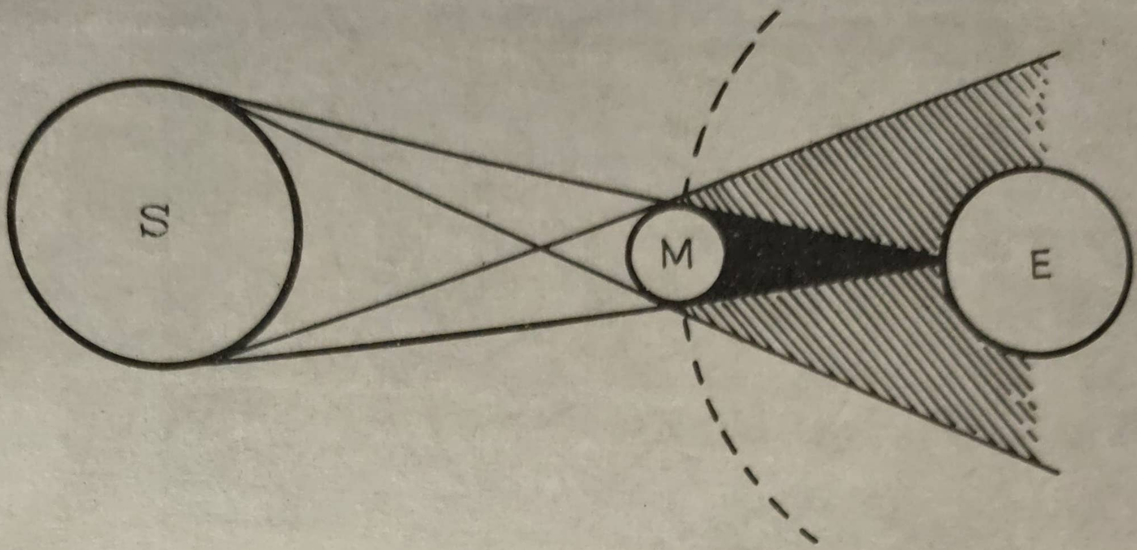


सूर्य में कितनी गर्मी है?

सूर्य हमारे सौर-परिवार का केन्द्र है। यह आग जैसे जलते हुए गोले की तरह नजर आता है। इसका प्रकाश इतना अधिक तेज होता है कि हम इसको नंगी आंखों से नहीं देख सकते। केवल सुबह और शाम ही हम सूरज की ओर देख सकते हैं। इसकी चमक से ही अनुमान लगाया जा सकता है कि सूर्य कितना गर्म होगा।

सूर्य कितना गर्म है इस बात का केवल कुछ वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा ही पता लगाया जा सकता है। सूर्य का तापमान इतना अधिक है कि वहां तक जाना असम्भव है। वैज्ञानिक प्रयोगों से यह पता लगाया गया है कि इसकी सतह का तापमान लगभग 6000° सेंटीग्रेड है। इस तापमान का आप इस बात से अनुमान लगा सकते हैं कि लोहे जैसी धातु भी लगभग 1430° सेंटीग्रेड पर पिघल जाती है। इसका मतलब यह हुआ कि कोई भी पदार्थ ऐसा नहीं है, जो सूरज की सतह पर ठोस अवस्था में रह सके। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि सूर्य गैसों से मिलकर बना है। ज्यों-ज्यों सूर्य की सतह से अंदर की ओर जाया जाए त्यों-त्यों तापमान बढ़ता जाता है। वैज्ञानिकों ने यह पता लगाया है कि सूर्य के केन्द्र का तापमान लगभग 150 लाख डिग्री सेंटीग्रेड है। सूर्य के अंदर ताप नाभिकीय (Nuclear Fusion) क्रियाएं होती रहती हैं, जिनके फलस्वरूप ऊष्मा पैदा होती रहती है। इन क्रियाओं में चार हाइड्रोजन के परमाणु मिलकर हीलियम का एक परमाणु बनाते हैं। हीलियम के इस प्रकार बने परमाणु का द्रव्यमान (Mass) हाइड्रोजन के चार परमाणुओं से कम होता है। द्रव्यमान की यह कमी ही ऊर्जा में परिवर्तित होती रहती है।

सूर्य से कितनी गर्मी हमारी धरती पर आती है, इस बात को ज्ञात करने के लिए कुछ प्रयोग किए गए हैं। इन प्रयोगों से यह पता लगा है कि हमारी धरती के प्रतिवर्ग क्षेत्रफल पर प्रति मिनट दो कैलोरी ऊष्मा ऊर्जा सूरज से आती है। इससे आप अनुमान लगा सकते हैं कि इतनी बड़ी धरती पर सूरज से कितनी ऊष्मा ऊर्जा आती होगी?



सूर्य ग्रहण क्या है?

हम यह जानते हैं कि पृथ्वी सौर परिवार का एक ग्रह है और यह सूर्य की परिक्रमा करती है। इसी प्रकार चन्द्रमा पृथ्वी का उपग्रह है और यह पृथ्वी की परिक्रमा करता है। पृथ्वी और चन्द्रमा अंतरिक्ष में सूर्य के प्रकाश को रोक अपनी लम्बी-लम्बी परछाइयां बनाते हैं। घूमते-घूमते जब कभी सूर्य, पृथ्वी और चन्द्रमा एक सीधी रेखा में आ जाते हैं तथा चन्द्रमा, पृथ्वी और सूर्य के बीच में आ जाता है, तो चन्द्रमा की परछाईं या छाया, जो सूर्य की विपरीत दिशा में होती है, पृथ्वी पर पड़ती है। अथवा चन्द्रमा सूर्य से आने वाली प्रकाश की किरणों को पृथ्वी के किसी भाग पर आने से रोक लेता है। पृथ्वी के इस भाग पर रहने वाले लोगों को ऐसा लगता है कि पृथ्वी पर अंधेरा हो गया है। इसको सूर्य ग्रहण लगना कहते हैं। (ऊपर चित्र देखें)। सूर्य, चन्द्रमा और पृथ्वी के एक सीध में आने की स्थिति केवल अमावस्या के दिन ही होती है। इसलिए सूर्य ग्रहण अमावस्या के दिन ही पड़ता है।

सूर्य ग्रहण हर अमावस्या को नहीं पड़ता। इसका कारण यह है कि पृथ्वी के भ्रमण-पथ का तल और चन्द्रमा के भ्रमण-पथ का तल एक दूसरे के साथ 5 डिग्री पर झुके हुए हैं। यदि दोनों के भ्रमण-पथों के तल एक ही सीध में होते तो हम हर अमावस्या को सूर्य ग्रहण देख पाते। इस झुकाव के कारण घूमता हुआ चन्द्रमा पृथ्वी के परिक्रमा-पथ से कभी नीचे होता है, तो कभी ऊपर। केवल कभी-कभी ही तीनों एक सीध में आ पाते हैं।

पृथ्वी, सूर्य और चन्द्रमा की स्थिति जानकर यह पता लगाया जा सकता है कि सूर्य ग्रहण कब पड़ेगा और कितने समय तक पड़ेगा। यदि चन्द्रमा सूरज के प्रकाश को पूरी तरह से रोक लेता है, तो पूर्ण सूर्य ग्रहण होता है और चन्द्रमा यदि सूरज के थोड़े हिस्से को ढकता है, तो आंशिक सूर्य ग्रहण होता है। पूर्ण सूर्य ग्रहण में भी सूर्य के किनारे दिखाई देते हैं।



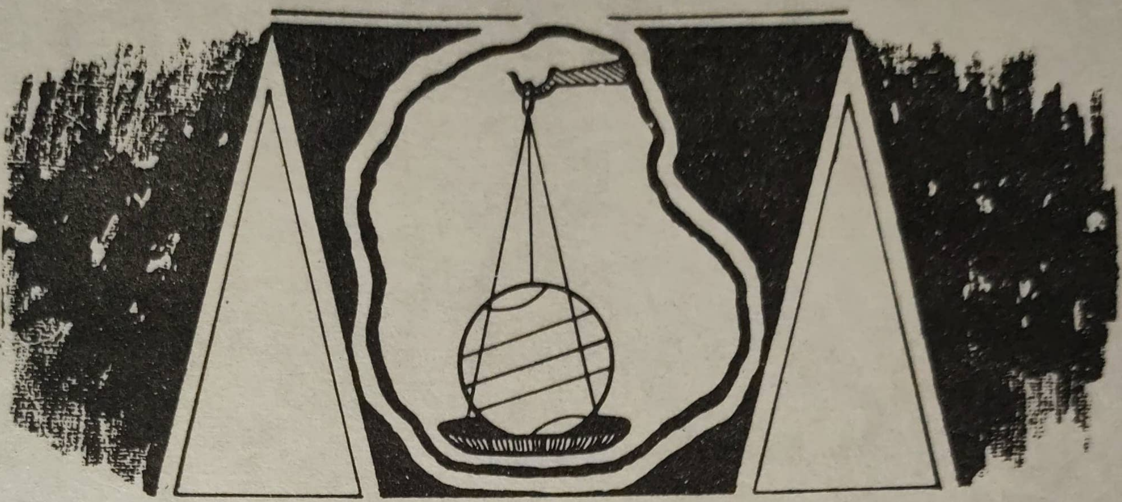
हमारी पृथ्वी क्या है ?

आज से लगभग 4 अरब करोड़ साल पहले हमारी धरती का जन्म हुआ था। जिस प्रकार सूर्य तथा दूसरे ग्रह गैस और धूल के बादल से पैदा हुए, उसी प्रकार पृथ्वी भी पैदा हुई। उस समय यह आग का एक गोला थी जिसके चारों ओर जलती हुई गैसों का वातावरण था। तब पृथ्वी गर्म गोल पिन्ड के रूप में सूर्य के चारों ओर आज की ही तरह घूम रही थी। सैकड़ों साल बीतने के बाद पृथ्वी ने घूमते हुए सूर्य से धीरे-धीरे दूर होना शुरू किया। जैसे-जैसे पृथ्वी दूर होती गई वैसे-वैसे उसकी गर्मी कम होती गई। इस प्रकार धरती ठंडी होनी शुरू हुई और उसकी ऊपर की सतह पपड़ी में परिवर्तित होने लगी। इस पपड़ी के सख्त होने के कारण इसमें दरारें पड़ गई जिससे अंदर का पिघला हुआ पदार्थ सतह के ऊपर आने लगा। लाखों वर्षों के दौरान धरती के अंदर के पिघले पदार्थ ने पर्वतों और घाटियों का रूप ले लिया।

जैसे-जैसे समय बीतता गया, धरती के चारों ओर की गर्म गैसों का आवरण ठंडा होकर बादलों के रूप में बदल गया। ये बादल धरती पर दिन रात बरसते रहते थे। इस वर्षा के फलस्वरूप धरती जलमग्न हो गई। धरती के निचले भागों पर पानी के भण्डार एकत्रित होते गए जिससे सागरों का जन्म हुआ। समय के साथ-साथ धरती की उथल-पुथल के कारण कभी इसकी सतह ऊपर उठी तो कभी नीचे हुई। इस उथल-पुथल में बहुत से ज्वालामुखी उत्पन्न हुए। जैसे-जैसे समय बीतता गया पृथ्वी शांत होती गई। समुद्रों और पर्वतों ने अपना निश्चित रूप धारण कर लिया।

उसके पश्चात् आज से लगभग 57 करोड़ वर्ष पहले धरती पर सूक्ष्म जीवाणुओं (Micro-organism) का विकास होना शुरू हुआ। पहले 34.5 करोड़ वर्ष में समुद्री जीवों का विकास हुआ। जैसे-जैसे समय बीतता गया इन समुद्री जीवों का रूप भी बदलता गया। फिर एक समय आया जब धरती पर रेंगने वाले जीव-जन्तुओं का विकास हुआ। लगभग 10 लाख वर्ष पूर्व धरती पर मनुष्य का जन्म हुआ।

पृथ्वी एक विचित्र ग्रह है। इस पर जीवन के अस्तित्व के लिए आवश्यक सभी अनुकूल परिस्थितियां मौजूद हैं। इसके चारों ओर वायु का एक घेरा है, जो प्राणीजगत के लिए अत्यंत आवश्यक है। आज पृथ्वी के विषय में हमें बहुत ही दिलचस्प जानकारी उपलब्ध है। इसका भूमध्य व्यास 12,756 किलोमीटर (7926 मील) है और इसका ध्रुवीय व्यास 12,714 किलोमीटर (7900 मील) है। पृथ्वी की सतह का 70.92% क्षेत्रफल पानी से ढका हुआ है और शेष पृथ्वी के रूप में है। धरती का कुल क्षेत्रफल लगभग 51 करोड़ वर्ग किलोमीटर (19,69,37,000 वर्गमील) है।



पृथ्वी का वज़न कैसे ज्ञात करते हैं ?

आमतौर पर जब हमें किसी वस्तु का वज़न मालूम करना होता है तो उसे तराज़ू के एक पलड़े में रखकर तोल लेते हैं। छोटी वस्तुओं का वज़न ज्ञात करने के लिए छोटी तराजुओं को प्रयोग में लाते हैं और कुछ बड़ी वस्तुओं का वज़न ज्ञात करने के लिए बड़ी तराजुओं को प्रयोग में लाते हैं। अब समस्या यह है कि कितनी बड़ी तराज़ू बनाई जाए जिसमें पृथ्वी जैसे महान पिण्ड को तोल लिया जाए और जब पृथ्वी को ही रखकर तोलना है तो इस तराज़ू को रखा कहां जाए। ऐसी तराज़ू के विषय में सोचना केवल एक कल्पना है। अब प्रश्न आता है कि पृथ्वी का वज़न कैसे ज्ञात किया जाए।

पृथ्वी का वजन ज्ञात करने के लिए विज्ञान के एक सिद्धांत को काम में लाया गया। यह सिद्धांत न्यूटन द्वारा प्रतिपादित गुरुत्वाकर्षण का नियम है। इस नियम के अनुसार ब्रह्माण्ड की किन्हीं भी दो वस्तुओं के बीच में आकर्षण बल लगता है जो वस्तुओं के द्रव्यमान (वज़न) और उनके बीच की दूरी पर निर्भर करता है। वस्तुओं का द्रव्यमान जितना अधिक होगा उनके बीच में लगा गुरुत्वाकर्षण बल उतना ही अधिक होगा और वस्तुओं के बीच की दूरी जितनी अधिक होगी उस दूरी के अनुसार यह बल उतना ही कम होगा।

इसी सिद्धांत को प्रयोग में लाकर पृथ्वी का द्रव्यमान ज्ञात करने के लिए एक प्रयोग किया जाता है। इस प्रयोग में किसी धातु के छोटे गोले को एक पतली सी रस्सी से लटका दिया जाता है। इस गोले की सही स्थिति ज्ञात कर ली जाती है। अब इस गोले के पास सीसा धातु (Lead) से बना हुआ एक टन का गोला लाया जाता है। गुरुत्वाकर्षण बल के खिंचाव के कारण छोटा गोला बड़े गोले की ओर थोड़ा सा आकर्षित हो जाता है और वह अपनी पहली स्थिति से थोड़ा सा बड़े गोले की ओर खिंच जाता है। छोटे गोले की स्थिति में हुआ परिवर्तन एक इंच के दस लाखवें भाग से भी कम होता है। इस स्थिति परिवर्तन को बहुत ही सावधानी के साथ अच्छे यंत्रों की सहायता से माप लिया जाता है। इस दूरी और भौतिकी के एक सूत्र (Formula) को प्रयोग में लाकर पृथ्वी का द्रव्यमान ज्ञात किया गया है। इसका द्रव्यमान 5980 करोड़ अरब टन है।



पृथ्वी से आकाश के तारे कितनी दूर हैं ?

जैसा कि हम जानते हैं कि आकाश में चमकते हुए अरबों, खरबों तारे चमकती हुई गर्म गैसों के पिण्ड हैं। हमें जीवन देने वाला सूर्य भी एक तारा है। इसके अतिरिक्त छोटे से लेकर बहुत बड़े-बड़े तारे आकाश में मौजूद हैं। कुछ तारे तो ऐसे हैं जो सूर्य से कई लाख गुना अधिक चमकीले हैं लेकिन धरती से अधिक दूर होने के कारण वे हमें अधिक चमकीले नहीं दिखाई देते हैं। क्या तुम जानते हो कि हमारे पास के तारे कौन-कौन से हैं?

तारों की दूरी हम प्रकाशवर्ष में मापते हैं। प्रकाशवर्ष वह दूरी है जिसे प्रकाश 3 लाख किलोमीटर प्रति सेकण्ड के वेग से चलकर एक वर्ष में तय करता है। पृथ्वी के सबसे नजदीक का तारा प्रोक्सिमा सेन्टोरी (Proxima Centauri) हैं, जिसकी दूरी 4.28 प्रकाशवर्ष है। इस तारे को दक्षिणी गोलार्द्ध के देशों से ही देखा जा सकता है। उत्तरी गोलार्द्ध से दिखने वाला सबसे नजदीक का तारा ''सिरियस'' (Sirius) है। इसकी दूरी 8.8 प्रकाशवर्ष है। इसके अतिरिक्त ''अल्फा सेन्टोरी'' (Alpha Centauri) एक नजदीकी तारा है जिसकी दूरी 4.37 प्रकाशवर्ष है।

नंगी आंखों से दिखाई देने वाला पृथ्वी से सबसे अधिक दूर का तारा 80 लाख प्रकाशवर्ष से भी अधिक दूर है। यदि शक्तिशाली दूरबीनों की सहायता से देखा जाए तो इससे भी 1000 गुना अधिक दूरी के तारों को देखा जा सकता है। कुछ तारे तो हमारी पृथ्वी से इतनी दूर हैं कि उनके प्रकाश को धरती तक आने में 100 करोड़ से भी अधिक वर्ष लग जाते हैं।

आकाश के तारों के अध्ययन के लिए वैज्ञानिकों ने अनेकों प्रकार के प्रकाशीय दूरदर्शी और रेडियो दूरदर्शी यंत्र बना लिए हैं। इनकी सहायता से मनुष्य आकाशीय पिण्डों के विषय में अधिक ज्ञान प्राप्त करता जा रहा है।

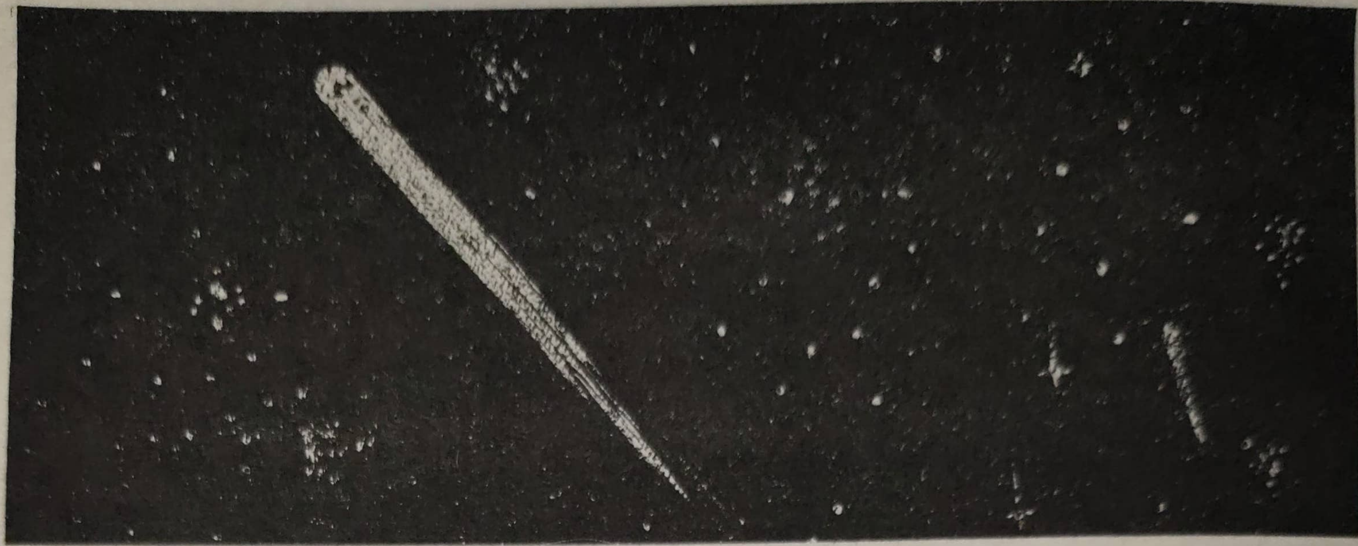


कुछ तारे अधिक चमकीले क्यों होते हैं ?

रात्रि में आकाश की ओर ध्यानपूर्वक देखने से हमें कुछ तारे बहुत अधिक चमकीले दिखाई देते हैं तो दूसरे तारे कम चमकीले दिखाई पड़ते हैं। यदि इन तारों को शक्तिशाली दूरबीन की सहायता से देखा जाए तो केवल इनकी चमक में ही अंतर नहीं दिखाई देगा बल्कि इनके रंग में भी अंतर दिखाई देगा। क्या तुम बता सकते हो कि कुछ तारे अधिक चमकीले क्यों दिखाई देते हैं?

तारों की चमक और रंग उनकी सतह के तापमान पर निर्भर करता है। किसी तारे की सतह का तापमान जितना अधिक होगा उतनी ही उसकी चमक अधिक होगी। तारों की चमक और रंग को इस प्रकार समझा जा सकता है। यदि हम लोहे की एक ठण्डी गेंद लें तो जब यह ठण्डी होती है तो इसका रंग कालापन लिए होता है। जब हम इसको गर्म करते हैं तो इसका रंग लाल हो जाता है। यदि उसको और अधिक गर्म किया जाए तो इसका रंग पीला होने लगता है। जैसे-जैसे तापमान बढ़ता है,गेंद का रंग क्रमशः सफेद और नीला होता जाता है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि वस्तुओं का रंग उनके तापमान पर निर्भर करता है। जैसे-जैसे हम वस्तुओं को गर्म करते हैं उनका रंग लाल, पीला, हरा, सफेद और नीला होता जाता है। रंग और तापमान के इस सम्बन्ध के आधार पर ही तारों की चमक निश्चित की जाती है। जिन तारों का रंग लाल या नारंगी होता है वे पीले और हरे रंग वाले तारों की अपेक्षा ठण्डे होते हैं। सफेद रंग वाले तारे पीले और हरे रंग वाले तारों की अपेक्षा गर्म होते हैं और नीले रंग वाले तारों की सतह का तापमान सबसे अधिक होता है।

नीले रंग के तारे अधिक गर्म और चमकीले होते हैं। उनकी सतह का तापमान 27750°C या इससे भी अधिक हो सकता है। सूर्य एक पीले रंग का तारा है इसलिए इसकी चमक और तापमान नीले तारों की तुलना में बहुत कम है। इसकी सतह का तापमान लगभग 6000°C है। जो तारे लाल दिखाई देते हैं वे कम चमकीले और ठण्डे होते हैं। इनकी सतह का तापमान 1650°C या इससे भी कम होता है। इन सब बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि तारों की चमक उनकी सतह के तापमान से सम्बन्धित है। कुछ अधिक तापमान वाले तारे, जो धरती से अधिक दूरी पर हैं, उनकी चमक कम दिखती है क्योंकि दूरी के कारण चमक में अन्तर आ जाता है। दूरी कम होने से कम तापमान वाले तारे पृथ्वी से अधिक चमकीले दिखाई देते हैं।



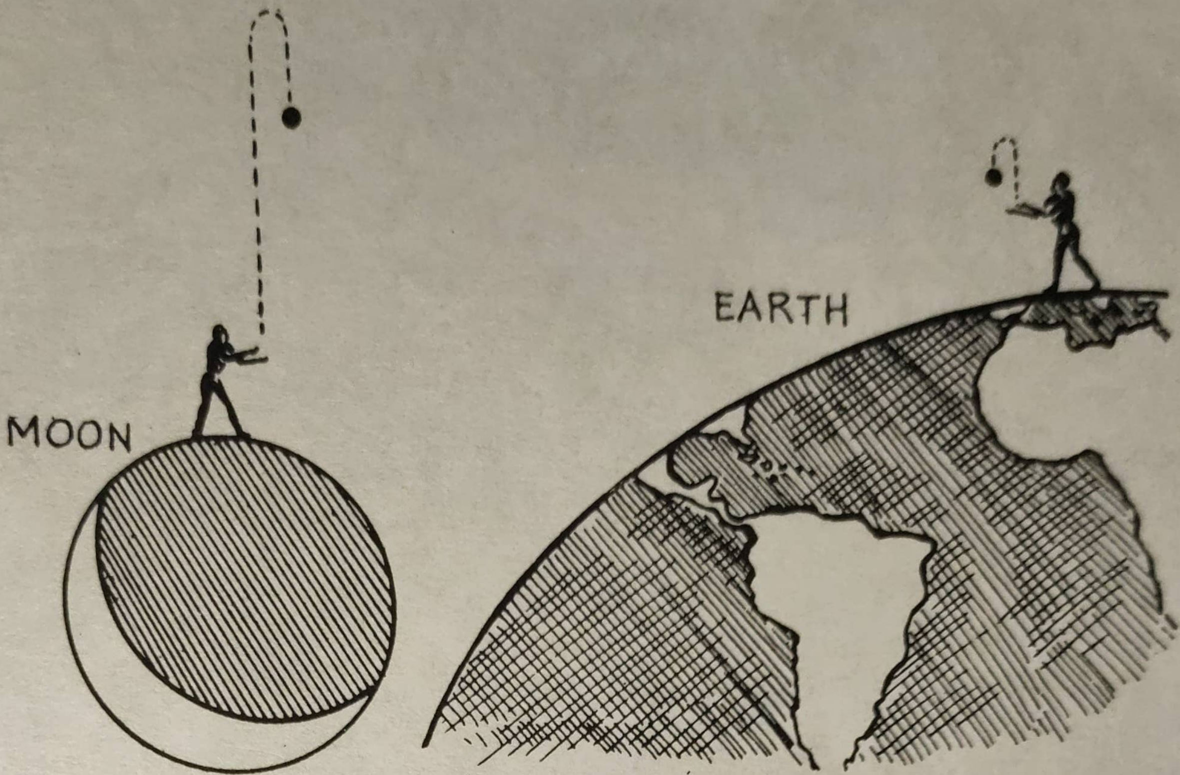
पुच्छल तारे या धूमकेतु (Comets) क्या हैं ?

पुच्छल तारे या धूमकेतु आकाश में चमकने वाले वे तारे हैं, जिनकी पूंछ होती है। ये ग्रहों और दूसरे तारों से बिल्कुल भिन्न होते हैं। पुच्छल तारे भी सौर परिवार के सदस्य हैं और ये निश्चित कक्षाओं में सूर्य की परिक्रमा करते रहते हैं। किसी भी पुच्छल तारे के दो भाग होते हैं। एक सिर (Head) और दूसरा पूंछ (Tail)। सौर परिवार के ये बहुत ही विशाल आकार के तारे हैं। बहुत से पुच्छल तारों का सिर ही सूर्य से कई गुना बड़ा होता है। इनकी पूंछ लाखों मील लम्बी होती है। इनकी पूंछ हमेशा सूर्य की विपरीत दिशा में होती है।

वास्तव में पुच्छल तारे चट्टानों, धूल और गैसों से मिलकर बने होते हैं। इनकी पूंछ में अमोनिया गैस, मीथेन गैस, जलवाष्प और बर्फ होती है। इनकी पूंछ की चमक सूर्य के प्रकाश के कारण होती है। आकाश में अलग-अलग पुच्छल तारे अलग-अलग समय के बाद दिखाई देते हैं। इनकी संख्या हजारों में है। कुछ इतने चमकीले हैं जो खाली आंखों से दिखाई दे जाते हैं, लेकिन कुछ इतने कम चमकीले हैं जिनको केवल दूरदर्शी यन्त्रों की सहायता से ही देखा जा सकता है। वैज्ञानिक अपने दूरदर्शी यन्त्रों की सहायता से निरंतर इनका अध्ययन कर रहे हैं। अनुमानतः हर वर्ष लगभग नौ नए पुच्छल तारों का पता लग जाता है।

हैली (Halley) पुच्छल तारा आकाश का एक बहुत बड़ा और प्रसिद्ध पुच्छल तारा है। यह लगभग हर 75.5 वर्ष के बाद पृथ्वी के नजदीक आता है और दिखाई देने लगता है। इस तारे को सबसे पहले सन् 1682 में इंगलैंड के खगोलशास्त्री एडमन्ड हैली (Edmond Halley) ने देखा था। उन्हीं के नाम पर इसका नाम 'हैली' पुच्छल तारा रख दिया गया है। इसके बाद यह 1758, 1835 और 1910 में देखा गया। सितम्बर 1909 से लेकर जुलाई 1911 तक शक्तिशाली दूरदर्शी यंत्रों से इसके विषय में बहुत से अध्ययन किए गए। अब आशा की जाती है कि यह सन् 1986 में दिखाई देगा। कुछ ऐसे पुच्छल तारे हैं जो कुछ वर्षों बाद पृथ्वी के पास आते हैं और दिखाई देते हैं, लेकिन कुछ ऐसे भी हैं जो हजारों वर्ष बाद पृथ्वी के पास आते हैं अर्थात् उन्हें अपनी कक्षा की परिक्रमा में हजारों वर्ष का समय लग जाता है। कभी-कभी पुच्छल तारे धरती के पास आकर चूर-चूर हो जाते हैं जिसके फलस्वरूप उल्का-धूल धरती पर गिरती रहती है।

पुराने समय में पुच्छल तारों का दिखना बहुत ही अशुभ माना जाता था। इनके दिखने पर लोगों के मन में आशंका हो जाती थी कि अकाल या कोई महामारी फैलने वाली है, लेकिन आज इनके विषय में कोई ऐसी धारणा नहीं है। अब तो यह माना जाता है कि इनका जन्म किसी ग्रह या उपग्रह से फटने वाले ज्वालामुखियों की धूल के कारण हुआ है। कुछ वैज्ञानिक ऐसा भी मानते हैं कि इनकी उत्पत्ति सौर मंडल के साथ ही हुई। अभी तक इनकी उत्पत्ति का सही-सही ज्ञान प्राप्त नहीं हो पाया है।

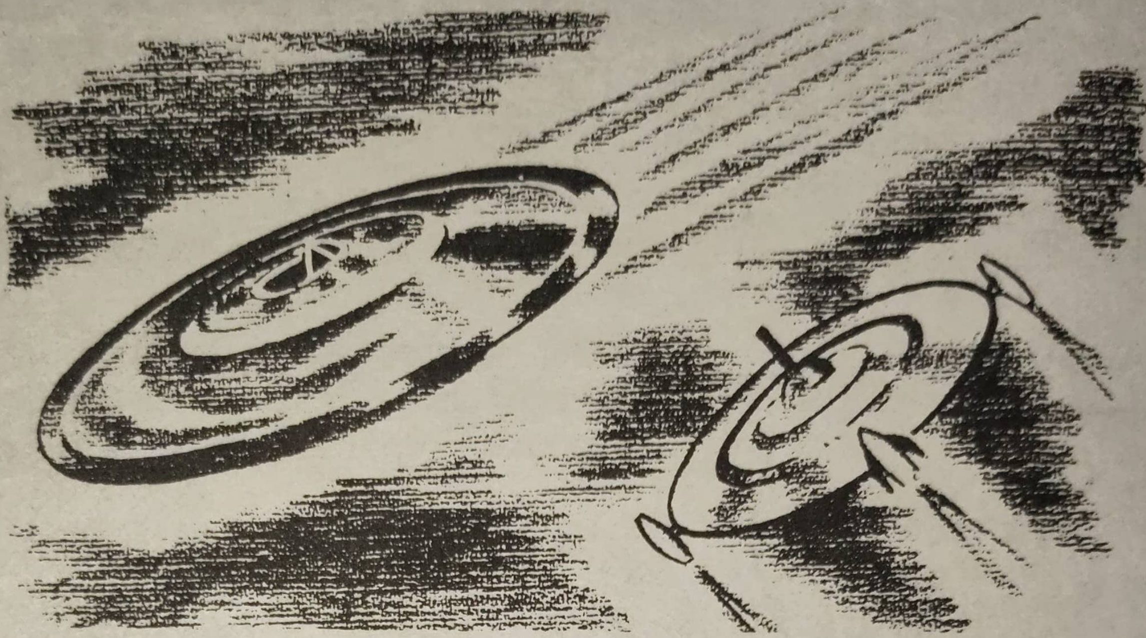


चन्द्रमा का गुरुत्वाकर्षण बल क्या है?

ब्रह्माण्ड में प्रत्येक वस्तु एक दूसरी वस्तु को आकर्षित किए हुए है। इस आकर्षण बल को गुरुत्वाकर्षण बल कहते हैं। गुरुत्वाकर्षण नियम की खोज न्यूटन (Newton) ने की थी। गुरुत्वाकर्षण बल दो बातों पर निर्भर करता है: वस्तुओं के द्रव्यमान (Mass) और उनके बीच की दूरी। दो वस्तुओं के बीच का गुरुत्वबल उतना ही अधिक होगा, जितना उनका द्रव्यमान अधिक होगा, लेकिन इनके बीच की दूरी जितनी अधिक होगी बल कम होता जाएगा। यदि दो वस्तुओं के बीच की दूरी को दोगुना कर दिया जाए, तो उनके बीच में लगा गुरुत्वबल चौथाई रह जाएगा।

चन्द्रमा पृथ्वी का एक उपग्रह है, जो पृथ्वी की परिक्रमा करता रहता है। पृथ्वी का द्रव्यमान चन्द्रमा की तुलना में लगभग 81 गुना है और चन्द्रमा का व्यास पृथ्वी के व्यास का लगभग एक चौथाई है। इसलिए चन्द्रमा पर गुरुत्वबल धरती की तुलना में केवल छठा हिस्सा रह जाता है। यही कारण है कि चन्द्रमा पर मनुष्य का वज़न पृथ्वी की तुलना में घटकर छठा भाग हो जाता है। यदि कोई मनुष्य पृथ्वी पर एक मीटर उछल सकता है, तो वही मनुष्य चन्द्रमा की सतह पर छः मीटर ऊंचा उछल सकेगा। इसी प्रकार चन्द्रमा की सतह पर पहुंच कर यदि कोई गेंद ऊपर की ओर फेंकी जाए, तो वह पृथ्वी की तुलना में छः गुना अधिक ऊंची जाएगी।

चन्द्रमा का गुरुत्वबल कम होने के कारण वहां पर कोई वायुमंडल नहीं है। कम गुरुत्वबल के कारण वायु के अणुओं पर कम बल लगता है, इसलिए वे चन्द्रमा के वातावरण में रुक नहीं पाते। चन्द्रमा के गुरुत्वबल का प्रभाव हमारी धरती पर भी पड़ता है। इस गुरुत्वबल के कारण समुद्रों का पानी ऊपर की ओर खिंचता है, जिससे समुद्रों में ज्वार आते हैं।



क्या दूसरे ग्रहों (Planets) पर भी लोग रहते हैं ?

आमतौर पर वैज्ञानिकों के मन में यह प्रश्न उठता है कि यदि जीवन का विकास धरती पर हो सकता है तो क्या यह संभव नहीं कि इतने बड़े ब्रह्मांड में और भी ऐसे ग्रह हों जिन पर जीवित प्राणी रहते हों? यदि ऐसा है तो ऐसे कौन से तरीके हो सकते हैं, जिनके द्वारा दूसरे ग्रहों पर रहने वाले प्राणियों से सम्पर्क स्थापित किया जा सके। इस समस्या का समाधान केवल रेडियो ही कर सकता है। सन् 1960 में अमरीका के वैज्ञानिकों ने कुछ तारों से ऐसे रेडियो संदेश प्राप्त किए, जिनसे उन्हें दूसरे खगोलीय पिण्डों पर जीवन के अस्तित्व का संदेह हुआ। लेकिन वैज्ञानिकों को अब तक कोई ऐसा ठोस प्रमाण नहीं मिल पाया है जिससे वे दूसरे ग्रहों पर जीवन की उपस्थिति सिद्ध कर सकें।

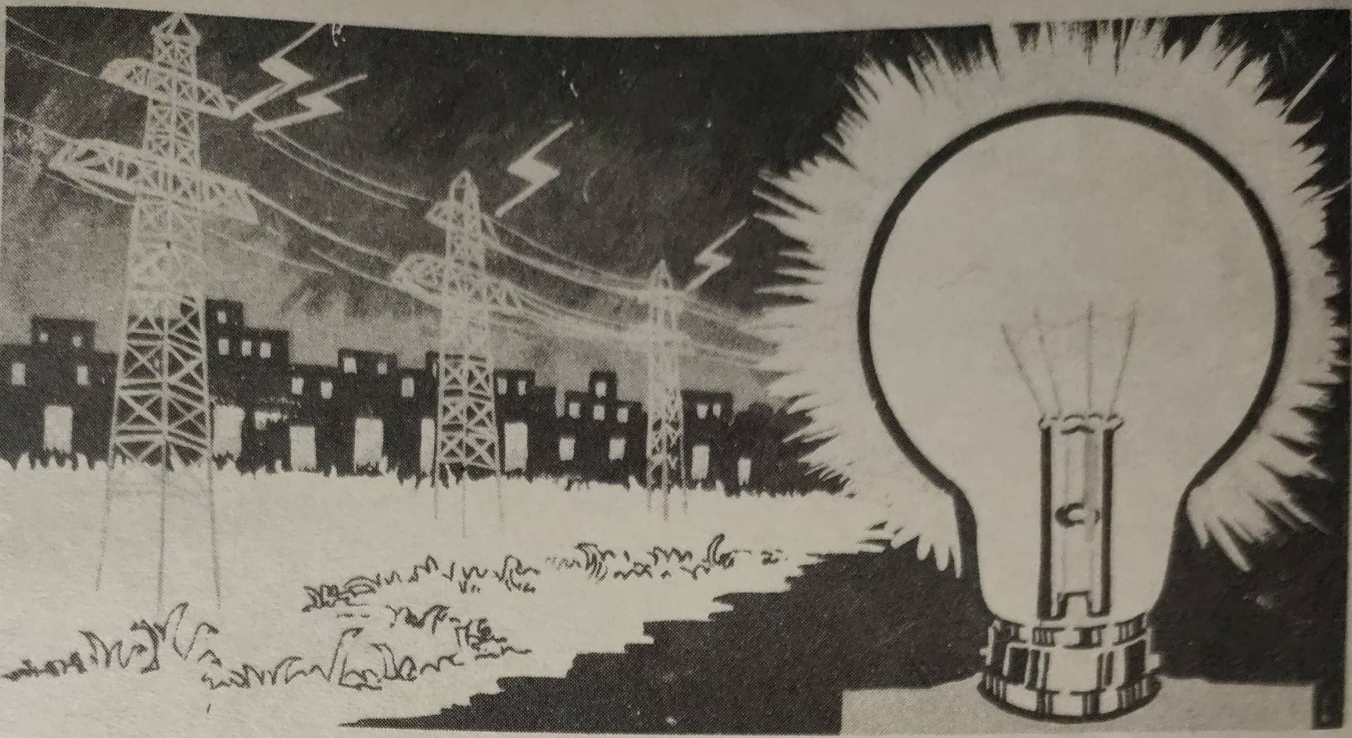
कुछ वर्ष पहले यह एक आम चर्चा थी कि लोगों ने सैकड़ों जगह आकाश में उड़ती हुई कुछ चीजें देखी हैं। कुछ लोगों का कहना है कि इन उड़ती हुई वस्तुओं का आकार तश्तरी जैसा था। इनका नाम लोगों ने उड़न तश्तरी (Flying Saucer) रखा। इन उड़न तश्तरियों को देखकर वैज्ञानिकों ने यह मानना शुरू कर दिया कि शायद पृथ्वी की ही भांति दूसरे ग्रहों पर लोग रहते हैं, जो वैज्ञानिक परीक्षणों के लिए ऐसी वस्तुओं को छोड़ते रहते हैं। इन तश्तरियों का आकार कई प्रकार का था। इनमें कुछ को गोल और कुछ को सिगार के आकार का बताया जाता है। इनके रंग के विषय में भी कई बातें सुनने को मिलीं। इनकी उड़ने की गति बहुत तेज थी।

उड़न तश्तरियों के वैज्ञानिकों ने चित्र भी लिए। उन तश्तरियों का वायुयानों द्वारा पीछा भी किया गया। बहुत से अध्ययनों से पता लगा कि लोगों ने जिन चीजों को उड़न तश्तरी मान लिया था, वे वास्तव में या तो मौसम जानने के लिए उड़ाए गए गुब्बारे थे या आकाश से गिरते हुए उल्का-पिण्ड थे। वैज्ञानिक लगभग इस निष्कर्ष पर पहुंच गए हैं कि पृथ्वी ही एक ऐसा ग्रह है जिस पर जीवन के अस्तित्व के लिए अनुकूल परिस्थितियां हैं। ब्रह्मांड में अब तक और कोई दूसरा ऐसा ग्रह नहीं मिल पाया, जिस पर जीवन मौजूद हो।



4

INVENTIONS

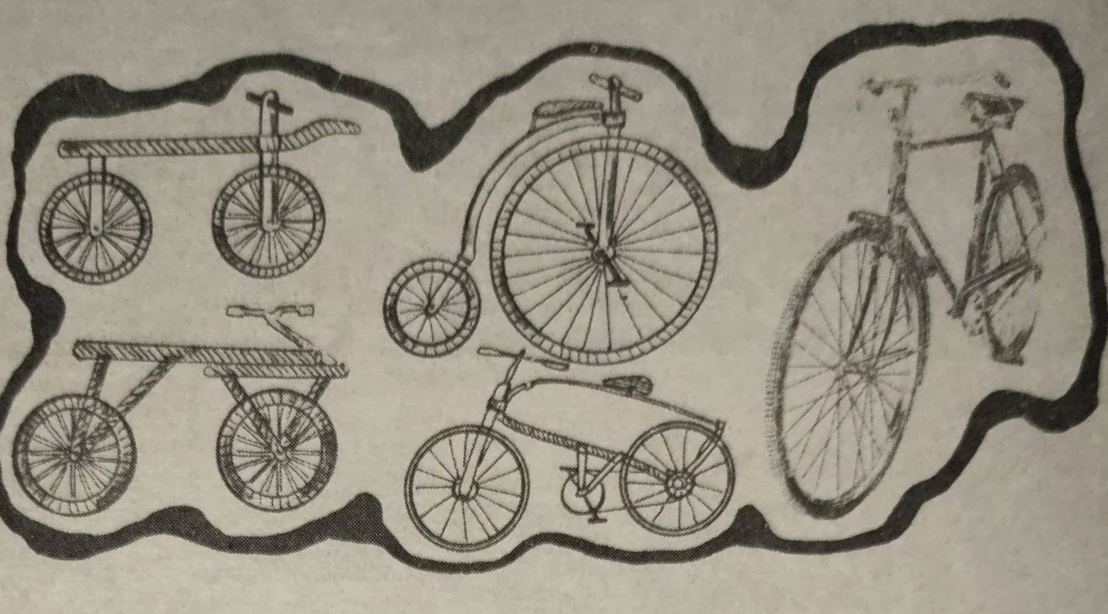


बिजली का आविष्कार कैसे हुआ?

संसार के सभी देशों में बिजली का प्रयोग आम हो गया है। इसके बिना सामान्य जन-जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। अधिकांश मशीनें आज बिजली की सहायता से ही चलती हैं। क्या मोटर, क्या रेल, क्या हवाई जहाज़ सभी में बिजली की आवश्यकता होती है। क्या तुम जानते हो कि बिजली का आविष्कार कब और कैसे हुआ?

बिजली (Electric) शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के 'इलैक्ट्रोन' शब्द से हुई है। ईसा से 600 वर्ष पूर्व ग्रीक के लोगों को पता था कि अम्बर (Amber) को कपड़े से रगड़ने पर उसमें कोई ऐसी शक्ति पैदा हो जाती है, जिसके कारण वह कागज के छोटे-छोटे टुकड़ों को आकर्षित करने लगता है। वास्तव में बिजली का आविष्कार सन् 1800 में एलेस्सान्ड्रो वोल्टा (Alessandro Volta) ने किया। वही सबसे पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने पहली विद्युत सेल बनाई, जिससे विद्युत धारा प्राप्त की जा सकती थी। विद्युत सेल के आविष्कार के कुछ ही दिनों में लोगों को यह पता लग गया कि विद्युत धारा से ऊष्मा, प्रकाश, रासायनिक क्रियाएं और चुम्बकीय प्रभाव पैदा किए जा सकते हैं। वोल्टा विद्युत सेल में हल्के गंधक के अम्ल में एक जस्ते और तांबे की छड़ डुबोई जाती थी। इन छड़ों पर लगे तारों को जोड़ने पर बिजली पैदा होती थी। इस सेल में बाद में बहुत से सुधार हुए और अनेकों प्रकार के विद्युत सेलों का निर्माण हुआ। विद्युत पैदा करने की दिशा में सबसे क्रांतिकारी कार्य सन् 1831 में माइकल फैराडे (Michal Faraday) ने किया। उन्होंने सबसे पहले सारे संसार को यह दिखाया कि यदि तांबे के तार से बनी कुंडली (Coil) में एक चुम्बक को आगे-पीछे किया जाए, तो बिजली पैदा हो जाती है। फैराडे के इसी सिद्धांत को प्रयोग में लाकर विद्युत पैदा करने वाले जेनरेटरों (Generators) का विकास हुआ। सबसे पहला सफल विद्युत डायनमो (Dynamo) या जेनरेटर जर्मनी में सन् 1867 में बनाया गया। उसके बाद विद्युत मोटरों और ट्रान्सफार्मरों (Transformers) का विकास हुआ।

19वीं शताब्दी के अंत तक दुनिया के कुछ हिस्सों में बिजली का उत्पादन होने लगा था। 1858 में अमेरिका में गिरते हुए पानी की मदद से टरबाइन (Turbine) चलाकर विद्युत पैदा की गई। इसके पश्चात दुनिया में बहुत से जलविद्युत उत्पादन केन्द्र (Hydel Power Station) और तापविद्युत उत्पादन केन्द्रों (Thermal Power Station) का विकास हो गया। 20वीं सदी में परमाणु ऊर्जा के विकास के बाद परमाणु ऊर्जा से भी बिजली बनाई जाने लगी। आज के वैज्ञानिक परमाणु ऊर्जा और सौर ऊर्जा को प्रयोग में लाकर विद्युत उत्पादन के नये-नये तरीकों की खोज करने में लगे हुए हैं।

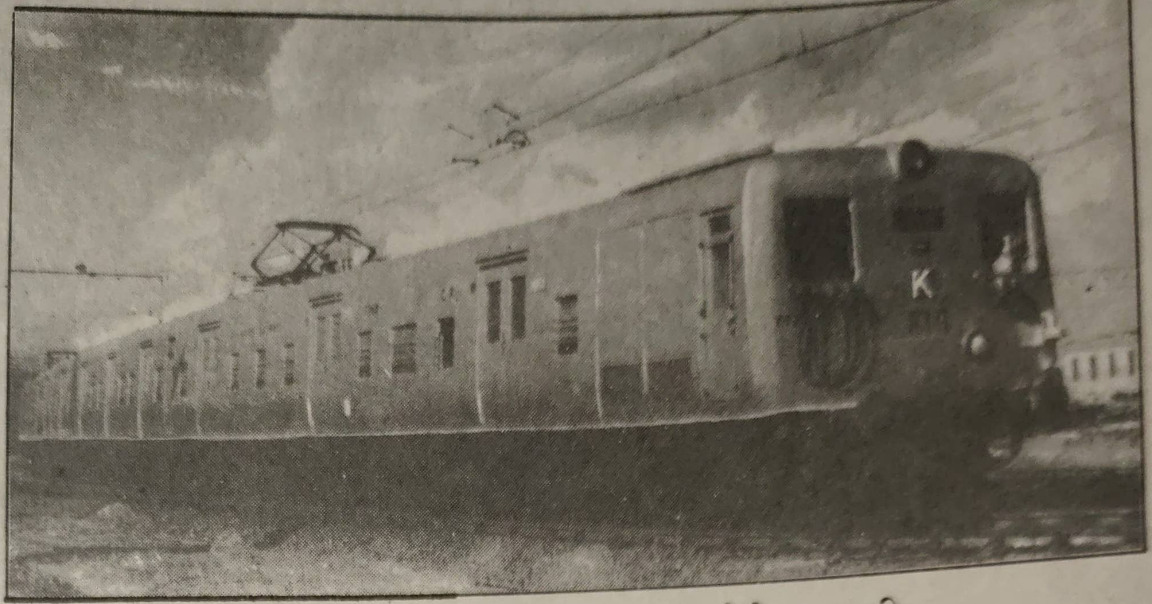


साइकिल का आविष्कार कैसे हुआ?

पहिए का आविष्कार मानव जाति के लिए एक बहुत बड़ा वरदान सिद्ध हुआ है। जब शुरू-शुरू में पहिए को खोज निकाला गया, तो उसके बाद मनुष्य उसको प्रयोग में लाने के लिए नई-नई चीज़ों के निर्माण की बात सोचने लगा। जिन दिनों सड़क पर भाप से चलने वाली मोटर गाड़ियों की खोज हो रही थी, उन्हीं दिनों मनुष्य दो पहियों की साइकिल बनाने में जुटा हुआ था।

सबसे पहली साइकिल का निर्माण 1817 में जर्मनी के बैरन वान ड्राइस (Baron Von Drais) नामक व्यक्ति ने किया था। उसने अपने नाम के आधार पर इस साइकिल का नाम ड्राइसिन (Draisine) रखा। इसमें दो पहिए थे, जो एक लकड़ी की छड़ की सहायता से जुड़े हुए थे। साइकिल सवार इसी पर बैठकर आगे बढ़ने के लिए पैरों से जमीन को धकेलता था। अगले पहिए पर इस साइकिल को मोड़ने के लिए हैंडल लगा था। यह मशीन काफी महंगी थी, इसलिए लोगों ने इसका नाम छैला घोड़ी (Dandy Mare) रख दिया था। सन् 1840 में मैकमिलन (Macmillan) नामक व्यक्ति ने इस साइकिल में कुछ सुधार किए। उन्होंने इस साइकिल के पिछले पहिए में पैडल लगाए।

सन् 1885 में फ्रांस के लाल्लेमेंट (Lallement) नामक व्यक्ति ने ऐसी साइकिल का निर्माण किया, जिसमें आगे के पहिए में पैडल लगे हुए थे। लोगों ने इस साइकिल का नाम हड्डी तोड़ (Bone Shaker) रखा, क्योंकि इसको चलाने वाले व्यक्ति को बहुत झटके लगते थे। इसके पहिए लोहे के बने थे। इसी समय लोगों के मस्तिष्क में यह बात आई कि यदि साइकिल के अगले पहिए का आकार बढ़ा दिया जाए तो वह अधिक तेज़ी से चलेगी। प्रयोग के रूप में ऐसी साइकिलें बनाई गईं, जिनका अगला पहिया काफी बड़ा होता था तथा पिछला पहिया काफी छोटा। बड़े पहिए का आकार 5 फुट तक था, तथा छोटे का लगभग 1 फुट। इसे चलाने में गिरने का बहुत डर रहता था। इसके पश्चात साइकिल के निर्माण में बहुत से सुधार हुए। अंततः सन् 1885 में आधुनिक सुरक्षित साइकिल का विकास हुआ। इस साइकिल में दोनों पहिए बराबर आकार के थे। चालक के लिए बैठने की सीट थी। इसमें पैडल लगे थे। जैसे-जैसे समय बीतता गया, इस साइकिल में भी सुधार होते चले गए। आज बड़ी सुन्दर-सुन्दर और आसानी से चलने वाली साइकिलें बनने लगी हैं। बच्चों के लिए तीन पहिए की साइकिल भी आज बाजार में आसानी से उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त दो पहिए की छोटी-छोटी साइकिलें भी बच्चों के लिए बनने लगी हैं। साइकिल का प्रयोग अब गांवों, कस्बों, शहरों तथा महानगरों में एक आम बात हो गई है।



रेलगाड़ी का आविष्कार कैसे हुआ?

आज संसार के लगभग सभी देशों में लोहे की पटरियों पर रेल गाड़ियां चलती हुई नज़र आती हैं। इनके द्वारा केवल मनुष्य ही एक स्थान से दूसरे स्थान तक नहीं जाता, बल्कि मनुष्य के जीवन में काम आने वाली हज़ारों वस्तुएं भी रेलगाड़ी द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाई जाती हैं। आज रेलगाड़ियां मनुष्य की बहुत बड़ी सेवा कर रही है। क्या तुम जानते हो कि रेलगाड़ी का आविष्कार कब और कैसे हुआ?

ईसा से लगभग 100 वर्ष पूर्व मनुष्य को भाप की शक्ति का पता लगा। सबसे पहले अलेक्जैन्ड्रिया (Alexandria) के हीरो नामक व्यक्ति ने भाप से चलने वाली टरबाइन बनाई। यह एक प्रकार का छोटा सा भाप का इंजन था। सन् 1705 में इंगलैंड के टॉमस न्यूकोमेन (Thomas Newcomen) ने भाप से चलने वाला एक अच्छा इंजन बनाया, जिसका प्रयोग कोयले की खानों से पानी निकालने के लिए किया गया। इस इंजन में बहुत अधिक ईंधन खर्च होता था। सन् 1765 में जेम्स वाट ने एक बेहतर भाप इंजन का निर्माण किया। इसमें स्वचालित (Automatic) वाल्व लगे थे। इस इंजन में एक पिस्टन ऊपर नीचे गति करता था। 1803 में रोबर्ट फुल्टन (Robert Fulton) ने जेम्स वाट द्वारा बनाए भाप के इंजन को एक नाव को खींचने में इस्तेमाल किया। सन् 1820 में इंगलैंड के जार्ज स्टीफेन्सन (George Stephenson) ने सही अर्थों में पहला इंजन बनाया। यद्यपि यह इंजन भारी था, लेकिन फिर भी बहुत अच्छा था। इस इंजन को जार्ज स्टीफेन्सन ने खुद चलाकर लोगों को सैर कराई।

संसार की सबसे पहली सवारी और मालगाड़ी 1825 में चली। सन् 1938 तक इंजन में तकनीकी सुधार होते रहे। इसे अधिक से अधिक शक्तिशाली बनाने के उपाय प्रयोग में लाए गए। इसी बीच 1912 में डीजल इंजनों का विकास हो गया। इसने भाप के इंजनों का महत्त्व कम कर दिया। सन् 1893 में बिजली से चलने वाली रेलगाड़ी भी बन चुकी थी।

आज तो रेलगाड़ी के क्षेत्र में एक क्रांति हो गई है। फ्रांस की ऐरो ट्रेन एक ऐसी रेलगाड़ी है, जो 375 किलोमीटर प्रति घंटे के वेग से दौड़ती है। यह विश्व की सबसे तेज़ गति से चलने वाली ट्रेन है। जापान ने चुम्बकीय शक्ति द्वारा रेलगाड़ी चलाने में सफलता प्राप्त कर ली है। इंगलैंड की एलिज़ाबेथन (Elizabethan) गाड़ी संसार की, कहीं न रुककर सबसे लंबी यात्रा करनेवाली गाड़ी है। यह किंग्सक्रास से चलकर एडिनबरा तक जाती है। यह गाड़ी छः घंटे में 630 कि० मी० (392.75 मील) की दूरी तय करती है। भारत में सबसे पहली रेल सेवा 1853 में बम्बई व थाना के बीच शुरू हुई थी। आज भारत में रेलों के द्वारा देश के कुल ढोए जाने वाले माल का 65% बोझा और 51% यात्रियों का भार वहन किया जाता है। देश में रेल लाइनों की कुल लम्बाई 102005 कि० मी० है और यह भार वहन क्षमता तथा रेल मार्ग की लम्बाई प्रति वर्ष बढ़ती ही जा रही है।



टैंक का आविष्कार कब हुआ?

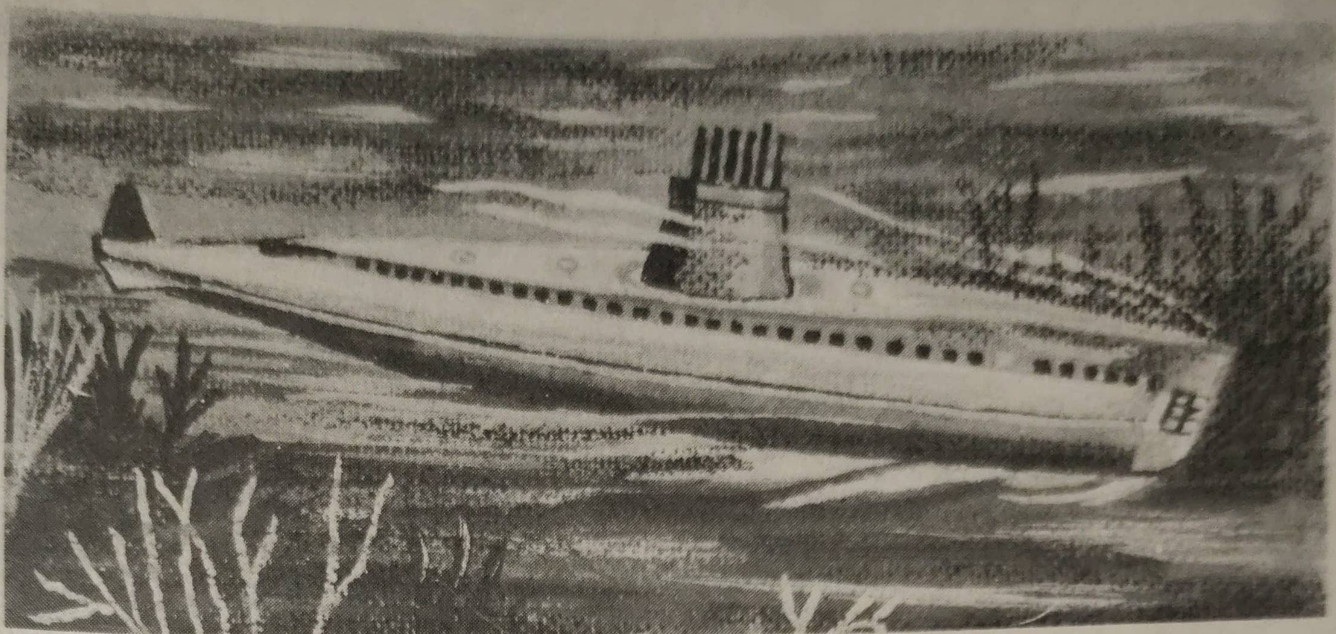
युद्ध के मैदान में दुश्मन की सेना पर गोलाबारी करने के लिए जमीन पर चलती-फिरती एक विशाल मशीन को टैंक कहते हैं। यह लोहे की मोटी चादरों से बनी होती है। इसमें एक तोप लगी होती है, जो गोला छोड़ने का काम करती है। उसमें बहुत से पहिए होते हैं, जो विशेष प्रकार की जंजीरों से ढ़के होते हैं। इनकी सहायता से टैंक ऊबड़-खाबड़ रास्तों पर भी तेजी से दौड़ सकता है। इसको चलाने और गोलाबारी का काम करने के लिए कई सैनिकों की आवश्यकता होती है। क्या तुम जानते हो कि टैंक का विकास कैसे हुआ?

शुरू-शुरू में मनुष्य घोड़ों द्वारा खींचे जाने वाले रथों पर बैठकर दुश्मन से युद्ध किया करता था। लड़ाई के मैदान में चलती-फिरती गाड़ियों का इस्तेमाल ईसा से 800 वर्ष पूर्व असीरिया (Assyrians) के लोगों ने किया था। भाप से चलने वाली सबसे पहली लड़ाकू गाड़ी का पेटेंट सन् 1855 में इंगलैंड के जे० कोवान (J. Cowan) ने प्राप्त किया। लेकिन वास्तव में टैंकों के विकास की शुरुआत 1900 के बाद ही हुई। इसका कारण यह था कि इस समय तक मोटर गाड़ियों का विकास काफी हो चुका था। सबसे पहला टैंक सन् 1900 में इंगलैंड की जोन फाउलर ऐण्ड कम्पनी (John Fowler & Company) ने बनाया। यह टैंक भाप से चलता था।

टैंकों का तेजी से विकास प्रथम महायुद्ध के दौरान हुआ। सन् 1914 में विश्व के कई देश, विशेष रूप से बेल्जियम, फ्रांस और ब्रिटेन टैंकों के विकास में लगे हुए थे। सन् 1915 में फोस्टर (Foster) कम्पनी ने 'लिटिल विली' (Little Willie) नामक एक छोटा-सा टैंक बनाया। 1916 में इसके विकसित रूप को 'बिग विली' (Big Willie) का नाम दे दिया गया। सन् 1918 में जब प्रथम विश्व युद्ध समाप्त हुआ, उस समय तक कई देश बहुत सारे टैंक बना चुके थे। उस समय तक फ्रांस लगभग 3870 और ब्रिटेन 2636 टैंक बना चुका था। इन टैंकों में आधुनिक टैंक जैसी लगभग सभी सुविधाएं थीं। इसके पश्चात अनेकों प्रकार के टैंक बनने लगे। दूसरे महायुद्ध तक टैंकों में काफी सुधार हो गए थे। उनकी रफ्तार बढ़कर 45 मील प्रति घटा तक हो गई थी। 1939 और 1944 के बीच जर्मनी, ब्रिटेन, अमेरिका, रूस और जापान में लाखों की तादाद में टैंकों का निर्माण कर लिया गया था। इन टैंकों का द्वितीय महायुद्ध में खुलकर इस्तेमाल हुआ। समय के साथ जैसे-जैसे विज्ञान की प्रगति हुई, वैसे ही वैसे टैंकों का रूप भी आधुनिक होता गया।

सन् 1950 में रूस ने एक टैंक बनाया, जो 56 टन का था। इस पर 122 मिलीमीटर व्यास वाली तोप लगी थी।। इसके कवच की मोटाई 10 इंच थी। यह 600 हॉर्स पावर के इंजन से चलता था। अब तो इस तरह के टैंक दुनिया के छोटे-छोटे देशों में भी बनने लगे हैं।

भारत में टैंकों का निर्माण अंग्रेजों के समय से शुरू हुआ था। पूर्ण भारतीय जानकारी के आधार पर टैंक निर्माण का कार्य स्वतंत्रता के बाद ही शुरू हुआ। पूरी तरह भारत में बनने वाला पहला टैंक विजयंत था, जो 1971 के भारत-पाक युद्ध में इस्तेमाल किया गया था।



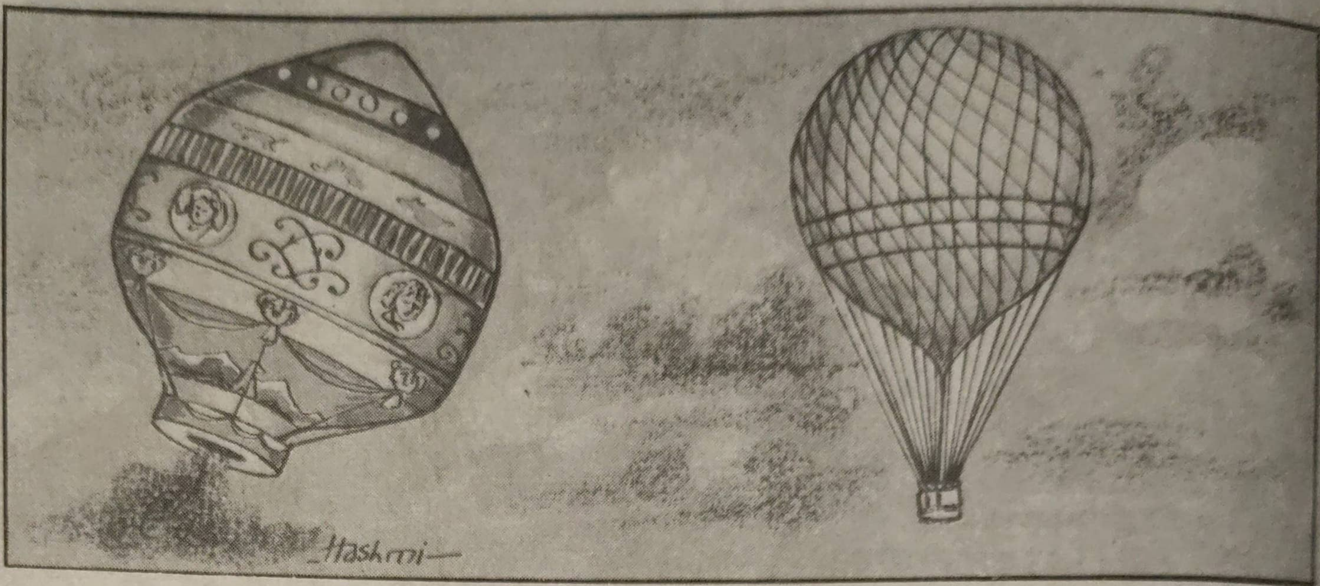
पनडुब्बी का आविष्कार कैसे हुआ?

पनडुब्बी (Submarine) चारों ओर से बंद एक प्रकार की नाव होती है, जो पानी की सतह पर और पानी के अंदर आसानी से चल सकती है। समुद्र की गहराइयां नापना इसके लिए बड़ा ही आसान काम है। तुम्हें आश्चर्य हो रहा होगा और यह भी सोच रहे होंगे कि पनडुब्बी का आविष्कार कैसे हुआ?

आदिकाल से ही मनुष्य की यह इच्छा रही है कि वह समुद्र की गहराई में उतर सके और उसकी तली से बहुमूल्य हीरे-मोतियों को खोज कर ला सके। इस कार्य में सफलता पाने के लिए वह ऐसी नौकाएं बनाने के विषय में सोचता रहा कि जो पानीं के अंदर उतर सकें। पानी के अंदर जाने वाली पहली पनडुब्बी का निर्माण हालैंड के कारनेलियस वेन ड्रेबल (Carnelius Van Drebbel) नामक व्यक्ति ने सन् 1620 में किया था। यह पनडुब्बी लकड़ी की बनी थी और उसके ऊपर चमड़ा मढ़ा था। इसके अगल-बगल में दो चप्पू थे, जो इसे पानी में डुबोते व बाहर निकालते थे। यह समुद्र के पानी के अंदर 12 से 15 फीट की गहराई तक जा सकती थी। इसके पश्चात् दूसरे प्रकार की पनडुब्बियां बनाने के प्रयास किए गए। अठारहवीं सदी तक कई प्रकार की पनडुब्बियां बनाई जा चुकी थीं। 1727 में अकेले इंगलैंड में ही चौदह प्रकार की पनडुब्बियां बन चुकी थीं।

सन् 1880 में भाप से चलने वाली पनडुब्बी का निर्माण हुआ। इसके बाद गैसोलीन और बिजली से चलने वाली पनडुब्बियों का विकास हुआ। प्रथम महायुद्ध में (1914-18) पनडुब्बियों को समुद्री लड़ाइयों में सफलता पूर्वक प्रयोग किया गया। द्वितीय महायुद्ध में (1939-45) डीज़ल से चलने वाली पनडुब्बियों को शत्रु के विरुद्ध प्रयोग में लाया गया। अब तो परमाणु ऊर्जा से चलने वाली पनडुब्बियां भी बन गई हैं। आधुनिक पनडुब्बियां स्टील की चादरों से बनी होती हैं। इनमें पेरिस्कोप, सोनार और रडार जैसे यन्त्र लगे होते हैं। पेरिस्कोप की सहायता से समुद्र के पानी की गहराई में से समुद्र तल के ऊपर की स्थिति देखी जा सकती है। सोनार से दुश्मन की पनडुब्बियों का पता लगाया जाता है।

अब तो पनडुब्बियों को नाना प्रकार के उपयोगों में लाया जा रहा है। इनकी सहायता से समुद्र तल के विषय में अनुसंधान किए जाते हैं। पानी के जहाजों का युद्ध के दौरान विनाश करने के लिए मिज़ाइलें और तारपीडो पनडुब्बियों से छोड़े जाते हैं। पनडुब्बियों में ऑक्सीजन बनाने का प्रयोग होता है। परमाणु ऊर्जा से चलने वाली पनडुब्बियों में ईंधन के जलने से धुआं और गैस आदि निकलने की समस्या भी नहीं होती। आधुनिक पनडुब्बियां शत्रु की पनडुब्बियों पर हमला करके उनका विनाश कर सकती हैं। प्रत्येक पनडुब्बी में ऐसा प्रबन्ध भी होता है, जिसके द्वारा खतरे के समय उसमें बैठे व्यक्ति आसानी से भागकर अपनी जान बचा सकते हैं।

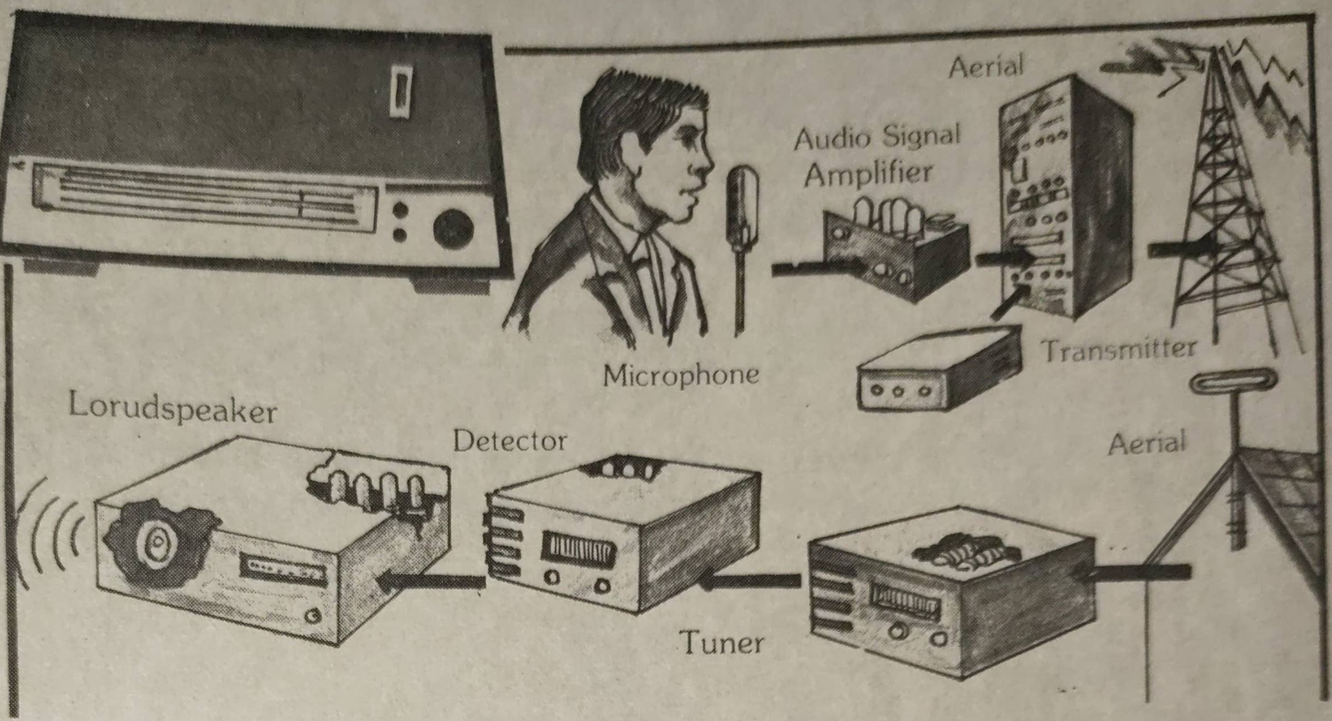


गुब्बारे कैसे उड़ते हैं?

ब्याह शादियों और दूसरे खुशी के अवसरों पर लोग हवा में गुब्बारे उड़ाते हैं। ये गुब्बारे रबर, रेशम या कागज के बने होते हैं। इनका आकार गोल होता है। इनमें हाइड्रोजन व हीलियम गैस भर दी जाती है, जो हवा से हल्की होती है। गैस के हल्केपन के कारण ही गुब्बारा हवा में उड़ जाता है। कुछ गुब्बारे गर्म हवा की सहायता से भी उड़ाए जाते हैं। वास्तव में मनुष्य की आकाश में उड़ने की कल्पना गुब्बारों द्वारा ही साकार हुई है। क्या तुम जानते हो कि गुब्बारे उड़ाने की शुरुआत कब और कैसे हुई?

शुरू-शुरू में गुब्बारों का हवा में उड़ना एक आश्चर्य की बात थी। सबसे पहले सन् 1783 में फ्रांस के ज़ौसफ़ (Joseph) और मांगोल फ़ियर (Montgolfier) ने सिल्क का एक बड़ा सा थैला बनाया, जिसका मुंह नीचे से खुला हुआ था। इसके नीचे कागज आदि जला कर धुआं भरने की व्यवस्था थी। उन्होंने देखा कि गर्म हवा से भरा यह गुब्बारा हवा में ऊपर उड़ जाता है। इनका पहला गुब्बारा वायु में लगभग 2½ कि. मी. (1½ मील) की ऊंचाई तक उड़ा। 19 सितम्बर सन् 1783 में इस गुब्बारे के साथ एक छोटी सी टोकरी लगा दी गई। इसमें एक मुर्गा, एक बत्तख और एक भेड़ को बिठाकर हवा में उड़ाया गया। इस प्रकार की उड़ान को देखने के लिए फ्रांस के राजा सहित हज़ारों लोग एकत्रित हुए। 21 नवम्बर सन् 1783 को सबसे पहला मानव युक्त गुब्बारा आकाश में उड़ाया गया। यह गुब्बारा पेरिस के ऊपर लगभग 9 किलोमीटर (5½ मील) की ऊंचाई तक उड़ा। इन गुब्बारों में बैठे मनुष्यों को हवा की दिशा पर निर्भर रहना पड़ता था। आने वाले वर्षों में वैज्ञानिकों ने इसमें बहुत से सुधार किए। वैज्ञानिकों की दिमागी कसरत के परिणाम स्वरूप ही तो, गुब्बारों की उड़ान से ही वायुयान का विकास हो सका है।

आज भी गुब्बारों का वैज्ञानिक परीक्षणों और दैनिक कार्यों में बड़ा महत्त्व है। कौस्मिक किरणों (Cosmic Rays) का आविष्कार भी गुब्बारों द्वारा ही सम्भव हुआ। मौसम सम्बन्धी सूचनायें प्राप्त करने के लिए सन् 1900 से ही गुब्बारों का प्रयोग हो रहा है। आजकल गुब्बारे रेशम की बजाय प्लास्टिक के बनाये जाते हैं। इनमें मनुष्य के स्थान पर स्वचालित यंत्र लगे रहते हैं। गुब्बारों का प्रयोग बादलों की ऊंचाई मापने के लिए किया जाता है। सौर ऊर्जा से संबंधित अध्ययन भी गुब्बारों की सहायता से किए जाते हैं। आने वाले मौसम के विषय में भविष्यवाणी करने में गुब्बारे बहुत ही उपयोगी सिद्ध हो रहें हैं। गुब्बारों को आसमान की बहुत अधिक ऊंचाइयों तक भेजा जा सकता है। 4 मई सन् 1961 को अमेरिका के एम.रोज़ (M. Rose) और वी. प्राथेर (V. Prather) ने मैक्सिको की खाड़ी में गुब्बारा उड़ाने का एक नया कीर्तिमान स्थापित किया। यह गुब्बारा 34668 मीटर (113739 फुट) की ऊंचाई तक उड़ा था।



रेडियो का विकास कैसे हुआ?

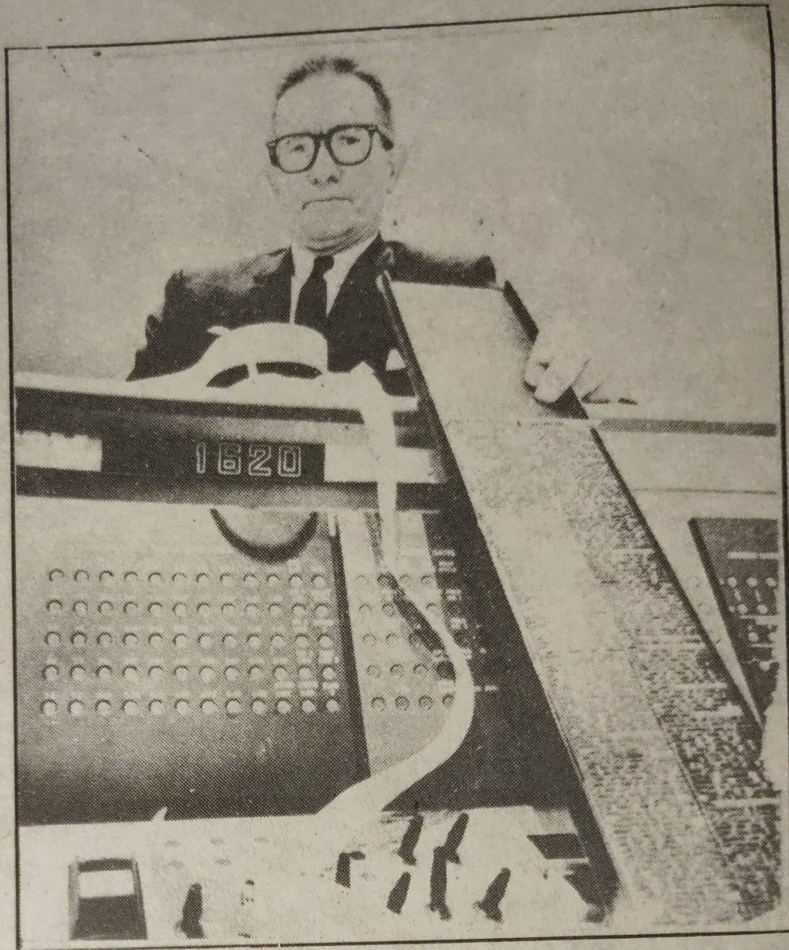
रेडियो ध्वनि संदेशों को दूरस्थ स्थानों से प्राप्त करने का सबसे अधिक प्रभावशाली तरीका है। इसकी सहायता से संसार के किसी भी देश में होने वाली घटनाओं का पता हमें पलभर में लग जाता है। इतना ही नहीं बल्कि यह मनोरंजन का भी सबसे बड़ा साधन है। सुबह से रात तक अनेकों प्रकार के संगीत कार्यक्रम, विश्व के किसी भी कोने में हो रहे खेलों का आंखों देखा हाल, संसार की मुख्य घटनाओं का ब्योरा, हम घर बैठे ही रेडियो द्वारा सुनते रहते हैं। क्या तुम जानते हो कि रेडियो का विकास कैसे हुआ और यह किस प्रकार काम करता है?

वास्तव में रेडियो के आविष्कार का श्रेय किसी एक व्यक्ति को नहीं दिया जा सकता। यह बहुत से वैज्ञानिकों के मिले जुले प्रयासों का ही परिणाम है। रेडियो के विकास में मुख्य रूप से जर्मनी के वैज्ञानिक हैनरिक हट्‌र्ज़ (Heinrich Hertz) इटली के गुगलीलमो मारकोनी (Guglielmo Marconi) और अमेरिका के ली० डे० फोरेस्ट (Lee De Forest) का विशेष हाथ रहा है।

19वीं सदी के शुरू में इंगलैंड के माइकल फैराडे (Michael Faraday) ने यह सिद्ध कर दिखाया कि किसी तार में बहने वाली विद्युत धारा से तार के चारों ओर चुम्बकीय क्षेत्र पैदा हो जाता है। इस विद्युत धारा के बहने से एक प्रकार की विद्युत चुम्बकीय तरंगें पैदा होती हैं, जिन्हें दूर-दूर तक भेजा जा सकता है। इन तरंगों का अध्ययन हर्ट्ज़ महोदय ने किया। उन्हीं दिनों मारकोनी ने विद्युत चुम्बकीय तरंगों को प्रयोग में लाकर बेतार के तार (Wireless) का निर्माण किया। सन् 1904 में सर जान एम्ब्रोज़ फ्लेमिंग (Sir John Ambrose Fleming) ने डायड (Diode) वाल्व (Valve) का आविष्कार किया। इस वाल्व में एक कैथोड़ होता है और एक प्लेट। जब कैथोड़ में इलेक्ट्रान निकलते हैं तो प्लेट पर विद्युत विभव देने से इन्हें आकर्षित या विकर्षित किया जा सकता है। 1906 में अमेरिका के लीण्डे फ़ोरेस्ट ने ट्रायोड वाल्व बनाया। इन सब आविष्कारों का प्रयोग करके 1906 में सबसे पहला रेडियो उपकरण बनाया गया। 1910 तक रेडियो संदेश प्रसारित करने के लिए ट्रांसमीटर बन चुके थे। इन से आने वाले संदेशों को प्राप्त करने के लिए रेडियो रिसीवर सेट भी बन चुके थे। इसके पश्चात रेडियो पद्धति में विकास होता चला गया।

क्या तुम जानते हो कि दूर स्थानों से हमें रेडियो संदेश कैसे प्राप्त होते हैं? रेडियो प्रसारण केन्द्र पर जब कोई व्यक्ति बोलता है, तो उसके मुंह से निकली ध्वनि तरंगों को माइक्रोफोन द्वारा विद्युत तरंगों में बदल लिया जाता है। इन विद्युत तरंगों को उच्च आवृत्ति वाली विद्युत चुम्बकीय तरंगों (Electro-Magnetic Waves) के साथ मिला दिया जाता है। प्रसारण केन्द्र के एन्टीना (Antenna) से ये तरंगें चारों तरफ फैल जाती हैं। जब ये तरंगें चलती-फिरती हमारे घर में लगे रेडियो के एन्टीना से टकराती हैं, तो उसमें विद्युत धारा पैदा हो जाती है। यह विद्युत धारा हमारे रेडियो में फिर ध्वनि तरंगों में बदल दी जाती हैं और रेडियो में लगे लाउडस्पीकर द्वारा हमें बोलने वाले की आवाज़ सुनाई दे जाती है। अलग-अलग प्रसारण केन्द्रों से आए संदेशों को प्राप्त करने के लिए भी हमारे रेडियो में प्रबन्ध होता है।

भारत में रेडियो प्रसारण सेवा सन् 1936 में शुरू हुई थी। संसार में सबसे अधिक रेडियो स्टेशन अमेरिका में हैं। इनकी संख्या 7000 के लगभग है। पूरे विश्व में इस समय लगभग 85 करोड़ रेडियो सेट हैं।



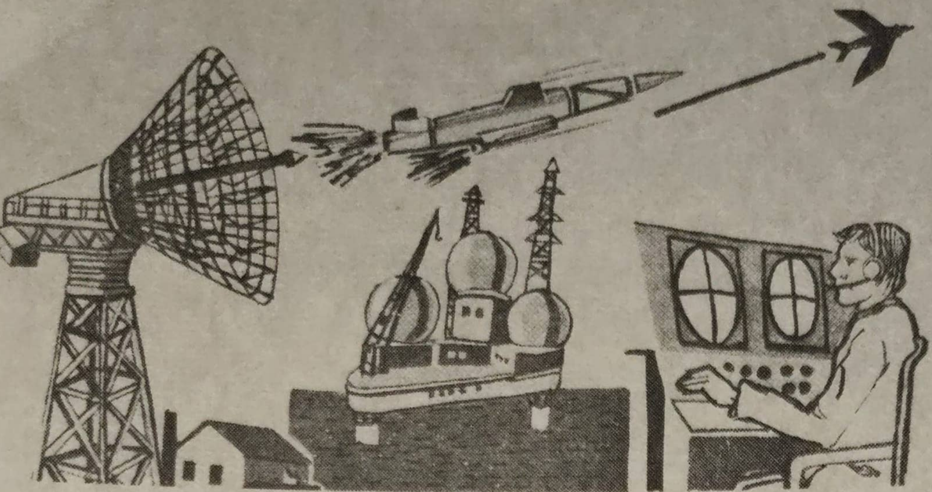
कम्प्यूटर का विकास कब और किसने किया?

कम्प्यूटर एक ऐसी इलैक्ट्रानिक मशीन (Electronic Machine) है, जो जटिल से जटिल गणित की समस्याओं को पलभर में हल कर सकती है। यह मशीन गणित की संख्याओं को जोड़ सकती है, घटा सकती है और उनका गुणा, भाग कर सकती है। कम्प्यूटर द्वारा जिस समस्या को हल करना होता है, उसका प्रोग्राम (Programme) बनाना होता है। वास्तव में हम कम्प्यूटर को इलैक्ट्रानिक मस्तिष्क की उपमा दे सकते हैं। हमारे मस्तिष्क की तरह यह बहुत सी समस्याओं के विषय में निर्णय दे सकती है। कम्प्यूटर अगर समस्या के समाधान में कोई गलती कर देता है, तो उसे स्वयं ठीक भी कर सकता है। कम्प्यूटर शतरंज का खेल भी खेल सकता है। कम्प्यूटर में एक याददाशत केन्द्र होता है, जो हज़ारों लाखों सूचनाओं को अपने अंदर संग्रह कर सकता है और जरूरत पड़ने पर उस सूचना को कम्प्यूटर से प्राप्त किया जा सकता है।

क्या तुम जानते हो कि ऐसी आश्चर्यजनक मशीन का विकास कब हुआ और किसने किया?। सबसे पहला कम्प्यूटर सन् 1944 में हारवार्ड यूनीवर्सिटी (Harward University) अमेरिका में बनाया गया था। इसका विकास प्रोफेसंर होवार्ड एकिन (Professor Howard Aiken) तथा उनकी टीम ने किया था। इसके विकास में इन्टरनेशनल बिजिनस मशीन कारपोरेशन का भी पूरा-पूरा सहयोग था। इस कम्प्यूटर का नाम हारवार्ड आई बी एम (IBM) रखा गया था।

इसके पश्चात तो अनेकों प्रकार के कम्प्यूटरों का विकास हो गया है। आज ऐसे भी कम्प्यूटर बन गए हैं, जो उड़ते हुए वायुयानों, अन्तरिक्ष यानों, राकिटों और मिसाइलों को जमीन से ही नियंत्रित कर सकते हैं। उड़ान के दौरान उनकी दिशा और गति को बदला जा सकता है।

अब आप सोचते होंगे कि कम्प्यूटर और हमारे मस्तिष्क में क्या अंतर है? कम्प्यूटर हमारे ही मस्तिष्क की उपज है, लेकिन कम्प्यूटर हमारे मस्तिष्क की अपेक्षा गणनाएं इतनी तेजी से कर सकता है, जो हम कभी सोच भी नहीं सकते हैं। इतने शक्तिशाली कम्प्यूटर आज बन गए हैं, जो एक सेकिण्ड में आठ करोड़ अंकों को जोड़ सकते हैं और इतने ही अंकों का गुणा कर सकते हैं। कम्प्यूटर में हज़ारों की संख्या में इलैक्टानिक यंत्र लगे होते हैं। ये ही यंत्र सारे काम करते हैं। यह कहना अनुचित न होगा कि कम्प्यूटर ने आधुनिक विज्ञान में एक क्रांति कर दी है।



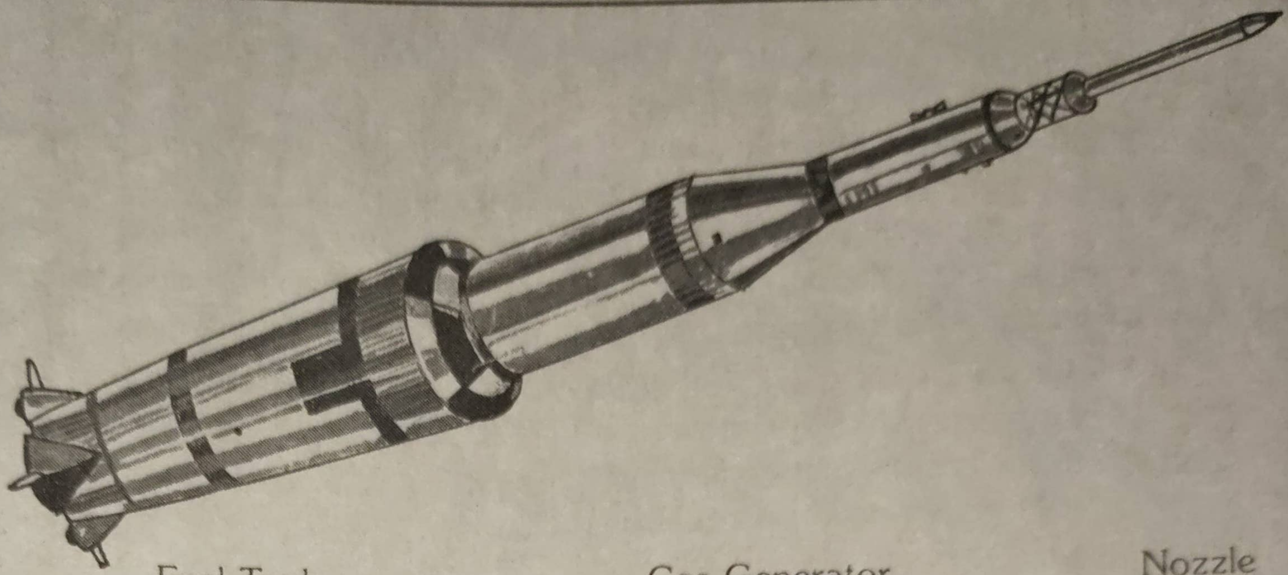
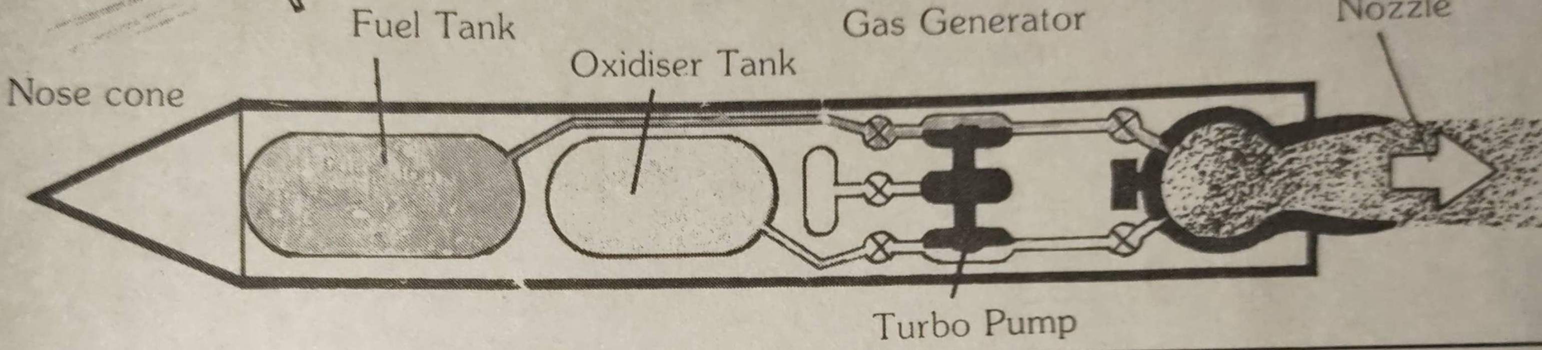
राडार (Radar) क्या है?

राडार (Radar) शब्द अंग्रेज़ी के पांच अक्षरों से मिलकर बना है। ये अक्षर हैं—आर, ए, डी और आर। ये अक्षर रेडियो डिटेक्टिग ऐण्ड रेंजिग (Radio Detecting and Ranging) के लिए प्रयोग होते हैं। जिसका अर्थ है,रेडियो तरंगों द्वारा किसी वस्तु की स्थिति और दूरी ज्ञात करना। वास्तव में राडार एक ऐसा यंत्र है, जिसकी सहायता से उन वस्तुओं की स्थिति और दूरी का पता लगाया जा सकता है, जो हमें खाली आंखों से दिखाई नहीं देतीं। यह एक ऐसा यंत्र है, जो कोहरा, धुंध, धुआं,हिमपात, आंधी, तूफान, वर्षा आदि सभी स्थितियों में अपना काम करता रहता है। इसकी सहायता से उड़ते हुए हवाई जहाजों की स्थितिं, दूरी तथा वेग का पता बड़ी आसानी से लग जाता है। इस कारण इसे वायुयानों के नियंत्रण और मार्ग-दर्शन के लिए प्रयोग में लाया जाता है। राडार से यह भी पता चल जाता है कि अमुक विमान अपना है कि दुश्मन का।

राडार प्रतिध्वनि (Echo) के सिद्धांत पर कार्य करता है। जैसे ध्वनि तरंगें किसी वस्तु से टकरा कर लौटती हैं, तो प्रतिध्वनि पैदा करती हैं, उसी प्रकार रेडियो तरंगें जो विद्युत चुम्बकीय तरंगें हैं, किसी वस्तु से टकराती हैं तो परावर्तित हो जाती हैं। रेडियो तरंगों के वायुयानों और जलयानों से टकराकर परावर्तित होने के गुण का पता वैज्ञानिकों को 1930 में चला। इसी गुण को प्रयोग में लाकर 1935 में इंगलैंड में पांच राडार केन्द्र पहली बार स्थापित किए गए थे। इसके बाद अमेरिका में भी राडार यंत्रों का विकास हुआ। मुख्य रूप से राडार का विकास दूसरे महायुद्ध के दौरान हुआ। राडार से बमवर्षक विमानों का पता लगाने और गिराने में बड़ी मदद मिली। युद्ध के बाद तो शान्तिकाल के उपयोग के लिए अनेकों प्रकार के राडारों का विकास हो गया। अब तो ऐसे-ऐसे राडार बन गए हैं, जिनकी सहायता से मानव रहित यानों का नियंत्रण और मार्ग-दर्शन किया जाता है। मौसम सम्बन्धी सूचना देने वाले राडार भी आज उपलब्ध हैं। इसकी सहायता से वर्षा, हिमपात, आंधी और आने वाले तूफानों का पता बड़ी आसानी से लग जाता है।

क्या तुम जानते हो कि राडार किस प्रकार काम करता है? राडार में रेडियो तरंगों को प्रयोग में लाया जाता है। ये वही तरंगें हैं, जो रेडियो प्रसारण में प्रयोग होती हैं, फर्क केवल इतना है कि इनकी आवृत्ति अधिक होती है, यानी तरंगें कम होती हैं। इन्हें सूक्ष्म तरंग (Micro Wave) कहते हैं। ये प्रकाश वेग से चलती हैं, यानी इनका वेग 1,86,000 मील प्रति सेकिण्ड होता है। किसी भी राडार केन्द्र पर एक ट्रान्समीटर (Transmeter) होता है, जो सभी दिशाओं में रेडियो तरंगें भेजता है। इसके साथ ही एक रिसीवर (Receiver) होता है, जो वस्तु से परावर्तित रेडियो तरंगों को प्राप्त करता है। इस रिसीवर में वस्तु की स्थिति प्रदर्शित करने वाला एक पर्दा होता है, जो वस्तु से परावर्तित रेडियो तरंगों को ठीक दिशा में भेजता है। ट्रान्समीटर से जाने वाली तरंगें वस्तु से टकराकर जब लौटती हैं, तो उन्हें रिसीवर से प्राप्त करके उनके द्वारा जाने और आने में लिए गए समय का पता लगा लिया जाता है। इस समय को प्रकाश के वेग से गुणा करने पर वस्तु की दोगुनी दूरी का पता लग जाता है। इस दूरी की आधी दूरी ही वस्तु की दूरी होती है। इस यंत्र में इन सब कार्यों को करने के लिए स्वयम्चालित उपकरण होते हैं।

पहले राडार यंत्र आकार में बहुत बड़े होते थे, लेकिन अब तो इतने छोटे राडार भी बना लिए गए हैं, जिनका आकार हमारी हथेली से भी छोटा होता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि राडार हमारे लिए युद्ध काल में ही नहीं, बल्कि शांतिकाल में भी बहुत उपयोगी सिद्ध हो रहा है।

रॉकेट का विकास कैसे हुआ?

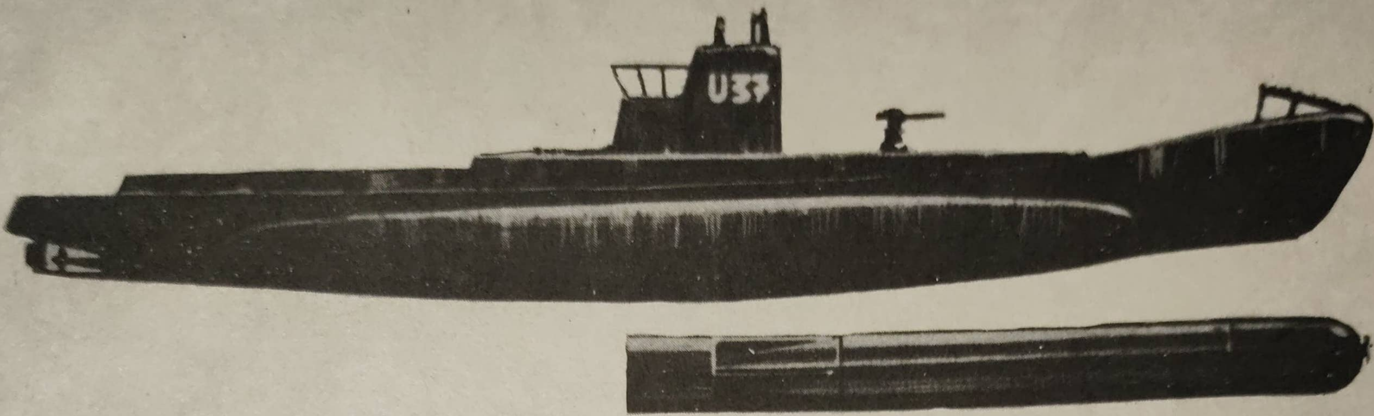
रॉकेट शब्द का प्रयोग आज कई रूपों में किया जाता है। युद्ध में प्रक्षेपणास्त्रों (Missiles) के लिए भी रॉकेट शब्द का प्रयोग होता है। अंतरिक्ष में ग्रहों और उपग्रहों के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए, जिन यानों का इस्तेमाल किया जाता है, उन्हें भी रॉकेट कहते हैं। आतिशबाजी में भी रॉकेट शब्द का प्रयोग होता है। रॉकेट शब्द चाहे किसी भी रूप में प्रयोग किया जाए, लेकिन सभी रॉकेटों का कार्य करने का सिद्धांत एक ही है। प्रत्येक रॉकेट न्यूटन के गति के तीसरे नियम के अनुसार कार्य करता है। इस नियम के अनुसार प्रत्येक क्रिया के फलस्वरूप समान और उल्टी दिशा में प्रतिक्रिया होती है। इसी नियम के आधार पर रॉकेट आगे बढ़ता है। रॉकेट में रखा हुआ ईंधन जब जलता है और उससे पैदा हुई गैसें अधिक दबाव के साथ छोटी सी नली से पीछे की ओर बाहर निकलती हैं, तो इस क्रिया के फलस्वरूप रॉकेट को आगे बढ़ने के लिए जरूरी धक्का प्राप्त होता है। आज अनेकों ग्रहों, उपग्रहों के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए रॉकेट इस्तेमाल किए जाते हैं। क्या तुम जानते हो कि रॉकेट का विकास कैसे हुआ?

रॉकेट के विकास की कहानी चीन से शुरू होती है। इसका आविष्कार किसी एक वैज्ञानिक ने नहीं किया। इसके विकास में बहुत लम्बा समय लगा है। सन् 1232 में मंगोलों के खिलाफ लड़ाई में चीन के लोगों ने अग्नि-बाणों (Arrows of Flying Fire) का इस्तेमाल किया था। ये एक प्रकार के रॉकेट ही थे। 1275 तक रॉकेट का इस्तेमाल भारत, इंगलैंड, अरब देश, जर्मनी, फ्रांस आदि देशों में होने लगा था। 500 साल बाद अंग्रेज़ों के विरुद्ध लड़ाई में भारतीय सेना ने रॉकेटों का प्रयोग किया था। 18वीं सदी में हैदरअली और टीपू सुल्तान आदि ने भी युद्ध में

रॉकेटों का प्रयोग किया था। जैसे-जैसे समय बीतता गया, रॉकेटों का इस्तेमाल युद्ध में कम होता गया, लेकिन अंतरिक्ष अनुसंधानों में रॉकेट का प्रयोग बढ़ता गया।

रॉकेटों का वास्तविक विकास अंतरिक्ष के रहस्यों का पता लगाने के लिए 19वीं सदी के मध्यं में शुरू हुआ। इनके निर्माण में बहुत से सुधार किए गए। अक्टूबर 1958 में अमेरिका ने पायनियर (Pioneer) नाम का रॉकेट चन्द्रमा तक पहुंचने के लिए छोड़ा। यह चन्द्रमा तक तो नहीं पहुंच पाया, लेकिन इससे कई महत्त्वपूर्ण बातें पता चलीं। अंतरिक्ष अनुसंधान व चांद सितारों के लिए 18000 मील प्रति घंटा या इससे अधिक वेग वाले रॉकेटों की आवश्यकता होती है। पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र से बाहर निकलने के लिए राकेट का वेग 40,000 कि० मी० (25,000 मील) प्रति घंटा होना जरूरी होता है।

अब तो राकेटों का प्रयोग शुक्र और मंगल जैसे ग्रहों तक जानें के लिए भी किया जा रहा है। अमेरिका और रूस ने रॉकेटों के विकास की दुनिया में एक क्रांति ला दी है।



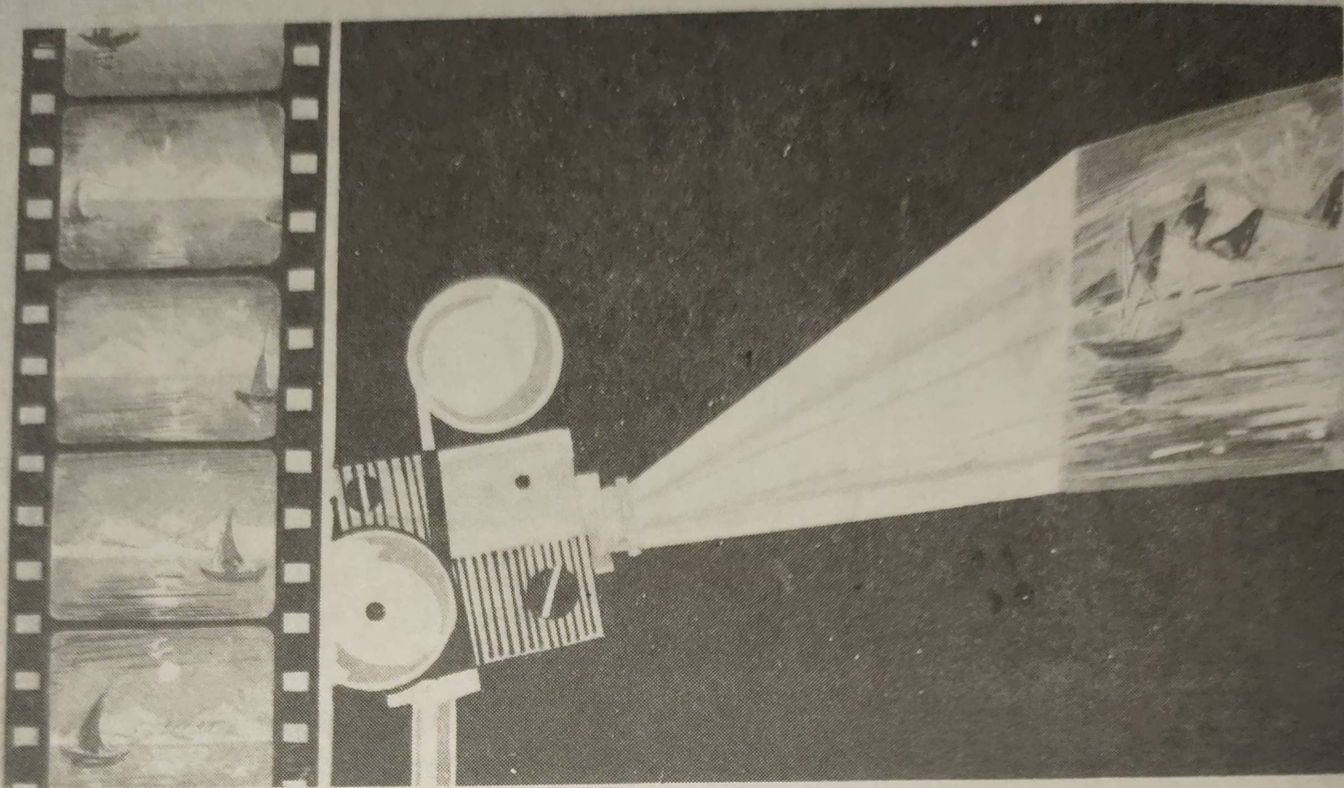
तारपीडो (Tarpedo) क्या हैं?

जमीन पर होने वाले युद्धों में जिस प्रकार गोलों का प्रयोग होता है, उसी प्रकार समुद्री लड़ाई में पनडुब्बियों से तारपीडो नामक हथियार का प्रयोग होता है। तारपीडो एक ऐसा विनाशकारी हथियार है, जो पानी के अंदर ही अंदर जाकर दुश्मन के पानी के जहाज को नष्ट कर देता है। इसकी विशेषता यह होती है कि जल के अंदर जब यह किसी चीज से टकराता है तभी यह विस्फोट करता है। यह दुश्मन की पनडुब्बियों का विनाश करने के लिए भी काम में आता है।

तारपीडो का आविष्कार ब्रिटेन के राबर्ट हाइटहेड ने 1866 में किया था। यह तारपीडो बड़ी तेज गति से सैकड़ों मीटर की दूरी तक पानी के अन्दर जा सकता था। इसके बाद आधुनिक यंत्रों से सज्जित कई प्रकार के तारपीडों का विकास किया गया।

आधुनिक तारपीडो के कई हिस्से होते हैं। पिछले वाले हिस्से में पर्याप्त मात्रा में बारूद व अन्य विस्फोटक पदार्थ रखे जाते हैं। तारपीडो के अगले हिस्से में पेचीदा यंत्र लगे होते हैं, जो इसे संतुलन (Balance) में रखते हैं। इसी हिस्से में वायुपात्र भी होता है, जो इतना मजबूत होता है कि बीस हज़ार किलो प्रति वर्ग इंच तक का दबाव सह सकता है। संतुलन कक्ष (Balance Room) में गियर (Gear), स्टाप वाल्व (Stop Valve), चार्जिंग वाल्व (Charging Valve), ईंधन (Fuel) आदि होते हैं। पूंछ वाले हिस्से में मुख्य इंजन व स्टियरिंग के कल-पुर्जे होते हैं। इसी हिस्से में तारपीडो को चलाने के काम में आनेवाला ईंधन होता है। तारपीडो का मार्ग नियंत्रण (Control)करने के लिए कई प्रकार के पेचीदा यंत्र लगे होते हैं।

तारपीडो कई प्रकार के होते हैं। आमतौर पर सभी प्रकार केतारपीडो की बनावट तो लगभग एक-सी ही होती है। लेकिन उनकी रफ्तार व मार करने की शक्ति अलग-अलग होती है। समुद्री लड़ाई में दुश्मन के जलयानों और पनडुब्बियों का विनाश करने के लिए दुनिया के वैज्ञानिक अधिक से अधिक शक्तिशाली तारपीडो का विकास करने में लगे हुए हैं।



चलचित्रों की शुरुआत कैसे हुई?

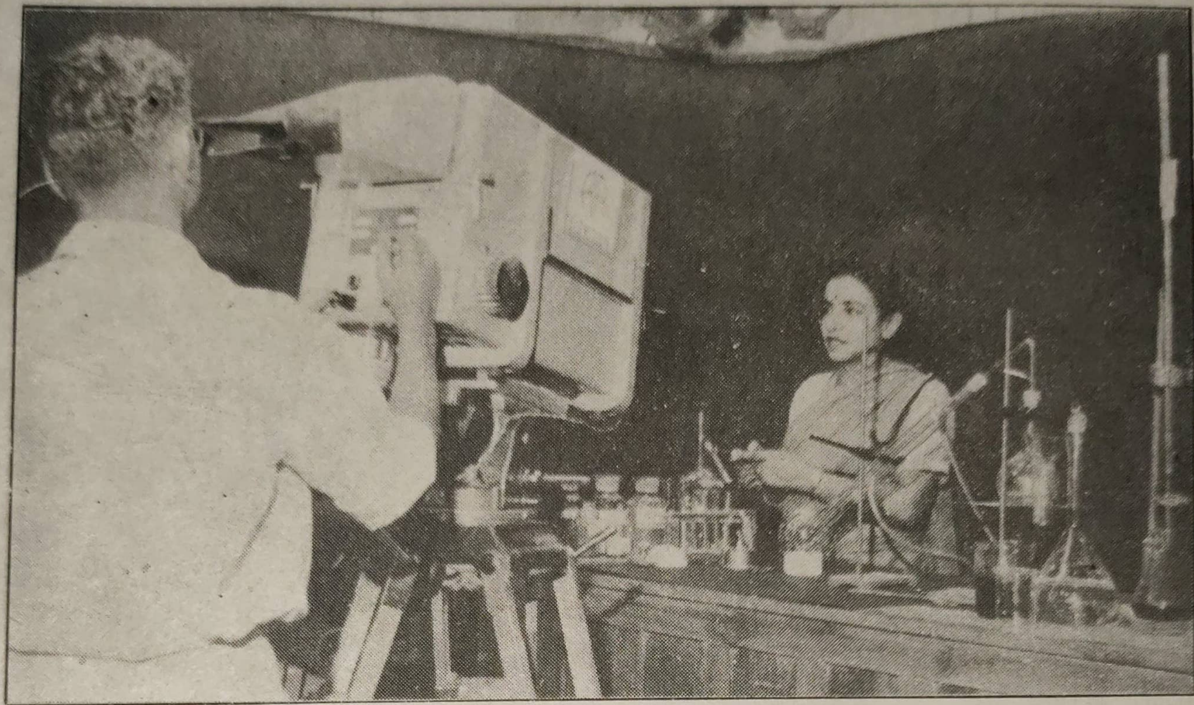
चलचित्र आज लोगों के मनोरंजन का एक सस्ता व सुलभ साधन है। संसार में लगभग ढाई लाख सिनेमा घरों में प्रतिदिन करोड़ों लोग फिल्में देखते हैं। चलचित्रों को आज का रूप लेने में लगभग 100 वर्ष का समय लगा है। चलचित्रों के विकास में कैमरा, फोटोग्राफी और प्रोजैक्टरों के विकास का बहुत बड़ा योगदान रहा है।

चलचित्र की कहानी तब आरम्भ हुई, जब 1830 के लगभग ऐसे घूमने वाले चक्र बनाए गए, जिन पर चित्र बने हुए होते थे। इन्हें व्हील्स ऑफ़ लाइफ़ (Wheels of life) या सजीव चक्र कहा जाता था। चक्र को इतनी तेज़ी से घुमाया जाता था कि उस पर बने चित्र चलते-फिरते नज़र आते थे। चलचित्रों का वास्तविक जन्म 1890 के आसपास हुआ। सन् 1893 में टॉमस एडीसन (Thomas Edison) ने किनेटोस्कोप (Kinetoscope) नामक यंत्र बनाया। इसमें एक छोटे से छेद में से एक ही व्यक्ति चित्रों को देख सकता था। इसमें दिखाए जाने वाले चित्रों में आमतौर पर घुड़दौड़, बच्चों का तैरना आदि के चित्र होते थे। सन् 1903 में सबसे पहली फिल्म एडीसन की प्रयोगशाला में बनाई गई,जिसका नाम दि ग्रेट ट्रेन रौबरी (The great train robbery) था। इससे लोगों में बहुत बड़ी उत्सुकता पैदा हुई।

संसार का सबसे पहला सिनेमा हॉल अमेरिका के पिट्सबर्ग (Pittsburgh) शहर में नवम्बर 1905 में खोला गया। इसके कुछ समय बाद थामस आरमथ (Thomas Armath) ने चलचित्रों के सार्वजनिक प्रदर्शन के लिए प्रोजैक्टर का निर्माण किया। इस प्रोजैक्टर में एडीसन ने भी बहुत से सुधार किए। उस समय के चलचित्र मूक चलचित्र होते थे। प्रोजैक्टर लगभग 24 चित्र प्रति सेकिण्ड फेंकता था। एक के बाद दूसरा चित्र इतनी जल्दी परदे पर आता था कि वह चलता-फिरता दिखाई देता था। चित्रों का निर्माण सेल्यूलोस (Celulose) की फिल्मों पर होता था। धीरे-धीरे समय बीतता गया और चलचित्रों में विकास होता गया। सबसे पहला संगीतपूर्ण चित्र डान

जुआन था, जो 1920 में अमेरिका में बनाया गया था। सबसे पहले बोलने वाला चलचित्र दि जाज सिंगर (The Jaz Singer) था। इसे भी सन् 1927 में अमेरिका के वार्नर (Warner) बंधुओं ने बनाया था। भारत में सबसे पहले बनने वाली फिल्म राजा हरिश्चन्द्र थी, जो 1913 में दादा साहब फाल्के ने बनाई थी। चलचित्रों को रंगीन बनाना सफलता का अगला महत्त्वपूर्ण कदम था।

सिनेमा देखने का सबसे बड़ा शौक तायवान में है। रूस में लगभग 1½ लाख सिनेमाघर हैं। संसार का सबसे खुला एवं बड़ा सिनेमाघर पश्चिम बर्लिन में है, जिसमें 22000 लोग एक साथ बैठकर फिल्म देख सकते हैं। संसार की सबसे बड़ी फिल्म दि ह्यूमन कन्डीशन (The Human Condition) थी, जो अक्तूबर 1961 में जापान में दिखाई गई थी। इसका एक शो 8 घंटे 55 मिनट का था।

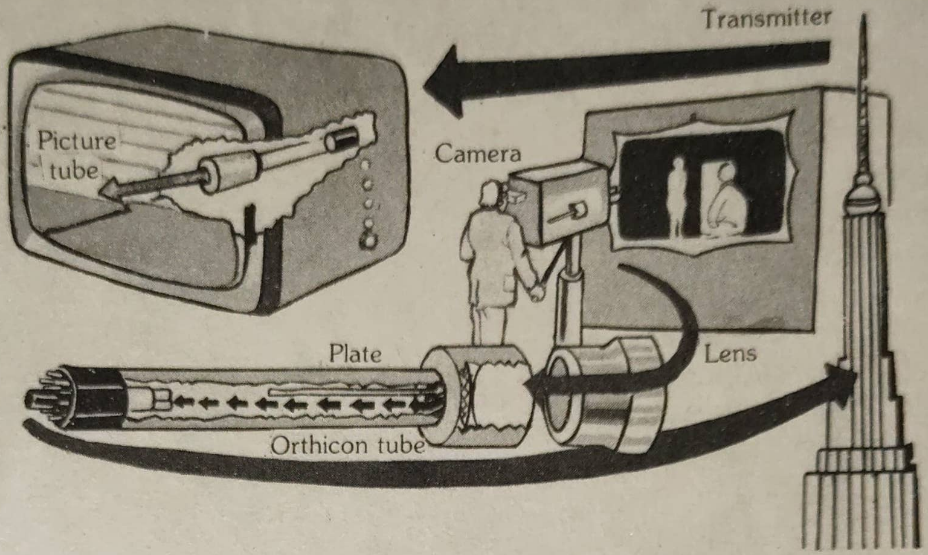


टेलीविज़न (Television) में चित्र और आवाज़ कैसे आती है?

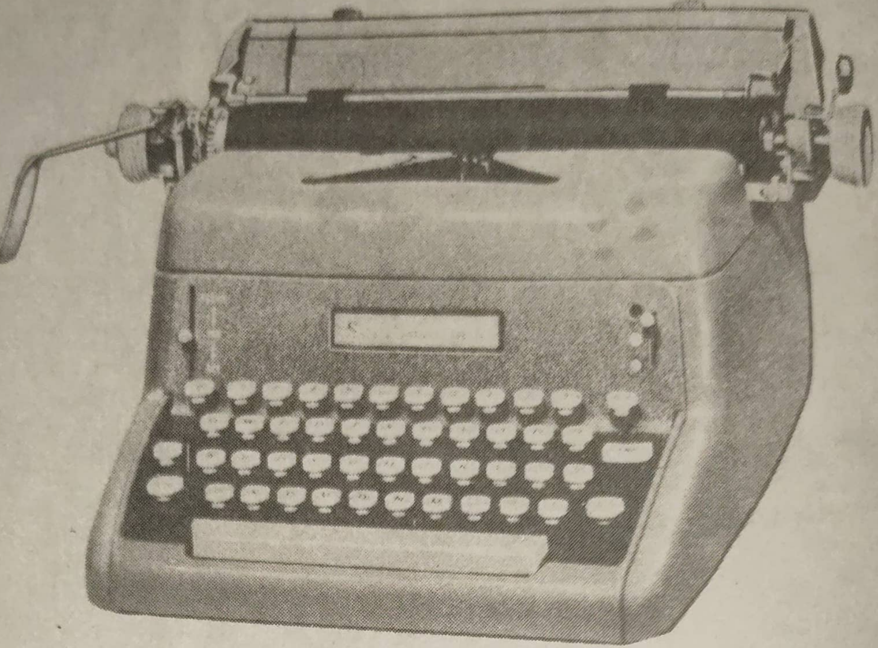
टेलीविज़न के आविष्कार और विकास के विषय में जान लेने के बाद यह प्रश्न उठता है कि इसमें चित्र और संदेश कैसे प्राप्त होते हैं?

जिस स्थान से दूरदर्शन (Television) संदेशों को प्रसारित किया जाता है, उसे दूरदर्शन प्रसारण केन्द्र (Transmission Centre) कहते हैं। प्रसारण केन्द्र पर ध्वनि और चित्र दोनों को विद्युत चुम्बकीय तरंगों से बदलकर प्रसारित किया जाता है। ये तरंगें हमारे टेलीविजन पर आकर फिर ध्वनि और चित्रों में बदल जाती हैं। इस प्रकार संदेश और चित्र दोनों ही प्राप्त हो जाते हैं। ऐसा किस प्रकार किया जाता है?

प्रसारण केन्द्र पर एक टेलीविज़न कैमरा होता है, जिसमें एक इलैक्ट्रोन नली (Electron Tube) लगी होती है। इसे और्थीकोन ट्यूब (Orthicon Tube) कहते हैं। जिस दृश्य का प्रसारण करना होता है, उसका प्रतिबिम्ब एक लैंस द्वारा और्थीकोन ट्यूब में लगे प्रकाश-संवेदनशील पर्दे (Photosensitive Plate) पर पड़ता है। जब प्रकाश इस पर्दे पर पड़ता है, तो उसकी तीव्रता के अनुसार उसमें इलैक्ट्रोन निकलते हैं। अब इसको कैथोड रे ट्यूब (Cathode Ray Tube) द्वारा स्कैन (Scan) किया जाता है, जिसके फलस्वरूप प्रतिबिम्ब विद्युत धारा में बदल जाता है। इसको वीडियो सिगनल (Video Signal) या पिक्चर सिगनल (Picture Signal) कहते हैं। इसके द्वारा एम्प्लीट्यूड मौड्लेटेड (Amplitude Modulated) करके प्रसारित कर दिया जाता है। इसके साथ ही साथ प्रोग्राम देने वाले व्यक्ति की आवाज को माइक्रोफोन (Microphone) द्वारा विद्युत धारा में बदलकर और आवृत्ति मौड्लेटेड (Frequency Modulated) करके प्रसारित किया जाता है। इसे औडियो सिगनल (Audio Signal) कहते हैं। वीडियो और औडियो सिगनलों को एक साथ ही प्रसारण केन्द्र से प्रसारित कर दिया जाता है। संदेश की ये विद्युत चुम्बकीय तरंगें वायुमंडल में होती हुई हमारे घर में लगे टेलीविज़न के एन्टीना से टकराती हैं। एन्टीना से तार द्वारा ये संदेश विद्युत धारा के रूप में हमारे टेलीविज़न तक पहुंचते हैं। टेलीविज़न में औडियो



सिगनल और वीडियो सिगनल अलग-अलग हो जाते हैं। वीडियो सिगनल टेलीविज़न में लगे इलेक्ट्रानिक (Electronic) यंत्र की सहायता से ध्वनि में परिवर्तित हो जाता है। इस प्रकार हमें चित्र और ध्वनि दोनों ही प्राप्त हो जाते हैं।



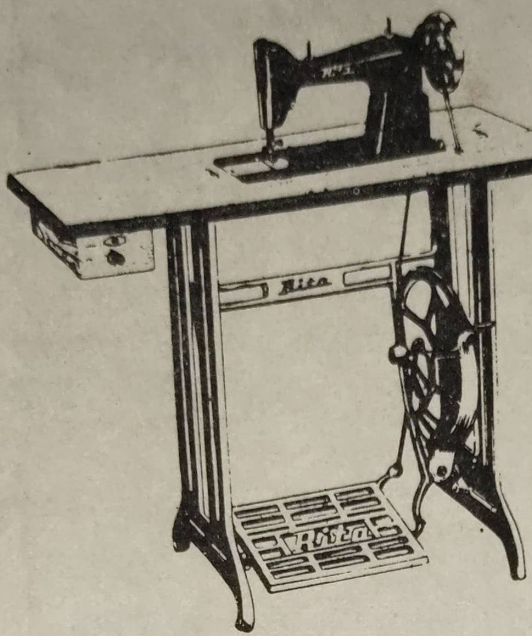
टाइपराइटर का विकास कैसे हुआ?

टाइपराइटर (Typewriter) एक ऐसी मशीन है, जिसमें अक्षरों को हाथ से लिखने की बजाय टाइप किया जाता है। इसकी सहायता से एक ही बार में कारबन (Carbon Paper) का प्रयोग करके चार पांच सुन्दर प्रतिलिपियां तैयार की जा सकती हैं। इसके द्वारा टाइप किए गए शब्द छापे की तरह सुन्दर होते हैं। इसमें शब्दों को कागज पर हाथ की अपेक्षा अधिक तेजी से लिखा जा सकता है। इस मशीन में एक की बोर्ड (Key Board) होता है, जिसमें टाइप किए जाने वाले सभी अक्षर लगे होते हैं। कागज लगाने के लिए एक बेलनाकार (Cylindrical) छड़ होती है, जो टाइप करने के साथ-साथ चलती है। स्याही युक्त एक रिबन के साथ ये अक्षर बेलनाकार (Cylindrical) छड़ पर टकराते हैं और इस प्रकार अक्षर छड़ पर लिपटे हुए कागज पर टाइप हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त और भी छोटे-छोटे पुर्जे मशीन में लगे होते हैं। जिनके द्वारा अक्षरों को बड़ा (Capital) या छोटा (Small) अंकित किया जा सकता है।

सबसे पहले सन् 1784 में अन्धे व्यक्तियों को लिखना सिखाने के लिए फ्रांस में एक मशीन बनाई गई थी, जिसमें उभरे हुए अक्षर थे। सन् 1829 में अमेरिका में टाइप करने की मशीन बनाई गई, जिसका नाम टाइपोग्राफर (Typographer) था। इसके बाद कई प्रकार के टाइपराइटरों का विकास हुआ, लेकिन उनमें कुछ न कुछ कमियां थीं। देखने में ये बेडौल थे और आकार में ये पियानो के बराबर थे। अच्छे टाइपराइटर बनाने की दिशा में पहला सफल प्रयास 1867 में अमेरिका के क्रिस्टोफर लेथम शोल्स (Christopher Lathem Sholes) ने किया। उन्होंने एक बहुत ही अच्छे टाइपराइटर का माडल दिया, जिसका निर्माण कार्य 1873 में ई० रैमिंगटन ऐण्ड सन्स नामक न्यूयार्क की कम्पनी ने अपने हाथ में ले लिया। सन् 1874 में पहला रैमिंगटन नामक टाइपराइटर बाज़ार में बिकने के लिए आया। इसमें आज के टाइपराइटर जैसी लगभग सभी चीज़ें थीं। इसके पश्चात् नाना प्रकार के टाइपराइटरों का विकास हुआ।

अब तो अनेकों प्रकार के टाइपराइटर बाज़ार में उपलब्ध हैं। आज ऐसे भी टाइपराइटर बना लिए गए हैं, जो टाइप करने में आवाज नहीं करते। विद्युत से चलने वाले टाइपराइटर भी बना लिए गए हैं, जिनमें अक्षरों के बीच की दूरी प्रिंट की भांति होती है। सन् 1909 में छोटे-छोटे टाइपराइटरों का विकास हुआ, जिन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान तक आसानी से ले जाया जा सकता है। सन् 1953 में बहुत तेज़ी से टाइप करने वाले टाइपराइटर बनाए गए, जिनका प्रयोग कम्प्यूटरों के साथ में होता है। इनसे एक मिनट में 1,00,000 (एक लाख) अक्षर तक टाइप हो सकते हैं। ये टाइपराइटर विद्युतचालित होते हैं।

टाइपराइटरों के विकास ने आधुनिक व्यापार में संचार-प्रेषण को बहुत बढ़ावा दिया है। इनका जीवन के सभी क्षेत्रों, शिक्षा, संचरण आदि में बहुत प्रभाव पड़ा है। महिलाओं को नौकरियों में प्रवेश कराने में टाइपराइटरों ने बहुत बड़ी मदद की है। अलग-अलग देश में वहां पर प्रयोग होने वाली लिपियों के टाइपराइटर मिलते हैं।



सिलाई मशीन (Sewing Machine) का आविष्कार कैसे हुआ?

सिलाई की मशीन एक ऐसी मशीन है, जिसकी उपयोगिता से सभी परिचित हैं। इससे हमारे कपड़े सिलते हैं, किताबें सिलती हैं और चमड़े की सैकड़ों वस्तुओं की सिलाई होती है। महिलाएं इसका प्रयोग घरों में कपड़ा सिलने में करती हैं और दर्जी इसे कपड़े सिलने के व्यवसाय में प्रयोग करते हैं। आमतौर पर ये मशीनें दो प्रकार की होती हैं। एक तो हाथ से चलने वाली और दूसरी पैरों से चलने वाली। क्या तुम्हारे मन में कभी यह प्रश्न आया है कि सिलाई की मशीन का आविष्कार कैसे हुआ?

सर्वप्रथम सिलाई की मशीन का डिजाइन इंगलैंड के थामस सेंट (Thomas Saint) नामक व्यक्ति ने तैयार किया, लेकिन मशीन बन जाने पर उसमें कुछ कमियों के कारण उसे प्रयोग में न लाया जा सका। इसके बाद 1830 में फ्रांस के एक गरीब दर्जी, जिसका नाम बार्थलेमी थीमोनियर (Barthelemy Thimonier) था, ने सिलाई की मशीन का निर्माण किया। इसका प्रयोग जैसे ही फ्रांस में शुरू हुआ, वैसे ही हाथ से सिलाई करने वाले कारीगरों को यह डर पैदा हो गया कि मशीन के प्रयोग से उनका रोजगार समाप्त हो जाएगा। इस आशंका के कारण कारीगरों ने मशीन बनाने वाली फैक्ट्री पर धावा बोल दिया और देखते ही देखते फैक्ट्री में रखी सारी मशीनों, तथा फैक्ट्री को नष्ट कर डाला। सन् 1832 में अमेरिका के वाल्टर हंट (Walter Hunt) ने एक और सिलाई की मशीन बनाई, लेकिन यह भी अधिक सफल नहीं हो सकी।

पहली सफल मशीन को बाजार तक ले जाने का श्रेय अमेरिका के आइजक सिंगर (Isaac Singer) को जाता है। इन्होंने 1851 में लोहे की मशीन का निर्माण किया। इन्हीं के नाम पर सिंगर कम्पनी की स्थापना हुई। यह डिज़ाइन सारी दुनिया में फैल गया। 1889 में बिजली से चलने वाली मशीन बनाई गई, जो हौजरी उद्योग में प्रयोग में लाई जाती है। अब तो अनेकों प्रकार की मशीनें बनने लगी हैं। सिलाई की मशीनों के साथ-साथ, कढ़ाई और काज बनाने की मशीनें भी आज उपलब्ध हैं।



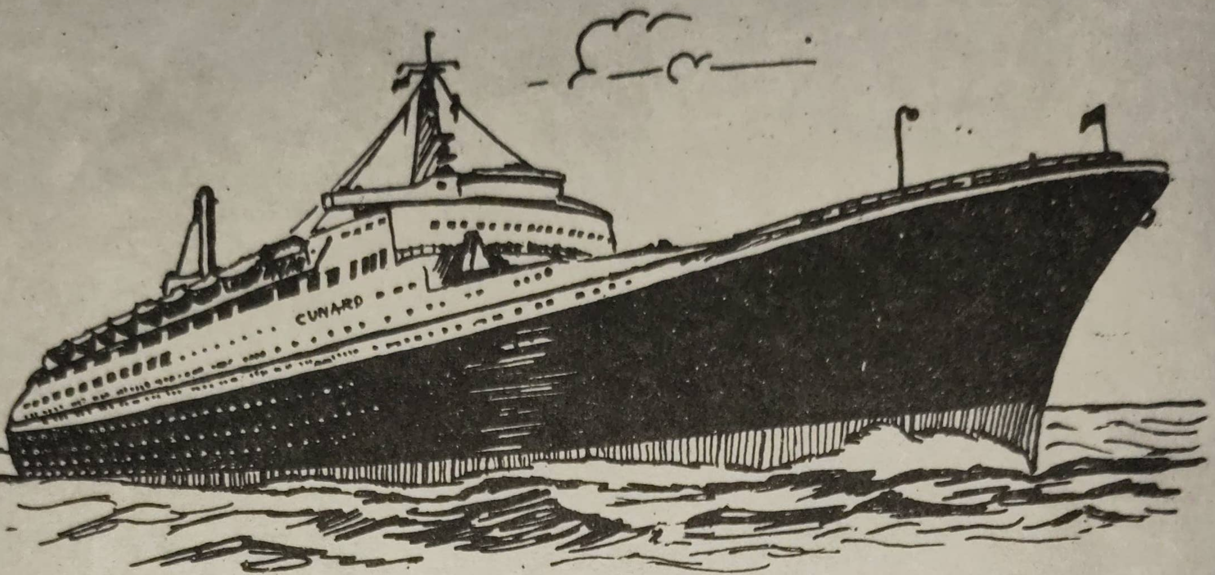
टेलीफ़ोन (Telephone) का आविष्कार कैसे हुआ?

टेलीफ़ोन विज्ञान की एक ऐसी देन है, जिसके द्वारा हम हज़ारों मील की दूरी पर बैठे हुए अपने मित्र य सम्बन्धियों से इस प्रकार बात कर सकते हैं जैसे वे हमारे सामने बैठे हों। टेलीफ़ोन आज की दुनिया में बहुत ही उपयोगी सिद्ध हो रहा है। इसका प्रयोग व्यापार, ऑफिस, घर, फैक्ट्री आदि सभी स्थानों में संदेश भेजने और प्राप करने के लिए किया जाता है। क्या तुम जानते हो कि टेलीफ़ोन का आविष्कार कैसे हुआ?

टेलीफ़ोन शब्द ग्रीक भाषा से लिया गया है। टेली का अर्थ है दूर और फ़ोन का अर्थ है ध्वनि, अर्थात् टेलीफ़ो का अर्थ है, ध्वनि को दूर स्थानों तक भेजना। टेलीफ़ोन के आविष्कार की कहानी बड़ी ही मनोरंजक है। यह तो ह जानतें हैं कि टेलीफ़ोन का आविष्कार अमेरिका के वैज्ञानिक अलैक्ज़ैन्डर ग्राहम बेल (Alexander Grahar Bell) ने किया था। 2 जून 1875 की बात है कि ग्राहम बेल अपने सहायक टॉमस वाट्सन (Thomas Watsor के साथ टेलीग्राफ़ (Telegraph) से सम्बन्धित कुछ कार्य कर रहे थे। टेलीग्राफ़ के रिसीवर (Receiver) पर बे महोदय एक कमरे में काम कर रहे थे और उनके सहायक वाट्सन दूसरे कमरे में काम कर रहे थे। वाट्सन ने ए लोहे की पत्ती को कम्पन कराया। तभी बेल दौड़े-दौड़े उनके कमरे में आए और उन्होंने पाया कि चुम्बक के बीच कंपन करती हुई लोहे की पत्ती के द्वारा तार में एक विद्युत धारा बहने लगती है। इसी प्रयोग के आधार पर बे महोदय ने टेलीफ़ोन का निर्माण किया और 10 मार्च 1896 को वे टेलीफ़ोन बनाने में सफल हुए। क्या तुम जानते ह कि टेलीफ़ोन कैसे काम करता है?

टेलीफ़ोन में मुंह के सामने वाला हिस्सा ट्रांसमीटर का कार्य करता है और कान में लगा दूसरा हिस्सा रिसीव का काम करता है। एक तार द्वारा दोनों का सम्बन्ध आपस में होता है। जब हम बोलते हैं तो माउथ पी (Mouthpiece) में लगा हुआ एक डायफ्राम (Diaphragm) कंपन करता है, जिसके कारण बदलती हुई विद्युत धारा (Varying Current) पैदा हो जाती है। यह विद्युत धारा टेलीफ़ोन के तारों द्वारा होती हुई दूस स्थान पर लगे टेलीफ़ोन के रिसीवर तक पहुंच जाती है। इस विद्युत धारा से रिसीवर में लगा डायफ़्राम कंपन कर लगता है और उसको [illegible]न में बदल देता है। यह ध्वनि तरंगें उस व्यक्ति के कान के परदे से टकराती हैं और इ प्रकार दूर बैठा हुआ वह व्यक्ति हमारी आवाज को स्पष्ट सुन लेता है। ठीक यही क्रिया दूसरे व्यक्ति के माउथ-पी और हमारे रिसीवर के बीच होती है। इस प्रकार दो व्यक्ति एक दूसरे से बात कर सकते हैं।

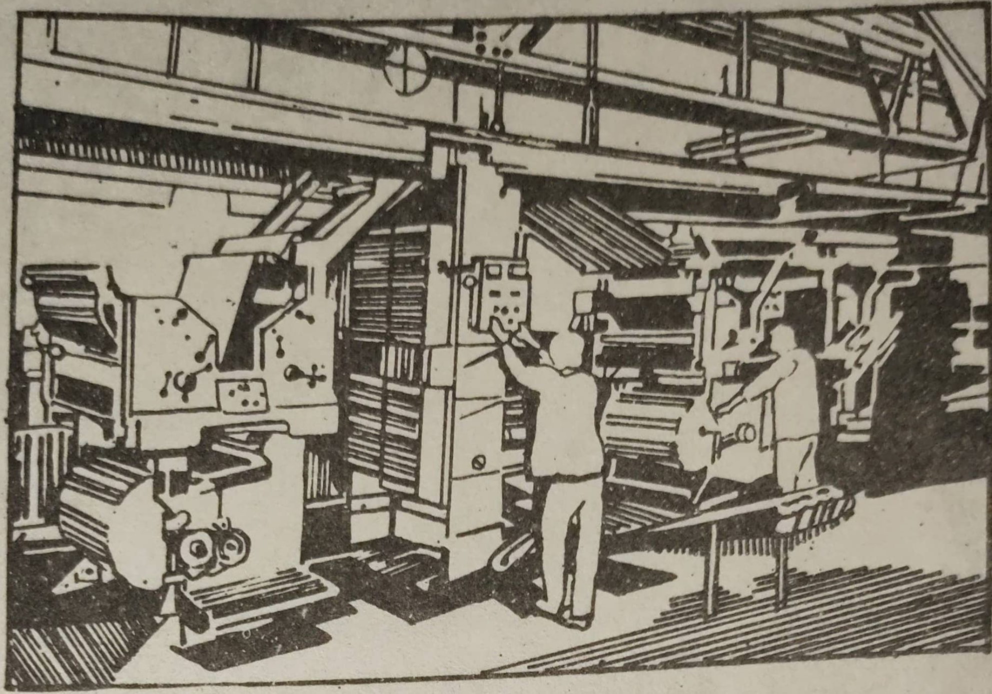
आज ससार के सभी देशों में टेलीफ़ोन के तारों का जाल सा बिछा है। ये तार एक शहर से दूसरे शहर त और एक देश से दूसरे देश तक फैले हुए हैं। टेलीफ़ोन के इस्तेमाल से आज दुनिया बहुत छोटी हो गई है



समुद्री जहाज़ (Ship) का विकास कैसे हुआ?

क्या तुम जानते हो कि आधुनिक समुद्री जहाज़ एक अच्छे खासे होटल जैसा होता है। इस में कई मंजिलें (Storeys) होती हैं। ऊपर की मंज़िलों में कमरे होते हैं, जिन्हें केबिन कहा जाता है। नीचे के हिस्से में सामान रखने की सुविधा होती है। जहाज़ों के अंदर लिफ्ट लगी होती हैं, जिनसे लोग ऊपर नीचे आ जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त इनमें भोजन कक्ष, नाई की दुकान, स्टोर, व्यायामशालाएं, तैरने के लिए तालाब, चिकित्सालय और अनेकों सुविधाएं होती हैं। इन जहाज़ों में दिशासूचक यंत्र, रेडियो, राडार आदि आधुनिक वैज्ञानिक यंत्र लगे होते हैं। इन जहाज़ों का वज़न हज़ारों क्विंटल होता है। इनमें बड़े-बड़े इंजन काम करते हैं। क्या तुम जानते हो कि आज के इस विकसित रूप को प्राप्त करने के लिए समुद्री जहाज़ों को कितनी सीढ़ियों से गुजरना पड़ा है। शुरू-शुरू में आदमी ने लकड़ी के गट्ठरों की सहायता से पानी में यात्रा करना सीखा। इसके पश्चात् उसने लकड़ी के तख्ते और बांस का समतल धरातल बनाकर समुद्र में उतरना शुरू किया। ईसा से लगभग 6000 वर्ष पूर्व नाव का आविष्कार किया गया, जो पतवार द्वारा चलती थी। बाद में मनुष्य ने पाल से चलने वाले जहाज़ बनाए, जिन्हें हवा की दिशा पर निर्भर रहना पड़ता था। सन् 1787 में अमेरिका के इंजीनियर जान फिच (John Fitch) ने सबसे पहले जहाज़ में भाप का इंजन लगाया था। इसके बाद पतवारों का जमाना खत्म हो गया और भाप से चलने वाले जहाज़ बनने लगे। 18वीं शताब्दी के अंत में जहाज़ों में डीज़ल से चलने वाले इंजन प्रयोग होने लगे थे। इसके बाद धीरे-धीरे समुद्री जहाजों ने आधुनिक रूप लेना शुरू कर दिया।

जहाज़ों में सबसे अधिक विकास परमाणु शक्ति के प्रयोग से हुआ। 1954 में अमेरिका ने सर्वप्रथम परमाणु शक्ति से चलने वाला समुद्री जहाज़ बनाया। 1959 में रूस ने भी परमाणु शक्ति से चलने वाला 'लेनिन' नामक जहाज़ बनाया। अब तो बर्फ के समुद्र में चलने वाले जहाज़ भी बनने लगे हैं। ऐसे जहाज़ का निर्माण सन् 1962 में सबसे पहले अमेरिका ने किया था।

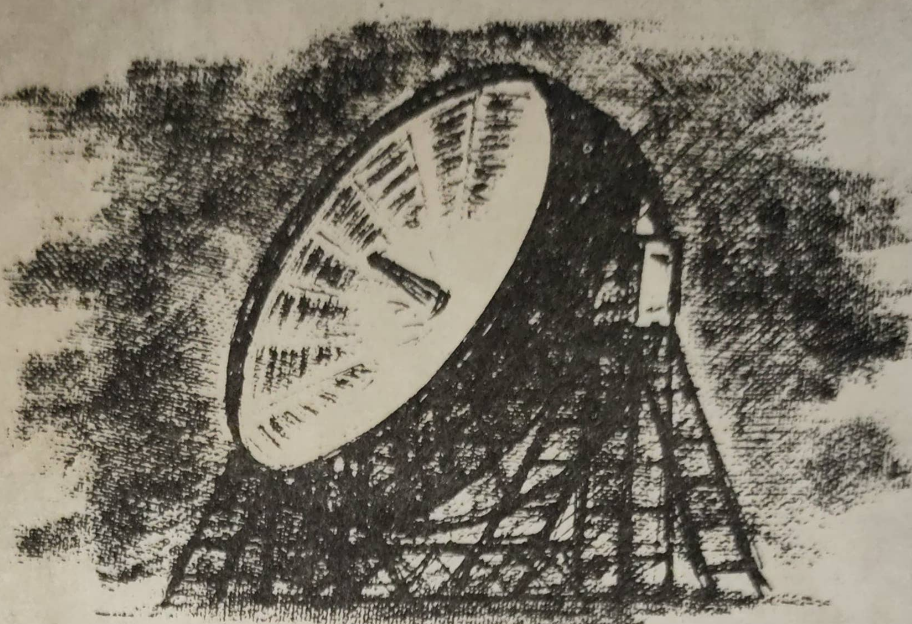


छापाखाने (Printing Press) की शुरुआत कैसे हुई?

क्या आप अनुमान लगा सकते हैं कि प्रिंटिंग प्रेस के विकास से पहले का कितना ज्ञान हमसे खो गया है। छपाई कला के विकास से पहले पुस्तकें हाथ से लिखी जाती थीं और एक-एक पुस्तक को पूरा करने में वर्षों लग जाते थे। इस समय कोई भी ऐसा साधन न था कि एक ही किताब की कई प्रतिलिपियां तैयार हो सकें। छापाखाने के आविष्कार से आज यह काम बहुत ही सरल हो गया है। एक ही प्रकार की लाखों पुस्तकें, पत्रिकाएं, समाचार पत्र, ग्रीटिंग कार्ड, चैक, नोट, आदि संसार में रोज़ाना छापे जाते हैं। क्या आप जानते हैं कि प्रिंटिंग प्रेस की शुरुआत कब हुई?

छपाई का काम सबसे पहले चीन में शुरू हुआ था। सन् 868 में लकड़ी या धातु में अक्षर खोदकर सबसे पहली पुस्तक यहां छापी गई थी। 15वीं शताब्दी के मध्य में सबसे पहला छापाखाना जर्मनी के जौहान गुटनबर्ग (Johan Gutenberg) ने स्थापित किया था, लेकिन विलियम कैक्स्टन (William Caxton) इंगलैंड के पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने 1476 में पहला सफल छापाखाना लगाया। इसके पश्चात् काफी समय तक मुद्रण-कला का विकास धीमी गति से हुआ, लेकिन 19वीं सदी में जब भाप और विद्युत शक्ति का आविष्कार हो गया तो मुद्रण-कला का विकास भी बड़ी तेज़ी से हुआ। इन्हीं दिनों टाइप कम्पोजिंग मशीन की खोज हुई। यह मशीन टाइपराइटर की तरह काम करती थी। इससे पहले कम्पोजिंग हाथ से किया जाता था। जिसमें बहुत समय लगता था। भारत जैसे अर्द्धविकसित देशों में तो आज भी लाखों प्रेसों में हाथ से ही कम्पोजिंग होती है।

आज तो छपाई की कई विधिया विकसित हो गई हैं। इनमें मुख्यतः लैटर प्रेस प्रिंटिंग, लिथोग्राफिक प्रिंटिंग और ग्रैवरे प्रिंटिंग मुख्य हैं। लिथोग्राफी से ही आफ़सेट प्रिंटिंग का विकास हुआ। इस पद्धति में छपाई का डिज़ाइन फोटोग्राफिक विधि से तैयार होता है। आधुनिक फोटो कम्पोजिंग मशीनें तो अब कम्प्यूटर द्वारा नियंत्रित होने लगी हैं। मनुष्य की ज्ञान-वृद्धि में छापाखाने का बहुत बड़ा योगदान है।



दूरदर्शी यंत्र (Telescope) क्या है ?

दूरबीन या दूरदर्शी (Telescope) एक ऐसा यंत्र है जो दूर की वस्तुओं को साफ-साफ देखने के लिए काम में लाया जाता है। टैलिस्कोप शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के टैलीस्कोपीन (Teleskopein) शब्द से हुई है। टैली (Tele) का अर्थ है दूर और स्कोपीन (Skopein) का अर्थ है देखना। अतः टैलीस्कोपीन का अर्थ है दूर की वस्तुओं को देखने का यंत्र।

दूरदर्शी यंत्र दो प्रकार के होते हैं। एक प्रकाशीय दूरदर्शी यंत्र और दूसरे रेडियो दूरदर्शी यंत्र। प्रकाशीय दूरदर्शी यंत्र भी दो प्रकार के होते हैं। एक प्रकार के यंत्रों को अपवर्तक दूरदर्शी यंत्र (Refracting Telescope) कहते हैं और दूसरे प्रकार के यंत्रों को परावर्तक दूरदर्शी यंत्र (Reflecting Telescope) कहते हैं। अपवर्तक दूरदर्शी यंत्रों में एक नली लगी होती है जिसके दोनों सिरों पर दो लैंस होते हैं। इन लैंसों को आगे पीछे खिसकाया जा सकता है। जो लैंस वस्तु की ओर रहता है उसे अभिदृश्यक लैंस (Objective lens) कहते हैं और जो आँख की ओर रहता है उसे नेत्रिका लैंस (Eye piece) कहते हैं। वस्तु से आने वाली प्रकाश की किरणें अभिदृश्यक लैंस से होती हुई उसका प्रतिबिम्ब बनाती हैं जो नेत्रिका लैंस द्वारा देख लिया जाता है। परावर्तक दूरदर्शी यंत्रों में एक नतोदर्पण (Concave Mirror) होता है जो वस्तु से आने वाले प्रकाश को एकत्र करके उसका प्रतिबिम्ब बनाता है। रेडियो दूरदर्शी में आकाशीय पिन्डों से आने वाली रेडियो तरंगों को बड़े-बड़े धातु के दर्पणों द्वारा प्राप्त करके इलैक्ट्रानिक यंत्रों की सहायता से उनका अध्ययन किया जाता है। किसी दूरदर्शी यंत्र का आकार उसके अभिदृश्यक लैंस के व्यास से मापते हैं। लैंस का जितना अधिक व्यास होता है उतनी ही अधिक दूरी तक उससे वस्तुओं को देखा जा सकता है।

यद्यपि संसार में सबसे पहली दूरबीन हालैंड (Holland) के हान्स लिपरशे नामक व्यक्ति ने सन् 1608 में बनायी थी लेकिन उन्हें इस दूरबीन के निर्माण का एकाधिकार न मिल सका। इटली के वैज्ञानिक गैलीलियो को जब इस आविष्कार का पता लगा तो उन्होंने एक नए ढंग की दूरबीन बना डाली और इस प्रकार सन् 1609 में दूरबीन के आविष्कार का श्रेय उन्होंने प्राप्त किया। आज संसार में गैलीलियो को ही दूरबीन का आविष्कारक कहते हैं।

गैलीलियो की दूरबीन यद्यपि देखने में सुन्दर न थी लेकिन इसके द्वारा वस्तुएं वास्तविक आकार से 33 गुना बड़ी दिखती थीं। गैलीलियो ने अपनी दूरबीन से चन्द्रमा की सतह, बृहस्पति ग्रह के उपग्रह, शनि के छल्ले, आकाश गंगा आदि बहुत सी आकाशीय चीजों का अध्ययन किया। इस आविष्कार के बाद भांति-भांति के दूरदर्शी यंत्रों का विकास हुआ।

सन् 1928 में अमरीका के माउन्ट पालोमेर (Mount Palomer) पर 200 इंच के व्यास के परावर्तक वाला दूरदर्शी यंत्र लगाया गया। इसी प्रकार रूस में 234 इंच व्यास के परावर्तक वाले दूरदर्शी का निर्माण किया जा चुका है। ये दोनों दूरदर्शी संसार के सबसे शक्तिशाली दूरदर्शी हैं। एक 48 इंच व्यास का दूरदर्शी यन्त्र भारत की उस्मानिया यूनिवर्सिटी में भी लगा हुआ है। इन दूरबीनों की सहायता से ग्रह नक्षत्रों के विषय में बहुत सी खोजें की गई हैं।

बीसवीं सदी में बहुत से रेडियो दूरदर्शी यंत्रों का भी विकास हुआ है। इन दूरदर्शी यंत्रों में तश्तरी के आकार का धातु का एक बहुत बड़ा परावर्तक (Reflector) होता है जिसे एन्टीना कहते हैं। यह खगोलीय पिन्डों से आने वाली रेडियो तरंगों को प्राप्त करता है। ये रेडियो तरंगें रिसीवर (Receiver) में जाती हैं, फिर इनकी शक्ति बढ़ाकर इनकी परीक्षा की जाती है। रिसीवर उन तारों और ग्रहों के विषय में जानकारी देता है जिन से ये तरंगें आती हैं। ये दूरदर्शी यंत्र सभी मौसमों, कुहरे और धुन्ध में सफलता पूर्वक काम करते रहते हैं। संसार का सबसे बड़ा रेडियो दूरदर्शी लंदन में चैशायर के जौडरल बैंक नामक स्थान पर लगा हुआ है। इसके एन्टीना का व्यास 250 फुट है।



हैलीकाप्टर का विकास कैसे हुआ ?

हैलीकाप्टर एक ऐसा विमान है जो जमीन से सीधा ही हवा में ऊपर उड़ सकता है और सीधा ही जमीन पर उतर सकता है। वह हवा में स्थिर भी रह सकता है। उड़ान के लिए इसे जमीन पर दौड़ लगाने की आवश्यकता नहीं होती। इसे किसी हवाई अड्डे की भी जरूरत नहीं है। क्या तुम जानते हो कि ऐसा विमान कैसे बनाया गया?

15वीं शताब्दी में प्रसिद्ध वैज्ञानिक लियोनार्दो दा विन्सी ने एक बड़े हैलीकाप्टर का डिज़ाइन तैयार किया, लेकिन उस समय मोटरों (Motors) का विकास नहीं हुआ था, जिसके बिना इसे कभी भी न उड़ाया जा सका। सन् 1783 में फ्रांस में खिलौने के रूप का हैलीकाप्टर काफी चर्चा का विषय रहा, लेकिन अगले सौ वर्षों तक कोई भी सफल हैलीकाप्टर न बन पाया। क्योंकि उस समय तक हल्के वज़न के इंजनों का विकास नहीं हो पाया था। पहले विश्वयुद्ध में जब हल्के इंजनों का विकास हो गया तो इन इंजनों की सहायता से मनुष्य पहली बार हैलीकाप्टर द्वारा उड़ान भरने में सफल हो पाया। इसके बाद हैलीकाप्टर के विकास का काम लगातार चलता रहा।

सन् 1936 में जर्मनी की फौकवुल्फ कम्पनी ने एक सफल हैलीकाप्टर के निर्माण की घोषणा की। यह पहला हैलीकाप्टर था, जो सन् 1937 में ग्यारह हजार फुट (3352.8 मीटर) की ऊँचाई पर 112 कि. मी. (70 मील) प्रति घंटे की रफ्तार से सफलता पूर्वक उड़ा। आज तो विश्व में अनेक प्रकार के छोटे-बड़े हैलीकाप्टर बन गए हैं, जिनको द्विन प्रतिदिन के कामों में प्रयोग किया जाता है। विश्व का सबसे बड़ा हैलीकाप्टर रूस का "सोवियत माइ-12" है, जिसे बी-12 भी कहा जाता है।

Today Twinkle STAR MAGAZINE FOR THE YOUNG ONES

madhya pradesh chronicle

दैनिक नवज्योति

WRITER AND ILLUSTRATOR

QUARTERLY JOURNAL OF THE ASSOCIATION OF WRITERS AND ILLUSTRATORS FOR CHILDREN



"....The language of these books is very lucid and attracts a common reader. These books are profusely illustrated. The sketches and diagrams add additional charm to the subject matter. The collection and compilation of so much material for these books speaks volumes of to make this venture worth-while." **—Madhya Pradesh Chronicle, Bhopal**

"....विषय-वस्तु, साज-सज्जा और छपाई की दृष्टि से निश्चय ही ये पुस्तकें बालकों के ज्ञानवर्धन में बहुत सहायक होंगी। इस प्रयास के लिए आप हार्दिक बधाई स्वीकार करें।" **—नेशनल बुक ट्रस्ट, दिल्ली**

"This is an ... volumes which ... informative. T... in it is mo... **Book Industr...**

"....इस पुस्तक की सामग्री एवं उसके उच्च स्तर को देखते हुए यह विश्वास सहज ही उत्पन्न होता है कि इस ग्रंथमाला के लेखकों-लेखिकाओं एवं प्रकाशकों ने इसके प्रकाशन में न केवल अथक परिश्रम किया है अपितु पुस्तकों को आकर्षक एवं उपयोगी बनाने के लिए समुचित साधन भी संजोये हैं।" **—नवभारत, भोपाल**

"....चिल्ड्रन्स ... उपादेयता क... यह है कि ... लिखित ... धीरे-धी... भारत ... प्रकाशि... भास...

"The project of CHILDREN'S KNOWLEDGE BANK is not the result of individual efforts but is the product of collective wisdom of specialists in different fields.... These useful books are of encyclopaedic importance with illuminating illustrations so that the child may grasp the matter easily." **—The Hitvad Twinkle, Nagpur**

"....इस ग्रंथमाला की उपयोगिता स्वयंसिद्ध है। प्रत्येक घर में इस पुस्तक के रहने से जहां बच्चों को अपनी स्कूली पढ़ाई में मदद मिलेगी, वहीं खाली समय में उनका मनोरंजन भी होगा तथा उनकी जिज्ञासा तो शांत होगी ही...." **—स्वतंत्र भारत, लखनऊ**

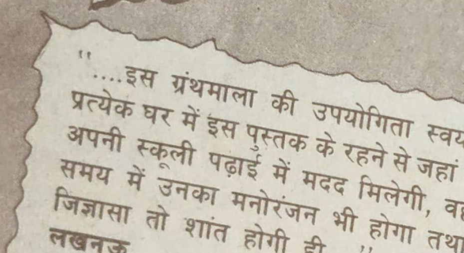
"....इसे तुम... कहो तो ... दिल्ली...

"....पुस्तक बच्चों से लेकर बूढ़ों तक के ज्ञानवर्धन के लिए लाभदायक और उपयोगी है।" **—पंजाब केसरी, दिल्ली**

"THE PUSTAK MAHAL, Delhi deserves to be congratulated on their laudable venture of publishing the reference book of CHILDREN'S KNOWLEDGE BANK. It will no doubt fill in the gap caused by the paucity of simply written and illustrated books to explain the common and uncommon phenomenon around us." **—Science Reporter, New Delhi**

"....I consider it as an ex... bution to children. Not ... also the illustrations are... **—N.C.E.R.T., New Delhi**

Science Reporter



madhya pradesh chronicle

...r bilateral treaty

नव भारत

स्वत...

...elp to MP to meet drought

THE SUNDA...

पाटलिपुत्र टाइम्स | The Pioneer | Children's World | Evening News

ఈనాడు | पंजाब केसरी | पराग

...encyclopaedia in six ...children will find most ...the knowledge imparted ...st authentic..."—Indian ..., New Delhi.

"....यह सुगठित, सुसंतुलित और आकर्षक साज-सज्जा से युक्त एक ऐसी पुस्तकमाला है, जो ज्ञान-विज्ञान की विभिन्न शाखा-प्रशाखाओं का कार्य-कारणयुक्त रोचक विश्लेषण तो बाल-पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करती ही है, साथ-साथ ऐसी दुर्लभ संदर्भ सामग्री भी सुलभ कराती है, जिसकी जरूरत हर माता-पिता एवं अध्यापक समय-समय पर महसूस करता रहता है।"—**नवज्योति, अजमेर**

"चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक" में ज्ञान-विज्ञान के बहुत से पहलुओं पर सचित्र जानकारी दी गई है। ....कुल मिलाकर पुस्तक बच्चों की उत्कंठा को शांत करेगी और उनके लिए उपयोगी सिद्ध होगी।"
—सुमन सौरभ, दिल्ली

...नॉलिज बैंक की ...सबसे बड़ा प्रमाण ...रूप से हिन्दी में ... ग्रंथमाला अब ...अंग्रेजी के अतिरिक्त ...अन्य भाषाओं में भी ...हो रही है।"—**दैनिक ...भोपाल**

"....इस पुस्तक को ग्रंथालयों में, व्यक्तिगत-पारिवारिक ग्रंथ संग्रह में भी स्थान मिलना चाहिए, विशेषकर स्कूलों के ग्रंथालयों में। केवल बच्चे ही नहीं वयस्क भी इस प्रकाशन से लाभान्वित होंगे।"—**नई दुनिया, इन्दौर**

"The books written are in lucid and simple language, are profusely illustrated and can be grasped by children easily. discuss the various topics pertaining to universe, social life, geography and science. They are full of information and child can acquire more and more intelligence by reading them."—**Mangai (Tamil), Madras**

...मनोरंजन ...सा।"—**पराग, ...**

"....ज्ञान-विज्ञान की विविध शाखाओं से संबंधित जानकारी अनेक ग्रंथों-संदर्भों में बिखरी होती है। उस तक पहुंचना हर बच्चे के लिए संभव नहीं होता। इस तरह की सामग्री को एक सुपाठ्य पुस्तकमाला के रूप में सुलभ कर देना अत्यंत महत्त्व की सेवा है। "चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक" के प्रकाशक तथा लेखकों ने यही शैक्षिक सेवा की है।"—**सन्मार्ग, कलकत्ता**

"....मोटे टाइप में छपे इन छहों खंडों में बच्चों-किशोरों के लिए उपयोगी, ज्ञानवर्धक जानकारी है। चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक का हर खंड अपने आप में पूर्ण व प्रामाणिक है और पठनीय, संग्रहणीय और उपहार में देने योग्य है।"—**वामा, नई दिल्ली**

...ent contri- ...y text, but ...seworthy."

"...For a curious and inquisitive child, the six volumes are a treasure house of knowledge."—**Children's World, New Delhi**

...भारत | सन्मार्ग | हिन्दुस्तान

TRIBUNE | नईदुनिया | राष्ट्रदूत